महाराजा

हिन्दुस्तान के राजा-महाराजाओं की निजी जीवन-चर्या,
प्रेम-प्रसंग और षडयन्त्र

मूल लेखक
दीवान जरमनी दास

अनुवादक
"अरुण"

प्रकाशक
दीप पब्लिकेशन्ज़
114-A, सदर बाजार, आगरा कैण्ट

सम्पूर्ण एवं असंक्षिप्त
(Complete & Unabridged)

मूल्य : रु० १२.५०
सजिल्द रु० १५.००

भूमिका

यह पुस्तक उत्तर भारत की रियासतों से मेरे दीर्घकालीन और अन्तरंग सम्बन्धों का परिणाम है। पटियाला और कपूरथला के मिनिस्टर की हैसियत से मुझे ऐसे अवसर मिले जब मैंने भारतीय नरेशों की निजी और सार्वजनिक जिन्दगी को करीब से देखा। इस पुस्तक में एक तरफ़ उनके अपव्ययी जीवन, उनके षड्यंत्र और सार्वभौम ब्रिटिश सत्ता से उनके संघर्ष की कहानियाँ हैं तथा दूसरी तरफ भारतीय स्वतन्त्रता आन्दोलन से सम्बन्धित घटनाओं का संकलन है।

मैं एक बात स्पष्ट कर देना चाहता हूँ। इन कहानियों के लिखने का उद्देश्य किसी के चरित्र और प्रतिष्ठा को कलंक लगाना नहीं है। भारतीय राजाओं के अधिकांश दरबारों में जैसा जीवन दिन-प्रतिदिन चला करता था, उसी का यथार्थ विवरण मैंने दिया है। पुनः मैं कहना चाहता हूँ कि मेरा मन्तव्य यह कदापि नहीं है कि सामूहिक रूप से सभी राजे-महाराजे पतित या दुराचारी थे।

अन्त में, मैं अपने मित्र और पटियाला के सहयोगी सरदार के० एम० पानिक्कर के प्रति आभार प्रकट करता हूँ जिन्होंने मुझे भारतीय नरेशों के बारे में सच्ची बातें लिखने की सलाह दी। इस पुस्तक का लिखना सम्भव न होता यदि मेरे उपरोक्त मित्र ने आरम्भ से ही इसकी योजना और तैयारी में मुझे सहायता दे कर प्रोत्साहित न किया होता। मेरी पत्नी सुशीला जरमनीदास का नाम विशेषतया उल्लेखनीय है। इस पुस्तक की तैयारी में उनसे मैंने अनवरत प्रेरणा प्राप्त की। मैं जीवन के विभिन्न पेशों में काम करनेवाले अपने उन अनेक मित्रों का भी कृतज्ञ हूँ जिन्होंने इस पुस्तक को पूरा करने में मुझे प्रोत्साहन दिया।

जरमनी दास

समर्पित

उन सब की स्मृति में—
जिन्होंने विगत
राजे-रजवाड़ों के हाथों
दुःख भोगे।

अनुक्रम

एक : महाराजा की प्राइवेट ज़िन्दगी ... ११–१०६

दो : मुख्यधारा-राजनीति में

तीन : एक युग का अन्त

चार : परिशिष्ट

एक

महाराजा की प्राइवेट जिन्दगी

१. महाराजा का ग़

उनका नाम था—

कर्नल हिज हाइनेस फर्जन्द-ए-दिलबन्द, रासिखुल्-एतकाद, दौलतै-इंग्लीशिया, राज-ए-राजगान, महाराजा सर रनबीर सिंह राजेन्द्र बहादुर, जी० सी० आई० ई०, के० सी० एस० आई०, वगैरह ।

वे बच बहरे थे। उन्होंने ७५ साल की पक्की उम्र पाई ।

उन्होंने अपनी हुकूमत की 'सुनहली जुबली' मनाई ।

उस मौक़े पर—

भारत सम्राट्, इंग्लैंड के बादशाह ने उनके ऊँचे खिताब और तमगे भेंट किये—अपनी रियासत और भारत की खिदमत के एवज में नहीं—बल्कि ब्रिटिश हुकूमत और विदेशी सरकार की खैरख्वाही और काबिले-तारीफ खिदमत अंजाम देने के बदले में !

महाराजा रात को काफी देर में सोते थे। उनका क़ायदा था कि अगले दिन शाम को ४ बजे उनकी नींद टूटने का जब वक़्त हो, तब उनकी अंग्रेज महारानी डोरोथी और महल की रानियाँ हल्के-हल्के उनके पैर दबायें और धीमी मगर सुरीली आवाज में गीत गाती रहें। जागने पर महाराजा को 'बेड टी' पेश की जाय ।

महाराजा कुछ वहमी आदत के थे। रात को रोज उनका हुक्म जारी होता था कि आँखें खुलने पर सबसे पहले महल की फ़लाँ-फ़लाँ रानियाँ उनकी नजरों के सामने पड़ें। उनको यकीन था कि अगले २४ घंटे राजी-खुशी गुजारने के लिए यह इन्तजाम जरूरी है।

अलावा इसके, अपने ज्योतिषी पंडित करनचन्द के साथ जन्मपत्र और ज्योतिष के ग्रन्थ खोले हुए महाराजा घंटों बैठ कर पहले से ही विचार किया करते थे कि किन-किन नामों वाले लोगों को अगले रोज पहली मुलाकात में आगे पेश किया जाय ।

महाराजा के आरामगाह के बाहर उनके प्राइम मिनिस्टर, सर बिहारीलाल, रियासत के होम मिनिस्टर पंडित राम रतन, साथ में दूसरे मिनिस्टर लोग और वर्दीधारी ए० डी० कांग (अंगरक्षक) वगैरह हर रोज खड़े-खड़े, महाराजा के सो कर उठने का इन्तजार किया करते थे।

महाराजा का महल 'ऋषि-कुटी' कहलाता था। उसे 'गावदान' भी कहते

थे क्योंकि उत्तरी भारत में रियासत की राजधानी सँगरूर से ६ मील
जिस गाँव में यह महल बना था, उसका भी यही नाम था।

जैसे ही रनबीर सिंह तैयार होते, उनका नाश्ता शैम्पेन की एक बो
के साथ मेज़ पर लगा दिया जाता और ताज़ीम करने वाले दरबारी पेश
लगते। अगर महाराजा का मिज़ाज ठीक होता तो वे मुस्करा कर
मंजूर करते, वरना वे एकदम बेपरवाही दिखाते। अफ़सरों को इतना इशा
काफ़ी होता था कि वे खामोशी से वापस चले जायें। ऐसे मौकों पर, रियास
या निजी, कोई भी काम काज न हो पाता था।

बारी-बारी से शैम्पेन और चाय पीने के बाद महाराजा नारियल के
से अपने बदन की मालिश कराते, फिर फ्राँस के खुशबूदार इत्र पड़े हुए
से भरे टब में नहाते थे। इसके बाद, पोशाक पहन कर वे अपने खास ड्रा
रूम में दाखिल होते जहाँ महारानी डोरोथी, उनके बेटे-बेटियाँ और रिया
के कुछ खास-खास अफ़सर हाज़िर रहते थे। उनके बीच में बैठ कर महा
दो-चार ग्लास ब्राण्डी पीते जिसके वे बहुत शौक़ीन थे।

वैसे तो रनबीर सिंह वज्र बहरे थे मगर बोलने वालों के होठों की ह
से कही हुई बात का अन्दाज़ लगाने में उनको कमाल हासिल था। मह
ड्राइंग रूम में रोज हाज़िरी देने वाले घर के लोगों और रियासत के अफ़
से उनकी बातचीत का दौर इसी तरह चलता रहता था।

रात को, साढ़े ग्यारह बजे महाराजा का 'डिनर' लगा दिया जात
दो घंटे तक चला करता। डिनर के बाद, वे कुछ खास अफ़सरों और मेह
के साथ ताश खेलते। ब्रिज और बिलियर्ड के खेलों में महाराजा बड़ी दिल
लेते और रोज़ रात को कई हज़ार रुपए ज़रूर हार जाते थे। इन खेल
दौर सुबह ४ बजे तक चलता और अक्सर सूरज निकलने के बाद
होता। तब तक महाराजा ब्राण्डी के करीब २५ बड़े पेग—आमतौर पर
रात को—गले के नीचे उतार चुकते थे। वे सिर्फ़ एक दफ़ा खाना ख
जो उनका डिनर होता था।

जब कभी वायसराय या दूसरे खास मेहमानों का आना होता, तब
सहूलियत के लिहाज़ से महाराजा को अपना यह रोज़ाना प्रोग्राम बदलन
जाता। मजबूरी के ऐसे मौकों पर वे बड़े उदास हो जाते मगर शिका
शौक होने की वजह से वे वक्त के मुताबिक अपने को सँभाल लेते थे।

चीते के शिकार में महाराजा खास दिलचस्पी रखते थे। अपने
चीतों को शेर से लड़ाने में उनको बड़ा मज़ा आता। पिंजड़ों में बन्द
को जंगल में से [illegible] शेर का सामना करने को छोड़ दिया जाता।
[illegible] हिरनों के झुंड पर हमला करने के लिए भी
छोड़े जाते थे। [illegible] जानवर होते, इसलिए [illegible]
[illegible]

साल के ३६५ दिनों में से १२० दिन तो महाराजा इसी तरह शिकार और जानवरों की लड़ाई में बिताते और बाकी दिन उनके दूसरे खेल-तमाशों में गुज़र जाते। उनको कुत्ते पालने का भी शौक था। अच्छी से अच्छी नस्ल के सैकड़ों कुत्ते उनके यहाँ पले हुए थे।

कभी-कभी ऐसा होता कि महाराजा अपने रोज़ाना दस्तूर के खिलाफ़ सुबह ८ बजे ही सो कर उठ जाते और सुबह का नाश्ता करके सीधे करीब के जंगल में चले जाते जहाँ वे मुर्गाबी, तीतर, मोर, हरियल वगैरह का शिकार करते। उस जंगल में ऐसी चिड़ियाँ बहुतायत से पाई जाती थीं। दोपहर होने पर महाराजा शिकार से वापस आते।

नहा-धो कर १ बजे महाराजा खाना खाते और करीब १ घंटे आराम करते। इसके बाद अपने यार-दोस्तों और महल के कुछ खास अफ़सरों के साथ फिर शिकार पर चल देते। वहाँ से ८ बजे रात में उनकी वापसी होती। इसके बाद रोज़ की तरह ११-१२ बजे रात तक शराब का दौर चलता। महाराजा ने यह दस्तूर क़ायम कर रखा था कि वायसराय और दूसरे मशहूर लोगों से वे सिर्फ़ 'लंच' यानी दोपहर के खाने पर ही मुलाकात करें। उनका बहाना यह था कि डॉक्टरों ने उनकी सेहत के ख्याल से रात का खाना उनको मना कर रखा है। बहाने की ज़रूरत इसलिए आ पड़ती थी क्योंकि रात के वक्त महाराजा मेहमानों की दावतों में शामिल होने का सारा झंझट और तकल्लुफ़ झेलने के बजाय अपना २५ पेग ब्रान्डी पीने का रोज़ाना प्रोग्राम जारी रखना पसन्द करते थे।

महाराजा का वक़्त ज़्यादातर सोने, ब्रान्डी पीने, ताश खेलने और शिकार में गुज़रता था। जब भारत के वायसराय की मंज़ूरी से महाराजा किसी को अपना चीफ मिनिस्टर तैनात करते तो वह ज़िन्दगी भर उनसे चिपका रहना चाहता। कई चीफ़ मिनिस्टर तानाशाह बन बैठे और दरबार के कुछ मिनिस्टरों और दूसरों ने बड़ी बेदर्दी का बर्ताव किया।

रियासत का इन्तज़ाम देखने के लिए महाराजा को ज़रा भी वक़्त न मिलता था। इसके बावजूद, भारत सम्राट् इंग्लैंड के बादशाह ने वे सभी ऊँचे से ऊँचे खिताब, उपाधियाँ और ओहदे महाराजा को दिये जो किसी भारतीय राजा को देना मुमकिन था। महाराजा 'इंडियन एम्पायर के नाइट कमान्डर' थे, ब्रिटेन की सरकार और सम्राट् के वफ़ादार और खैरख्वाह होने की वजह से उनको ऊँचा आनरेरी फौजी ओहदा हासिल था। उनकी सबसे बड़ी काबलीयत यह थी कि वे रियासत के इन्तज़ाम में क़तई दखल न देते थे और अपना वक़्त मज़े उड़ाने में गुज़ारते थे। रियासत का इन्तज़ाम चीफ मिनिस्टरों के हाथों में रहता था जो ब्रिटिश वायसराय लोगों के फरमाबरदार गुलाम हुआ करते थे। अंग्रेज़ वायसराय और पोलिटिकल डिपार्टमेंट की मर्ज़ी और हुक्म के मुताबिक रियासत का इंतज़ाम चलता था।

थे क्योंकि उत्तरी भारत में रियासत की राजधानी सँगरूर से ६ मील
जिस गाँव में यह महल बना था, उसका भी यही नाम था।

जैसे ही रनबीर सिंह तैयार होते, उनका नाश्ता शैम्पेन की एक बो
के साथ मेज़ पर लगा दिया जाता और ताज़ीम करने वाले दरबारी पेश ह
लगते। अगर महाराजा का मिज़ाज ठीक होता तो वे मुस्करा कर सल
मंजूर करते, वरना वे एकदम बेपरवाही दिखाते। अफ़सरों को इतना इशार
काफ़ी होता था कि वे खामोशी से वापस चले जायें। ऐसे मौकों पर, रियास
या निजी, कोई भी काम काज न हो पाता था।

बारी-बारी से शैम्पेन और चाय पीने के बाद महाराजा नारियल के ते
से अपने बदन की मालिश कराते, फिर फ्राँस के खुशबूदार इत्र पड़े हुए पा
से भरे टब में नहाते थे। इसके बाद, पोशाक पहन कर वे अपने खास ड्राइ
रूम में दाखिल होते जहाँ महारानी डोरोथी, उनके बेटे-बेटियाँ और रिया
के कुछ खास-खास अफ़सर हाज़िर रहते थे। उनके बीच में बैठ कर महारा
दो-चार ग्लास ब्राण्डी पीते जिसके वे बहुत शौक़ीन थे।

वैसे तो रनबीर सिंह बज्र बहरे थे मगर बोलने वालों के होठों की हर
से कही हुई बात का अन्दाज़ लगाने में उनको कमाल हासिल था। महल
ड्राइंग रूम में रोज़ हाज़िरी देने वाले घर के लोगों और रियासत के अफ़स
से उनकी बातचीत का दौर इसी तरह चलता रहता था।

रात को, साढ़े ग्यारह बजे महाराजा का 'डिनर' लगा दिया जाता
दो घंटे तक चला करता। डिनर के बाद, वे कुछ खास अफ़सरों और मेहम
के साथ ताश खेलते। ब्रिज और बिलियर्ड के खेलों में महाराजा बड़ी दिलच
लेते और रोज़ रात को कई हज़ार रुपए ज़रूर हार जाते थे। इन खेलों
दौर सुबह ४ बजे तक चलता और अक्सर सूरज निकलने के बाद
होता। तब तक महाराजा ब्राण्डी के करीब २५ बड़े पेग—आमतौर पर
रात को—गले के नीचे उतार चुकते थे। वे सिर्फ़ एक दफ़ा खाना खा
जो उनका डिनर होता था।

जब कभी वायसराय या दूसरे खास मेहमानों का आना होता, तब उ
मसलिहत के लिहाज़ से महाराजा को अपना यह रोज़ाना प्रोग्राम बदलना
जाता। मजबूरी के ऐसे मौकों पर वे बड़े उदास हो जाते मगर शिकार
शौक होने की वजह से वे वक्त के मुताबिक अपने को सँभाल लेते थे।

चीतों के शिकार में महाराजा खास दिलचस्पी रखते थे। अपने प
चीतों को हिरन से लड़ाने में उनको बड़ा मजा आता। पिंजड़ों में बन्द
को जंगल में ले जाकर हिरन का सामना करने को छोड़ दिया जाता।
[illegible] थी। हिरनों के झुंड पर हमला करने के लिए भी
छोड़े जाते थे। ये [illegible] जानवर होते, इसलिए लड़ाई खत्म होते
[illegible] पिंजड़ों में वापस आ जाते थे।

साल के ३६५ दिनों में से १३० दिन तो महाराजा इसी तरह शिकार और जानवरों की लड़ाई में बिताते और बाकी दिन उनके दूसरे खेल-तमाशों में गुजर जाते। उनको कुत्ते पालने का भी शौक था। अच्छी से अच्छी नस्ल के सैकड़ों कुत्ते उनके यहाँ पले हुए थे।

कभी-कभी ऐसा होता कि महाराजा अपने रोजाना दस्तूर के खिलाफ सुबह ८ बजे ही सो कर उठ जाते और सुबह का नाश्ता करके सीधे करीब के जंगल में चले जाते जहाँ वे मुर्गाबी, तीतर, मोर, हरियल वगैरह का शिकार करते। उस जंगल में ऐसी चिड़ियाँ बहुतायत से पाई जाती थीं। दोपहर होने पर महाराजा शिकार से वापस आते।

नहा-धो कर १ बजे महाराजा खाना खाते और करीब १ घंटे आराम करते। इसके बाद अपने यार-दोस्तों और महल के कुछ खास अफसरों के साथ फिर शिकार पर चल देते। वहाँ से ८ बजे रात में उनकी वापसी होती। इसके बाद रोज की तरह ११-१२ बजे रात तक शराब का दौर चलता। महाराजा ने यह दस्तूर कायम कर रखा था कि वायसराय और दूसरे मशहूर लोगों से वे सिर्फ़ 'लंच' यानी दोपहर के खाने पर ही मुलाकात करें। उनका बहाना यह था कि डॉक्टरों ने उनकी सेहत के ख्याल से रात का खाना उनको मना कर रखा है। बहाने की जरूरत इसलिए था पड़ती थी क्योंकि रात के वक्त महाराजा मेहमानों की दावतों में शामिल होने का सारा झंझट और तकल्लुफ़ झेलने के बजाय अपना २५ पेग ब्राण्डी पीने का रोजाना प्रोग्राम जारी रखना पसन्द करते थे।

महाराजा का वक़्त ज्यादातर सोने, ब्राण्डी पीने, ताश खेलने और शिकार में गुजरता था। जब भारत के वायसराय की मंजूरी से महाराजा किसी को अपना चीफ़ मिनिस्टर तैनात करते तो वह जिन्दगी भर उनसे चिपका रहना चाहता। कई चीफ मिनिस्टर तानाशाह बन बैठे और दरबार के कुछ मिनिस्टरों और दूसरों ने बड़ी बेग़दबी का बर्ताव किया।

रियासत का इन्तज़ाम देखने के लिए महाराजा को जरा भी वक़्त न मिलता था। इसके बावजूद, भारत सम्राट् इंग्लैंड के बादशाह ने वे सभी ऊँचे से ऊँचे खिताब, उपाधियाँ और रुतबे महाराजा को दिये जो किसी भारतीय राजा को देना मुमकिन था। महाराजा 'इंडियन एम्पायर के नाइट कमान्डर' थे, ब्रिटेन की सरकार और सम्राट् के वफ़ादार और खैरख्वाह होने की वजह से उनको ऊँचा आनरेरी फ़ौजी ओहदा हासिल था। उनकी सबसे बड़ी काबलीयत यह थी कि वे रियासत के इन्तज़ाम में कतई दखल न देते थे और अपना वक़्त मज़े उड़ाने में गुजारते थे। रियासत का इन्तज़ाम चीफ मिनिस्टरों के हाथों में रहता था जो ब्रिटिश वायसराय लोगों के फ़रमाबरदार गुलाम हुआ करते थे। अंग्रेज वायसराय और पॉलिटिकल डिपार्टमेंट की मर्जी और हुक्म के मुताबिक रियासत का इन्तज़ाम चलता था।

२. रंगरलियों का महल

अपनी जवानी के दिनों में पटियाला के महाराजा भूपेन्दर सिंह ने 'लीला-भवन' या रंगरलियों का महल बनवाया था। यह महल पटियाला शहर में भूपेन्दर नगर जानेवाली सड़क पर बारादरी बाग के करीब बना हुआ है। अन्दर दाखिल होने के लिए इसमें एक बहुत ऊँचा लोहे का फाटक है जिसके आगे, ऐसा टेढ़ा-मेढ़ा घुमावदार रास्ता बाग में हो कर गया है कि उस पर चलने वाले राहगीर सिर्फ़ थोड़ी दूर तक ही महल की ज़रा-सी झलक देख पाते हैं। महल की दीवारें तीस फ़ीट ऊँची और चक्करदार बनी हैं, दीवारों के करीब लगे हुए युकेलिप्टस वगैरह के ऊँचे-ऊँचे दरख़्तों ने महल को बाहर वालों की नज़रों से छिपा रखा है। अगर बाग का रास्ता सीधा बनाया जाता तो राह चलते लोग या दरबार के मुसाहब और ख़िदमतगार महल के भीतर जो कुछ होता था, उसकी एक झलक ज़रूर देख पाते। पोशीदगी के खयाल से बड़ी सावधानी रखी गई है। ऊँची दीवारों से घिरे इस टेढ़े-मेढ़े रास्ते पर सौ-दो-सौ गज़ आगे चल कर आप एक आलीशान बाग में दाखिल होते हैं जिसकी ख़ूबसूरती और सजावट की मिसाल हिन्दुस्तान में दूसरी न थी। महाराजा का महल ख़ूब शानदार है और क़ीमती फ़र्नीचर से आरास्ता है। उसमें अंग्रेज़ी ढंग से सजे हुए कई सोने के कमरे हैं जिनके आगे बरामदे बने हैं।

महल का एक ख़ास कमरा जो 'प्रेम-मंदिर' कहलाता है, महाराजा के लिए रिज़र्व था। इस कमरे की दीवारों पर चारों तरफ़ पुराने और अनमोल कलापूर्ण तैलचित्र बने हुए हैं जिनमें सैकड़ों तरह के आसनों में सम्भोग करते हुए नंगे मर्दों और औरतों को दिखाया गया है। इस कमरे को हिन्दुस्तानी ढंग से सजाया गया है। फ़र्श पर हीरे, मोती और लाल वगैरह क़ीमती जवाहरात से जड़े मोटे-मोटे कालीन बिछे हैं। अनमोल पत्थरों से सजे नीले मख़मल के तकिए कमरे में क़रीने से रखे हैं। गुदगुदे रेशमी गद्दे बिछे हैं जो भी लटक रहे हैं। महाराजा के भोग-विलास का पूरा साज़ो-सामान मौजूद है।

महाराजा ने महल के बाहर एक 'स्वीमिंग पूल' या तालाब बनवाया है। इतना बड़ा है कि १५० मर्द-औरतें एक साथ नहा सकते हैं। भूपेन्दरसिंह बड़ी शानदार पार्टियां दिया करते थे। मशहूर था कि ों में जो जश्न और रंगरलियां मनाई जाती थीं, वे बेमिसाल होतीं

थीं। उन पार्टियों में शरीक होने के लिए महाराजा अपनी सहेलियों और प्रेमिकाओं को बुलाते थे। ये सब, महाराजा और उनके दो-चार ख़ास मुसाहबों या सरदारों के साथ तालाब में नहाती और तैरती थीं।

गरमी के मौसम में, शाम को नहर और बावली के पानी से तालाब भर दिया जाता था। पानी गर्म होता तो उसे ठंडा करने के लिए बर्फ़ की बड़ी-बड़ी सिलें मँगा कर तालाब में डलवा दी जाती थीं। तब पानी का तापमान कम हो जाता था। तालाब में उन बर्फ़ की सिलों पर मर्द-औरतें हाथों में ह्विस्की के ग्लास लिए आराम से लेटे-लेटे तैरा करते थे। औरतों के बदन पर लगे सेन्ट और इत्रों की खुशबू से तालाब का पानी भी महक उठता और हवा में एक मस्ती छा जाती थी।

यह खुशनुमा नज़्ज़ारा देखते ही बनता था जब निहायत बारीक और भीनी, तैरने की पोशाकें पहने हुए ५०-६० औरतें बर्फ़ की सिलों पर लेटी तैरती हुई पानी और शराब के जाम व नाश्ता पेश करती थीं। कभी-कभी ये पार्टियाँ सारी रात चला करती थीं। कुछ मर्द औरतें तालाब में साथ-साथ नहाते, कुछ गाते और नाचते रहते। तालाब के किनारे दरख़्तों की डालों पर बैठी हुई कुछ औरतें धीमी आवाज़ में गीत गुनगुनाया करतीं। आमतौर पर ऐसी रंगरलियाँ या तो गर्मी के मौसम में या बरसात में मनाने का दस्तूर था। सुबह से शाम तक खाने-पीने का दौर बे-रोकटोक चला करता। लंच या डिनर में खाने की जो चीज़ें परोसने का क़ायदा था, उनके अलावा एक से एक बढ़ कर ज़ायक़ेदार और लज़ीज़ खाने और कीमती शराबें ऐसे मौक़ों पर सब को पेश की जातीं थीं। महल के मर्द ख़िदमतगार और ड्यूटी पर तैनात अफ़सरान या फ़ौजी संतरी महल ख़ास से एकदम अलग दूसरी कोठी में रखे जाते थे। उनसे बातचीत या तो टैलीफ़ोन पर होती या किसी पोशीदा सुरंग के रास्ते उन तक संदेशा पहुँचाया जाता। इन पोशीदा रास्तों पर ८० साल से भी ज़्यादा उम्र के सफ़ेद दाढ़ी वाले संतरियों का सख़्त पहरा रहता था। वे लोग ज़रूरत के वक़्त महाराजा का हुक्म ड्यूटी पर तैनात अफ़सरों तक पहुँचाया करते थे। रंगरलियों में शरीक होने वाली महारानियों और रानियों की मोटरें ख़ास महल के अन्दर तक चली आती थीं। रियासत के अफ़सरान और महाराजा के परिवार के लोगों की मोटरों को महल के फाटक तक आने की इजाज़त थी। गर्मियों में जब बाहर का तापमान ११४ डिग्री पर होता था, तब महाराज के तालाब के पानी का तापमान सिर्फ़ ४० या ५० डिग्री रखा जाता था।

इन जलसों में विलायती या ग़ैर-हिन्दुस्तानी लोग बहुत कम बुलाये जाते थे। सिर्फ़ वही यूरोपियन या अमेरिकन लेडी जो उन दिनों महाराजा के मोतीबाग पैलेस में मेहमान की हैसियत से ठहरी होती और जिसके साथ महाराजा की इश्क़बाज़ी चलती होती, इन रंगरलियों में शरीक की जाती थी।

महाराजा का पलंग भी कोई मामूली न था। वह तीन फ़ीट ऊंचा और बहुत बड़ा गुदगुदे सोफे की तरह बना हुआ था। जिस पर रेशमी गद्दे और सुन्दर कढ़ी हुई चादरें बिछी रहती थीं। फर्श पर बेशक़ीमत और बेलबूटों की कारीगरी से सजे क़ालीन बिछे थे जो कश्मीर, काशान और ईरान से मँगाये गये थे। रनिवास की उन महिलाओं को, जो रात को प्राइवेट कमरे में महाराजा की खिदमत के लिए हाज़िर होती थीं, महाराजा के साथ खाना खाने की इजाज़त थी। जो बीमार होतीं, वे या तो अपने कमरों में या महल के खास "डाइनिंग हॉल" में जाकर खाना खाती थीं।

उन सब को बहुत बढ़िया भोजन और पीने को ऊँचे दर्जे की शराब मिलती थी। अपने महाराजा के करीब रह कर उनको बड़ी खुशी हासिल होती थी।

उन महिलाओं की फ़ेहरिस्त में जो महाराजा की इच्छा होने पर उनके पलंग पर साथ सो सकती थीं, सिर्फ उन्हीं के नाम रहते थे जिनकी जांच हिन्दुस्तानी लेडी डॉक्टर और फ़्रेन्च डॉक्टर पहले ही कर लेते थे और उनको पूरे तौर पर तन्दुरुस्त करार दे देते थे।

महाराजा की उम्र पचास के करीब पहुँच रही थी। वे भोग-विलास की ज़िन्दगी बिताते थे क्योंकि अपने रनिवास की ३५० औरतों की शारीरिक भूख उनको अकेले मिटानी पड़ती थी। बुढ़ापा तेज़ी के साथ उन पर अधिकार कर रहा था। उतनी उम्र में जो ताक़त और पौरुष उनमें होना चाहिए था, उसमें बहुत कमी आ चुकी थी। उनकी गिरती हुई सेहत सम्हालने और कामोत्तेजना बढ़ाने के लिए उनको कीमती पुरानी दवाईयाँ, रस-रसायन और कुश्ते खिलाने की व्यवस्था की जाती थी।

काम-विज्ञान में महाराजा को विशेष रुचि थी, इसलिए ये फ्रेन्च डाक्टरों से यह बात जानने को उतावले रहते थे कि किस तरह एक अधेड़ औरत को कमसिन कुँवारी लड़की में बदला जा सकता है, जिससे वह अपने अन्नदाता और स्वामी को पसन्द आये और उनकी कामोत्तेजना जाग्रत कर सके। महाराजा की कामुकता बढ़ाने के लिए फ्रेन्च डाक्टर रानियों की योनियों में खास तरह के इंजेक्शन लगाकर विषय-सुख और उत्तेजना देने वाली सुगन्ध पैदा कर देते थे। गर्भाशय से निकलने वाले स्राव को शीशे की स्लाइडों पर लेकर कर्नल फ़ॉक्स खुर्दबीन से डॉक्टरी जांच करते थे और जांच का नतीजा फ़्रेन्च डाक्टरों को सूचित करते थे। इन्जेक्शन द्वारा योनि में सुगन्ध पैदा करने वाले कीटाणुओं को गतिवान बनाया जाता था और बदबू पैदा करने वाले कीटाणु कॉस्टिक सोडा से तैयार किये हुए घोल का 'डूश' देकर नष्ट किये जाते थे। मासिक-धर्म की अनियमितता या रज-दोष के कारण जिन युवतियों के बदन से दुर्गन्ध आने लगती थी, उनका इलाज भी इसी तरीके से किया जाता था।

चिकित्सा सम्बन्धी अनुसन्धान और इलाज इसलिए किया जाता था, जिससे महिलाएँ तन्दुरुस्ती और सुगन्ध की [illegible] हो सकें। जिन महिलाओं की छातियाँ बड़ी, बेडौल या फूली हुई होतीं [illegible] आपरेशन करके उनका आकार छोटा कर देते थे ताकि वे सुडौल दिखाई दें। अक्सर महाराजा के बताये हुए नमूनों के मुताबिक औरतों की छातियों का आकार बदला जाता था। कभी महाराजा चाहते कि छातियों की बनावट अण्डाकार हो, कभी मशहूर अलफ़ान्सो आम के फल जैसी और कभी नाशपाती जैसी। फ्रेन्च डॉक्टर इस हुनर में माहिर थे और ठीक महाराजा की पसन्द के मुताबिक छातियों की बनावटें बदल दिया करते थे। चेहरे और बदन की खूबसूरती पर भी ध्यान दिया जाता था। महल की चहार-दीवारी के अन्दर ही विशेषज्ञों की देख-रेख में कई सैलून खोल दिये गये थे जहाँ बालों की सजावट और हाथों व पैरों के नाखूनों की दुरुस्ती की जाती थी। देश और विदेश के मशहूर जौहरी और रेशमी कपड़ों के व्यापारी कीमती जवाहरात, ज़ेवरात, ज़री के काम की साड़ियाँ, ज़रदोज़ी के थान वगैरह की पूरी-पूरी दूकानें महल में उठा लाते थे जहाँ रनिवास की महिलाएँ अपनी ज़रूरत की मनपसन्द चीज़ें खरीदती थीं। ये जौहरी और व्यापारी अपना माल बड़ी ऊँची कीमतों पर बेच कर बेशुमार पैसा बटोर ले जाते थे क्योंकि महाराजा कभी मोल-भाव नहीं करते थे और उनको मुँह माँगे दाम देते थे।

महल की चहार दीवारी के अन्दर गमों के दरख्त और रंग-बिरंगे फूलों के पौधे चारों तरफ दिखाई देते थे। गुलाब, चमेली, चम्पा, रात की रानी के अलावा ट्यूलिप और गुलदाउदी के खूबसूरत फूलों की बहार रहती थी। लखनऊ के मशहूर इत्र, फ़्रान्स के बेश-कीमत सेन्ट और हिंदुस्तान की बनी खुशबूदार अगरबत्तियाँ रनिवास के कमरों में जलाई जाती थीं जिनसे वहाँ जाने वालों पर एक नशा-सा छा जाता था।

सचमुच, वह एक अजीबो-ग़रीब और क़ाबिले तारीफ़ नज़्ज़ारा होता था, जब बेशक़ीमत जवाहरात पहने रंग-बिरंगी रेशमी पोशाकों में, फ़्रान्स के खुशबूदार सेन्ट छिड़के हुए फूलों से सजी हुई रनिवास की वे तीन-सौ सुन्दरियाँ अपने-अपने कमरों से निकल कर इकट्ठी होती थीं। महाराजा किसी एक से मज़ाक करते, दूसरी के गाल पकड़ते और हँसी-दिल्लगी, चुहलबाज़ी चलने लगती। रंगरलियों का वह बिना रहित खुला वातावरण जो महाराजा के मोती बाग पैलेस में व्याप्त रहता था, उसकी मिसाल दुनिया के पर्दे पर दूसरी नहीं मिल सकती।

रनिवास की किसी महिला के जब एक या दो बच्चे हो जाते, तब कर्नल हेज उसकी रजवाहिनी नलिकाएँ काट कर उसे बाँझ बना देता था जिससे आयन्दा वह बच्चे न पैदा कर सके।

गर्भाशय और पेट की गम्भीर बीमारियों में, जैसे गुल्म वगैरह के

आपरेशन बड़ी कुशलता से और जल्दी करने के कारण एक सर्जन की हैसियत से डॉक्टर डोर की बड़ी दूर-दूर तक शोहरत फैल गई और आपरेशन करने के लिए दूसरी रियासतों से भी उनके बुलावे आने लगे। आमतौर पर जब महल में महाराजा की किसी चहेती का आपरेशन होता था, तब महाराजा खुद मौजूद रहते और बड़ी दिलचस्पी से देखा करते थे। हिन्दुस्तानी डॉक्टरों के आगे रनिवास की महिलाएँ शर्माती थीं, मगर यूरोपियन डॉक्टरों से वे खुल कर बातचीत करती थीं और रोज़ाना अपनी जाँच कराती थीं। वे क़तारें बनाकर नंगी लेट जातीं और डॉक्टर उनको इन्जेक्शन देते या सेहत सुधारने के लिए बदन पर दवायें लगाते थे। जब कभी कोई जवान कुँवारी लड़की महाराजा के पलंग पर आती और उससे रति करने में उनको कठिनाई पड़ती, तो सम्भोग क्रिया को सुगम बनाने के लिये डॉक्टर बड़ी खुशी से आकर एक मामूली सा आपरेशन कर जाते थे।

महाराजा पर नई जवानी लाने के लिए उनको कीमती दवाइयाँ, पौष्टिक भोजन और तेज असर रखने वाले टॉनिक भी बराबर दिये जाते थे। भोग-विलास में लिप्त रहने के कारण महाराजा की काम-शक्ति घट गई थी। उनको गाजर के साथ जवान नर गौरैयों के भेजे और कुछ जड़ी-बूटियाँ तथा खनिज पदार्थ मिलाकर सेवन कराये जाते थे।

ऐसी दवाइयाँ, जो मुश्किल से दो-तीन दिन को काफ़ी होती थीं, कीमत में ५० हज़ार से ६० हज़ार रुपए तक की होती थीं। इनके सेवन से महाराजा अपने को काफ़ी जवान और ताकतवर अनुभव करने लगते थे।

दिल्ली और हिन्दुस्तान के दूसरे इलाकों के रहने वाले हकीमों में अक्सर इस बात का मुक़ाबला होता था कि सोना, सच्चे मोती, चाँदी, लोहा और दूसरी ताक़त देने वाली धातुओं से तैयार किया हुआ कौन-सा कुश्ता सबसे ज्यादा बाअसर, उत्तेजक और पौरुष बढ़ाने वाला साबित होता है। किसी ख़ास कुश्ते या टॉनिक का सेवन करके सिर्फ़ एक रात के बाद ही महाराजा अपने डॉक्टर को बता देते थे कि उसका असर कैसा हुआ। फ्रेन्च, अंग्रेज, हिन्दुस्तानी डॉक्टरों, हकीमों और वैद्यों की सभायें और बैठकें होती थीं, जिनमें काम-विज्ञान के विषय पर विचार किया जाता था। फिर वे लोग आपस में मशविरा करके काम-शक्ति बढ़ाने की कोई संजीवनी दवा खोजने और तैयार करने का इरादा जाहिर करते थे। फ्रेन्च डॉक्टरों ने भी महाराजा को सलाह दी थी कि वे रेडियम युक्त बिजली के कुछ विशेष यंत्रों द्वारा अपना इलाज करायें जिनसे शुक्राणुओं की वृद्धि के साथ-साथ, अंडकोषों की कार्य क्षमता बढ़े तथा लिंग में कठोरता आने से कामोत्तेजना में उनको सफलता मिले।

ऐसी थी महाराजा भूपेन्द्र सिंह की जीवन चर्या, जो राजनीति, कौशल, [illegible] दर्शन तथा छन्द विज्ञान सम्बन्धी विषयों में उतना ही बढ़े-चढ़े थे जितना ...विज्ञान में।

४. ताश की एक बाज़ी

पटियाला के महाराजा भूपेन्द्र सिंह को पोकर खेलने का बड़ा शौक था। वे ताशों का यह खेल हिन्दुस्तानी ढंग से खेलते थे जो सिर्फ तीन पत्तों से खेला जाता है। अंग्रेजी या अमेरिकन ढंग से पोकर ताश के पाँच पत्तों से खेला जाता है। तीन पत्तों वाले पोकर के खेल में तीन इक्के सबसे बड़े माने जाते हैं जो किन्हीं भी तीन पत्तों के हाथों से हार नहीं सकते।

पोकर की पार्टियों में महाराजा अपने दो या तीन विश्वासपात्र मिनिस्टरों, अपनी तीन-चार चहेती महारानियों और अपने निजी खज़ाने के अफसर को शरीक करते थे। पोकर खेलने का आमन्त्रण टेलीफोन के ज़रिये दिया जाता था और जो लोग बुलाये जाते, उनसे कह दिया जाता था कि खेलने के लिए काफी रुपया अपने साथ लायें। मिनिस्टर लोग अपने साथ बहुत कम रुपया लाते थे जिससे खेल में उनको थोड़ा ही नुकसान उठाना पड़े। महाराजा के कहने से उनके निजी खज़ाने के अफसर, कर्नल ऋतमोहिन्दर सिंह अपने साथ पूरा बैंक का खाता खोलकर बैठते थे और पार्टी में जिसके पास रुपए कम पड़ते, उसको हिसाब में लिख कर रुपए उधार देते थे।

मोती बाग पैलेस में, महाराजा के खास कमरे में आधी रात के बाद पोकर का खेल शुरू होता था जब महाराजा और उनके खेलने वाले साथी कॉकटेल और शराब पीने के बाद हँसी-दिल्लगी के 'मूड' में आ जाते थे। महाराजा की तबीयत और मिजाज के मुताबिक दो या तीन घण्टे तक पोकर-पार्टी जमती थी।

जब कभी किसी खेलने वाले के पास रुपए कम हो जाते, तब वह खज़ाने के अफसर से रुपया उधार माँग लेता था और उस रुपए की रसीद लिख देता था। कभी-कभी उधार में दी गयी रकम लाखों तक पहुँच जाती थी मगर दस्तूर यह था कि पार्टी में जो लोग शरीक हों और रुपया उधार माँगें, तो खज़ाने का अफसर देने से इन्कार न करे। आमतौर पर, खिलाड़ी लोग ज़रूरत से ज़्यादा रुपया उधार माँग लेते थे। खेल जारी रहता तब कुछ मिनिस्टर लोग और महारानियाँ अपना निजी रुपया सचमुच न हारने पर भी खज़ाने के अफसर से कर्ज़ माँगते। अफ़सर बेचारा कैसे जान पाता कि कर्ज़ की माँग सच्ची है या झूठी! महाराजा के हुक्म के मुताबिक उसे तो उन लोगों की माँगें पूरी ही करनी पड़ती थी। खेल की समाप्ति पर नतीजा हर दफा यही होता कि खेल

में शरीक होने वालों की जेबें भरी होतीं; महाराजा लम्बी रकमें हारते और खजाने के अफ़सर के बैंक में एक पैसा भी बाकी न बचता !

पोकर, खेल के नियमानुसार नहीं खेला जाता था बल्कि दिल बहलाव के लिए खेला जाता था। उसे साफ़ तौर पर जुआ नहीं कहा जा सकता क्योंकि जिस खिलाड़ी के हाथ में तीन इक्के पहुँच जाते, वह महाराजा को चाल बढ़ाने के लिए उकसाने के बजाय बड़ी तहज़ीब और अदब से उनसे पत्ते 'शो' करने की दरख्वास्त करता। महाराजा ऐसी बात पसन्द करते थे और जिसके पास सबसे ऊँचे पत्ते होते, उसे बड़ी रकम मुआवज़े की शक्ल में खुशी से दे देते थे। अगले रोज, खज़ाने का अफ़सर रात को कर्ज़ दिये रुपयों की वापसी का तकाज़ा कदापि न करता था क्योंकि वह कर्ज़ लौटाने की गरज़ से नहीं दिया जाता था। इस तरीके से महारानियों और दरबारियों को अपनी जेबें भरने का अच्छा मौका मिल जाता था और वे लम्बी-लम्बी रकमें खींच ले जाते थे। पटियाला के महाराजा भूपेन्दर सिंह के पोकर खेलने का ढंग यही था।

५. रियासत का आरकेस्ट्रा

पटियाला के जिमखाना क्लब में अन्तर्राष्ट्रीय क्रिकेट मैच होने वाला था, जिसमें रियासत की टीम और ब्रिटिश टीम के खिलाड़ी भाग ले रहे थे। पटियाला के महाराजा भूपेन्द्र सिंह रियासत की टीम के और मशहूर टेस्ट क्रिकेट खिलाड़ी मिस्टर जार्डिन ब्रिटिश टीम के, कप्तान थे।

रियासत की क्रिकेट टीम, जिसके कप्तान महाराज साहब थे, ब्रिटिश टीम के मुकाबले में कमज़ोर पड़ती थी क्योंकि अंग्रेजों की उस टीम में बड़े तेज बॉलर और ऊँचे दर्जे के बल्लेबाज़ खिलाड़ी शामिल थे।

महाराजा के सलाहकार आस्ट्रेलिया के नामी गरामी बॉलर मिस्टर फ्रैंक टैंट, प्राइम मिनिस्टर सर लियाकत हयात खाँ, दीवान बलायती राम, दक्षिण पंजाब क्रिकेट एसोसिएशन के सेक्रेटरी और सरदार बूटा राम, परेशान थे कि जैसे भी हो, महाराजा की टीम को जीतना चाहिए। उन सबने मिलकर महाराजा से दरख्वास्त की कि महल में बड़े पैमाने पर स्वागत-समारोह और दावत का इन्तज़ाम किया जाय जिसमें ब्रिटिश टीम व रियासत की टीम के सभी खिलाड़ी, खास-खास मिनिस्टर और रियासत के आला अफसरान निमन्त्रित किये जायँ।

क्रिकेट मैच से एक दिन पहले, शाम को, जलसे का इन्तज़ाम किया गया एक से एक बढ़ कर उम्दा जायकेदार खाने की चीज़ें और बढ़िया शराबें मेहमानों के स्वागत-समारोह और दावत में परोसी गईं। दावत के खत्म होने पर नाच-गाने का दिलचस्प प्रोग्राम पेश किया गया जिसमें दरबार की नाचने वालियों ने भाग लेकर मेहमानों का मनोरंजन किया। खिलाड़ियों ने डटकर खूब स्कॉच, ह्विस्की व दूसरी क़ीमती शराबें पीं और नाचनेवालियों से जी भर कर छेड़खानी करते रहे। जब पार्टी खत्म हुई तब वे लोग नशे में धुत थे महाराजा के खास अंगरक्षकों ने मोटरों में उनको बिठाकर बड़ी मुश्किल से गेस्ट-हाउस तक पहुँचाया जहाँ उनको ठहराया गया था।

महाराजा की टीम के खिलाड़ियों को चुपचाप पहले से ही हिदायत कर दी गई थी कि दावत के मौके पर वे शराब न पियें जिससे अगले दिन सवेरे मैच खेलने के लिए वे मुस्तैद और चुस्त रह सकें। दावत रात के चौथे पहर खत्म हुई और ब्रिटिश टीम के खिलाड़ियों को आराम करने का ज़रा भी मौका न मिला। सुबह, जब वे लोग क्रिकेट के मैदान में उतरे, उस वक्त उनका बुरा

हाल था। उनको बहुत जल्द थकावट आने लगी और उनका खेल ज़रा भी जम न सका। उधर, महाराजा की टीम के खिलाड़ी अपनी जगहों पर चौकस थे और उन्होंने अंग्रेज़ों के मुकाबले में बहुत ज्यादा रन बनाये।

क्रिकेट मैच पाँच दिन चला और पाँचों दिन यही तरकीब चालू रखी गई। नतीजा यह हुआ कि महाराजा की टीम ने मैच जीत लिया। दुनिया भर के अखबारों में, खास तौर पर ब्रिटेन और हिन्दुस्तान के अखबारों में, यह खबर मोटे-मोटे अक्षरों में छपी कि महाराजा की टीम ने ब्रिटिश टीम को हरा दिया। नगर में, किसी को इस राज़ की खबर न थी कि महाराज की टीम कैसे मैच जीत गई।

हर रोज़ क्लब में, क्रिकेट मैच देखने के लिए लोगों की भारी भीड़ इकट्ठा होती, जिसके दिल बहलाव के ख़्याल से वियना से आये मशहूर संगीतज्ञ मैंक्स गैगर के इन्तजाम में रियासती आर्केस्ट्रा, बैंड पर धुनें बजाया करता था।

जिमखाना क्लब में, मैच के बाद दोनों टीमों के खिलाड़ियों और बहुत से सरकारी अफ़सरों को शराब पेश की जाती। उस समय लॉन में रियासती बैंड बजता रहता था।

महाराजा थोड़ी देर तक शराब पीते रहे। न जाने क्यों, यकायक उनको जान पड़ा कि बैंड ताल-स्वर से अलग बज रहा है। वे उठे और बैंड कन्डक्टर को हटा कर खुद बैंड संचालन करने लगे। फिर वे पाँव-पैदल मैदान में इर्द-गिर्द मार्च करते हुए चक्कर लगाने लगे। पूरे बैंड में २८ बाजे वाले थे। वे भी महाराजा के पीछे-पीछे बाजे बजाते हुए चक्कर लगाने लगे, मगर पक्के राग-रागिनी के बजाय, जो अंग्रेजी हों या हिन्दुस्तानी, महाराजा के इशारों पर वे पंजाबी धुनें बजाते रहे, महाराजा ने इस काम को बड़ी खूबी से अंजाम दिया लेकिन अपने उत्साह और उमंग में, उनको क्रिकेट के मैदान के चारों तरफ कई दफ़ा, बार-बार चक्कर लगाने पड़ गये।

करीब एक दर्जन चक्कर काटने के बाद भी महाराजा बैंड का संचालन करते रहे और अन्त में क्रिकेट के मैदान से बाहर निकल कर सीधे मोतीबाग पैलेस की तरफ़ चल दिये जो कम से कम ४ मील के फ़ासले पर था। उनके पीछे बैंड वाले भी चल पड़े, मेहमान लोग इस दृश्य को बड़ी हैरत और दिलचस्पी से देखते रहे। महाराजा फिर क्लब में वापस न आये। अपने महल के चबूतरे पर खड़े होकर बराबर आधी रात तक आरकेस्ट्रा का संचालन करते रहे।

जिमखाना क्लब में आये मेहमानों के सामने कोई और रास्ता न था, सिवाय इसके कि अपने प्रतिष्ठित मेज़बान से विदा माँगे बिना और मिस्टर मैंक्स गैगर का बैंड सुने बिना, विदा हो जायें।

महाराज की सनक ऐसी ही होती थी। ब्रिटिश टीम ने न तो मैच जीत[illegible] ही पाई और न संगीत का आनन्द उठाया।

६. काम-पूजा की नई विधि

हिज़ हाइनेस महाराजाधिराज सर भूपेन्दर सिंह बहादुर, जो पटियाला रियासत के शासक थे, उनकी नई तान्त्रिक साधना अथवा उनके द्वारा कल्पित काम-पूजा की नई विधि की कहानी शुरू करने के पहले, यह बतलाना जरूरी है कि वास्तव में तान्त्रिक उपासना है क्या। तभी तान्त्रिक अनुष्ठानों का महत्व समझ में आयेगा और यह पता चलेगा कि कैसे उनकी नई विधियाँ प्रचलित करके महाराजा ने उनको अपनी विषय-वासना और कामुकता की तृप्ति का साधन बनाया।

सच पूछा जाय तो महाराजा ने तान्त्रिक उपासना का जो ढंग चलाया, वह हिन्दू धर्म के पवित्र और सच्चे तान्त्रिक रूप से एक दम जुदा था। वह महाराजा की व्यभिचारी प्रवृत्ति को संतोष देने के लिए ही चलाया गया था जिनकी अनगिनत रानियों और चहेतियों को धर्म की आड़ में अपनी विषय-वासना तृप्त करने का मौका मिलता था और उनकी निगाहों में महाराजा की मान और इज्जत कम न होती थी। धार्मिक विश्वास के साथ महिलाएँ वहाँ इकट्ठी होती थीं और उस उपासना में बड़ी श्रद्धा से भाग लेती थीं। उपासना में वे ही व्यक्ति भाग ले सकते थे, जिनका प्रवेश स्वीकार कर लिया जाता था और जो पूजा के रहस्य को गुप्त रखने की प्रतिज्ञा कर लेते थे।

वह व्यक्ति सचमुच बड़ा साहसी रहा होगा, जिसने आज से पचास साल पहले ईश्वर तक पहुँचने का एक साधन तान्त्रिक उपासना को बतलाया होगा क्योंकि, उसी दैवी सिद्धान्त से हम सब जीते हैं, चलते-फिरते हैं और वही हमारे अस्तित्व का आदि कारण है। फिर, उस तान्त्रिक उपासना में जब मद्य-पान और प्रत्यक्ष-रूप में अनेक घृणित क्रियाएँ सम्मिलित हों, तब उसका लोक-प्रिय होना आश्चर्य की बात थी। अभिचार के अनुष्ठान शत्रुता के उद्देश्य से किये जाते थे। उनमें बगला मुखी, धूमावती और छिन्नमस्ता आदि देवियों की पूजा अपने शत्रुओं को हानि पहुँचाने के उद्देश्य से तान्त्रिक विधि से होती थी। कलकत्ता हाईकोर्ट के एक न्यायधीश स्वर्गीय सर जॉन उडरॉफ, जिन्होंने विशेष अध्ययन करके सफलतापूर्वक इस कलंकित तन्त्र शास्त्र का समर्थन किया और आगम-अनुसन्धान-समिति, जिसके सर उडरॉफ तथा श्रीयुत ए० घोष प्रमुख पथ-निर्देशक थे, हमारे धन्यवाद के पात्र हैं। उनके प्रयत्नों के फलस्वरूप अब यह सम्भव हो सका है कि तन्त्र-शास्त्र के दर्शन, धर्म और

प्रयोग का विद्यार्थी ज्ञान के मार्ग पर सुगमता से चल सकता है। तान्त्रिक अनुसन्धान का विषय आजकल वर्जित नहीं है और सामान्य रूप से लोक-स्वीकृत है, इस कारण अब इसको ढोंग और आडम्बर अथवा हिन्दू धर्म का विकृत रूप नहीं समझा जाता।

जहाँ तक तान्त्रिक युग की प्राचीनता का प्रश्न है और जिसकी आजकल के विद्वान अधिकतर खोज कर रहे हैं, यह निश्चित हो चुका है कि केवल पौराणिक काल में ही उसका प्रादुर्भाव नहीं हुआ, बल्कि वैदिक काल में भी उसकी प्रबलता थी। कुछ विद्वानों के मतानुसार तन्त्र बौद्धमत के बाद प्रचलित हुए। इस बात को मानना कठिन है यदि हम 'ललित विस्तार' नामक ग्रन्थ के लेखक का कथन स्वीकार करें और न स्वीकार करने का कोई कारण भी तो नहीं मिलता। इस ग्रन्थ के १७वें परिच्छेद में बतलाया गया है कि भगवान बुद्ध ने ब्रह्मा, इन्द्र, कात्यायन, गणपति आदि के पूजन को निषिद्ध ठहराया। ललित विस्तार बड़ा विश्वसनीय बौद्ध-ग्रन्थ है यद्यपि बौद्ध मतावलम्बियों के भी निजी तन्त्र और आदिबुद्ध, प्रज्ञापरामिता, मंजुश्री, तारा, आर्य तारा, आदि देवी-देवता हैं।

तान्त्रिक क्रियाओं से मुख्यतया सम्बन्धित तन्त्र-साहित्य, जिसमें उपासना विधि और व्यावहारिक नियम आदि वर्णित हैं, अधिकतर मुसलमानों की भारत विजय से कई शताब्दियों पहले लिखा गया था। अनेक तान्त्रिक ग्रन्थों की रचना ईसा की १६वीं और १७वीं शताब्दियों में हुई। इस विषय के ग्रन्थ लिखने का कार्य उन्नीसवीं शताब्दी तक चलता रहा। उनमें से कुछ के नाम नीचे दिये जाते हैं :

(अ) काम्ययन्त्राधार —लेखक महामहोपाध्याय परिव्राजकाचार्य
(ब) तन्त्रसार —लेखक कृष्णानन्द, बंगाल में प्रचलित अत्यन्त लोकप्रिय और सुविस्तृत व्याख्या
(स) तन्त्र दीपिका —लेखक गोपाल पचन्ना

तन्त्रों का आधार गम्भीर दर्शन है। श्रुतियों की भांति तन्त्र, दीक्षा की आवश्यकता पर ज्यादा जोर देते हैं। साथ ही, आचार्य और शिष्य की पूर्ण योग्यता और पात्रता की जरूरत को भी वे महत्व देते हैं। सुयोग्य आचार्य की परिभाषा है कि वह पवित्र-जन्मा हो पवित्र संकल्प वाला हो और अपनी समस्त इन्द्रियाँ वश में रखता हो। वह आगम तथा समस्त शास्त्रों के अर्थों का ज्ञाता हो, परोपकारी हो और भगवान के नाम के स्मरण, पूजन, ध्यान और हवन में सदा संलग्न रहता हो। उसका मन शान्त हो और उसमें वरदान देने की क्षमता हो, उसे वेदों की शिक्षा का पूर्ण ज्ञान हो, वह योग साधन में पारंगत हो और [illegible] तन्त्र आरम्भ में कुशल हो। सुपात्र शिष्य की विशेषतायें निम्नलिखित

वह अच्छे वंश में उत्पन्न हुआ हो, निष्कपट स्वभाव का हो, मानव-जीवन के चारों उद्देश्यों की प्राप्ति में तत्पर हो अर्थात् ज्ञान, शक्ति, सृजन और श्रम में संलग्न रहता हो। वह वेद-शास्त्रों में पारंगत और बुद्धिमान हो। अपनी पाशविक प्रवृत्तियों पर उसका पूर्ण नियन्त्रण हो, प्राणिमात्र पर सदा दयालु हो और पुनर्जन्म में उसका विश्वास हो। वह नास्तिकों से दूर रहता हो, अपने कर्त्तव्यों के पालन में अध्यवसायी हो, माता-पिता के प्रति सन्तान-धर्म के पालन में जागरूक हो और गुरु के समक्ष अपने वंश, सम्पत्ति और विद्या के अहंकार से विमुक्त तथा विनम्र हो। वह गुरु के प्रति अपने कर्त्तव्य-पालन में निजी हितों का ही नहीं, वरन् अपने प्राणों तक का बलिदान करने को सदा तैयार रहता हो और पूर्ण विनीत होकर गुरु की सेवा में प्रस्तुत रहता हो। शिष्यों को सदा स्मरण रखना चाहिए कि गुरु अजर-अमर है और अविनाशी है। इसका अर्थ यह नहीं लगाना चाहिए कि मानव शरीरधारी गुरु ऐसा है—वह तो एक मार्ग-मात्र है जिससे होकर पारब्रह्म परमात्मा की ज्योति अवतरित होती है। सच्चा गुरु स्वयं आदिपुरुष ब्रह्मा या शिव है। वही बीजभूत शक्ति है। मानव गुरु की स्थिति ऐसे उत्तरदायित्व की है जो दीक्षा देने मात्र से समाप्त नहीं होता।

गुरु को हर तरह से शिष्य की भलाई का ध्यान रख कर उसका मार्ग-प्रदर्शन करना पड़ता है। वह शिष्य की आत्मा का चिकित्सक होता है। स्वस्थ आत्मा केवल स्वस्थ शरीर में ही निर्वाह कर सकती है। गुरु को देखना पड़ता है कि स्वास्थ्य के विषय में भी उसका शिष्य सही रास्ते पर चलता है या नहीं। जो गुरु अपनी जिम्मेदारियों को समझता है, वह किसी को दीक्षा देने में जल्दी नहीं करता। शास्त्रों में लिखा है कि शिष्य ऐसे व्यक्ति को गुरु न बनाये, जिसके प्रति उसकी सहज श्रद्धा और विश्वास जाग्रत न हो। दीक्षा देने के ढंग अलग-अलग होते हैं और शिष्यों की अभिरुचि एवं पात्रता के अनुसार उनमें भिन्नता रहती है। दीक्षा की सामान्य विधि 'क्रिया-दीक्षा' कहलाती है। यह विधि बड़ी विस्तृत होती है और इसमें बहुत से धार्मिक कृत्य सम्पन्न करने पड़ते हैं। ऊँची योग्यता के व्यक्ति अन्य विधियों द्वारा दीक्षित होते हैं। सबसे अधिक प्रभावी और शीघ्रतमा दीक्षा 'वेध-दीक्षा' कही जाती है। बहुत कम व्यक्ति ऐसी दीक्षा के सुपात्र होते हैं। इस प्रकार से दीक्षा पाने वाला व्यक्ति तत्काल अपनी आत्मा से शिक्षक की आत्मा, मन्त्र और देवता का एकीकरण सम्पन्न कर लेता है। तन्मानुसार वह स्वयं शिवरूप हो जाता है। जो शिष्य अन्य विधियों द्वारा दीक्षा प्राप्त करता है, वह अपनी योग्यतानुसार धीरे-धीरे उपरोक्त स्थिति तक पहुँच पाता है। दीक्षा का उद्देश्य है—शिष्य को अनुभूति की पराकाष्ठा तक पहुँचाना। तन्त्रों में बड़े सुन्दर ढंग से लिखा है—"स्वयं की आत्मा ही अपना पूज्य सर्वांग सुन्दर देवता है। यह विश्व केवल आकार मात्र है।" ऐसी दशा में मूर्तियाँ आदि जो अभ्यास के

जाती हैं और जो शिष्य का विश्वास केन्द्रित करने के लिए होती हैं, केवल बाह्य साधन हैं मगर उनको अनिवार्य साधन समझना चाहिए। हमारे सभी धर्म-ग्रन्थों और तन्त्रों में लिखा है कि सर्वोपरि ब्रह्म, जो अन्तिम वास्तविकता या सत्य है, उसकी कल्पना सामान्य मनुष्य की बुद्धि से परे है। तन्त्र-शास्त्र में लिखा है—"ब्रह्म, ज्ञान-मात्र है और निराकार दशा में जन-साधारण उसकी पूजा नहीं कर सकता, अतएव वह एक प्रतीक या चिह्न निश्चित करके उसमें ब्रह्म की भावना लाता है और उसका पूजन करता है। विप्र अथवा अनुष्ठानकर्त्ता का देवता उस अग्नि में निवास करता है जिसको वह हवन की आहुतियाँ समर्पण करता है। ध्यानशील व्यक्ति का देवता उसके हृदय में वास करता है, जिसको अन्तर्ज्ञान का प्रकाश नहीं दिखाई दिया है, वह देवता का वास मूर्ति में मानता है। जो विज्ञ है और आत्मा को जान गया है, वह सर्वत्र उसे देखता है।"

सभी तन्त्रों में शिक्षा के पाँच प्रकार बतलाये गये हैं। पूजा की चार विधियों का वर्णन हम पहले कर चुके हैं। पाँचवी विधि जो देवता से सम्बन्ध रखती है, सब प्रकार के वर्णन और पूजन से परे है क्योंकि वह ऐसी स्थिति है जब पुजारी और आराध्यदेव, दोनों एकत्व भाव को प्राप्त हो जाते हैं। गुरु का कर्त्तव्य है कि वह इस अनुभूति की प्राप्ति में शिष्य की सहायता करे।

जैसा पहले कहा जा चुका है, दीक्षा की अतीव आवश्यकता होती है। दीक्षा का अर्थ है—"वह, जिसके द्वारा दैवी वस्तुओं और कार्यों का ज्ञान हो तथा जिससे पतन की ओर ले जाने वाले कर्मों का विनाश हो।" इसका यह अर्थ नहीं कि दीक्षा लेते ही शिष्य को तत्काल ज्ञान की प्राप्ति हो जाती है। दीक्षा तो केवल ज्ञान के कपाट खोलती है। इसके बाद शिष्य को गुरु के निर्देश के अनुसार अपने ही प्रयास से आत्मानुभूति प्राप्त करना पड़ती है। यदि पार्थिव विज्ञान, सांसारिक पद-प्राप्ति और उन्नति के लिए हमको दूसरों से निर्देश की आवश्यकता पड़ती है तो उस सर्वोपरि सत्य का ज्ञान प्राप्त करने में किसी समर्थ गुरु को अपना मार्ग-प्रदर्शक बनाना हमारे लिए सर्वथा अनिवार्य है। हमारे देश में गुरु अपने शिष्य को उसकी निजी उपासना पद्धति में दीक्षा नहीं देता किन्तु जिस पद्धति में गुरु स्वयं पारंगत होता है, उसी पद्धति में शिष्य को दीक्षित करता है। जिन मन्त्रों द्वारा दीक्षा दी जाती है, वे अत्यन्त प्राचीन माने जाते हैं।

इनके अतिरिक्त, सृष्टि के विषय में तन्त्रों की अपनी कुछ पृथक् धारणाएँ हैं। साधारणतया, तन्त्रों के सिद्धान्त इस विषय में सांख्य-दर्शन के सिद्धान्तों से मिलते-जुलते हैं जिनमें व्याख्या की गई है कि विश्व की सृष्टि पुरुष और प्रकृति के युग्म संयोग से हुई है जिसमें पुरुष तो निष्क्रिय और प्रकृति सक्रिय रही है। पुरुष में ज्ञान तत्त्व भरपूर रहता है जबकि प्रकृति सदृश [illegible] शक्ति जैसी शक्ति से अपने समस्त कार्यों को सचेतन साक्षी पुरुष पर प्रति-[illegible] करती है। इसमें सन्देह नहीं कि तन्त्र अपने ढंग से उस एक और

समान विचार को स्पष्ट करते हैं जिसमें शिव और ब्रह्म अथवा प्रकाश के लिए पुरुष, तथा शक्ति के लिए प्रकृति का प्रयोग किया गया है। तन्त्र कहते हैं कि सर्वोच्च स्थिति है—'कुल'। चक्रादरों की सिद्धियों पार करके मनुष्य 'कौलिक' बन जाता है। कहते हैं कि 'कुल' ज्ञान उसी व्यक्ति को प्राप्त होता है, जिसका मस्तिष्क शिव, विष्णु, दुर्गा, सूर्य, गणेश तथा अन्य देवी-देवताओं के मन्त्रों द्वारा पवित्र हो जाता है। कुल मतानी व्यक्तियों का प्रिय विनोद यही है कि वे पंच तत्वों (जिन्हें सामान्य रूप से 'पंचमकार' भी कहा जाता है) के पूजन में मन्त्रों के प्रयोग की शिक्षा करते हैं। संस्कृत में इन तत्वों के नाम 'म' अक्षर से प्रारम्भ होते हैं। मद्य, मांस, मीन, मुद्रा और मैथुन से ही 'पंचमकार' का तात्पर्य है। विभिन्न वर्गों और सम्प्रदायों के साधक 'पंचमकार' के विभिन्न अर्थ लगाते हैं।

यह ध्यान रखना चाहिए कि पूजन में अर्पण करने के लिए केवल 'तत्व' की आवश्यकता होती है, न कि वस्तु विशेष की। मद्य का तत्व आन्तरिक इन्द्रियों के कार्य में तीव्रता और चिदानन्द की उपलब्धि है। गुरु अपने शिष्य को वह विधि बतलाता है जिसके द्वारा इस चिदानन्द और आन्तरिक इन्द्रियों की तीव्रता का उपयोग भौतिक स्तर से मस्तिष्क को ऊँचा उठाने में किया जा सकता है। मैथुन या रति-क्रिया भी, जैसी कि भौतिक स्तर पर समझी जाती है, इसी उद्देश्य की प्राप्ति के लिए प्रयोग की जानी चाहिए। गुरु अपने शिष्य को स्पष्ट करता है कि ये दोनों कार्य, मद्यपान और मैथुन, जो मनुष्य को पतन की ओर ले जाते हैं, इनका उपयोग पशुओं की भांति इन्द्रियों की तृप्ति के लिए न करके उच्च उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए किस प्रकार किया जा सकता है।

पांचवां तत्व (मैथुन) जो एक नये जीवन की सृष्टि-विधि है, अत्यन्त पवित्र है, अतएव इस कार्य में बड़ी सावधानी अपेक्षित होती है। यह कहना नितान्त भ्रममूलक है कि यह तत्व अतिशय या अनियमित मैथुन को प्रोत्साहन देता अथवा उसका अनुमोदन करता है। इसका सत्य तात्पर्य है कि—ब्रह्मचर्य भंग करने से जीवन सर्वथा नष्ट हो जाता है अथवा उसकी अवधि घट जाती है और ब्रह्मचर्य की रक्षा करने से जीवन सुरक्षित रहता है। मनुष्य अपने देवता को वही वस्तु अर्पण करता है जो पवित्र और अभिमंत्रित होती है। उपासना में इन पांचों तत्वों के प्रयोग का उद्देश्य यह है कि निश्चित विधान की तन्त्रोक्त क्रियाओं के नियमित अभ्यास द्वारा मनुष्य की सहज प्रवृत्ति ऐसी बन जाये कि सामान्य जीवन में वह जो भी कर्म करे, वही उपासना-कर्म में परिवर्तित होता रहे। शंकराचार्य ने आदिशक्ति के प्रति लिखे अपने स्तोत्र में कहा है—"हे महादेवी! मेरे मन के समस्त कार्यों में आपकी स्मृति रहे, जो कुछ भी मुंह से कहूँ, वह आपकी स्तुति हो, जो भी कर्म मैं करूँ वे सब आपके प्रति मेरे नमस्कार हों।" इस प्रकार उच्च स्थिति में मस्तिष्क को लाने

ही तान्त्रिक उपासना में इन विभिन्न अनुष्ठानों और क्रियाओं के प्रयोग का विधान है।

अभ्यर्थी को, इन पाँचों तत्त्वों का वास्तविक महत्त्व तथा उनका उचित उपयोग अपने गुरु से सीखना पड़ता है। इस भाँति, उपासना का प्रारम्भ वामाचार से किया जाता है, जबकि उसके सिद्धान्तों को लोग पूर्णतया नहीं जानते और इसी कारण समस्त तन्त्र-विज्ञान को सन्देह की दृष्टि से देखा जाता है। अन्त होता है 'कुल' में, जो असीम सत्य की प्राप्ति का उपाय है। मनुष्य को अपनी उन्नति के लिए झूठे और भीरुता के कार्य न करने चाहिए जो उसे पतन की ओर ले जाते हैं। उसे तो अपने कर्मों पर पूरा नियन्त्रण रख कर, उनको आदर्श बनाकर उनके द्वारा ही अपनी सुरक्षा करनी चाहिए। ऐसी विधि, प्रत्येक की सामर्थ्य के अनुकूल होना कठिन है। साधुओं में प्रचलित गाँजा पीने की आदत का प्रारम्भ तन्त्रों के प्रचार के कारण ही समझा जाता है।

आर्यों की कृत्रिम सभ्यता, जिसमें मानव-व्यवहार की विभिन्न और प्रायः परस्पर विरोधी प्रवृत्तियों का विचित्र सामंजस्य और तालमेल पाया जाता है, पूर्णरूप से विकास का अवसर पा सकी क्योंकि उस सभ्यता में तन्त्रों ने अपना स्थान बना लिया था।

भारत में, कट्टर हिन्दू-धर्म के साथ-साथ तन्त्र-मार्ग का अस्तित्व इस बात का एक और प्रमाण है कि हिन्दू-धर्म ने कभी भी सत्य पर अपना एकाधिकार नहीं जताया। यह हिन्दू धर्म की श्रेष्ठता है कि उसने विचारों की स्वतन्त्रता, सिद्धान्त अथवा धारणा में कभी हस्तक्षेप नहीं किया और न हतोत्साहित किया, जब तक ये बातें बाह्य-आचारण के मामलों में समाज के नियमों के अनुकूल रहीं।

महाराजा का नया तान्त्रिक मत

हिज हाइनेस श्री १००८ महाराजाधिराज सर भूपेन्दर सिंह बहादुर, पटियाला नरेश ने तान्त्रिक मत का अच्छा अध्ययन किया था। इस अध्ययन में भी उनका कुछ स्वार्थ था। इस मत को अपनी इच्छानुसार बिगाड़ कर वे अपने यहाँ इसका प्रचार करना चाहते थे। हिज हाइनेस के रनिवास में करीब ३०० सुन्दरियाँ थीं। तजुर्बेकार महाराजा जानते थे कि इतनी बड़ी तादाद में औरतों को महल में रखना आसान काम न था, स्वाभाविक था कि उन औरतों को विषय-सुख पाने की आवश्यकता रहती होगी। महाराजा आदत से ही ईर्ष्यालु थे। हिन्दू सभ्यता और समाज के नियमानुसार जरूरी था कि रनिवास की औरतें अपने मालिक महाराजा के प्रति वफादार और सच्ची [illegible] इसी उद्देश्य को पूरा करने के लिए महाराजा ने तान्त्रिक मत को बदल [illegible] नये मत से अपने यहाँ प्रचार किया। उन्होंने बंगाल के दरभंगा

नरेश की रियासत से पंडित प्रकाशचन्द्र नामक वाम-मार्ग के कौलाचार्य सिद्ध को बुलवाया जो तंत्र-शास्त्र के प्रकाण्ड पण्डित और देश-विख्यात तान्त्रिक थे, उनकी मदद से महाराज को महल के भीतर तंत्र-मार्ग की एक विचित्र उपासना पद्धति चालू की गई।

मोतीबाग पैलेस के उत्तर-पूर्व कोने में एकान्त में, एक बहुत बड़ा हाल था। उसी में सप्ताह में दो बार तान्त्रिक-धर्म सभायें होने लगीं। इनमें सिर्फ़ वही लोग शरीक हो सकते थे जो नियमानुसार दीक्षा ले चुके हों और जिनकी अच्छी तरह परीक्षा ली जा चुकी हो।

अनेक युवतियाँ, जिनमें कुछ कुँवारी भी थी, इस नये मत में शामिल हो गई। महाराजा के कुछ खास मुसाहब और नातेदार भी दीक्षा लेकर सदस्य बन गये। परन्तु, महाराजा एक मामले में सावधान रहे कि उनकी सीनियर महारानियाँ या पुराने बुद्धिमान अफ़सर लोगों में से कोई इस मत में शामिल न होने पाये जो उनके असली इरादे की जानकारी हासिल कर सके। दीक्षा लेने वालों की तादाद ३०० से ४०० तक पहुँच गई। धर्म-सभा की हर बैठक में कम-से-कम १५० से २०० तक व्यक्ति शरीक होते थे जिनमें दो-तिहाई तादाद औरतों की और एक तिहाई मर्दों की होती थी।

कौलाचार्य व्याघ्रचर्म पहने, घुटे सिर, लम्बी शिखा और सिन्दूर से चेहरे को रंगे हुए आध्यात्मिक गुरु की हैसियत से धर्म-सभा का सचालन करता था। देखने में वह भयानक लेकिन गम्भीर और तेजस्वी लगता था। उसने अपने हाथ से देवी की एक मिट्टी की प्रतिमा बनाई थी जिसे भाँति-भाँति के रंगो से रंग कर महाराजा के खज़ाने से लाये हुए हीरे, मोतियों और कीमती रत्नों से जड़े हुए हार, बाजूबन्द और बालियाँ वग़ैरह जेवरात पहनाये थे। शुरू में, कौलाचार्य की आज्ञा पाकर सभा में एकत्र साधक भक्त देवी की प्रार्थना के भजन गाते। इसके बाद हर एक को देवी के प्रसाद की, तरह-तरह की तेज़ मदिराओं को एक में मिला कर तैयार की हुई शराब पीने को दी जाती। मद्यपान का यह दौर जब एक-दो घंटे चल चुकता और भक्तों को नशा चढ़ता तब कौलाचार्य कुँवारी युवतियों को बुलाता कि वे आगे आकर देवी के सामने एकदम नंगी हो जायें और प्रार्थना के गीत गायें। सभा के हर एक समारोह के मौके पर कौलाचार्य वहाँ मौजूद भक्तों में से किसी को—खास तौर पर महाराजा को ही—धार्मिक कृत्यों का सचालक नियुक्त करता। कुण्ड में आग जलती रहती जिसमें भाँति-भाँति के मसाले, घी, अनाज, धूप आदि की आहुतियाँ देकर हवन होता रहता।

ज्यों-ज्यों रात बीतती, साधक भक्तों को नशा चढ़ता जाता और वे अपनी सुध-बुध खो बैठते। तब कौलाचार्य पुरुषों और महिलाओं को आज्ञा देता कि वे एकदम नंगे होकर देवी के सामने मैथुन करें। रनिवास के धाय-बुलाई हुई १२ से १६ साल तक उम्र की कुँवारी लड़कियाँ नशे में,

के सामने नंगी करके लाई जातीं। ये कुँवारी लड़कियाँ पहाड़ी इलाक़ों तथा रियासत के गाँवों से लाकर महल के धाय-घर में पाली जाती थीं। जब वे सयानी हो जातीं तब महाराजा की ख़िदमत में पेश होतीं और धर्म सभाओं में भी उनको शरीक होना पड़ता। उनकी गर्दन पर से शराब उँडेली जाती जो उनके स्तनों पर से बहती हुई नीचे के अंगों तक पहुँचती। महाराजा तथा दूसरे पुरुष भक्त अपने होठ लगा कर उस बहते हुए द्रव की कुछ बूँदे पीते क्योंकि उसे बड़ा पवित्र और आत्मा को शुद्ध करने वाला प्रसाद माना जाता था। उसी समय देवी के आगे पशुओं की बलि दी जाती थी। उस हॉल में जहाँ देवी की पूजा होती थी, चारों तरफ़ लहू बहने लगता। वधिक के सधे हुए हाथ के एक ही वार से बलि होने वाले पशुओं के खून से दरबार के हट्टे कट्टे सरदारों द्वारा पूरी ताक़त से बलात्कार की शिकार कुँवारी लड़कियों की योनियों से निकला हुआ खून उनके बदन के निचले अंगों पर बहता हुआ आकर मिल जाता।

दूसरी ओर, साधक भक्तों के स्वरों से अपना स्वर मिलाकर कौलाचार्य देवी के भजन ऊँची आवाज़ में गाता रहता। वहाँ पर एकत्र स्त्रियाँ और पुरुष तान्त्रिक कृत्यों के धार्मिक पहलू से इतना अधिक प्रवाहित रहते कि उपासना-भाव के अलावा उनकी आँखों के सामने होने वाली यौन-क्रियाओं और कामुक चेष्टाओं का, जिन्हें वे धर्म का पवित्र कार्य मानते थे, उन पर कोई असर न पड़ता। उपासना की आड़ में बेहद शराब पीकर स्त्रियाँ और पुरुष एकदम अन्धे बन जाते और उनमें यह भी समझ बाकी न रहती कि संयम और सामाजिक पाबन्दियों को भूल कर उच्छृंखलता के इस नाटक में वे नायक और नायिकाओं का पार्ट अदा कर रहे हैं।

ऐसे मौक़ों पर, माँ, बाप, भाई, बहन में कोई भेद न रह जाता था। वहाँ सिर्फ़ मर्द और औरत का रिश्ता रहता था। तान्त्रिक-मत से आध्यात्मिक उन्नति का यह भी एक तरीका था। वास्तव में, स्त्री-पुरुष की पारस्परिक रति-क्रियाओं या मैथुन-कर्म में सत्यता या महत्त्व का कोई मूल्य न था। वह तो साधकों द्वारा देवी को प्रसन्न करने की एक क्रिया मानी जाती थी। जिस समय स्त्री-पुरुष कामोन्मत्त होकर विषयभोग में या कामुक आचरण में संलग्न होते, उस समय हर्षोन्माद पूर्ण गायन और नृत्य बराबर चलता रहता। सुगन्धित काष्ठ, मुख्यतया चन्दन, जो मैसूर से मँगाया जाता था, हवनकुण्ड में जलता रहता।

तान्त्रिक मतानुसार मानव की सृष्टि के प्रयोजन से धार्मिक कृत्य के रूप में स्त्री-पुरुष के सम्भोग की व्यवस्था है। परस्पर मैथुन-रत स्त्री-पुरुष वास्तव में ईश्वर की आज्ञानुसार आचरण करते हैं और तन्मयता के उस चरम-सुख की अवस्था में स्वयं ब्रह्म-रूप बन जाते हैं। धर्माचार्य वहाँ उपस्थित मानवों को आदेश देता था कि सृष्टि कार्य को रोकने के लिए अपने पर पूरा नियंत्रण

रखें क्योंकि ऐसे आध्यात्मिक उपासना समारोह में उसका निषेध है।

कौलाचार्य की नाराजगी और क्रोध के विचार से प्रत्येक पुरुष अपने पर नियन्त्रण रखने की चेष्टा करता। जो काम वेग की तीव्रता होने पर अपने को रोक न पाते, उनके लिए कौलाचार्य की आज्ञा थी कि देवी के चरणों के आगे रखे हुए प्याले में अपना टपकता हुआ स्राव गिरा दें, जब वह प्याला ऊपर तक भर जाता, तब साधक लोग बारी-बारी से जाकर उस प्रसाद को होठों से लगाते थे मानो वह देवी का चरणामृत हो। आमोद-प्रमोद इसी प्रकार चला करता और सभी साधक जी खोल कर उन तान्त्रिक क्रियाओं में तन-मन से शरीक होते। महाराजा के कल्याण के लिए कौलाचार्य लगातार देवी से प्रार्थना करता रहता।

१. इस कलियुग के जमाने में मद्य, मछली, मांस, मुद्रा और मैथुन, इन पाँचों की साधना मोक्ष की ओर ले जाती है।
२. पिये, पीता रहे, बार-बार पिये, जब तक साधक भूमि पर न गिर पड़े। वह उठे और उठ कर फिर पिये। इसके पश्चात् वह पुनर्जन्म की बाधा से मुक्त हो जाता है।
३. कौल-मार्ग बड़ा कठिन धर्म है। इसमें पारंगत होना योगियों के लिए भी दुस्तर कार्य है।

कभी महाराजा की इच्छा होती कि वे "चेम्बर आफ़ प्रिन्सेज" के चैन्सलर का चुनाव जीत लें, कभी वे चाहते कि उनकी किसी खास महारानी को पुत्र-लाभ हो, कभी वे ब्रिटिश सरकार से अपने फायदे के कुछ काम कराने की चेष्टा करते और कभी अपनी गिरती हुई तन्दुरुस्ती ठीक होने की कामना करते। उनकी ऐसी ही तमाम इच्छाएँ पूरी करने के लिए देवी के पूजन और तान्त्रिक उपासना सभा का हर बार आयोजन किया जाता था। कुछ अवसर ऐसे भी आते जब महाराजा के किसी शत्रु की मृत्यु के लिए विशेष पूजन समारोह की व्यवस्था की जाती।

यद्यपि, साधक भक्तों की कोई विचित्रता या कौतूहल का अनुभव न होता, पर एक अत्यन्त घृणित कृत्य ऐसी सभाओं में यह होता था कि हद से ज्यादा मद्यपान करने पर जो लोग उसे बर्दाश्त न कर पाते उनको आज्ञा थी कि देवी के चरणों के पास रखे हुए पात्र में वे उल्टी कर दें। पूजा की सफलता का यह एक पवित्र संकेत माना जाता। साधकों को आदेश था कि वे बारी-बारी से उस पात्र को मुँह से लगा कर प्रसाद पायें। दूसरे शब्दों में शराब या मैथुन देवी की निष्काम पूजा सम्बन्धी धार्मिक कृत्यों के पर्यायवाची थे। आम-तौर पर ये तान्त्रिक-कृत्य सारी रात चला करते थे और अन्त में सभी साधक स्त्री-पुरुष नग-धड़ंग दशा में देवी के चरणों में विनत दिखाई देते थे।

अक्सर ऐसा भी होता कि कौलाचार्य ऐन्द्रजालिक प्रयोग द्वारा देवी मूर्ति को साधकों की दृष्टि में सजीव करके दिखला देता। वहाँ ८

समुदाय को देवी प्रत्यक्ष आशीर्वाद देती प्रतीत होती। स्वयं महाराजा ने देवी को मानव शरीर धारण किये देखा और बातचीत की। उन्होंने दण्डवत् करके देवी से अपने स्वास्थ्य, प्रतिष्ठा, समृद्धि और सफलता का वरदान माँगा।

कौलाचार्य ने अपने शिष्यों को प्रभावित करने के लिए कुछ चमत्कार भी दिखलाये। उसने एक या दो बार महाराजा से कहा कि पूर्ण स्वास्थ्य लाभ के लिए वे देवी के चरणों में नर-बलि चढ़ाने की व्यवस्था करें मगर महाराजा सहमत न हुए। बाद में, सुना गया कि कौलाचार्य ने अपने कुछ खास चेलों की मदद से चुपचाप देवी के आगे वेदी पर मनुष्यों की बलि चढ़ाई। उसको विश्वास था कि बलि होने वाले मनुष्य के प्राण महाराजा के शरीर में पहुँचा कर वह मृतक की ज़िन्दगी के बचे हुए वर्ष महाराजा की ज़िन्दगी में जोड़ कर उन्हें दीर्घायु बना सकता है।

उपासना समाप्त होने पर देवी के बलि दिये गये भैंसों का मांस प्रसाद के तौर पर भक्तों को बाँटा जाता था और हिन्दू लोग, जो आमतौर पर उससे घृणा करते हैं, बड़े उत्साह से प्रसाद ग्रहण करते थे।

सवेरा होने पर कौलाचार्य समारोह समाप्ति की घोषणा करता और साधक लोग चले जाते थे। अगले दिन, इस बात का कोई ज़िक्र तक न करता कि पिछली रात को आमोद-प्रमोद के उस मन्दिर में कैसे-कैसे भोग-विलास के उत्सव और रक्त रंजित कारनामे हुए थे।

अन्त में, यह नया तान्त्रिक मत दूसरी रियासतों में भी फैल गया जहाँ के नरेशों के रनिवासों में भी सैकड़ों रानियाँ थीं। उन लोगों ने भी इस मार्ग का अवलम्बन करके शान्ति और सन्तोष प्राप्त किया।

७. क्रिकेट और राजनीति

सन् १६२६ के क़रीब विश्व-क्रिकेट के मानचित्र पर भारत का नाम पहली बार दिखाई पड़ा। धीरे-धीरे इस खेल की तरफ लोगों का उत्साह बढ़ा और भारत ने अपना पहला आधिकारिक टेस्ट मैच इंग्लैंड मे खेला।

इंग्लैंड के लॉर्ड चीफ जस्टिस और एम० सी० सी० के सभापति लॉर्ड हेलशम ने मज़ाक में अपने भाषण मे कहा—"अगर कुछ नहीं तो कम से कम क्रिकेट के क्षेत्र मे भारत को प्रादेशिक शासन स्वतन्त्रता प्रदान कर दी गई है।"

शुरू मे, कश्मीर, पटियाला, कपूरथला, और उत्तर भारत की अन्य रियासतों के राजा-महाराजाओ ने क्रिकेट मे बड़ी दिलचस्पी ली और उनकी टीमों ने आपस मे कई मैच खेले।

जम्मू और कश्मीर के महाराजा प्रतापसिंह क्रिकेट के सच्चे संरक्षक थे। पटियाला और कपूरथला के महाराजाओ को भी वैसा ही चाव था और उनके यहां नियमित रूप से क्रिकेट खिलाड़ियो की टीमें बन गई थीं।

कश्मीर के महाराजा कद मे बहुत नाटे थे। वे सिर पर जब बहुत बडी पगड़ी बाँधते तब खासे विदूषक दिखाई देते। वे चूडीदार पायजामा और उस पर लम्बा कोट पहनते थे। उनके कानों मे मोतियो की बड़ी-बड़ी बालियाँ पड़ी रहती थीं। महाराजा को यकीन हो चुका था कि वे ऊँचे दर्जे के बल्लेबाज हैं। अपने खिलाफ खेले गये हर मैच मे सबसे ज्यादा रन महाराजा ही बनाते थे।

जब कभी महाराजा बैट ले कर क्रिकेट के मैदान में उतरते तो बॉलर बहुत धीमे गेंद फेंकता और आमतौर पर विकेट के 'स्टम्प्स' को बचा कर। महाराजा अपने बैट से गेंद को छू देते और 'फ़ील्डर' खिलाड़ी कायदे से अपना काम करने के बजाय गेंद को ऐसी ठोकर मारते कि वह 'बाउंड्री' लाइन से बाहर चली जाती और अगर न जाती, तो दूसरी ठोकर मार कर उसे आगे बढ़ा दिया जाता। इस तरीके से महाराजा कई दफा बाउंड्री मार कर खूब रन बना लेते। महाराजा के क्रिकेट खेलने का सीन बड़ा दिलचस्प और मज़ाकिया होता था।

महाराजा अपनी बुद्धिमानी के लिए मशहूर थे हालांकि देखने में सूरत से वे सीधे-सादे और बेवकूफ लगते थे। लॉर्ड कर्जन ने, जो उस ज़माने में भारत

के वायसराय थे, अपनी एक डायरी में जिक्र किया है कि महाराजा प्रतापसिंह 'समझदारी और मूर्खता का एक मिला-जुला नमूना' थे। क्रिकेट खेलने में महाराजा समझ ही न पाते थे कि खिलाड़ी लोग ठोकर मार कर गेंद को बाउँड्री से बाहर पहुँचाते और विकेट को बचा कर गेंद फेंकते हुए उनका मज़ाक बना रहे हैं। अगर कभी ग़लती से गेंद विकेट की तरफ़ जाने लगती तो अम्पायर फ़ौरन 'नो बॉल' कह कर उसे बेकार कर देता। यद्यपि महाराजा स्वयं बल्लेबाज़ी में बहुत कमज़ोर थे मगर उनकी टीम में उस ज़माने के भारत के चुने हुए नामीगरामी बल्लेबाज़ और बॉलर शामिल थे।

देश में क्रिकेट का खेल लोकप्रिय बन कर प्रगति करता गया और भारत के वायसराय ने भी अपनी एक निजी टीम बनाई जिसे 'वायसरायज़ इलेवन' कहा जाता था।

सन् १९३३ में अर्ल ऑफ़ विलिंग्डन वायसराय थे और वे भारत के क्रिकेट कन्ट्रोल बोर्ड के संरक्षक बने। उनके ज़माने में क्रिकेट ने एक गम्भीर मोड़ लिया—इस अर्थ में—कि क्रिकेट के खेल में राजनीति भी अपनी जगह बनाने लगी।

भूपेन्दरसिंह, मोहिन्दर बहादुर पटियाला के महाराजाधिराज क्रिकेट बोर्ड के उप-संरक्षक और मिस्टर आर० ई० ग्राण्ट गोवन उसके प्रेसीडेण्ट चुने गये। पटियाला नरेश दक्षिणी पंजाब क्रिकेट ऐसोसिएशन के संस्थापक और संरक्षक तो पहले से ही थे, और वे मेलबोर्न काउंटी क्लब (एम० सी० सी०) के मेम्बर भी बन गये। उन दिनों यह बड़ी प्रतिष्ठा की बात थी। भारत में क्रिकेट के खेल का विकास करने में पटियाला नरेश ने शुरू से ही दिलचस्पी ली थी, इसलिए क्रिकेट के क्षेत्र में वे बहुत मशहूर व्यक्ति बन गये। वायसराय अर्ल ऑफ़ विलिंग्डन और उनकी पत्नी इस बात से जल-भुन गये और महाराजा से ईर्ष्या करने लगे।

बहुत जल्द महाराजा और लार्ड विलिंग्डन के बीच इस बात पर प्रतिद्वन्द्विता छिड़ गई कि क्रिकेट कन्ट्रोल बोर्ड पर दोनों में से किसका आधिपत्य रहे। बोर्ड के प्रेसीडेण्ट मिस्टर ग्राण्ट गोवन वायसराय और उनकी पत्नी काउण्टेस ऑफ़ विलिंग्डन के पिट्ठू थे।

वायसराय और ख़ास तौर पर लेडी विलिंग्डन, यह चाहते थे कि मिस्टर ग्राण्ट गोवन प्रेसीडेण्ट बने रहें और उनके निजी मिलिटरी सेक्रेटरी मेजर ब्रिटन जोन्स क्रिकेट के मामलों में सर्वेसर्वा बनाये जायें। पटियाला नरेश को ये बातें कतई पसन्द न थीं। बोर्ड के भारतीय मेम्बरान, ख़ास तौर पर नवाब सर लियाकत हयात खाँ, पटियाला के प्राइम मिनिस्टर, और विलायत में काउंटी क्रिकेट के नामीगरामी, दीवान [illegible] भी, जो दक्षिणी पंजाब क्रिकेट ऐसोसिएशन के सेक्रेटरी थे, वायसराय की तजवीज़ के खिलाफ़ थे।

बोर्ड की तरफ़ से [illegible] करने के कारण क्रिकेट के क्षेत्र में महाराजा

पटियाला का पूरा प्रभाव था जिससे वायसराय बहुत चिढ़े हुए थे। इसी ईर्ष्या के कारण वे महाराजा को राजनीतिक षड्यंत्रों में फँसाने की चालें चलने लगे और अपने पोलीटिकल सलाहकारों को भी उकसाया कि महाराजा की प्रतिष्ठा गिराने के लिए उनको ढूँढ़ने के मौके ढूँढ़ते रहें।

सन् १९३४ में जब जार्डीन भारत घूमने आया तब ब्रिटिश सत्ता सर्वोच्च शिखर पर थी। ब्रिटिश वायसराय को यह बरदाश्त न था कि कोई महाराजा ब्रिटिश टीम में खिलाड़ी चुना जाय। महाराजा पहले से ही एम० सी० सी० के मेम्बर थे अतएव उन्होंने अपने कुछ दोस्तों के ज़रिये ब्रिटिश टीम के कप्तान जार्डीन पर दबाव डलवा कर अपना काम बनाया। जार्डीन ने महाराजा को अपनी टीम में शामिल करना स्वीकार कर लिया। वायसराय को जब खबर लगी तो उन्होंने जार्डीन से पूछा कि क्या यह सच है कि महाराजा को अपनी टीम में खेलने का उसने निमंत्रण दिया है? जार्डीन ने जवाब दिया कि टीम के कप्तान की हैसियत से उसे अधिकार है कि एम० सी० सी० के किसी भी मेम्बर को वह अपनी इच्छा से टीम में शामिल कर सकता है। लार्ड विलिंग्डन ने जार्डीन को समझाया कि वायसराय की हैसियत से सारे महाराजे उनके अधीन हैं और बिना उनकी मंजूरी हासिल किये उनमें से किसी को अंग्रेज़ी टीम में शामिल नहीं किया जा सकता। वायसराय की बातों का जार्डीन पर कोई असर नहीं पड़ा और उसने अपना इरादा बदलने से इन्कार कर दिया।

वायसराय ने तब अपनी पत्नी से कहा कि वे जाकर जार्डीन को समझायें। काउन्टेस ऑफ़ विलिंग्डन अपने कौशल, कूटनीति और चालबाज़ी के लिए मशहूर थीं। अपने निवासस्थान के आलीशान खूबसूरत बगीचे में वे जार्डीन के साथ टहलने को निकलीं और बाँह पकड़ कर उसे समझाया कि वह महाराजा को अपनी टीम के खिलाड़ियों में शामिल करने का इरादा छोड़ दे। जार्डीन मशहूर और तजुर्बेकार खिलाड़ी था। वह काउन्टेस के चक्कर में नहीं फँसा और अन्त में महाराजा ब्रिटिश टीम में शामिल कर लिये गये।

इन घटनाओं से लार्ड विलिंग्डन और महाराजा में प्रतिद्वन्द्विता ऐसी बढ़ी कि उसने खुली शत्रुता का रूप ले लिया। वायसराय पर तत्काल प्रतिक्रिया यह हुई कि उन्होंने राजनीतिक तौर पर झूठे तरह के मुकदमों में महाराजा को फँसा दिया। पंजाब की रियासतों के गवर्नर जनरल के एजेण्ट, सर जेम्स फ़िट्ज़ पैट्रिक द्वारा जाँच का हुक्म हुआ। यह जाँच 'पटियाला के दोषारोप' नाम से प्रसिद्ध हुई। जाँच की कार्यवाही कई साल तक चलती रही और किसी फ़ैसले पर पहुँचने के पहले ही लार्ड विलिंग्डन ने भारत सम्राट् बादशाह जार्ज के नाम एक पत्र लिखाया और महाराज को गद्दी से उतार देने की अनुमति माँगी। महाराजा के खिलाफ़ एक बहुत लम्बा-चौड़ा अभियोग-पत्र तैयार किया गया जिसमें महाराजा पर झूठे-सच्चे ऐसे आरोप लगाये गये कि उनका विवरण पढ़ते

ही सम्राट् तुरन्त वायसराय की बात पर राज़ी हो जायें।

महाराजा के कई ख़ुफ़िया एजेन्ट दिल्ली में लगे थे। उससे ख़बर पा कर कि गद्दी से उतारे जाने का षड्यन्त्र रचा जा रहा है, महाराजा फ़ौरन दिल्ली जा पहुँचे ताकि वहाँ अपने दोस्तों से सलाह लें कि क्या करना चाहिए। महाराजा चाहते थे कि वायसराय के सरकारी काग़ज़ात जो उनसे सम्बन्धित है, किसी तरह हाथ लग जायें तो ऐसी कार्यवाही की जाये जो वायसराय के मनसूबों पर पानी फेर दे।

महाराजा के एक दोस्त मिस्टर जे० एन० साहनी, दिल्ली के मशहूर व्यक्ति थे जो फ़ायर ब्रिगेड के इन्चार्ज अंग्रेज़ अफ़सर मिस्टर 'एक्स० वाई०' को अच्छी तरह जानते थे। यह अंग्रेज़ अफ़सर वायसराय की पर्सनल असिस्टैंट मिस 'ज़ेड' का प्रेमी था। इस अंग्रेज़ को एक लाख रुपया देना तय हुआ अगर वह महाराजा से सम्बन्धित फ़ाइल वायसराय के यहाँ से मँगा दे। वह अंग्रेज़ फ़ौरन पर्सनल असिस्टैण्ट मिस 'ज़ेड' से मिला और पूरी बात बतलाई। वह राज़ी हो गई और कहा कि वायसराय की कोठी से १० बजे रात को वह फ़ाइल लाकर दे देगी मगर सिर्फ़ चन्द घण्टों के लिए। अपने कहने के अनुसार उसने रात को वह फ़ाइल मिस्टर 'एक्स० वाई०' के हवाले कर दी जो उसे ले कर प्राइवेट टैक्सी में चल पड़ा और काश्मीरी गेट पहुँच गया। वहाँ, मिस्टर जे० एन० साहनी ने एक दर्जन तेज़ टाइपिस्ट बुला रखे थे जिन्होंने चन्द घंटों में पूरी फ़ाइल के करीब २०० पृष्ठ टाइप कर डाले और सुबह होते-होते वह फ़ाइल मिस 'ज़ेड' को वापस कर दी गई जिसने उसे यथास्थान पहुँचा दिया। इस काम के लिए मिस 'ज़ेड' को पचास हज़ार रुपये मिले और इतनी ही रकम मिस्टर 'एक्स-वाई' की जेब में पहुँच गई। मिस 'ज़ेड' ने यह जोखम का काम इसलिए किया कि इतना रुपया उसे ज़िन्दगी भर को काफ़ी होगा। वह जानती थी कि कोई दूसरा वायसराय आने पर वह इग्लैंड वापस भेज दी जायगी क्योंकि तब तक उसकी नौकरी की मीयाद भी ख़त्म हो जायगी।

लार्ड विलिंग्डन का कार्यकाल समाप्त होने में सिर्फ छः महीने बाक़ी रह गये थे। मिस 'ज़ेड' ने सोचा कि इन छः महीनों में वह पचास हज़ार रुपये शायद ही कमा पाये जब कि विलायत लौट कर वह उस रुपये से एक बढ़िया मकान ख़रीद कर रह सकती है और वहाँ उसे किसी व्यवसायी अथवा राजनीतिज्ञ के यहाँ नौकरी भी आसानी से मिल जायेगी।

अतएव ज्योंही मिस 'ज़ेड' ने वह फ़ाइल वापस जाकर वायसराय के प्राइवेट दफ़्तर की मेज़ की दराज़ में रख दी, उसके तुरन्त बाद उसने अपना इस्तीफ़ा दाख़िल कर दिया, यह बहाना करते हुए कि उसकी माँ इंग्लैंड में सख़्त बीमार है और उसका जाना ज़रूरी है। वायसराय ने इस्तीफ़ा मंज़ूर कर लिया। ठीक ४८ घण्टे बाद उस औरत ने बम्बई पहुँच कर जहाज़ पकड़ा और इंग्लैंड के लिए रवाना हो गई। भारत से जाते ही वह क़ानून की पहुँच से बाहर थी

मगर कहीं राज़ खुल भी जाता। अपनी भागने की योजना पर वह मन ही मन प्रसन्न हो रही थी।

उधर, अपने कुछ विश्वासपात्र मिनिस्टरों व अफ़सरों के साथ बैठे हुए महाराजा भूपेन्द्र सिंह वायसराय की फाइल से टाइप किये गये खत और कागज़ात बड़े गौर से पढ़ रहे थे। वायसराय फाइल के साथ से भारत सम्राट् को जो खत भेजने वाले थे, उनका कच्चा मज़मून पढ़ने के बाद साढ़े छः बजे सुबह महाराजा अपनी राजधानी लौट गये। वहाँ पहुँच कर उन्होंने अपने प्राइम मिनिस्टर तथा फारेन मिनिस्टर सरदार के० एम० पानिक्कर और अन्य दो विश्वस्त अफसरों से सलाह ली कि आने वाली मुसीबत से बचने और वायसराय की शिकायतों पर भारत सम्राट् की मंजूरी न होने देने का क्या उपाय किया जाय।

सलाहकारों की मदद से एक खत का मज़मून बनाया गया जिसमे महाराजा के खिलाफ जो-जो आरोप वायसराय ने लगाये थे उनसे इन्कार किया गया। सरदार के० एम० पानिक्कर को खास तौर पर तैनात किया गया कि वे विलायत जायें और वह खत स्वयं सम्राट् के हाथो में दें। इस खत मे महाराजा ने सभी शिकायतों को सफेद झूठ करार देते हुए लिखा था कि वायसराय के साथ उनके निजी ताल्लुकात खराब होने की एक वजह थी। वह यह थी कि एक दफा जब लेडी विलिंग्डन राजधानी मे पधारी थीं तब महाराजा ने उनको महल में ले जाकर रियासत के जवाहरत और ज़ेवरात दिखलाये थे। उनमे ३० लाख रुपये कीमत का मोतियों का हार था जो लेडी विलिंग्डन ने अपने लिए महाराजा से माँगा। महाराजा ने इन्कार कर दिया। इस बात से वायसराय चिढ़ गये और महाराजा को सबक सिखाने की धमकी देते हुए कहा कि रियासती बदइन्तज़ामी और ज़ालिमाना हुकूमत का पूरा ब्योरा सम्राट् को लिख कर भेजा जायगा तथा महाराजा को गद्दी से उतार देने की तजवीज पेश की जायगी।

सोलह पृष्ठों के इस पत्र मे वायसराय और काउन्टेस विलिंग्डन पर काफी आरोप लगाये गये थे और बड़ी कुशलता से तर्क प्रस्तुत किये गये थे जिनसे यह ज़ाहिर होता था कि वायसराय ने महाराजा के खिलाफ जो भी अभियोग कायम किये हैं, उनकी बुनियाद निजी अदावत है जो महाराजा के मोतियों का हार देने से इन्कार करने पर शुरू हुई थी। इस पत्र मे महाराजा ने आगे लिखा था कि लेडी विलिंग्डन बड़ी चालबाज़ महिला है और अपने निजी लालच की वजह से रियासत के मामलों मे दखल दिया करती हैं। वे अपने दोस्त सर सी० पी० रामास्वामी अय्यर से, जो वायसराय की कौन्सिल के एक मेम्बर हैं, मिल कर कोशिश कर रही हैं कि महाराजा गद्दी से उतार दिये जायें और क्रिकेट बोर्ड पर से भी उनका अधिपत्य समाप्त हो जाय।

भारत के वायसराय लार्ड विलिंग्डन की शरारतों और साज़िशों के

खिलाफ़ अपने हाथ और भी मजबूत करने के इरादे से महाराजा ने ऐसा इन्तज़ाम किया कि भारत सरकार की तरफ़ से इंग्लैंड की पार्लामेण्ट के कुछ मेम्बरान यहाँ बुलाये जायें जो सिर्फ़ राजनीतिक मामलों की ही जाँच न करें बल्कि रजवाड़ों के साथ वायसराय के निजी सम्बन्धों की भी स्पष्ट जानकारी हासिल करें।

पार्लामेण्ट का एक मिशन, जिसमें मेजर कोटलिंड, ग्रानरेबुल एडवर्ड रसेल और दो अन्य मेम्बर थे, भारत आया। महाराजा ने उनको निमन्त्रण दिया कि वे पटियाला आ कर मेहमान बनें जो उन्होंने मंजूर कर लिया। पटियाला आने के बाद उनको शिमला की पहाड़ियों में बसे चैल नामक स्थान पर ले जाया गया जो पटियाला रियासत की ग्रीष्मकालीन राजधानी थी। वहाँ, मेहमानों के शानदार स्वागत-सत्कार और अच्छी खातिरदारी के बाद महाराजा ने बड़ी हिम्मत करके अपनी एक तजवीज़ उनके सामने रखी। महाराजा ने उस सारे धन की एक फ़ेहरिस्त तैयार की जो लार्ड विलिंग्डन और उनकी पत्नी ने भारत के राजा-महाराजाओं पर दबाव डालकर वसूल किया था। वह फ़ेहरिस्त मिशन के मेम्बरों को दे दी गई।

फ़ेहरिस्त में, रजवाड़ा और उनके मिनिस्टरों के नामों का पूरा ब्योरा दिया गया था जिन्होंने लम्बी-लम्बी रक़में वायसराय और उनकी पत्नी को दी थीं। उसमें महाराजा दत्तिया, उनके प्राइम मिनिस्टर सर अज़ीज़ अहमद, महाराजा ग्वालियर, नवाब रामपुर और उनके प्राइम मिनिस्टर सर अब्दुल समद खाँ वगैरह के नाम भी थे।

इन सब लोगों ने वायसराय को जो रुपया दिया था, उसकी तफ़सील फ़ेहरिस्त में दर्ज थी। मिशन ने विलायत वापस पहुँच कर वह फ़ेहरिस्त सेक्रेटरी ऑफ़ स्टेट को दे दी जिसने उसे सम्राट् के पास भिजवा दिया। मिशन ने सेक्रेटरी ऑफ़ स्टेट सर सैमुएल होर से यह भी रिपोर्ट की कि वायसराय और उनकी पत्नी, दोनों हिन्दुस्तान में बदनाम हो चुके हैं और वे राजे-रजवाड़ों को धमका कर उनसे धन वसूल कर रहे हैं।

लन्दन पहुँच कर सरदार के० एम० पानिक्कर ने बड़ी कोशिश करके बकिंघम पैलेस में सम्राट् से भेंट करने की अनुमति प्राप्त की। वे अध्ययन कक्ष में सम्राट् से मिले और महाराजा का पत्र उनके हाथों में दिया। पत्र पढ़ कर सम्राट् को बड़ा क्रोध आया और उत्तेजित होकर उन्होंने बतलाया कि विलिंग्डन दम्पति के बारे में बहुत सी शिकायतें उनके पास आ चुकी हैं। अब उनको हिन्दुस्तान में रहने न दिया जायगा ताकि वे सम्राट् के खैरख्वाह और वफ़ादार महाराजाओं और रजवाड़ों को आइन्दा परेशान न कर सकें।

सम्राट् ने सरदार पानिक्कर को विश्वास दिलाया कि किसी भी हालत में महाराजा को गद्दी से उतारा न जायगा और वायसराय से शिकायत का कोई पत्र आयेगा भी, तो उस पर कोई कार्यवाही महाराजा के खिलाफ़ नहीं

की जायगी। यह खुशखबरी सुनते ही महाराजा पटियाला के अन्तरंग मुसाहबों और मिनिस्टरों, रानी-महारानियों और विश्वासपात्र बन्धुओं ने उत्सव-समारोह मनाये, जलसे हुए, दावतें दी गई और रात भर नाच-गाने होते रहे।

वायसराय को इन सब बातों की कोई खबर न थी और उन्होंने महाराजा को गद्दी से उतारने की अपनी तजवीज सम्राट् के पास भेज दी। सम्राट् ने वायसराय का खत पढ़ते ही फौरन सेक्रेटरी ऑफ स्टेट को बुलवाया और कहा कि यह खत रद्दी की टोकरी में फाड़ कर फेंक दिया जाय तथा वायसराय को इंग्लैंड वापस बुला लिया जाय। सम्राट् ने गुस्से में चिल्ला कर कहा कि वायसराय की शिकायत का कारण उनको मालूम हो चुका है।

इस शिकायत के बाद वायसराय की स्थिति कमजोर पड़ गई और महाराजा की हिम्मत बढ़ गई। वायसराय की दावतों और जलसों में वे बहुत कम शरीक होते और कई दफा उन्होंने लेडी विलिंग्डन को सामने ही फटकार बताई।

एक दफा रजवाड़ों की तरफ से दी गई एक दावत में, दिल्ली में, महाराजा से लेडी विलिंग्डन की मुलाकात हुई। लेडी विलिंग्डन ने महाराजा से पूछा कि पिंजौर के महल में, जहाँ मुगल शैली का बगीचा और सुन्दर फ़व्वारे हैं क्या उनको कुछ दिन रहने को मिल सकेगा? महाराजा ने मुँहतोड़ जवाब दिया महल सिर्फ उनके और उनके परिवार वालों के उपयोग के लिए है और किसी बाहर वाले को वहाँ रहने की इजाजत नहीं दी जा सकती। अलावा इसके खानदान की परम्परा तोड़ कर अगर किसी विदेशी को वहाँ ठहराया गया तो महारानियों की धार्मिक भावनाओं को ठेस पहुँचेगी।

गवर्नर जेनरल के एजेण्ट, सर जेम्स फ़िट्ज पैट्रिक ने जब देखा कि वायसराय के खिलाफ महाराजा का अभियान सफल हो गया और इंग्लैंड के बादशाह की निगाहों में वायसराय की प्रतिष्ठा गिर गई है, तब उन्होंने महाराजा के खिलाफ जाँच का काम, जो वायसराय ने उन्हें सौंप रखा था, बन्द कर देने में ही अक्लमन्दी समझी। इतना ही नहीं, उन्होंने सभी आरोपों से महाराजा को मुक्त घोषित किया जिसके बदले में लेडी फिट्ज पैट्रिक को एक बहुमूल्य मोतियों का हार तथा हीरे की एक अँगूठी मिली।

भारत में जार्डीन की टीम के दौरे से यह जाहिर हो चुका था कि ब्रिटिश लोग क्रिकेट में भी अपनी प्रतिष्ठा बनाये रखने को कितना उतावले थे। जार्डीन की टीम ने एक मैच 'वायसराय इलेवन' के खिलाफ खेला और ४०० रन बनाने के बाद आशा थी कि सबेरे वे 'डिक्लेयर' कर देंगे। उत्तर प्रदेश का एक आई० सी० एस० अफसर किर्स्टी, जो वायसराय की टीम का कप्तान था, सामान्य ७-८ मिनट के बजाय २० मिनट तक 'विकेट' रॉल कराता रहा।

जब जार्डीन ने विरोध किया तब किर्स्टी ने बड़ी उपेक्षा से उत्तर दिया—"जाने भी दो। हमने समझ लिया था कि आप 'डिक्लेयर' करने जा रहे

हैं और हमारी टीम खेलेगी, इसलिए हमने कुछ ज़्यादा देर तक विकेट रॉल कराया। मगर, इससे फ़र्क ही क्या पड़ता है ?" जार्डीन ने कहा कि उसकी टीम तब तक खेल के मैदान में नहीं उतरेगी जब तक क्रिस्टी उससे माफ़ी न माँगेगा।

वहाँ काफ़ी यूरोपियन इकट्ठे थे जिनको गुस्सा आ गया। वे जार्डीन के कपड़े बदलने के कमरे में गये और उसे समझाया कि यह मुल्क उसके मुल्क से जुदा किस्म का है, अगर हिन्दुस्तानी पब्लिक को यह पता चल गया कि एक अँग्रेज़ कप्तान इस तौर पर वायसराय की टीम के खिलाफ़ हो गया है तो इससे ब्रिटिश प्रतिष्ठा को गहरी चोट पहुँचेगी। मगर जार्डीन का एक ही जवाब था—"क्रिस्टी सब के सामने मुझ से माफ़ी माँगे वरना मेरी टीम अब मैच न खेलेगी।" उसने कहा कि—"अगर इंग्लैण्ड का बादशाह भी मेरे खिलाफ़ खेलता होता और ऐसा अनुचित व्यवहार करता तो जब तक वह माफ़ी न माँगता तब तक मेरी टीम कदापि मैच न खेलती।" इस पर वायसराय ने क्रिस्टी को बुला कर कहा—"जाओ बेटे ! माँग लो, माफ़ी।" क्रिस्टी ने जार्डीन के पास जाकर माफ़ी माँगी तब जाकर खेल शुरू हुआ।

महाराजा भूपेन्दर सिंह की सब से बड़ी अभिलाषा यह थी कि उनका ज्येष्ठ पुत्र यादवेन्द्र सिंह क्रिकेट का फ़र्स्ट क्लास खिलाड़ी बने। अच्छा 'फ़ील्डर' होने के अलावा वह ऊँचे दर्जे का बल्लेबाज़ और 'बॉलर' भी बने। उसको सिखाने के लिए महाराजा ने मशहूर अंग्रेज और आस्ट्रेलियन खिलाड़ी नौकर रखे मगर सारी कोशिशों के बावजूद यादवेन्द्र सिंह क्रिकेट का अच्छा खिलाड़ी न बन सका।

यादवेन्द्र सिंह को कामयाबी दिलाकर उसकी हिम्मत बढ़ाने के विचार से महाराजा ने एक तरकीब सोची। महाराजा के यहाँ प्रसिद्ध आस्ट्रेलियन खिलाड़ी मिस्टर टारैंट नौकर था जो यादवेन्द्र सिंह को क्रिकेट खेलना सिखाता था। उन दिनों बम्बई, के ब्रेबोर्न स्टेडियम में इंग्लैण्ड की टीम खेल रही थी। मिस्टर टारैंट को सिखा-पढ़ा कर महाराजा ने राज़ी कर लिया कि मैच में गेंद ऐसे बचा कर फ़ेंकी जाये कि यादवेन्द्र सिंह बहुत से रन बना सके और कुछ छक्के भी मार सके। इत्तिफ़ाक से महाराजा अपनी तबियत कुछ खराब होने की वजह से मैच देखने नहीं जा सके। वे अपने सोने के कमरे में ही आल इण्डिया रेडियो पर आने वाली मैच की कमेन्ट्री सुनते रहे। कई डॉक्टर और नर्सें भी महाराजा के कमरे में मौजूद थीं। हर दफा जब युवराज छक्का मारता तब महाराजा खुश होकर ताली बजाते। लेकिन, जब हर गेंद पर वह बिना चूके छक्का मारता रहा, तब मैच देखने वालों का उत्साह घटने लगा। दर्शकों की भीड़ समझ गई कि इंग्लैंड की टीम से मिल कर युवराज इस तेज़ी से छक्के मार रहा है और गेंद फेंकने वाले खिलाड़ियों को उसने पोट लिया है। महाराजा भी परेशान हो गये

जब चार दफा फिर युवराज ने छक्के मारे। वे गुस्से से चीख पड़े—"यू० वी०! (महाराजा उसको इसी नाम से पुकारते थे) अब छक्के न मारना।" जब तक महाराजा रेडियो सुनते रहे, मैं बराबर वहीं मौजूद रहा।

इस मैच में अंग्रेज बॉलरों ने यादवेन्द्र सिंह के साथ वैसी ही गुटबन्दी कर ली थी जैसी कश्मीर महाराजा के साथ बॉलरों और फील्डरों ने की थी। यादवेन्द्र सिंह की बड़ी इच्छा थी कि अगले साल इंग्लैंड जाने वाली हिन्दुस्तानी टीम में वह कप्तान बने मगर बम्बई के इस मैच के बाद उसकी उम्मीदों पर पानी फिर गया। दर्शक भीड़ ने उस पर खूब फब्तियाँ कसी थीं, बेहूदा नारे लगाये थे, सीटियाँ बजाई थीं और गालियाँ भी दी थीं। महाराजा ने अपने आदमी भेज कर युवराज से कहलाया कि किसी बहाने वह खेलना बन्द कर दे वरना कुछ न कुछ अशोभनीय घटना अवश्य हो जाती। बम्बई के दर्शक क्रिकेट के खेल को अच्छी तरह समझते हैं। उनको पता चल गया था कि युवराज अंग्रेज खिलाड़ियों से मिल कर छक्के लगा रहा है। इसी की प्रतिक्रिया में वहाँ काफी हो-हल्ला मचा था।

यादवेन्द्र सिंह ने बाउण्ड्री लाइन के पास एक मुश्किल गेंद कैच करने में नटों की तरह उछल-कूद दिखाई और गिर पड़ा। उसके पैर में सख्त चोट आई, दर्शकों की भीड़ ने, *जो पहले से ही नाराज थी, उसे ज़ोरों से शाबाशी* दी और तालियाँ बजाईं। युवराज ने फील्ड छोड़ दिया और शेष खेल में उसने कोई भाग न लिया। सच पूछा जाय तो ब्रेबोर्न स्टेडियम में वह आखिरी अन्तर्राष्ट्रीय मैच था जिसमें युवराज ने भाग लिया था। इस तरह, टेस्ट मैचों में भारतीय टीम की कप्तानी का उसका सपना समाप्त हो गया।

८. मुसोलिनी से मिलकर षड्यन्त्र

पटियाला नरेश महाराजा भूपेन्दर सिंह ने सिनोर वेनितो मुसोलिनी से पहली मुलाक़ात पलाज़ो वेनेज़िया में १७ अप्रैल १९३५ को सवा चार बजे शाम को की। रोम के विदेश मन्त्रालय से उनको पत्र मिला था जिसमें मुसोलिनी से भेंट करने की तारीख और समय दिया हुआ था।

कलकत्ते में, महाराज का एक इटैलियन दोस्त सिनोर अमेदाओ स्कारसा, दागली अफ़ेरी एस्तोरी नाम का था, जो इटली का भारत में कौन्सल जेनरल था। महाराजा की उससे काफ़ी घनिष्टता बढ़ गई थी और उसी के द्वारा महाराजा ने कोशिश करके मुसोलिनी पर अपना प्रभाव डाला। कौन्सल-जेनरल भी इत्तिफ़ाक से उसी समय रोम गया जब कि महाराजा गये हुए थे। यद्यपि महाराजा की मुलाक़ात औपचारिक रूप में ब्रिटिश राजदूत के द्वारा तय की गई थी परन्तु कौन्सल जेनरल ने महाराजा की योजना पहले ही मुसोलिनी को सूचित कर दी थी। मुसोलिनी भी महाराजा से मिलकर, भारत विजय करने में उनसे जो सहायता मिल सकती थी, उसकी आगामी योजना पर बातचीत करने को उत्सुक था।

इटली के बादशाह विक्टर एमैनुएल, क्वीरीनल पैलेस में रहते थे। आमतौर पर वे अपने विशिष्ट मेहमानों से हॉल द' क्यूरासियर में मिलते थे जब कि मुसोलिनी, प्राइम मिनिस्टर और फ़ारेन मिनिस्टर के सरकारी निवास-स्थान पलाज़ो वेनेज़िया में रहता था। उस महल में दाखिल होने का एक सरकारी रास्ता सामने से था और दो प्राइवेट रास्ते पिछवाड़े से थे।

जब कभी मुसोलिनी अपनी किसी चहेती या प्रेमिका को खाने-पीने के लिए बुलाता तो उसे एक खास तरह का कार्ड भेजा जाता था। कार्ड की निशानी से पिछवाड़े के दरवाज़े से उसे प्रवेश की अनुमति मिलती थी जहां से वह मुसोलिनी के प्राइवेट कक्ष में पहुँचा दी जाती थी। राजनीति या शासन-व्यवस्था में ही नहीं, बल्कि अपने प्रेम-प्रसंगों में भी मुसोलिनी एक सख्त मिज़ाज और ज़िद्दी आदमी था।

वह, औरतों को अपने पलंग पर आने की आज्ञा उसी सख्ती से देता था, जिस तरह वह मिनिस्टर लोगों को अपने सरकारी दरबार में आने को कहता था। जब कभी कोई औरत उसके प्राइवेट कमरे में आती, तो मुसोलिनी बड़ी तानाशाही दिखाता और नम्रता या सभ्यता से कदापि पेश न आता। जब हम

रोम गये तो उसके प्रेम-प्रसंगों की अनेक कहानियाँ सुनाई पड़ी और उनमें से कुछ अखबारों में भी प्रकाशित हुई जिनसे जाहिर होता था कि औरतों का प्रेम प्राप्त करने में मुसोलिनी कुछ भद्दे ढंग से काम लेता है और असभ्यता का व्यवहार करता है।

मुसोलिनी की असली प्रेमिका क्लोरेटा पेटासी थी जो मिलन नामक शहर में उसके साथ कत्ल कर दी गई। मुसोलिनी की पत्नी, डोअना रशेला, सार्वजनिक रूप से कम दिखाई पड़ती थी और वह मुसोलिनी के साथ पलाजो वेनेज़िया में भी न रहती थी।

उसकी बेटी एडा का विवाह सन् १६३० में काउन्ट सिआनो से हुआ जो एक ख़ूबसूरत व्यक्ति था। मुसोलिनी का खास निमन्त्रण पाकर मैं और महाराजा कपूरथला, दोनों विवाह समारोह में शरीक हुए थे।

काउन्ट सिआनो इटैलियन सरकार में विदेश मन्त्री नियुक्त हुआ और कई साल तक उस पद पर काम करता रहा। बाद में, मुसोलिनी की आज्ञा से उसे गोली मार दी गई क्योंकि उस पर सरकार और मुसोलिनी के प्रति दगाबाज होने का आरोप था।

पलाजो वेनेज़िया के प्रवेश-द्वार पर पटियाला नरेश महाराजा भूपेन्दर सिंह का स्वागत शिष्ट-राज के प्रमुख अधिकारी ने किया और उनको एक कमरे से दूसरे कमरे में ले गया। वह अफसर महाराजा को और मुझको साधारण बातचीत में फँसाये रहा। उस समय, इटैलियन कौन्सल जेनरल सिनॉर स्कार्पा, मुलाकात का वक्त ठीक करने के लिए इधर-उधर दौड़-धूप कर रहा था। मेरे साथ महाराजा कई बड़े-बड़े कमरों में से होकर मुलाक़ात के लिए एक बड़े हॉल में पहुँचे जहां एक सिरे पर मुसोलिनी ऊँची कुर्सी पर बैठा हुआ था। वह बड़ा गम्भीर दिखाई देता था। उसके सामने सिर्फ़ दो खाली कुर्सियाँ रखी थीं।

मुसोलिनी के चारों तरफ पहरे का सख्त इन्तज़ाम रहता था। उस बड़े हॉल में, चारों तरफ झरोखे थे जिनमें से भरी हुई बन्दूकें लिए मिलिटरी के सन्तरी झाँक रहे थे कि कहीं मुलाकात के लिए आये लोग मुसोलिनी पर हमला न कर दें। साधारण अभ्यागतों को ये बन्दूकें ऐसी जान पड़ती मानो सजावट के लिए लगी हों, मगर गौर से देखने पर वे फौजी प्रहरियों की असली बन्दूकें जाहिर होती थीं। जब हम उस बड़े हॉल में आगे बढ़े तो मुसोलिनी बैठा ही रहा। उसकी मेज से जब हमारा फासला सिर्फ़ एक गज रह गया, तब वह उठ खड़ा हुआ। उसने हम दोनों से हाथ मिलाया और हमारी बातचीत शुरू हो गई।

मुसोलिनी इटैलियन भाषा में बोलता। दुभाषिया उसका अंग्रेज़ी तर्जुमा महाराजा को सुना देता। महाराजा अंग्रेज़ी में जवाब देते, जिसका तर्जुमा इटैलियन में करके वह मुसोलिनी को बता देता।

लेकिन, जब सन् १६३० में मुसोलिनी ने कपूरथला नरेश महाराजा

जगतजीत सिंह से मुलाक़ात की तब वह फ्रेंच में बातचीत करता रहा। इस मौके पर किसी दुभाषिये की ज़रूरत न पड़ी, क्योंकि मैं और महाराजा, दोनों ही बखूबी फ्रेंच बोलते और समझ लेते थे।

पटियाला नरेश ने मुसोलिनी से जिस विषय पर बातें की, उसकी गम्भीरता की दृष्टि से उन्होंने अपना ही दुभाषिया रखा था। पहली मुलाकात ४५ मिनट तक जारी रही जिसमें महाराजा ने अपनी वे सारी योजनाएँ सामने रखीं, जिनसे मुसोलिनी को बड़ा संतोष हुआ। इसके बाद और भी कई मुलाक़ातें हुईं जिनमें बिना किसी तकल्लुफ़ और आडम्बर के, पूरे अनौपचारिक ढंग से महाराजा पलाज़ा वेनेज़िया जा कर मुसोलिनी से भेंट करते रहे।

महाराजा ने मुसोलिनी से कहा कि अगर वह भारत पर हमला करता तो उनकी सेवायें उसे अर्पित होंगी। मुसोलिनी ने इथोपिया का देश पहले ही फ़तह कर लिया था और वहाँ के सम्राट् हेल सिलासी देश-निकाले की हालत में पेरिस में रहने लगे थे जहाँ महाराजा ने उनसे भेंट की थी।

मुसोलिनी के जीवन की सबसे बड़ी अभिलाषा यह थी कि इथोपिया का सम्राट् बनने के बाद वह पूर्व की ओर बढ़े। उसने निश्चय कर लिया कि महाराजा की मदद से वह भारत को भी जीत लेगा। महाराजा ने उसे सब्ज़-बाग़ दिखलाते हुए कहा कि उनके पीछे ३० लाख सिक्खों के अलावा भारत के सभी भागों में विभिन्न धर्मों के असंख्य अनुगामी भी हैं। महाराजा ने बतलाया कि चेम्बर ऑफ़ प्रिन्सेज़ का चैन्सलर होने की वजह से भारत के सभी राजे-महाराजे उनकी मुट्ठी में हैं और ज़रूरत पर उनसे मनचाही मदद मिल सकती है। महाराजा के एक इशारे पर सभी रजवाड़े बग़ावत कर देंगे और उन दिनों ब्रिटिश सत्ता के खिलाफ़ भारत में आज़ादी का आन्दोलन जारी होने की वजह से मुसोलिनी के लिए देश को फ़तह कर लेना कोई मुश्किल बात न होगी।

मुसोलिनी सचमुच अपनी योजना पूरी करने को बेहद उतावला था और महाराजा से इसी सिलसिले में उसने कई दफ़ा मुलाक़ात की। उसने महाराजा से वायदा किया कि भारत जीतने पर वे बादशाह बना दिये जायेंगे।

भारत-विजय का सपना मुसोलिनी के दिमाग़ में मरते दम तक रहा होगा। अपनी इस कोशिश से वह अपना साम्राज्य बढ़ाने के अलावा इटली की माली हालत सुधारने का फ़ायदा भी उठाना चाहता था।

जब महाराजा ने छः दफ़ा मुसोलिनी से मुलाक़ातें की तब ब्रिटिश

को वह मजबूर होगा। यह चेतावनी मिलने पर महाराजा ने रोम शहर छोड़ देने का निश्चय कर लिया और उत्तरी भारत के सिक्खों की मदद लेकर भारत जीतने का षड्यंत्र जो मुसोलिनी के साथ रचा गया था, स्थगित हो गया।

अपनी आखिरी मुलाकात में महाराजा ने मुसोलिनी से कहा था कि उनको इग्लैंड के हिज़ मैजेस्टी बादशाह की सिलवर जुबली में शरीक होने लन्दन जाना है जिसका निमंत्रण औपचारिक रूप से अचानक उनको मिला है। लेकिन भारत लौटने से पहले वे एक दफा फिर मुलाकात करने आयेंगे और लन्दन से वापसी पर अपनी बातचीत जारी रखेंगे। महाराजा रोम से चल दिये मगर इटैलियन कौंसल जेनरल मिस्टर स्कार्पा ने लन्दन तक उनका पीछा न छोड़ा और महाराजा से मुसोलिनी की भारत-आक्रमण योजना को अमल में लाने की तजवीज पर काफी बहस की। वस्तुतः बादशाह जार्ज की सलाह मान कर महाराजा को भारत लौटना पड़ा। लन्दन से चलने के पहले महाराजा ने मुसोलिनी को एक खत भी लिखा।

महाराजा ने वैसी ही बातचीत अपनी बर्लिन यात्रा में अडोल्फ हिटलर और जेनरल गोरिंग से भी की थी। महाराजा ने हिटलर को जो तार भेजा था, उसकी नकल दी जा रही है :—

नेपल्स, २७ सितम्बर १६३५

योर एक्सीलेन्सी,

योरप का समुद्री तट छोड़ने के पहले मैं श्रीमान् को हार्दिक धन्यवाद देता हूँ, उस महती कृपा, आत्मीयता और स्नेह-व्यवहार के लिए, जो श्रीमान् ने तथा जर्मन सरकार ने मेरे जर्मनी आवास-काल में मेरे प्रति प्रदर्शित किया।

मैं सदा, बड़े हर्ष से उस मनोरंजक वार्त्तालाप को स्मरण करता रहूँगा जिसका सौभाग्य बर्लिन में मुझे श्रीमान् के साथ प्राप्त हुआ।

मैं वह हस्ताक्षरित फोटोग्राफ, जो श्रीमान् ने मुझे भेजने की कृपा की है, प्राप्त करके हर्षित हूँ।

मैं उसे श्रीमान् की बहुमूल्य स्नेह भेंट समझ कर सुरक्षित रखूँगा।

श्रीमान् का सच्चा स्नेही
भूपेन्दर सिंह

मुसोलिनी का व्यक्तित्व, निजी जीवन में और तथा सरकारी जीवन में और था। एक दफ़ा मैंने मुसोलिनी को स्नान की नीली पोशाक पहने समुद्र तट के पास पानी में तैरते देखा। उस पोशाक में वह जरूरत से ज्यादा मोटा और बेडौल दिखाई देता था। एक बच्चे की तरह वह पानी में खिलवाड़ कर रहा था। हालांकि मिलिटरी और पुलिस के संतरी उसकी सुरक्षा के लिए

थोड़ी दूर पर तैनात थे मगर जिस जगह मुसोलिनी तैर रहा था, वहाँ लो
के नहाने की रोक-टोक न थी। खुफ़िया पुलिस के कई आदमी मुसोलिनी प
नज़र रखने के लिए वहाँ ज़रा दूर पर मौजूद थे। समुद्र तट पर भीड़ न थी।
चन्द मर्द-औरतें वहाँ स्नान कर रहे थे।

जब मुसोलिनी प्रतिष्ठा के सर्वोच्च शिखर पर था, उस ज़माने में उस
रोब-दाब बहुत बढ़ा-चढ़ा था। लोग उससे इस क़दर डरते थे कि सड़कों प
होटलों में या सार्वजनिक पार्कों में उसका नाम लेना ग़ैरमुमकिन था। ए
दफ़ा, मैंने अपने गॉइड से पूछा कि मुसोलिनी ने किस तरह इतनी ता
हासिल कर ली। वह बेचारा खामोश रहा। मेरा सवाल सुन कर वह परेशा
में पड़ गया। हालाँकि हम लोग एक बहुत बड़े पार्क में थे जहाँ चारों त
५० गज़ के फासले तक हम लोगों की बातें सुनने वाला कोई तीसरा न था,
जब मैंने यह सवाल किया था। लोगों के दिलों में मुसोलिनी ने इस हद त
भय और आतंक पैदा कर दिया था। रोम में, उसकी शान-शौक़त और उस
बदतमीज़ी की आदतों के अनेक किस्से सुनाई पड़े।

एक्सेलसियर होटल में, जहाँ महाराजा के साथ मैं ठहरा हुआ था, ए
दफ़ा मुसोलिनी के दामाद काउण्ट सिआनो ने, जो इटैलियन सरकार में विदे
मंत्री था, मुझे बॉर में शराब पीने के लिए निमंत्रित किया। उसने मुझे ए
बड़ा दिलचस्प मज़ाक सुनाया। इटली के बादशाह ने मुसोलिनी और सपत्नी
काउण्ट सिआनो को, कुछ ही दिन पहले, ब्रिज खेलने को बुलाया था। ज
बारी-बारी से कई दफ़ा हाथ बोले जा चुके तो बादशाह ने छः पान की आवा
दी। मुसोलिनी ने छः हुकुम तक बढ़ाया। बादशाह ने फिर सात पान बोले।
मुसोलिनी को इस पर गुस्सा आ गया कि बादशाह ने बोली कैसे बढ़ाई।
झुँझला कर मेज़ पर हाथ पटकता हुआ वह चिल्लाया—"छः हुकुम!"
बादशाह पास कर गये। काउण्ट सिआनो और उसकी पत्नी भी पास कर
गई। मुसोलिनी ने 'गेम' और 'रबर' जीत लिया।

९. मुसोलिनी से मुलाक़ात

कपूरथला के महाराजा जगतजीत सिंह ने मुसोलिनी से जो बातचीत की, वह निजी और सामाजिक विषयों पर थी। इटली की अजीबो-गरीब तरक्की, अपने देश के पुनर्निर्माण में मुसोलिनी ने जो भूमिका निभायी थी, और इटालियन साम्राज्य की स्थापना, आदि के बारे में वार्तालाप करते हुए महाराजा ने पूछा—

"योर एक्सीलेंसी ! राजकीय कामों की दिनचर्या समाप्त करने के बाद आपके दिल बहलाव के तरीके और शौक क्या-क्या हैं ?"

"हिज़ हाइनेस ! मुझे मिनिस्टरों को बरख़ास्त करने और नियुक्त करने में बड़ा मज़ा आता है। सवेरे, जब सरकारी गज़ट और अख़बारों में बरख़्वास्त किये मिनिस्टरों के नाम देखता हूँ, तब मुझे बड़ी ख़ुशी हासिल होती है।"

इस जवाब के बाद, हालांकि महाराजा बातचीत आगे बढ़ाना चाहते थे, मुसोलिनी का चेहरा फूल कर सुर्ख़ हो गया। वह उठ खड़ा हुआ और नम्रता पूर्वक मुझसे तथा महाराजा से कहा—"गुड बाई !"

उसके मुँह से कुछ शब्द और भी निकले जो हमारी समझ में न आये मगर हमें इतना अन्दाज़ा ज़रूर हो गया कि मुसोलिनी को उस घड़ी कुछ ख़ास मिनिस्टरों की याद आ गई थी जिनसे वह नाराज़ होगा और बरख़्वास्त करना चाहता होगा। अगले रोज़ सवेरे, अख़बारों में छपा कि मुसोलिनी ने अपने दो ख़ास मिनिस्टरों को उनके पद से हटा दिया था।

मैं, महाराजा कपूरथला के साथ उसी रास्ते से लौट पड़ा, जिससे गया था। जब तक हम हॉल से बाहर न निकल गये, मुसोलिनी अपनी काली वर्दी और टोपी पहने, सीधा खड़ा देखता रहा। हमने पलट कर जाते-जाते झुक कर उसका अभिवादन किया जिसके जवाब में उसने हमें सैनिक ढंग से सलामी दी।

१०. पटियाला में ब्रिटिश मिनिस्टर

पटियाला नरेश महाराजा भूपेन्दर सिंह, उनके मिनिस्टर, और पटिया
रियासत के सीनियर अफ़सरों को काम करने का ज़रा भी वक़्त न मि
था क्योंकि उनका ज़्यादातर वक़्त, उन शिकार पार्टियों, जन्म दिन के
दूसरे बहुतेरे उत्सव-समारोहों में, जिनका इन्तज़ाम महाराजा की ख़ुशी के लि
किया जाता था, हाज़िरी देते हुए बीता करता था। मैदानों में, चिड़ियों
शिकार की प्रतियोगितायें हुआ करतीं जो सारे दिन चलती थीं और उन
मियाद दो-तीन हफ़्ते की होती थी।

इन प्रतियोगिताओं का इन्तज़ाम पटियाला में तथा पड़ोसी रियासतों की
राजधानियों—जैसे, संगरूर, नाभा, और फ़रीदकोट में हुआ करता था। इन
मौक़ों पर शानदार जलसे होते थे। शिकारी लोग तीतर का शिकार करते
और सिखाये हुए कुत्ते तैनात रहते थे जो गोली मारने के बाद ज़मीन पर
गिरने वाली चिड़ियों को उठा लाते थे। इनाम, इसी बुनियाद पर बाँटे जाते
थे कि गोली चलने के कितनी देर बाद कौन से कुत्ते शिकार की हुई चिड़ियाँ
उठा कर लाते हैं। सबसे फ़ुर्तीले कुत्ते का मालिक इनाम का हक़दार समझा
जाता था।

कुत्ते किस तरीके से चिड़ियों को मुँह में पकड़ते हैं, दाँतों से पकड़ते हैं या
बिना दाँतों का इस्तेमाल किये, इस पर भी नम्बर दिये जाते थे। फिर, चिड़ियों
को लाने के ढंग पर भी विचार किया जाता था। पड़ोसी रियासतों के नरेशों
में इस प्रतियोगिता के अवसर पर बड़ी लाग-डाँट चलती थी। जो भी चैम्पि-
यनशिप जीतता था, उसे शील्ड और चाँदी-सोने के कप दिये जाते थे।

जब कभी पटियाला के महाराजा शिकार प्रतियोगिता में शामिल होते और
मैदानों में शिकार की खोज में निकलते, तब उनके प्राइम मिनिस्टर, मिनिस्टर
और दूसरे अफ़सरान जिनको महाराजा से ज़रूरी काम होता, उनके पास पहुँचते
और वहीं बातचीत करते थे। ऐसे मौक़ों पर उनको बहुत सावधान रहना पड़ता
था कि महाराजा की तफ़रीह में ख़लल न पड़े और उनका मिजाज भी अच्छा
हो, वरना सारा गुस्सा बात करने वाले पर ही उतारा जाता था। महारानियाँ
हाथियों पर सुनहले हौदों में बैठकर यात्रा करती थीं। उन हौदों में कुर्सियाँ
और गद्दे बिछे रहते और बगल में मख़मल पर्दे पड़े होते थे। कभी महा-
रानियाँ कुर्सियों पर बैठतीं और कभी मख़मली गद्दों पर इत्मीनान से आराम

करतीं। हर हाथी पर दो या तीन महिलाएँ बैठती थीं जिनके साथ हिफ़ाज़त के लिए भरी बन्दूक लिए एक अंगरक्षक तैनात रहता था। महावत अंकुश से हाथी को चलाता था और हौदे की आड़ में रहता था। उसे सख्त ताकीद थी कि पीछे मुड़कर महिलाओं की तरफ़ न देखे। हाथियों के अलावा सामान ढोने के लिए तमाम ट्रकें और मोटरें साथ चलती थीं। शिकार प्रतियोगिता में भाग लेने वाले १२ से १५ तक मेहमानों के लिए स्थान पहले ही सुरक्षित कर लिए जाते थे। एक हज़ार से भी ऊपर मेहमानों के चाय-पानी और दोनों वक्त की दावत की पूरी व्यवस्था रहती थी। रात के भोजन से पहले खीमों में सबको शराब पेश की जाती थी। वापसी पर, मोती बाग पैलेस में मेहमानों के दिलबहलाव के लिए नाच-गाने का इन्तज़ाम रहता था। नाच-गाना सारी रात चला करता था। दरबार की बहुत सी नर्तकियाँ, जिनकी तादाद सौ के करीब होगी, नाच-गानों और सोहबत से मेहमानों का दिल बहलाती थीं।

साल में कई दफ़ा, बारी-बारी से ऐसे ही मेल-तमाशों में खासी रंगरलियाँ मनाई जाती थीं जब कि रियासत का सारा काम-काज एक दम ठप रहता था। रियासती सचिवालय के दफ्तर जाड़ों में सुबह १० बजे और गर्मियों में सुबह ८ बजे खुल जाते थे मगर जब शिकार प्रतियोगिताएँ चलती थीं, उन दिनों छोटे अफ़सरान और क्लर्क ही दफ्तरों में आते और सारे दिन रियासत का कोई काम किये बिना बैठे-बैठे अपना वक्त इधर-उधर की बातों में गुज़ारा करते थे।

रियासत के इन्तज़ाम का सारा काम-काज इस क़दर बिगड़ जाता था कि कई समझदार मिनिस्टरों और अफ़सरान को घर पर सवेरे तक कागज़ात देखने पड़ते थे, जिससे पिछड़ा हुआ काम निपटता रहे। जो लोग शरीर से कमज़ोर होने की वजह से इतनी मेहनत नहीं कर पाते थे, या लापरवाह होते थे, उनके पास सैकड़ों और हज़ारों की तादाद में फ़ाइलों के ढेर लगते जाते थे और उन पर न कोई कार्यवाही होती थी और न कोई हुक्म ही होता था।

महाराजा की हालत और भी खराब थी। हुकूमत के कर्ता-धर्ता वही थे, इस नाते बगैर उनके हुक्म के कुछ न हो पाता था और उनको रियासती काम-काज देखने का वक्त ही न मिलता था। सार्वभौम सत्ता के प्रतिनिधि के नाते रेज़ीडेंट ने रियासत के इन्तज़ाम में यह गड़बड़ी देखी तो उसने महाराजा को सलाह दी कि सरकारी काम में वे ज़्यादा वक्त दिया करें अथवा वायसराय को सूचना देकर कोई ब्रिटिश प्रोफ़ेशनल मिनिस्टर अपने यहाँ नियुक्त करें जो रियासत की अर्थ-व्यवस्था को दुरुस्त करे। रेज़ीडेंट से यह बातचीत होने के बाद से ज़ाहिरा तौर पर महाराजा रियासत के इन्तज़ाम में दिलचस्पी लेने लग गये। इस तरह ब्रिटिश रेज़ीडेंट की आँखों में महाराजा ने धूल झोंक दी मगर रियासत की माली हालत कतई सुधर न पाई। तब मजबूर होकर वायसराय ने सर फ्रेडरिक गान्टलेट को रियासत का फ़ाइनेन्स मिनिस्टर नियुक्त कर दिया।

कई महीनों तक महाराजा सर फ्रेडरिक गॉन्टलेट से मिले ही नहीं। जाड़े के दिनों में सुबह दस बजे और गर्मियों के दिनों में सुबह आठ बजे वह बेचारा बुलाया जाता था कि सरकारी काम करे। मगर वह खाली बैठे-बैठे थक जाता और रात को निराश हो कर लौट जाता था। महाराजा के पास वक़्त ही नहीं था कि उससे भेंट कर सकें। इसी बीच, सर फ्रेडरिक गॉन्टलेट की बड़े ऊँचे पैमाने पर खातिर होती रही और उसे सोडे के साथ ह्विस्की पीने को मिलती रही जो अंग्रेजों को बेहद पसन्द आती है। शुरू में, कुछ दिनों तो वह गुस्से से पागल रहा फिर बाद में जिन्दगी की उस रफ़्तार का आदी हो गया। उसे ब्रिज खेलने का बड़ा शौक था जिसके लिए वह अपने तीन साथियों को और पकड़ लाता था जिनका हाल उसी के जैसा था। इस तरीक़े से कई महीने गुज़र गये।

सर फ्रेडरिक, हालाँकि ब्रिज खेल कर अपना वक़्त काट रहा था, मगर कभी-कभी गुस्से से गरम हो उठता था क्योंकि काम-काज के लिए महाराजा उसको हाज़िर होने का मौक़ा ही नहीं दे रहे थे। लाचार होकर उसने एक तरकीब निकाली। वह सारी फ़ाइलें व्यक्तिगत विचार-विनियम के लिए पेशगी ही महाराजा के पास भेजने लगा। कई महीने इस तरह गुज़र गये तब महाराजा ने अपने कुछ विश्वासपात्र अफ़सरों को बुलाया और हुक्म दिया कि फ़ाइलों को देख कर उनसे बातचीत करें। बातचीत के बाद, महाराजा उनको अपना फ़ैसला लिखा देने लगे। जब यह काम पूरा हो चुका तब महाराजा ने सर फ्रेडरिक गॉन्टलेट को अपने अध्ययन-कक्ष में बुलवाया और ह्विस्की का ग्लास पेश किया। सर फ्रेडरिक ने तुरन्त इन्कार करते हुए कहा—"मैं योर हाइनेस के साथ तब तक ह्विस्की न पीऊँगा जब तक पिछले छः महीनों से आपके पास इकट्ठी हुई सभी फाइलों पर आप हुक्म न देंगे।" महाराजा ने बतलाया, वे बराबर फ़ाइलें देखते रहे हैं और उन पर अपना हुक्म भी जारी कर चुके हैं। ऐसी हालत में, अब सर फ्रेडरिक के साथ उनको निजी तौर पर मशविरा करने की जरूरत नहीं रह गई। सर फ्रेडरिक गॉन्टलेट ने कुछ फ़ाइलें पलट कर देखीं तो उसको हैरत हुई कि शायद महाराजा ने दिन-रात मेहनत करके हर फ़ाइल पर हुक्म जारी कर दिया है। महाराजा की काम करने की सामर्थ्य का गलत अन्दाजा लगाने के लिए सर फ्रेडरिक ने माफ़ी माँगी और उनके साथ बैठ कर, एक के बाद एक, कई ग्लास ह्विस्की पी गया।

कुछ बरसों के बाद, सर फ्रेडरिक गॉन्टलेट ने वायसराय को एक पत्र में लिखा कि भारतीय रियासतों में महाराजा जैसा सख्त मेहनती और क़ाबिल शासक आज तक दूसरा नहीं दिखाई दिया।

११. बनारस का एक सन्त

ऋषीकेश से एक नंग-धड़ंग साधु मोती बाग पैलेस में आया। उन दिनों, पटियाला नरेश महाराजा भूपेन्दर सिंह दिल के दौरे से सख्त बीमार थे। जटाजूटधारी, व्याघ्रचर्म पहने वह नंगा साधु अनिमंत्रित होने पर भी बड़ी बेतकल्लुफ़ी से महाराजा के पलंग पर आ बैठा। उसने महाराजा के कान में कुछ कहा जो पासवाले लोग सुन न पाये। इसके बाद, वह यकायक महल से बाहर निकला और गायब हो गया।

महाराजा ने फौरन राजवैद्य पंडित रामप्रसाद को और मुझे बुला भेजा। बड़े विश्वास के साथ उन्होंने बतलाया कि ऋषीकेश का वह साधु कह गया है कि अगर वे बनारस के महान् सन्त का आशीर्वाद प्राप्त कर लें तो उनकी बीमारी दूर हो सकती है। लेकिन, उस महान् सन्त का नाम-पता वह कुछ नहीं बता गया।

महाराजा ने मेरे सभापतित्व में एक कमेटी मुकर्रर की जिसमें राजवैद्य पंडित रामप्रसाद, श्री अर्जुन प्रसाद बत्तल और कर्नल नारायनसिंह को रखा गया। हमें यह काम सौंपा गया कि बनारस जा कर उस महान् सन्त का पता लगायें और उसे पटियाला ले आयें जिससे महाराजा आशीर्वाद प्राप्त करके रोगमुक्त हो सकें।

सन्त को बुलाने की बात महाराजा के दिमाग में ऐसी जबरदस्त बैठी थी कि उन्होंने काफ़ी रुपयों का इन्तज़ाम करके कई नौकर-चाकरों के साथ हमारी टोली को फौरन बनारस रवाना होने का हुक्म दे दिया। वहाँ पहुँच कर महाराजा बनारस और उनके प्राइम मिनिस्टर की मदद से हमने महान् सन्त की तलाश शुरू कर दी। बनारस में देव-मन्दिरों की भरमार है जिनमें हिन्दुओं के अनेक देवी-देवता प्रतिष्ठित हैं।

यह नगर धार्मिक शिक्षा और पूजा-उपासना का बहुत बड़ा केन्द्र है। महादेवों के प्राचीन मन्दिर को तोड़ कर अन्तिम मुगल सम्राट् औरंगज़ेब की बनवाई मस्जिद की दो ऊँची-ऊँची मीनारें सहज ही यात्रियों का ध्यान आकर्षित करती हैं। सड़कें और रास्ते इतने सँकरे हैं कि आमने-सामने से दो मोटरें या घोड़ा-गाड़ियाँ नहीं गुज़र सकतीं।

महाराजा बनारस ने अपने नन्देश्वर पैलेस में हमें ठहराया। आमतौर पर वायसराय, अंग्रेज गवर्नर, राजा-महाराजाओं और विशिष्ट मेहमानों के लिए

यह महल रिज़र्व रहता था। हमारे आगे बड़ी समस्या सन्त को तलाश करने की थी। कई हफ़्तों तक मैं राजवैद्य के साथ श्मशान घाटों, मठों, आश्रमों और धर्मशालाओं की खाक छानता फिरा क्योंकि इन्हीं जगहों से सन्त का पता चल सकता था। गली-कूचे, वीरान जगहें, शहर के बाहर खंडहर, जहाँ भी साधु-संन्यासियों के ठहरने का पता चलता, हम फ़ौरन जा कर टोह लगाते। बनारस में रहने वाले हजारों साधुओं के बीच किसी गुमनाम बेपता साधु को खोज निकालना बड़ा कठिन था। फिर, हमको यह भी पता न था कि वह सन्त नागरिकों के से वस्त्र पहनता है, या गेरुए कपड़ों में रहता है या एकदम नंग-धड़ंग रहता है। हमारी टोली के सब लोग दौड़-धूप करते-करते परेशान हो गये थे। सन्त का कुछ पता न चलता था।

हमने तमाम साधू-सन्तों को ढूँढ़-ढूँढ़ कर बातचीत की मगर वे लोग भी किसी महान् सन्त का पता-ठिकाना बतलाने में असमर्थ थे।

एक दिन संयोग से, राजवैद्य गंगा-स्नान करते समय ईश्वर-प्रार्थना कर रहे थे। मन ही मन वे भगवान् से प्रार्थी थे कि किसी तरह उस महान् सन्त का पता चल जाये जिससे हम नाकामयाब हो कर पटियाला न लौटें और महाराजा के सामने अपनी इज्ज़त-आबरू बचा सकें। तभी, राजवैद्य को कुछ काल्पनिक अनुमान हुआ। स्नान के बाद राजवैद्य के साथ हम सड़क पर मुश्किल से करीब १०० गज आगे बढ़े होंगे कि सामने एक दुमंज़िला मकान दिखाई पड़ा। जब हम उस मकान की ऊपरी मंज़िल पर गये तो देखा कि वहाँ कमरे में फ़र्श पर एक खूब मोटा-ताजा साधू नंग-धड़ंग अकेला बैठा है। हमें देखते ही वह ज़ोर से बोला—

"मैं तुम्हारे महाराजा को बचा सकता हूँ। मैं जानता हूँ कि तुम लोग कहाँ से आये हो।"

यह सुन कर हम ताज्जुब में पड़ गये और कुछ देर आपस में कानाफूसी करते रहे। हमें विश्वास हो गया कि बग़ैर बताये उसने हमारे आने का मतलब जान लिया था। हो न हो, यही महान् सन्त है जिसे हम अब तक खोज रहे थे। हम बड़ी श्रद्धा से उसके चरणों में गिर गये और पूछा कि हमारे आने का उद्देश्य उसने कैसे जान लिया था। हमारी बात का उसने कोई जवाब न दिया मगर देखते ही देखते उसका बदन खास तौर से पेट—गोल फुटबाल की तरह फूल गया। उसने हमसे कहा कि पास में रखी हुई तलवारें उठाएँ और उसके पेट में घुसेड़ दें तब हमें पता चलेगा कि उसे कोई हानि नहीं पहुँचती। उसने हमसे यह भी कहा कि अगर हम कुछ देर इन्तज़ार करें तो वह उड़ कर [illegible] मिनटों में हिमालय जा सकता है और महाराजा की बीमारी के बारे में उनका सन्देश ला सकता है।

इस मौके पर हम ऐसे चमत्कार देखने के लिए ठहर न सकते थे। हमने तय कर लिया था कि जैसे भी हो [illegible] इस सन्त को जल्द से जल्द महाराजा

के पास पहुँचाना है। हम चाहते थे कि महाराजा के सामने ही सन्त अपने करिश्मे दिखायें जिससे महाराजा को यकीन हो जाये कि उसके आशीर्वाद में इतनी शक्ति है कि उनकी बीमारी दूर कर दे। तार के ज़रिये महाराजा को खबर भेज दी गई कि महान् सन्त का पता चल गया है और अगले दिन हम लोग उन्हें लेकर स्पेशल ट्रेन में पटियाला पहुँच रहे हैं। महाराजा ने तार का जवाब फ़ौरन भेजा। इसके बाद सन्त के पधारने पर बाकी इन्तज़ाम वगैरह के बारे में कई दफ़ा महाराजा से टेलीफ़ोन पर भी हमारी बात-चीत हुई।

मामूली तौर से, ट्रेन के चार डब्बे हम लोगों के लिए काफ़ी होते क्योंकि सब मिलाकर हम १६ आदमी थे। मगर हमें अपनी स्पेशल ट्रेन में सात डब्बे लगवाने पड़े। वजह यह थी कि सन्त ने किसी दूसरे के साथ डब्बे में सफ़र करना मंज़ूर नहीं किया। एक अकेला डब्बा उसे दिया गया। दो डब्बे सन्त ने अपने छः चेलों की यात्रा के लिए माँगे। उनमें से दो चेले तो एकदम नंगे थे और बाकी चार नाममात्र को कपड़े पहने थे। सन्त के दर्शन के लिए स्टेशन पर बेहद भीड़ इकट्ठी हो गई और हमारी ट्रेन कई घंटे लेट छूटी। हमारी स्पेशल जब पटियाला पहुँची तो रियासत के सभी मिनिस्टर, उच्च अधिकारी, युवराज, राजपरिवार के लोग और सैनिक अफ़सर महान् सन्त के स्वागत के लिए स्टेशन पर मौजूद थे। फ़ौजी सलामी देने के बाद एक रौल्स-रायस मोटर में बिठा कर सन्त को सीधे महल में पहुँचा दिया गया।

महाराजा हालाँकि ज़्यादा बीमार थे, मगर डॉक्टरों ने उनको बातचीत करने की इजाज़त दे दी थी। उनका शरीर काफ़ी कमज़ोर हो गया था पर दिमाग सही काम कर रहा था। जब मैंने महाराजा से सन्त के बारे में बात-चीत की, तब उन्होंने हुक्म दिया कि महल खास की एक इमारत महारानियों से खाली करा ली जाय जिसमें सन्त और उसके चेले ठहरा दिये जायें। सन्त को रियासत का विशेष मेहमान समझा जाय। जब हम लोगों ने सन्त को ठहरने का स्थान दिखाया तो उसने कहा—"मैं महलों में रहने का आदी नहीं हूँ और न ऐसी जगहों में रह सकता हूँ। मैं समाज-त्यागी हूँ और शहर के बाहर एक घास-फूस की झोंपड़ी रहने को काफ़ी होगी।"

यह संदेशा महाराजा तक पहुँचाया गया तब उन्होंने आज्ञा दी कि सन्त की मर्ज़ी के मुताबिक़ राजधानी के बाहर कोई अच्छी मुनासिब जगह तलाश की जाय। हम लोग सन्त को शहर के बाहर ले गये और कई स्थान दिखलाये। अन्त में, उसने घुड़दौड़ के मैदान के नज़दीक एक दुमंज़िला टूटा-फूटा मकान पसन्द किया।

उस इमारत की नीचे की मंज़िल में ३० फ़ीट लम्बा और २० फ़ीट चौड़ा एक बड़ा हॉल था। हॉल से सटा हुआ एक छोटा कमरा था जिससे कभी शायद स्नानगृह का काम लिया जाता होगा। हॉल के दोनों तरफ़ खूब

चौड़े बरामदे थे। इतनी ही जगह ऊपर की मंजिल में भी थी। कई बरसों से, उस मकान में कोई न रहता था। सन्त ने वहीं रहने का फैसला किया और आज्ञा दी कि बग़ैर बुलाये, कोई उसके पास न जाये और न उसे परेशान करे। अपने चेलों के साथ सन्त उस मकान में अपना बोरिया-बिस्तर ले आया। सामान के नाम पर सिर्फ़ दो चादरें, दो लुंगियाँ, व्याघ्र-चर्म और कपड़ों की एक पोटली उन लोगों के पास थी। महाराजा यह जानने को परेशान थे कि सन्त ने अपने ठहरने के लिए वह टूटा-फूटा मकान क्यों पसन्द किया। हम लोगों ने उनको समझाया कि संन्यासी होने के कारण वह सबसे अलग रहना पसन्द करता है। तब महाराजा को विश्वास हुआ कि अपनी आदत के अनुसार सन्त ने वह जगह अच्छी समझी न कि महाराजा और उनके कर्मचारियों पर नाराजी की वजह से वह महल में नहीं ठहरा था।

महाराजा को सन्त ने संदेशा भिजवाया कि शाम को ६ बजे दर्शन के लिए पधारें। वह जाड़े का मौसम था जब सूरज शाम को ६ बजे के पहले ही डूब जाता है। सन्त को बिजली की या गैस वग़ैरह की तेज़ रोशनी पसन्द न थी। घर में उसने एक मिट्टी का दीया जला रखा था जो टिमटिमा रहा था।

सन्त का निमंत्रण पाकर महाराजा ने महल में खबर भिजवाई कि उनके स्वास्थ्य-लाभ के लिए सन्त से आशीर्वाद लेने उनकी सब रानी-महारानियाँ चलने की तैयारी करें। मोटरों का एक लम्बा जलूस, जिसमें महाराजा और उनका पूरा रनिवास था, सन्त के मकान तक जा पहुँचा। महाराजा और उनकी खास महारानियाँ, जिनकी तादाद चालीस थी, सन्त के लिए नकद रुपये तथा उपहार लेकर आई थीं. रानियाँ-महारानियाँ अपने-अपने पद के अनुसार ५०० रु० से १०,००० रुपयों तक की भेंट लाई थीं और महाराजा के हुक्म बमूजिब उनके खजाने का अफ़सर सन्त को देने के लिए १ लाख २१ हजार रुपये साथ लाया था। यह बात पहले ही तय हो चुकी थी सन्त महाराजा से पहले मुलाक़ात करेगा, दूसरों से बाद में।

अतएव, महाराजा सन्त के सामने पहुँचे और फ़र्श पर बिछे व्याघ्रचर्म पर बैठ गये। सन्त ने अपना हाथ बढ़ाया और महाराजा के सिर पर रख कर उन्हें आशीर्वाद दिया। सन्त ने कहा—"करीब एक घंटे बाद, मैं गुरु गोरखनाथ जी से मिलने जाऊँगा और आपके लिए उनका आशीर्वाद लाऊँगा। गुरु जी से जो मेरी बातचीत होगी, उसे आप यहीं पर मेरे शिष्य के द्वारा सुन सकेंगे।" सन्त की इस कृपा के लिए महाराजा ने अपनी कृतज्ञता प्रकट की। फिर, सन्त से आज्ञा लेकर महाराजा ने अपनी रानियों-महारानियों को उनकी सेवा में बुलाया और उनको फ़र्श पर, बिना कालीन या दरी के, बिठला दिया। अकेले महाराजा ही व्याघ्रचर्म पर बैठे थे, मैं, राजवैद्य कुछ उच्च अधिकारी और अधिकारी फ़र्श पर हाथ जोड़े बैठे थे। मुसाहब और महल के कारिन्दे और नौकर बाहर बरामदे में खड़े थे। कुछ देर बाद, महाराजा

और उनके परिवार के लोगों ने, रुपये, जवाहरात और आभूषण, जिनकी कीमत कई लाख रही होगी, चढ़ावे के रूप में भेंट किये। सन्त ने महाराजा की तरफ देख कर कहा—"जब मैंने संसार त्याग दिया तो आप कैसे उम्मीद करते हैं कि मैं भेंट-उपहार मैं मंजूर करूँगा ? मुझे चाँदी, सोने, हीरे, मोती और रेशमी कपड़ों की जरूरत नहीं। इनको गरीबों में बँटवा दीजिये तब मुझे सन्तोष होगा, बजाय इसके कि मैं इनको अपने पास रखूँ।"

महाराजा को अब और भी यकीन हो गया कि सन्त कोई बहुत पहुँचा हुआ साधु है और उन्होंने वायदा किया कि जैसा आप चाहते हैं, वैसा ही होगा। भेंट-उपहार की वस्तुएँ फिर खजाने में भेज दी गईं कि सन्त की इच्छानुसार गरीबों को बाँट दी जायेंगी। महाराजा से कुछ देर बातें करने के बाद सन्त ने अपने एक चेले को हुक्म दिया कि सब लोगों को हॉल से बाहर चले जाने को कहे क्योंकि वह महाराजा के लिए स्वास्थ्य-लाभ की प्रार्थना प्रारम्भ करेगा। सन्त ने कहा—"मैं हिमालय के पार जाकर गुरु जी से भेंट करके महाराजा के लिए आशीर्वाद प्राप्त करूँगा।" सब लोग उठ कर बाहर बरामदे में चले गये। सन्त ने पगड़ी के एक छोर से अपना चेहरा ढक लिया और हॉल में अकेले बैठ कर ध्यान करने लगा। उसने अपने दोनों हाथ फैला दिये और योगियों की तरह पद्मासन लगा कर बैठ गया। आमतौर पर ईश्वर से लौ लगाने वाले साधु-सन्त इसी तरह बैठते हैं क्योंकि इस आसन में वे अपनी सभी इन्द्रियों के कार्य रोक कर मन को एकाग्र करते हैं।

सन्त का एक चेला महाराजा के करीब था, दूसरा महारानियों के आस-पास और तीसरा वहाँ मौजूद लोगों को बतला रहा था कि उसके गुरुजी अब कोई करिश्मा दिखलाने वाले हैं।

महाराजा यह जानने को उत्सुक थे कि उनके स्वास्थ्य-लाभ के लिए क्या उपाय किये जा रहे हैं। हालांकि यूरोप और विदेशों से उनके इलाज के लिए अच्छे से अच्छे चिकित्सकों और दवाओं का पूरा इन्तजाम था, फिर भी डॉक्टरों ने उनके अच्छे होने की उम्मीद छोड़ दी थी। हाल के हर कोने में दीये जल रहे थे, जिनकी धुँधली रोशनी में हम लोग सन्त को ध्यान लगाये बैठा हुआ देख रहे थे। कुछ मिनट बाद, उसकी नाक के नथुनों से बड़े जोर की आवाज आने लगी। वह आवाज वैसी ही थी जैसी हवाई जहाज की उड़ान शुरू होने वक्त सुन पड़ती है। महाराजा और महारानियों के पास खड़े चेलों ने बतलाया कि अब गुरुजी हिमालय की ओर जाने वाले हैं। दो-तीन मिनट बाद वे चिल्लाये—"देखिये ! गुरुजी उड़ रहे हैं।"

सन्त, व्याघ्रचर्म पर बैठा हुआ जमीन से एक गज ऊपर अधर में, बिना किसी सहारे के ठहरा हुआ था। यह चमत्कार देख कर महाराजा और दूसरे लोग अवाक् रह गये और घबरा कर भगवान् का नाम लेने लगे। फिर तरह-तरह की आवाजें आना शुरू हुईं। कभी कुत्ते के भूँकने की, कभी मोर के

गरजने की, कभी समुद्र की लहरों की और कभी ज्वालामुखी पर्वत के फटने की आवाज़ें सुनाई देने लगीं।

करीब बीस मिनट बाद, सन्त हॉल में से ग़ायब हो गया। चेले कहने लगे कि अब गुरुजी हिमालय के पार गुरु गोरखनाथ से मिलने चले गये हैं। सन्त की गुरु गोरखनाथ से बातचीत बड़ी दिलचस्प रही। सन्त ने हज़ारों मील दूर, हिमालय की ऊँची चोटियों के उस पार जाकर गुरु गोरखनाथ से अर्ज़ की—"हे गुरुदेव! मैं सेवा में उपस्थित हूँ। हे चराचर के स्वामी! मैं परम दयावान, दीनहितकारी, शरणागतों के रक्षक, महाराजा के लिए आपके आशीर्वाद की कामना से आया हूँ।" गुरु गोरखनाथ ने उत्तर दिया—"एवमस्तु! तेरी इच्छा पूरी होगी। वापस जा और महाराजा को बतला दे कि वे बीमारी से अच्छे हो जायेंगे।"

ऊपर लिखी बातचीत सन्त और गुरु गोरखनाथ के बीच हुई। उनके बोलने की बहुत धीमी आवाज़ें, मानो मीलों दूर से आ रही हों, कुछ अस्पष्ट-सी सुनाई दे रही थीं। महाराजा, महारानियाँ और परिवार के लोग भूमि पर दण्डवत् करके ईश्वर की कृपा का धन्यवाद दे रहे थे। कुछ देर बाद, पहले जैसी अजीबोग़रीब आवाज़ें फिर सुनाई पड़ने लगीं। इसके बाद, आसमान से उतरते हवाई जहाज़ की भाँति सन्त नीचे आता दिखाई दिया और फ़र्श पर आ गया। उसके आते ही चेलों ने महाराजा से कहा कि वे जाकर गुरु जी को प्रणाम करें। महाराजा ने बड़े आदर से सन्त के चरण चूमे। फिर अपने परिवार के साथ वे महल में लौट गये।

जो सेवायें हमने की थीं, उनकी बड़ी सराहना हुई और मुझे तथा राजवैद्य को महाराजा ने ज़मीन व मकान माफ़ी में दिये।

कुछ अरसे बाद, सी० आई० डी० के इन्सपेक्टर जेनरल का लिखा एक नोट पुलिस के रोज़नामचे में दर्ज मिला। वह पुलिस अफ़सर सन्त की हर एक हरकत पर नज़र रखे था। हाल के एक सिरे पर छोटा सा कमरा था जिसका ज़िक्र हम पहले कर चुके हैं। पुलिस अफ़सर एक कोने में आड़ लेकर खड़ा-खड़ा दीये की धीमी रोशनी में सन्त की हिमालय पर उड़ान की साफ़ तस्वीर देखता रहा था।

बात यह थी कि सन्त ने यह चमत्कार दिखाने की योजना अपने चेलों की मदद से, इस ख़ूबसूरती से बनाई थी कि उसको सिर्फ़ पुलिस के इन्सपेक्टर जेनरल की अनुभवी आँखें ही पहचान सकीं। सन्त ने सिर पर पगड़ी बाँधे हुए एक पुतला अपने आकार का बनवाया था जिसे कपड़े की एक चादर में सिल दिया गया था। किसी मुर्दे के दो हाथ लाकर उस पुतले के हाथों की जगह लगा दिये गये थे। वे दोनों हाथ चादर से बाहर निकले रहते थे और सन्त के असली हाथों जैसे जान पड़ते थे। पुतले का पगड़ीवाला सिर भी सन्त के सिर जैसा मालूम था।

हॉल में अँधेरा रहता था क्योंकि मिट्टी के दीयों की रोशनी बेहद धुँधली थी। जो दर्शक वहाँ आते थे, वे सन्त के बड़प्पन का लिहाज करते हुए धार्मिक भावनाओं में खो जाते थे और जाहिरा तौर पर उनको पता न चलता था कि दृश्य के पीछे क्या हो रहा है। अभ्यस्त होने के कारण सन्त तरह-तरह की आवाज़ें निकालने के बाद अँधेरे में हॉल के बगल वाले छोटे कमरे में चुपचाप खिसक जाता था। पुतला, जो हॉल की छत से किसी तरकीब से चिपका रहता था, तुरन्त फ़र्श पर उतार दिया जाता था, ठीक उसी जगह जहाँ सन्त बैठा था। अब, बगल के कमरे में से सन्त कुत्ते, शेर और हवाई जहाज के उड़ने जैसी, तरह-तरह की आवाज़ें निकाला करता। पूरी चालाकी से अपनी इन हरकतों के ज़रिये वह दर्शकों पर ज़बरदस्त असर डाल देता और वे मंत्र-मुग्ध से बैठे हुए यही समझते रहते कि वह हवा में उड़ गया है और हज़ारों मील दूर से आवाज़ें आ रही हैं।

सन्त ने अपने चेलों की मदद से हॉल की छत में घरारियाँ लगवा रखी थीं जिन पर से रस्सियों के ज़रिये उसका पुतला धीरे-धीरे ऊपर खींचा जाता था। जब पुतला छत से एकदम जा लगता, तब कुछ ऐसा इन्तज़ाम था कि वह जल्दी से सिमट कर एक पुलिन्दा बन जाये और छत से चिपक कर दिखाई न पड़े। पुतले को फ़र्श पर उतारने की तरकीब भी इसी प्रकार काम में लाई जाती थी। जब काम पूरा हो जाता तो सन्त चुपचाप आकर अपनी जगह पर बैठ जाता और उसके पुतले को चेले लोग गायब कर देते।

सन्त के उन चेलों में से एक को पता चल गया कि पुलिस के इन्स्पेक्टर जेनरल ने पूरी साज़िश की जानकारी हासिल कर ली है और उन सब पर आफ़त आने वाली है। बस, फिर क्या था। रात के २ बजे अपना बोरिया-बिस्तरा समेट, बिना महाराजा को खबर दिये, सन्त अपने चेलों के साथ चुपचाप रफ़ूचक्कर हो गया। सवेरे सन्त के गायब होने की खबर जब महाराजा को मिली और इधर-उधर तलाश करवाने पर भी उसका पता न चला तो महाराजा ने समझा कि गुरु गोरखनाथ का आशीर्वाद उनको दिलाने के लिए ही सन्त आया था और काम पूरा करके लौट गया। फिक्र उनको भी थी कि ऐसे रहस्यमय ढंग से सन्त क्यों गायब हो गया।

उसी रात को, महाराजा का स्वर्गवास हो गया।

१२. जार्ज पंचम से भेंट

पटियाला नरेश महाराजा भूपेन्दर सिंह को बादशाह जार्ज पंचम ने [illegible] सिलवर जुबली समारोह में शरीक होने के लिए लन्दन आने का [illegible] भेजा। शाही मेहमान की हैसियत से उम्मीद की जाती थी कि वे [illegible] पैलेस में ठहरेंगे लेकिन उन्होंने सवॉय होटल में ठहरना पसन्द किया। [illegible] अनेक रानियों-महारानियों और करीब ६० अफ़सरों व परिचारकों के [illegible] महाराजा होटल में ठहर गये। वैसे तो समारोह सम्बन्धी काम-काज में मह-राजा शरीक होने जरूर जाते मगर रात को अपनी रानियों के पास होटल वापस लौट आते थे। बादशाह की छ: घोड़ों की शानदार बग्घी में [illegible] भड़कीली राजसी पोशाक पर तमगे लगाये, हीरे-जवाहरात के आभूषण [illegible] हुए जब महाराजा सेंट पाल के कैथेड्रल जाते, तब उनकी आन-बान देखते [illegible] बनती थी। बकिंघम पैलेस से कैथेड्रल जाने वाले रास्ते के दोनों तरफ़ [illegible] लोगों की खासी भीड़ इकट्ठी हो जाती थी जो महाराजा का स्वागत कर[illegible] थी। लन्दन के सम्भ्रान्त समाज तथा विदेशी कूटनीतिज्ञों में भी महाराजा [illegible] सम्मान पाते थे।

महाराजा ने जार्ज पंचम से मुलाकात की इच्छा प्रकट की। दिन के ११ बजे भेंट का समय निश्चित हो गया। ब्रिटेन के कूटनीतिक स्वागत-सत्कार विभाग के अधिकारियों का इन्तजाम न जाने क्यों, महाराजा को पसन्द न [illegible] और वे चिढ़ गये। बादशाह से मुलाकात ११ बजे होनी थी मगर उस [illegible] भी महाराजा स्लीपिंग सूट पहने हुए थे। उनकी दाढ़ी बेतरतीब बिखरी [illegible] थी और पोशाक पहनने के पहले जरूरी था कि कोई खिदमतगार कंघी कर[illegible] उसे सँवारता। इस काम में डेढ़ घंटा लगता था। मैंने महाराजा को [illegible] दिलाई मगर वे जानबूझ कर वक्त टालते रहे। जो कोई उनको मुलाकात [illegible] याद दिलाता, उसी पर गुस्सा होते थे। इसी बीच बकिंघम पैलेस से [illegible] आया कि बादशाह महाराजा का इन्तजार कर रहे हैं। बादशाह का प्राइ[illegible] सेक्रेटरी, सर क्लाइव विग्रम बड़ा गरम हो रहा था कि महाराजा ने देर [illegible] की। बादशाह का पारा भी इसी बात पर चढ़ गया था। जाने की तैयारी [illegible] के बजाए महाराजा अपनी महारानियों—विमलावती, यशोदा देवी, [illegible] और [illegible] देवी के साथ बैठ कर ताश खेलने लगे। उन्होंने अपने [illegible] अफसरों और कर्मचारियों की एक न सुनी जो उनको भारत-सम्राट का [illegible]

भाजन न बनने की सलाह देने गये। जब कई दफ़ा टेलीफोन पर बुलावा आया तब महाराजा जाने की तैयारी करने लगे। वे नियत समय से डेढ़ घण्टे बाद पहुँचे। शाही महल में ठीक साढ़े बारह बजे वे दाखिल हुए। लार्ड चैम्बरलेन और सर क्लाइव विग्रम बरामदे में खड़े उनका इन्तजार कर रहे थे। महाराजा के इस अपमानजनक व्यवहार से वे दोनों बेहद नाराज जान पड़ते थे। उन्होंने महाराजा से हाथ भी नहीं मिलाये और इस तरह अपना रोष प्रकट किया। महाराजा के साथ में मैं, कर्नल नरायन सिंह और महल का डॉक्टर था। ऐसे उत्सव-समारोह में महाराजा का डॉक्टर को साथ ले जाना अजीब बात थी मगर महाराजा ज़िद पकड़ गये कि अपने फौजी अंगरक्षक के बजाय वे डॉक्टर को ही साथ ले जायेंगे।

महाराजा को बादशाह की मुलाक़ात के कमरे में पहुँचाया गया। बादशाह क्रोध से लाल-पीले हो रहे थे मगर इसके पहले कि वे कुछ बोलते, कर्नल नरायन सिंह ने सम्राट् से अर्ज़ की कि महाराजा को थ्राम्बोसिस (खून जम जाने की भयंकर बीमारी) का दौरा आ गया था और मुमकिन था कि वे समाप्त हो जाते या शायद सम्राट् के सामने ही उनकी दशा बिगड़ जाय, यह भी डर है। महाराजा भी ऐसा बन गये मानों सख्त बीमार हों और चल न पाते हों क्योंकि डॉक्टर उनकी बाँह थामे हुए सहारा दे रहा था। अचानक ही यह सब हाल जान कर बादशाह ज़ाहिरा तौर पर दुःख प्रकट करने लगे और महाराजा के प्रति उन्होंने बहुत कुछ हमदर्दी दिखाई। ज़रा देर पहले, क्रोध के जो चिह्न उनके चेहरे पर थे, वे गायब हो गये।

बादशाह ने कहा कि—"महाराजा मेरे बड़े प्रशंसक और मेरे तख़्त के प्रति वफ़ादार हैं। वे ही ऐसे व्यक्ति हैं जो अपनी जान खतरे में डाल कर—देर में ही सही—मुझसे भेंट करने आये क्योंकि अपनी बात के वे पक्के हैं।" महाराजा ने बादशाह से बतलाया कि—"मैं योर मैजेस्टी से मुलाकात करने का इतना इच्छुक था कि मैं जान पर खेल करके भी दर्शनों का सौभाग्य प्राप्त करने का लोभ संवरण न कर सका।" इस पर बादशाह ने स्वयं महाराजा की बाँह पकड़ कर उनको आराम से अपने क़रीब सोफ़े पर बिठलाया।

बादशाह ने सम्राज्ञी और युवराज को भी बुलवाया और उनसे महाराजा की राजभक्ति तथा ब्रिटिश सिंहासन के प्रति वफ़ादारी की सराहना की। इस बीच, डॉक्टर ने शाही परिवार के सामने ही महाराजा के दिल की रफ़्तार ठीक रखने के लिए उनके एक इंजेक्शन भी लगाया। महाराजा की तबियत कुछ सम्हलती दिखाई दी और कुछ देर बाद वे ठीक हो गये। बादशाह ने अपने साथ भोज में शामिल होने के लिए महाराजा को रोक लिया।

१३. महान् महाराजा के अन्तिम क्षण

पटियाला नरेश महाराजा भूपेन्दरसिंह, महाराजा अलासिंह के वंशज थे। अलासिंह ने लूट की बड़ी सम्पत्ति इकट्ठी की थी जिसमें अनेक बेशक़ीमती हीरे-जवाहरात और रत्नाभूषण थे। उन्होंने अपनी रियासत का इलाक़ा भी काफ़ी दूर तक बढ़ा लिया था।

महाराजा भूपेन्दरसिंह बड़े विद्वान और कुशल व्यक्ति थे। उन्होंने अपने राज्य में एक से एक बढ़ कर कार्यकुशल, विद्वान् और अनुभवी मिनिस्टर और उच्च अधिकारी नियुक्त किये थे जो उनके मरते दम तक स्वामिभक्त और सच्चे बने रहे।

स्वतन्त्र भारत के सुविख्यात राजदूत, सरदार के० एम० पानिक्कर जो चीन, मिस्र और फ्रान्स में रह चुके हैं, पटियाला के विदेश मंत्री थे। पेप्सू राज्य के भूतपूर्व मुख्य मंत्री कर्नल रघुबीर सिंह पटियाला राज्य की कैबिनेट में सदस्य थे और गृह-व्यवस्था के मंत्री थे। नवाब लियाक़त हयात खाँ कई साल तक पटियाला के मुख्य मंत्री रहे। क़ानून मंत्रालय इलाहाबाद के मशहूर वकील श्री एम० एन० रैना के हाथ में था। मैं भी पटियाला के मंत्रिमंडल में कृषि, उद्योग, वन और स्वास्थ्य मंत्री रहने के अलावा महाराजा का निजी कार्य-मंत्री था। और भी अनेक विद्वान् तथा योग्य प्रशासक उच्चाधिकारी महाराजा ने अपने यहाँ नियुक्त किये थे।

महाराजा भूपेन्दर सिंह के पिता महाराजा सर राजेन्दर सिंह जी० सी० एस० आई०, बेहद शराब पीने के कारण २८ वर्ष की उम्र में मर गये थे। उनके सलाहकारों और मुसाहबों ने इस बात का पूरा ध्यान रखा कि महाराजा भूपेन्दर सिंह अपने पितामह और पिता की इस बुरी आदत से दूर रहें। उनको पढ़ाने के लिए एक अंग्रेज मास्टर रखा गया। हिन्दू और सिक्ख अध्यापक भी महाराजा को शिक्षा देते रहे। १८ साल की आयु में महाराजा बड़े विद्वान् और कुशल व्यक्ति बन गये।

युवा होने पर दरबारियों ने बेहद कोशिश की कि महाराजा को शराब और औरतों का चस्का लग जाय मगर महाराजा अपने को इन प्रलोभनों से बचाते रहे। उनको बुरे व्यसनों में फँसा रखने में दरबारियों का निजी लाभ था, लिहाजा लगातार कोशिशें चलती रहीं और अन्त में महाराजा उन्हीं चालबाजियों के शिकार बन ही गये।

वे दुष्ट दरबारी जवान और सुन्दर लड़कियाँ खोज लाते और वे अपने हाव-भाव से महाराजा को फँसाने की चेष्टा करती। महाराजा भी आखिरकार पुरुष थे। वे अपने को बचा न सके। ये लड़कियाँ हिन्दुस्तान के सुदूर प्रान्तों से लाई जाती थी और खूबसूरती के लिहाज से उनका चुनाव होता था। वे कमसिन और चंचल होती थी। जब महाराजा का स्वर्गवास हुआ, उस समय उनके रनिवास मे ३३२ औरतें थी। उनमे से दस ऐसी थी जो महारानियाँ कहलाती थी, पचास रानियाँ थीं और बाक़ी सब महाराजा की चहेतियाँ, रखेलें और परिचारिकायें थीं। वे सब हर वक्त महाराजा की सेवा मे तैनात रहती थी। दिन हो या रात, महाराज उनमे से जिसे चाहते, उसी के साथ अपनी कामपिपासा बुझा सकते थे।

कम उम्र की नाबालिग लड़कियाँ महल में रखी जाती थी। जब वे जवान हो जाती थी तब उनसे दासियों का काम लिया जाता था। उनका खाना-पीना और रहन-सहन सब रनिवास के नियमानुसार चलता था। पहले उनको सिगरेट, शराब वगैरह महाराजा को पेश करने का काम सौंपा जाता। महाराजा उनको प्यार करते, लिपटाते-चिपटाते और उनका चुम्बन भी लेते। ज्यों-ज्यों वे महाराजा की निगाहों मे चढ़ती जाती, त्यों-त्यों उनका रुतबा बढ़ता जाता यहाँ तक कि उनमे कुछ, जो खुशकिस्मत होती थी, रानी-महारानी बन बैठती थी। जब कभी किसी नई औरत को महाराजा अपनी महारानी बनाते तो तुरन्त भारत की ब्रिटिश सरकार से उसकी पदवी की मान्यता प्राप्त कर लेते। ऐसी महारानियों से जो सन्तान होती, वह महाराजा की कानूनी सन्तान मानी जाती और उसे वे सभी अधिकार प्राप्त होते जो राजकुमारों और राजकुमारियों को हासिल रहते थे।

महारानियों और महाराजा की चहेतियों मे और भी कई बातों मे फर्क समझा जाता था। महारानियो को दिन का और रात का खाना व चाय सोने के कटोरों और तश्तरियों मे परोसी जाती और उनकी तादाद सौ के करीब होती। तरह-तरह के पुलाव, जर्दा, शोरबा, मांस-मछली, पुडिंग, खीर, हलवा वगैरह उनको खाने को मिलते। रानियाँ चाँदी के कटोरो और थालियों में खाना खातीं और उनकी तादाद कुल पचास होती थी। बाकी सब औरतों को पीतल व काँसे के बर्तनों में भोजन परोसा जाता। उनकी तादाद बीस से ज्यादा न होती थी। महाराजा हीरे-जवाहरात जड़े सोने के बर्तनों में भोजन करते और उनके सामने लगाई जाने वाली प्लेटों की तादाद कभी डेढ़-सौ से कम न होती थी।

खास मौकों—जैसे महाराजा, महारानियो या राजकुमार-राजकुमारियों की सालगिरह पर शानदार दावतें होती थी। २५० से ३०० मेहमानों तक के लिए मेजों पर खाना लगाया जाता। एक तरफ़ कुर्सी मे महाराजा, उनके बेटे, दामाद, रिश्तेदार और खास निमंत्रित लोग बैठते। दूसरी तरफ़ महा-

रानियाँ, रानियाँ और रनिवास की अन्य महिलायें बैठतीं। खाना परोसने का काम इटैलियन, अंग्रेज़ और हिन्दुस्तानी बैरे करते। भोजन-सामग्री व शराब बड़े ऊँचे दर्जे की होती थीं। खाने की वस्तुओं की बड़ी-बड़ी प्लेटों पर प्लेटें मेहमानों के आगे ढेर लग जातीं यहाँ तक कि उनकी ठोढ़ी चूमने लगतीं। बैरे लगातार प्लेट पर प्लेट लाते रहते। कभी-कभी १०-२० प्लेटें एक पर एक कतारों में ढेर लग जातीं। दावत के बाद आमतौर पर नाच-गाने की महफ़िल जमती जिसमें तमाम रियासतों की मशहूर गाने वालियाँ और नर्तकियाँ भाग लेती थीं। ऐसी महफ़िलों का दौर अगले दिन सवेरे तक चलता जब कि सब लोग शराब के नशे में मदहोश हो जाते। कई साल तक ये राग रंग इसी तरह चलते रहे। यूरोप, नेपाल और साइप्रस द्वीपों से लाई हुई कई सुन्दरियाँ महाराजा के महल में थीं। वे सब एक से एक बढ़ कर ऐसी बेश-क़ीमत पोशाकें और ज़ेवरात पहनतीं, जो दुनिया में किसी दूसरी जगह मिल ही नहीं सकते थे, यहाँ तक हॉलीउड के फ़िल्मी सितारों तथा फ्रांस और इंग्लैंड के राजपरिवारों को भी नसीब न थे। दावत खत्म होने पर महाराजा अपनी मन-पसन्द औरतों को साथ लेकर अपने खास महल में चले जाते और बाकी सब मन ही मन ईर्ष्या से कुढ़ती रहतीं।

महाराजा का ध्यान अपनी तरफ़ खींचने के लिए रनिवास की औरतें अनेक चालें चलती थीं। महाराजा उन सब को प्यार करते और उनका पूरा ख्याल रखते थे। जब नियमानुसार रोज़ की तरह डॉक्टर उनको देखने आते तो वे तबियत खराब होने की सूचना देतीं और कुछ न कुछ शिकायत कर देतीं। अक्सर वे कब्ज़ की शिकायत बतला कर डॉक्टरों से जुलाब की गोलियाँ माँग लेतीं। कई दिनों तक इसी तरह बहाना करके जब काफ़ी गोलियाँ इकट्ठी हो जातीं तो जिस रात को वे महाराजा को अपने शयनागार में बुलाना चाहतीं, उसी दिन वे तीन-चार खूराक गोलियाँ खा लेती थीं। जब दस्त लग जाते, तब महाराजा को खबर भेजी जाती। महाराजा फ़ौरन उनको देखने आते। फिर बीमारी का नाटक जोर पकड़ता और घंटों चलता रहता यहाँ तक कि रात हो जाती। इस चालाकी से वे महाराजा को रोक रखतीं और उनके साथ रात बितातीं। जब तक महाराजा जीवित रहे, उनको कभी पता न चल पाया कि रनिवास की औरतें उनका ध्यान आकर्षित करने को ही बीमार बन जाती थीं।

रनिवास की औरतें और भी तरकीबों से काम लेती थीं। कभी-कभी अपने अकेलेपन और महाराजा के प्रेम के कारण आत्महत्या कर लेने की धमकी देतीं। उनमें से कुछ ने सचमुच ही अपने कमरे की छत की कड़ी से रस्सी बाँधकर फाँसी लगा ली और मर गईं। तभी से, जब कोई रानी ... करती, अकेलेपन की शिकायत करती, महाराजा बेहद डर जाते। वे फ़ौरन उसके पास पहुँचते और हर मुमकिन तरीके से उसे दिलासा देते। महल में

कितनी ही औरतें ऐसी भी थीं जिनको महाराजा के जीवन काल में एक बार भी उनके आलिंगन और चुम्बन का सौभाग्य प्राप्त नहीं हुआ।

अपनी महारानियों और चहेतियों के प्रति महाराजा की आसक्ति आत्यंतिक प्रेम के कारण थी। वे चाहते थे कि उनका प्यार सब को बराबर बराबर मिले। महल की औरतें भी इसी तरह उनको प्यार करती थीं। महाराजा जब कभी यूरोप की यात्रा पर जाते तो उनके साथ एक दर्जन औरतें जरूर जातीं। भारत की सीमा पार करते ही उन औरतों के पदों का अन्तर समाप्त हो जाता। महारानी, रानी और चहेती का फर्क मिट जाता। पेरिस और लन्दन में पहुँच कर उनकी पोशाक, भोजन और निवास का भेदभाव, जो पटियाला के मोतीबाग पैलेस में प्रचलित था, एकदम समाप्त हो जाता था।

रनिवास की औरतों के लिए अपने खास महल मोतीबाग पैलेस के इर्दगिर्द महाराजा ने कई महल बनवा दिये थे जहाँ वे सख्त पर्दे में रहती थीं। महलों के आस-पास हर बीस कदम पर संतरी पहरा देते थे। महल खूब सजे हुए थे और उनमें अंग्रेजी ढंग का फर्नीचर लगा हुआ था। महाराजा के दो-चार विश्वस्त अधिकारियों और मिनिस्टरों के अलावा किसी को महलों में जाने की इजाजत न थी।

खास तौर से निमन्त्रित विदेशी या भारतीय विशिष्ट व्यक्ति जिनकी बड़ी प्रतिष्ठा होती, उनको ही महाराजा महल के अन्दर दावत पर बुलाते थे। ऐसे मौके पर प्राइम मिनिस्टर या महाराजा के दो-चार विश्वासपात्र उच्च अफसर भी वहाँ मौजूद रहते थे। महाराजा की विशेष आज्ञा से एक से एक बढ़ कर सुन्दर औरतें, रेशमी कपड़ों और कीमती जेवरात से सजी, मुस्कराती हुई आ कर मेहमानों को शराब पेश करतीं। पंजाबी पोशाक में कुछ आकर सिगरेट पेश करती। साड़ियों में सजी कुछ सुन्दरियाँ फल और शराब ला कर मेहमानों की मेजों पर लगातीं। महाराजा इस बात पर ईर्ष्या नहीं करते थे कि उनके महल की औरतें मेहमानों से खुल कर हँसती-बोलती थीं। उनको सिर्फ बदतमीजी और छिछोरेपन से चिढ़ थी और ऐसी हरकतें वे बरदाश्त न कर पाते थे। महल में, जब अकेले होते, तब दर्जनों सुन्दरियाँ उनके पैरों के पास लेटी रहतीं। कुछ उनके पैर दबातीं और सदेसा लाने व ले जाने का काम करतीं। जो सुन्दरी उस रात को महाराजा के साथ सोने को चुनी जाती, सब की नजरें उसी पर लगी रहतीं। वह खास तौर पर महाराजा की जाँघ पर बैठती। उसकी पोशाक सुर्ख रंग की होती, एकदम झीनी और पारदर्शक। नाक में हीरे की कील, मोतियों के हार और साथ, नीलम, पुखराज जड़े बाजूबन्द वह पहने रहती। उसी से महाराजा का प्रेमालाप चलता रहता।

महाराजा अपनी भोग-विलास लिप्सा और आस-पास के रजवाड़ों से तथा भारत के वायसराय से राजनीतिक झगड़े होने के कारण बीमार पड़े और उनको हाई ब्लड प्रेशर की शिकायत ने आ घेरा। फ्रान्स के मशहूर डॉक्टर प्रोफ़ेसर

अब्रामी और डॉक्टर ऐण्ड्रे लिशवित्ज़, जिन्होंने इस रोग का नया इलाज
निकाला था, बुलवाये गये। उन लोगों ने कुछ ऐसे इंजेक्शन तैयार किये
रीढ़ की हड्डी में लगाने से मरीज़ को आराम मिलता था। महाराजा
इलाज के लिए यूरोप भी गये मगर उनका ब्लड प्रेशर तमाम कोशिशों
बावजूद नियंत्रित न हो सका। इसकी खास वजह यह थी कि डॉक्टरों
सलाह को न मान कर महाराजा शराब और औरतों से दूर न रह सके।

एक रोज़ मेरे सामने ही प्रोफ़ेसर अब्रामी ने महाराजा से साफ़-साफ़
दिया—"अगर आपको ज़िन्दगी प्यारी है तो कुछ महीनों के लिए अपनी
त्तेजना और शराब छोड़ दीजिये।" मुझको सख्त ताज्जुब हुआ जब एक
रात के ढाई बजे महाराजा ने टेलीफ़ोन पर मुझसे कहा कि वे बड़ा
मना रहे हैं और चाहते हैं कि मैं प्रोफ़ेसर अब्रामी को लेकर फौरन
उनके पास पहुँच जाऊँ। मैंने तुरन्त प्रोफ़ेसर को सूचना दी और उनको
लेकर मोटर में चल पड़ा। महल में पहुँच कर हमने देखा कि अपने
में कई औरतों के साथ महाराजा शराब के नशे में बेखबर पड़े हुए हैं। इं
ने तुरन्त एक इंजेक्शन लगाया जिससे ब्लडप्रेशर नीचे आया मगर महा
शराब व औरतों के साथ रंगरलियों में फिर मस्त हो गये।

प्रोफ़ेसर अब्रामी ने जब अच्छी तरह समझ लिया कि महाराजा उन
सलाह पर नहीं चल सकते तब उसने कहा कि—"अब आप काफ़ी
हालत में हैं, मुझे वापस जाने की इजाज़त दे दें।" उसने सोचा कि ऐसा
पर महाराजा नाराज भी न होंगे और उसे छुट्टी मिल जायगी। प्रोफ़ेसर अ
को फ़ीस के तौर पर एक लाख रुपये हर महीने मिलते थे मगर उसे
लालच न था। उसे अपनी प्रतिष्ठा और भारत के रजवाड़ों में जो
मिलता था, उसकी विशेष चिन्ता थी। अन्तिम बार वह इंजेक्शन लगा कर
गया जिससे महाराजा का ब्लड प्रेशर नीचे आ गया। मगर डॉक्टर
हिदायतों पर अम्ल न करने की वजह से महाराजा का ब्लड प्रेशर फिर
गया।

महाराजा की इच्छानुसार मैं प्रोफ़ेसर अब्रामी से मिलने बम्बई गया
वापसी पर, मैंने महाराजा की हालत बहुत ख़राब पाई। मेरी गैरमौजूदगी
उनका इलाज बदल दिया गया था। डॉक्टर लिशवित्ज़ और अन्य फ्रेन्च डॉ
ने पेरिस में प्रोफ़ेसर अब्रामी को तार द्वारा खबर दे दी कि अब उनकी ज़
नहीं रह गई थी क्योंकि महाराजा का इलाज हिन्दुस्तानी डाक्टर कर रहे
इस बीच महाराजा का ब्लड प्रेशर और बढ़ गया था तथा उनकी दोनों आँ
की रोशनी जाती रही थी।

नवाबज़ादा लियाकत हुसैन खाँ ने फौरन डॉक्टरों के महल से बाहर जाने पर पाबन्दी लगा दी कि कहीं पब्लिक उनको परेशान न करे।

महाराजा हालांकि बिल्कुल अन्धे हो चुके थे मगर वे नहीं चाहते थे कि इस बात का पता महल की औरतों को चले। सदा की भाँति वे अपने प्रिय परिचारक सरदार मेहरसिंह बिना से दाढ़ी सँवारने को कहते, पगड़ी बँधाते और आइने में मुँह देखते जिससे नौकर-चाकरों को शक न हो कि उनकी आँखों की रोशनी चली जा चुकी है। रोज की तरह उनकी आँखों में सुरमा लगाया जाता। महाराजा रेशमी शेरवानी और कश्मीरी ढंग की सलवार पहनते। कपड़े पहनने के बाद वे हमेशा की तरह महल की औरतों को बुला कर उनसे बातचीत करते, वे जान न पाती कि महाराजा अन्धे हैं। इस बात को सिर्फ प्राइम मिनिस्टर, मैं और महाराजा के दो चार विश्वासी नौकर ही जानते थे। महाराजा की खास चहेतियाँ उनका बदन और पैर दबातीं। सदा की भाँति वे उनसे लिपटातें-चिपटातें। मरने के कुछ ही दिन पहले उन्होंने एक औरत के साथ रति-क्रीड़ा की। ठीक नौ महीने बाद उसके एक पुत्र हुआ। तब तक महाराजा का स्वर्गवास हो चुका था।

महाराजा की बीमारी का हाल सुन कर सारे हिन्दुस्तान की रियासतों के राजा-महाराजा और उनके मित्र उनको देखने के लिए पटियाला आये, पर उनमें से इने-गिने लोगों को ही महाराजा के कमरे में जाने दिया गया। दूसरों से कह दिया गया कि महाराजा की तबियत अब अच्छी है और वे वापस चले जायें। महाराजा की हालत बिगड़ती ही चली गई। उनके अन्तिम दिनों में डॉक्टर बी० सी० राय, जो बाद में पश्चिमी बंगाल के मुख्य मंत्री बने, उनकी देख-भाल के लिए आये। मगर डॉक्टर राय के आने पर ऐसा जान पड़ा कि अब तो महाराजा दो-चार दिन के मेहमान हैं। इलाज चलता रहा और एक रोज दिन के १२ बजे महाराजा को अचानक मूर्च्छा आ गई। आठ घण्टे तक वे उसी बेहोशी की हालत में रहे, फिर उनकी मृत्यु हो गई।

जितनी देर महाराजा बेहोश रहे, पूरे आठ घण्टे बराबर, उनकी सीनियर महारानी, जो युवराज की माता थी और दूसरी सभी महारानियाँ उनके पैर दबाती रहीं।

महाराजा का आतंक ऐसा छाया हुआ था कि युवराज यादवेन्द्र सिंह की हिम्मत न पड़ती थी कि जा कर खजाने और सिलहखाने पर सील-मोहर लगवा दें। फाइनेन्स मिनिस्टर सर फ्रेडरिक गान्टलेट और मैंने जब उनसे कहा कि राज्य की परम्परानुसार वे अपना कर्त्तव्य पालन करें, तब वे आगे बढ़े। यह सावधानी जरूरी थी ताकि कोई धन और हथियारों की मदद से गद्दी पर जबरदस्ती कब्ज़ा न कर ले।

पुराने ज़माने में किसी महाराजा की मृत्यु होते ही उनका कोई जिसका कुछ हक़ राजगद्दी तक पहुँचता हो, खजाने और सिलहखाने

करने के बाद रियासत की राजधानी पर हमला करता और अपने को
महाराजा घोषित कर देता था।

अफ़वाहें उड़ रही थीं कि स्वर्गीय महाराजा के दूसरे पुत्र, महाराजकु
वृजेन्द्र सिंह जिनको 'जॉन' भी कहा जाता था और जो युवराज से पहले पै
हुए थे, पिता की मृत्यु के बाद राजगद्दी पर अपना हक़ जतायेंगे। यह खबर
फैल रही थी कि युवराज के पक्षपाती और वृजेन्द्र सिंह के तरफ़दारों में ख़ू
ख़राबे की नौबत भी महल के बाहर आ सकती है। प्राइम मिनिस्टर व दूसरे
मिनिस्टर बृजेन्द्रसिंह की साज़िश को समझ चुके थे और सावधान हो गये
उन्होंने शहर में ख़ास-ख़ास जगह फ़ौज के जवान तैनात कर दिये थे। महारा
की मृत्यु के ३-४ दिन पहले से जॉन की हिम्मत कुछ बढ़ गई थी क्
महाराजा उनके प्रति अधिक स्नेह दिखा रहे थे। ऐसा जान पड़ता था कि
बड़े बेटे का हक़ छीन कर जो बेइन्साफ़ी महाराजा ने की थी, उसका उन्हें
पछतावा हो रहा है।

मरने से कुछ दिन पहले, महाराजा ने मुझसे कहा था कि जॉन अगर मह
में आयें तो उन्हें महाराजा से मिलने से रोका न जाय। मेरे द्वारा यह सूच
युवराज तथा प्राइम मिनिस्टर को मिली। उन दोनों ने मुझसे प्रार्थना की कि
जॉन को किसी भी हालत में महाराजा से मिलने न दिया जाय। अतएव, मह
राजा के ख़ास ए० डी० सी० ने जो ड्यूटी पर तैनात था, जॉन से कह दि
कि महराजा उनसे भेंट करना नहीं चाहते। अपनी मृत्यु से एक रात पहले
महाराजा ने मुझसे जॉन को बुलाने की इच्छा प्रकट की। मैंने यह बात
युवराज और प्राइम मिनिस्टर को बतला दी जो इस अन्देशे से काँपने लगे कि
महाराजा कहीं जॉन को गद्दी का उत्तराधिकारी घोषित न कर दें। हम लोगों
पूरी कोशिश से ऐसा इन्तज़ाम किया कि जॉन से महाराजा की भेंट नहीं
पाई। मूर्च्छा आने से पहले महाराजा ने कई दफ़ा पुकारा था—"जॉन
जॉन!" आठ घण्टे लगातार बेहोश रहने के बाद उन्होंने प्राण त्याग दिये थे

कोई दुर्घटना या बग़ावत न होन पाये, इस ख्याल से युवराज सर फ्रे डि
गान्टलेट के साथ जा कर खजाने और सिलहख़ाने पर सील-मोहर करा आ
थे। जब युवराज वापस लौटे, उस वक्त भी महाराजा बेहोश थे। युवराज बे
डरे हुए थे कि कहीं महाराजा होश में आये और उनको सील-मोहर की ब
का पता चला तो फिर उनकी ख़ैरियत नहीं। अपनी जिन्दगी में युवराज
यह हरकत वे कभी माफ़ न करते।

महाराजा के मरते ही महल की औरतों ने अपनी पोशाकें और कीम
ज़ेवरात उतार फेंके। हीरे-मोती के हार बाज़ूबन्द वगैरह तोड़ डाले। कीम
के कीमती रत्न मिट्टी के ढेलों की तरह फ़र्श पर बिखर गये। अपने प्रिय स्वा
और महाराजा के न रहने पर उनका रोना-धोना दिल हिलाये देता थ
उन्होंने अपने सिर के बाल नो[illegible] और चिल्लाने लगीं—"न जाइये, हमें

…छुड़ा दीजिए !" वे सब सारी रात जागती और रोती रहीं। उन्होंने अपने कीमती रेशमी वस्त्र फाड़ कर धज्जियाँ उड़ा दी थीं और जाड़े की रात में ठंड से अपने को बचाने की उनको कोई फ़िक्र न थी।

अगले दिन सवेरे, पटियाला नरेशों की कुल-परम्परा तथा सिक्ख धर्म के अनुसार महाराजा के शव को स्नान कराया गया, वस्त्र पहनाये गये, सभी राज-चिह्नों और तमगों से सजा कर पगड़ी बाँधी गई और राजमुकुट पहनाया गया। लाल रंग का कोट जिस पर हीरे और लाल टके थे बड़ा शानदार था। महा-राजा के खज़ाने का मशहूर हीरा 'सैंसाउसी' कोट पर दाहिनी तरफ़ टाँक दिया गया था। यह बहुमूल्य हीरा फ्रान्स के सम्राट् नेपोलियन बोनापार्ट की महारानी यूजीन ने एक बार पहना था। शव को सोने के कामदार जूते पहिनाये गये, दाढ़ी सँवारी गई, फिर राजसिंहासन पर बिठा दिया गया। अभिवादन के लिए महल के सभी पुरुष और स्त्रियाँ आने लगे।

सबसे पहले युवराज, फिर महारानियाँ, उनके बाद रानियाँ तथा महल की अन्य औरतें अन्तिम प्रणाम करने आईं। इसके पश्चात् राजपरिवार के लोग, *प्राइम मिनिस्टर, अन्य मिनिस्टर और राजकर्मचारियों की बारी आई।* कुछ महिलाएँ तो शोकावेग में सिंहासन के निकट बेहोश होकर गिर गईं और बड़ी कठिनाई से उनको अलग हटाया गया। रनिवास की सभी औरतें सादे सूती वस्त्र पहने थीं और किसी के शरीर पर कुछ भी ज़ेवर दिखाई न देता था। करीब तीन घण्टे बाद, शव को सम्मानपूर्वक सेना की गाड़ी पर रखा गया और जलूस अन्तिम संस्कार के लिए महल से चल पड़ा।

शव-यात्रा का जलूस राजधानी के रास्तों पर गुज़रने लगा। महाराजा का इलाज करने वाले फ्रेन्च डॉक्टरों को मैंने मना कर दिया था कि वे जलूस में शामिल न हों। मुझे सन्देह था कि कहीं ऐसा न हो कि मेरे शत्रुओं के भड़काने पर लोगों की भीड़ उन पर हमला कर दे।

पटियाला के इतिहास में *महाराजा का अन्तिम संस्कार* अभूतपूर्व रहा। आस-पास के रजवाड़ों के लोग और महाराजा की लगभग एक लाख प्रजा उनको अन्तिम श्रद्धाञ्जलि देने को इकट्ठी थी। महाराजा में अनेक कमज़ोरियाँ थीं, लेकिन प्रजा उनको बहुत चाहती थी।

१४. महल की साज़िशें

पटियाला रियासत में प्राइम मिनिस्टर सरदार बहादुर सर गुरनाम सिंह का बड़ा दबदबा था। शुरू जवानी में, राजधानी से कुछ मील दूर रघुमाजरा नामक गाँव में वे रहा करते थे। उनके पास कुछ ज़मीन थी जिसमें अपने हाथों खेती करके वे अपना पेट पालते थे। सौभाग्य से, उनकी खूबसूरत बेटी का ब्याह पटियाला नरेश हिज़ हाइनेस महाराजा भूपेन्दर सिंह मोहिन्दर बहादुर से हो गया जिससे ७ जनवरी १९१३ को एक पुत्र उत्पन्न हुआ। पुत्र का नाम यादवेन्द्र सिंह रखा गया और उसे युवराज की पदवी प्राप्त हुई, हालाँकि कुँवर बृजेन्द्र सिंह जो महाराजा की क़ानूनन विवाहिता पत्नी से ६ महीने पहले ११ अगस्त १९१२ को पैदा हुआ था, उम्र में बड़ा था। ऐसा हुआ कि कुँवर बृजेन्द्र सिंह के जन्म की तारीख ११ अगस्त १९१३ लिखी गई। बाद में भारत सरकार का दबाव पड़ने पर सरकारी काग़ज़ात में दोनों राजकुमारों की जन्म की तारीखें सही-सही लिखी गईं। इस संशोधन के बाद कुँवर यादवेन्द्र सिंह को पटियाला की राजगद्दी का उत्तराधिकारी बनाने के प्रयत्न किये गये। वजह यह दिखाई गई कि पटियाला नरेश महाराजा भूपेन्दर सिंह की शादी कुँवर बृजेन्द्र सिंह की माँ से क़ानूनी तरीके से नहीं हुई थी इसलिए कुँवर बृजेन्द्र सिंह राजगद्दी का हक़दार न हो सकता था। भारत सरकार के राजनीतिक विभाग में भेजा गया इस आशय का आवेदन-पत्र काम कर गया और कुँवर यादवेन्द्र सिंह को युवराज घोषित कर दिया गया।

गुरनाम सिंह तरक्की की सीढ़ी पर धीरे-धीरे चढ़ते हुए रियासत के प्राइम मिनिस्टर बन गये। महाराजा पर तथा महारानी पर, जो उनकी बेटी थीं, गुरनाम सिंह का बड़ा असर और दबाव था। पटियाला रिसासत में उनकी तूती बोलती थी।

गुरनाम सिंह ने खूब धन-सम्पत्ति इकट्ठी की और अपने सगे-सम्बन्धियों को मंत्रिमण्डल में शामिल करके उन्हें मिनिस्टर बना दिया। महल के व्यवस्था विभाग में जो-जो खास जगहें थीं, उन पर भी गुरनाम सिंह के भाई-भतीजों की तैनाती हो गई जिससे महाराजा और महारानी के आगे उनकी स्थिति मज़बूत रहे। प्राइम मिनिस्टर एक शानदार कोठी में रहते थे जिसमें एक बहुत बड़ा बाग था। यह बाग बारहों महीने फूलों से लदा रहता था। कोठी

में छोटे-छोटे कई तालाब भी थे जिनमें प्राइम मिनिस्टर और उनके परिवार के लोग नहाते और तैरते थे।

वह कोठी महल से कुछ दूर थी मगर गुरनाम सिंह बिला नागा रोज महाराजा से मुलाक़ात करने जाते थे। जब वे रियासत के इलाकों में दौरे पर होते, सरकारी काम से दिल्ली या किसी और शहर जाते या तबियत ठीक न होती, तब की बात और थी, लेकिन राजधानी से बाहर जाने के पहले वे किसी मिनिस्टर को, जो उनका सगा-सम्बन्धी होता, अपनी जगह पर तैनात कर जाते जिससे उनकी गैर-मौजूदगी में कोई उनको निकाल न सके।

गुरनाम सिंह बहुत वर्षों तक प्राइम मिनिस्टर रहे। उनका रौब, शान-शौकत और दबदबा सारी रियासत पर छा गया था। अलावा इसके, महाराजा के श्वसुर होने के नाते भी उनकी प्रतिष्ठा बड़ी-चढ़ी थी। किसी की हिम्मत न थी जो उनके शासन-प्रबन्ध की आलोचना कर सकता या उनके खिलाफ़ महाराजा से शिकायत कर सकता। अगर किसी ने ऐसा किया तो उसे नौकरी से निकाल दिया जाता या जेलखाने में डाल दिया जाता। रियासत के बड़े व छोटे अफ़सरान और रियाया के लोग उनसे बहुत डरते थे क्योंकि वे निर्दयी और कठोर होने के अलावा मनकी भी थे। जो कुछ मन में आता, कर उठाते थे क्योंकि जानते थे कि उनके खिलाफ किसी की सुनवाई होगी नहीं। उन्होंने महाराजा के जवान तथा अनुभवहीन होने का पूरा फायदा उठाया।

गुरनाम सिंह की कोठी पर संगीन चढ़ी बन्दूकें लिए संतरी सख्त पहरे पर चौबीसों घंटे तैनात रहते थे। कोठी के भीतर जाने की हर एक को मनाही थी। मुलाकात करने वालों के लिए जरूरी था कि वे कम से कम दो-तीन महीने पहले दरख्वास्त लगायें। इसके बाद प्राइवेट सेक्रेटरी पूरी जाँच-पड़ताल करके 'परमिट' देता था। परमिट पाने वाले लोग ही प्राइम मिनिस्टर से मिल सकते थे। ज्यादातर गुरनाम सिंह किसी से मिलते-जुलते न थे। अपनी शान और बड़प्पन कायम रखने के ख्याल से वे सामाजिक उत्सवों और क्लबों में कभी नहीं जाते थे। उन दिनों सबसे अलग रहना रईसों की निशानी थी। सामाजिक मेल-जोल सिर्फ बराबर वालों में चलता था। उन दिनों रजवाड़ों के बहुतेरे प्राइम मिनिस्टर यह समझते थे कि रियासत के नागरिकों और राजकर्मचारियों से वे बहुत ऊँचे हैं और इसीलिए वे सामाजिक जलसों में कभी शरीक न होते थे। सर गुरनाम सिंह शादी की पार्टियों या अन्तिम संस्कारों में बहुत कम जाते थे क्योंकि ऐसे कामों में शरीक होना वे अपनी प्रतिष्ठा के खिलाफ समझते थे।

राजमहल के स्त्री-विभाग का इन-चार्ज एक चतुर अफसर था जिसका नाम था—सरदार बूटाराम। एक दिन सीनियर महारानी ने किसी वजह से उसको निकाल दिया। वह अच्छी-खासी आमदनी की नौकरी से बरखास्त कर दिया गया। उस सरदार ने महारानी के पिता गुरनाम सिंह को बदनाम

करके उनको प्राइम मिनिस्टर की ऊँची नौकरी से निकलवा कर महा
से बदला लेने की तरकीब सोच डाली।

एक ऐसे व्यक्ति के लिए, जो अपमानित हो चुका हो और जिसके
साथी समझ गये हों कि वह महाराजा और प्राइम मिनिस्टर की नज़रों
गिर चुका है, यह काम आसान न था। एक ए० डी० सी० को, जिसका ना
कप्तान चाँदासिंह था, महाराजा बहुत चाहते थे। चाँदासिंह, बूटाराम
जिगरी दोस्त था। बूटाराम ने उसे सिखा-पढ़ाकर पक्का कर लिया। चाँद
सिंह राज़ी हो गया। बूटाराम ने अपनी योजना बतलाई। अब दोनों व्यक्ति
सलाह करके महल के चिकित्सक कर्नल निरंजन सिंह के पास गये। निरं
सिंह भी प्राइम मिनिस्टर को नीचा दिखाने की उस तजवीज़ में शामिल
गया। इन तीनों की गुटबन्दी के ज़रिये पटियाला के महल में एक नया ना
रचा जाने लगा।

साधारण तौर पर, रोज़ दिन के ग्यारह बजे प्राइम मिनिस्टर महाराजा
से मुलाक़ात करने मोतीबाग पैलेस पहुँच जाते थे और अपने आने की सूचना
ए० डी० सी० को भिजवाते थे जो हिज़ हाइनेस महाराजा को इस बात की
इत्तिला देता था। महाराजा अगर तैयार होते तो फ़ौरन प्राइम मिनिस्टर
को बुलवा लेते। परन्तु जब महाराजा कुछ काम करते होते तो प्राइम
मिनिस्टर महल की बैठक में, जो ए० डी० सी० के कमरे से मिली हुई थी,
इन्तज़ार करते। उनकी अच्छी ख़ातिर की जाती, वहीं खाना खाते और
महल में तब तक रुके रहते, जब तक महाराजा मुलाक़ात के लिए उनको न
बुलाते। चूँकि प्राइम मिनिस्टर उनके श्वसुर थे और महाराजा उनकी इज़्ज़त
करते थे, इसलिए उनको ज़्यादा देर इन्तज़ार नहीं करना पड़ता था। उनके
पहले जो प्राइम मिनिस्टर थे, उनको ज़रूर महाराजा से भेंट करने के लिये
कई रोज़ इन्तज़ार करना पड़ता था।

अगले दिन, नियमानुसार ठीक वक्त पर प्राइम मिनिस्टर महल में पहुँचे
और ए० डी० सी० के दफ़्तर में दाखिल हुए। ए० डी० सी० कप्तान चाँदासिंह
ने उनको सूचना दी कि महाराजा की तबियत कुछ ख़राब है इसलिए आज
वे उनसे मुलाक़ात न कर सकेंगे। प्राइम मिनिस्टर ने चाँदासिंह से कहा
कि—"मेरी तरफ़ से पूछ लीजिएगा कि महाराजा का मिज़ाज कैसा है।"
इतना कह कर वे वापस चले गये।

अगले दिन वे फिर आये और महाराजा का सँदेसा उनको मिला कि
तबियत ठीक न होने के कारण आज भी महाराजा प्राइम मिनिस्टर से
मुलाक़ात न करेंगे। पूरे एक हफ़्ते तक रोज़ाना इसी तरह वे महल में जाते
और कप्तान चाँदासिंह महाराजा का सँदेसा उसी तरह दोहराता रहा।
पूरे दस दिन बीत गये तो प्राइम मिनिस्टर ने चाँदासिंह से कहा कि जैसे
महाराजा की तबियत ठीक हो जाय, उन्हें फ़ौरन इत्तिला पहुँचनी चाहिए

जिससे वे आकर महाराजा से भेंट कर सकें।

उधर, महाराजा रोज चाँदासिंह से पूछते कि प्राइम मिनिस्टर नियमित रूप से रियासत का काम-काज करने क्यों नहीं आ रहे हैं तो चाँदासिंह हर दफ़ा यही जवाब देता कि उनकी तबियत ठीक नहीं है और उन्होंने कहला भेजा है कि तबियत सम्हलते ही खिदमत में हाजिर होंगे।

कुछ रोज और बीत गये तब महाराजा ने महल के चिकित्सक कर्नल निरंजन सिंह को बुलवा कर कहा कि जाकर देखें कि प्राइम मिनिस्टर की हालत कैसी है। कर्नल निरंजन सिंह तुरन्त प्राइम मिनिस्टर की कोठी पर गया और उनसे कहा कि—"महाराजा की सेहत अभी तक नहीं सुधरी और जैसे ही सुधर जावेगी, आपको बुलवाया जायगा।" घंटे-दो घंटे वहाँ बैठ कर निरंजन सिंह महल वापस आया, फिर चाँदासिंह और बूटाराम से सलाह करने के बाद तजवीज के मुताबिक महाराजा के पास जाकर बतलाया कि—"प्राइम मिनिस्टर साहब की हालत खराब है और मुझे शक है कि उनकी बीमारी ऐसी खतरनाक होगी कि उनका दिमाग खराब हो जायेगा।" महाराजा प्राइम मिनिस्टर की सेहत के बारे में फिक्रमन्द हो गये। उधर, प्राइम मिनिस्टर को महाराज की बीमारी की चिन्ता थी। दोनों में से सच्ची बात का पता किसी को न था।

इसी तरह दो महीने गुजर गये। अब प्राइम मिनिस्टर के दोस्तों को सन्देह होने लगा कि कुछ दाल में काला है। उनमें से कुछ विश्वस्त मित्रों ने जाकर प्राइम मिनिस्टर को सलाह दी कि महाराजा से मुलाकात जरूर करें। प्राइम मिनिस्टर ने कई संदेसे भेजे, खत लिखे और कर्मचारी भेजे, मगर महाराजा तक पहुँचना मुश्किल हो गया। महल में अफवाहें फैल रही थी कि महाराजा प्राइम मिनिस्टर से नाराज हैं और जल्द ही उनको बरखास्त कर देंगे। महल के तमाम कर्मचारी अब सरदार बूटाराम की तरफदारी करने लग गये थे। अफवाहों से बूटाराम की हिम्मत और बढ़ गई। महाराजा के कई निजी खिदमतगार भी साजिश में शामिल हो गये और प्राइम मिनिस्टर को निकाल देने की कोशिश में हिस्सा लेने लगे। बात यहाँ तक बढ़ गई कि प्राइम मिनिस्टर के कुछ वफादार दोस्त भी उनका साथ छोड़ कर सरदार बूटाराम के तरफदार बन गये।

कर्नल निरंजन सिंह ने एक रोज बड़े विश्वास के साथ महाराजा को बतलाया कि प्राइम मिनिस्टर अब सचमुच पागल हो चुके हैं और अगर महाराजा ने उनसे मुलाकात की तो यकीन है कि वे फौरन महाराजा पर हमला कर देंगे। निरंजन सिंह ने यह भी कहा कि—"इस खबर को पोशीदा रखियेगा और महारानी जी को भी न बताइयेगा क्योंकि उनके जरिये अगर प्राइम मिनिस्टर साहब जान गये, तो मुझे सख्त सजा मिलेगी।" महाराजा मान गये और महारानी तक से इसका कोई जिक्र न किया। महाराजा ने

निश्चय कर लिया कि जब तक प्राइम मिनिस्टर अच्छे नहीं हो जाते
तक उनसे मुलाक़ात नहीं करेंगे।

उन दिनों, मलेरकोटाला रियासत के राजपरिवार से सम्बन्धित
सर जुल्फ़िक़ार अली खाँ, पटियाला महाराजा के यहाँ काम कर रहे थे
सेवायें भारत सरकार से माँग कर प्राप्त की गई थीं। महाराजा ने
जारी कर दिया कि प्राइम मिनिस्टर की सेहत ठीक होने तक नवाब
जुल्फ़िक़ार अली खाँ कार्यवाहक प्राइम मिनिस्टर बनाये जाते हैं। जब
सूचना प्राइम मिनिस्टर सर गुरनाम सिंह को मिली तो मानों उन पर
गिर पड़ीं। वे एकदम बौखला गये और पाँव-पैदल महाराजा से मुला
करने महल की तरफ़ भागे। महल के भीतर आकर वे चहलक़दमी
लगे। चाँदासिंह ने ड्यूटी पर तैनात संतरी को हुक्म दिया कि इनको
जाने से रोक दिया जाय। इस पर गुस्से से लाल-पीले होकर गुरनाम सिं
अपनी कोठी पर वापस चले आये और अपने विश्वासपात्र मिनिस्टरों
बुलवाकर उनसे सलाह लेने लगे कि अब आगे क्या करना होगा।

मगर, तब तक उनकी स्थिति और भी कमज़ोर हो चुकी थी। उन
ओहदा और अधिकार समाप्त हो गये थे, उनके विश्वासी मिनिस्टर,
पालन तो दूर रहा, उनकी कोई बात मानने को तैयार न थे। उनमें
एक-दो ने तो गुरनाम सिंह को सलाह दी कि जब महाराजा शिकार के लि
निकलें, तब सड़क पर उनसे मुलाक़ात कर लें।

महाराजा शिकार पर जाने वाले हैं—यह खबर एक मिनिस्टर ने गुरना
सिंह को दी। गुरनाम सिंह को वह रास्ता अच्छी तरह मालूम था जिधर से
होकर महाराजा राजधानी से ७५ मील दूर पिंजौर के पास रियासत
सुरक्षित जंगल में शेर का शिकार खेलने जाया करते थे। हिमालय की तलै
में पिंजौर, कालका-अम्बाला रोड पर कालका से लगभग ३ मील दूर है।

यह जगह मुग़ल-बाग़ के कारण प्रसिद्ध है जो संसार का सबसे
बाग़ माना जाता है। यह बाग़ चौरस चबूतरों की लम्बी-चौड़ी सीढ़ियों
शक्ल में बना हुआ है। मेहराबदार फाटक से देखने पर ही इसकी सुन्दरता
पता चल सकता है। इसकी इमारत पुरानी शैली के रचना-सौष्ठव का
नमूना है। बाग़ में बारादरी महल है जिसमें बारह द्वार हैं। तालाब के उस
पार रंग-महल नाम का दूसरा महल है। जल-प्रपातों से कुछ गज़ों के फ़ासले
पर शीश महल है। ये सभी इमारतें बड़ी शानदार हैं और देखने योग्य हैं।

आज से साढ़े तीन सौ बरस पहले, सूबेदार फ़िदाई खाँ ने जैसा
इमारतों को बनवाया था, उसी हालत में अब तक बनी हुई हैं। यहाँ के
गुमटखाने, और आस-पास बने हुए मन्दिर बहुत पुराने हैं और महाभारत
कालीन माने जाते हैं।

चिशोर पहुँचे और उस सड़क के किनारे जगल में छिप कर बैठ गये जिधर महाराजा शिकार खेलने के लिए जाने वाले थे। कुछ दिन पहले खबर ी थी कि वहाँ के जगल में नेपाल से पाँच शेर आ गये हैं।

गुरनाम सिंह और उनके साथियों ने शिकारियों का भेस बना रखा था और जगह महाराजा के ठहरने के लिए खीमे लगाये जा रहे थे, वहाँ से थोड़े ने पर एक गाँव में डेरा जमाया था। सुदूर जगल में तमाम खीमे लगा बिजली, पानी और सफ़ाई का इन्तजाम किया गया। महाराजा, उनके सभी के लोगों, रियासत के सैकड़ों अफ़सरों और मेहमानों के खाने-पीने, व तमाम अन्य आराम की चीज़ों की इतने बड़े पैमाने पर व्यवस्था थी कि जान पड़ता था मानों चिशोर के जगल में छोटा-मोटा शहर बस गया चारों तरफ़ पूरी चहल-पहल और रौनक थी।

जगल में, काफ़ी ऊँचाई पर जहाँ शेर दिखाई न सका सके, पेड़ों पर ान बाँधे गये थे। पेड़ों की पत्तीदार हरी डालियों से मचानों के चारों तरफ़ ढक कर दी गई थी ताकि शिकारियों को जानवर देख न पायें। उन्हीं लियों और पत्तियों के पीछे से बन्दूकों और रायफलों से शिकार पर निशाने ाये जाते थे। मचानों पर खाने और शराब का इन्तजाम रखा गया था। ान पर बैठने वालों को खामोश रहना पड़ता था जिससे आवाज़ सुन कर र भाग न जायें। लोग शाम तक वहीं रहते थे। हर शिकारी को थैलों में प कर सारे दिन के लिए खाना और शराब दे दी जाती थी।

महाराजा और उनके मेहमान हाथियों पर सवार होकर आये और चानों पर चढ़ गये। हर एक के पास भरी बन्दूक थी। मोटरें वहाँ से कुछ ान पीछे छोड़ दी गई थीं।

ढोल, नगाड़े और नरसिंगे बजाते हुए करीब एक हज़ार हँकवाहों ने तीन रफ़ से घेरा बना कर शेरों का हाँका किया। उन आवाज़ों से डर कर शेर र हटते गये। तीन नर और दो मादा शेर हाँके में पड़ गये थे। उनमें एक र ने गुस्सा होकर हमला कर दिया और दो हँकवाहों को बेहद लहूलुहान रके जगल में जा घुसा।

जब ि ये दोनों हँकवाहे अपना दम तोड़ रहे थे, उस वक्त बाकी लोग हाराजा की नाराज़ी के डर से जान पर खेल कर दूसरे शेरों का हाँका कर हे थे।

हाँकेवाले शेरों को खदेड़-खदेड़ कर मचानों के सामने खदेड़ लाते थे। महाराजा और उनके मेहमान उसे अपनी गोलियों का निशाना बनाते। एक शेर ने घायल होकर ऐसी छलाँग मारी कि मचान के करीब पहुँचते-पहुँचते बचा। हालाँकि शिकार के खास अफ़सर ने मना किया, मगर महाराजा मचान से नीचे उतर कर पैदल शेर का शिकार करने चल पड़े। वे बिल्कुल अकेले घूमते हुए जंगल में शेर की तलाश करने लगे। उनको शेरों से जरा भी डर

न लगता था। उन्होंने पाँचवें शेर को देख लिया। मगर निशाना सा
पहले ही शेर की नज़र महाराजा पर पड़ गई। वह बड़े ज़ोर से गरजा
बिजली की तरह तड़प कर उनके ऊपर आ गया। महाराजा ने होश
दुरुस्त रखे। हाँकेवालों ने शेर को आगे बढ़ने से रोका। शेर घूम
महाराजा ने फ़ौरन गोली चलाई। वह बड़ी हिम्मत और सच्ची निशा
का काम था। महाराजा शिकार के इन्तज़ाम से बेहद खुश हुए और
शिकारगाह के अफ़सरों व मुलाज़िमों को उन्होंने भरपूर इनाम दिया।
निरंजन सिंह और कप्तान चाँदासिंह को भी महाराजा ने कीमती
दिये।

शिकार खत्म हो गया। प्राइम मिनिस्टर गुरनाम सिंह और
दोनों साथी, जो गाँव में छिपे हुए थे, खबर पा गये कि महाराजा फ़लां
राजधानी के लिए रवाना होंगे और मोटर में बैठ कर आम रास्ते से गुज़
बस, तीनों जने चुपचाप गाँव से चल पड़े और रास्ते के किनारे के एक
पर चढ़ कर उसके पत्तों की आड़ में अपने को छिपा लिया।

किसी तरह यह बात ज़ाहिर हो गई कि प्राइम मिनिस्टर और
दोनों साथी गाँव से चले गये हैं। वजह यह थी कि सरदार बूटाराम
उसके तरफ़दारों ने मुअत्तल प्राइम मिनिस्टर की हरकतों पर सख्त नज़र
थी और उनको मालूम हो चुका था कि महाराजा की वापसी पर गु
सिंह उनसे मुलाक़ात करने की कोशिश करेंगे। कर्नल निरंजन सिंह और क
चाँदा सिंह अब महाराजा की निगाहों में चढ़ गये थे क्योंकि उन्हीं के
इन्तज़ाम के कारण महाराजा को शिकार में पाँचों शेर मार लेने का सौ
प्राप्त हुआ था। इन दोनों ने जाकर महाराजा को खबर दी कि गुरनाम
का दिमाग एकदम खराब हो चुका है और उनको जल्द ही पागलखाने भि
देना ज़रूरी है। अगर रास्ते में कहीं वे दिखाई पड़ जायें तो महाराजा
को तेज़ी से मोटर चलाने का हुक्म दे दें ताकि कहीं गुरनाम सिंह महा
पर हमला न कर बैठें जिसका बहुत अन्देशा है।

यह सुन कर महाराजा डर गये। आगे-आगे उन्होंने कई मोटरें भेजीं,
देखने को कि आम सड़क पर कहीं गुरनाम सिंह खड़े तो नहीं हैं। सबसे
मोटर में महाराजा रवाना हुए। आगे वाली मोटरों के लोग गुरनाम सिंह
देख न पाये। ज्योंही गुरनाम सिंह और उनके साथियों ने महाराजा की
मोटर, जिस पर राज्य का झंडा लगा था, आते देखी, वे महाराजा से
करने को तैयार हो गये। महाराजा की मोटर अभी मुश्किल से बरगद के प
से गुज़र पाई थी कि गुरनाम सिंह और उनके दोनों साथी नीचे कूद
गुरनाम सिंह ज़ोर से चिल्लाये—"योर हाइनेस ! मैं भला-चंगा हूँ, होनहार
रहा हूँ। मेरे खिलाफ़ साज़िश की गई है।"

महाराजा के शोफर को कर्नल निरंजन सिंह ने हिदायत की—"खबरदार! गाड़ी न रोकना। तेज चलाओ!" गुरनाम सिंह गाड़ी के पीछे चिल्लाते हुए दौड़े—"यौर हाइनेस! यौर हाइनेस!!" पीछे दूसरी गाड़ी में आते हुए पुलिस के इन्सपेक्टर जेनरल सरदार ताराचन्द ने अपने सिपाहियों की मदद से फौरन गुरनाम सिंह और उनके दोनों साथियों को गिरफ्तार कर लिया। रास्ते में कर्नल निरंजन सिंह और कप्तान चाँदा सिंह ने महाराजा को बतलाया कि प्राइम मिनिस्टर बुरी तरह अपने होशहवास खो बैठे हैं और अब इसी काबिल हैं कि उनको किसी पागलखाने में बन्द करके रखा जाय। महाराजा को अब पहले से भी ज्यादा पक्का यकीन हो गया कि प्राइम मिनिस्टर सचमुच पागल हो गये हैं। उनको बड़ी दया भी आई। उन्होंने सरदार ताराचन्द को आज्ञा दी कि अस्पताल के करीब किसी मकान में गुरनाम सिंह को ले जाकर रखें और उनके इलाज का इन्तजाम कर दें। मकान पर पहरा रहे और उनको तब तक घर से बाहर न जाने दिया जाये जब तक वे अच्छे न हो जायें।

राज्य के शासक के विरुद्ध साज़िश करने के अपराध में गुरनाम सिंह के दोनों साथी १४ साल की सख्त कैद भुगतने के लिए जेल में डाल दिये गये।

कुछ अरसे बाद, कर्नल निरंजन सिंह ने महाराजा को सलाह दी कि प्राइम मिनिस्टर को रियासत से बाहर किसी पागलखाने में दाखिल कराना ठीक होगा जहाँ उनका बाकायदा इलाज हो सके क्योंकि रियासत के अस्पताल में ऐसे ऊँचे दर्जे के रईस के इलाज की कुल सुविधाएँ मिलना कठिन हैं। महाराजा ने यह सलाह मान ली और प्राइम मिनिस्टर को देहरादून के एक पागलखाने में भेज दिया गया। गुरनाम सिंह के मन को इस बात से इतना रंज पहुँचा कि ऊँचे दर्जे की इस साज़िश का शिकार बनकर वे अपने दिमाग का संतुलन खो बैठे और बाकी ज़िन्दगी के लिए सचमुच पागल हो गये।

१५. मिनिस्टरों की बरख़ास्तगी के अजीब त...

महाराजा यादवेन्द्र सिंह ११ जनवरी सन् १९१३ को पैदा हुए थे।
से लोग सन् १९१३ का साल बड़ा मनहूस मानते थे। यादवेन्द्र सिंह ने
मिनिस्टरों को बरखास्त करने के अजीबोगरीब और अनूठे तरीके
निकाले थे।

अपने यशस्वी पिता के मरने पर जब वे पटियाला की राजगद्दी पर
तब कुछ ही दिनों बाद उन्होंने अपने एक नौजवान ए० डी० सी० तथा
ख़िदमतगार सरदार मेहर सिंह बिला की मदद से, उन तमाम मिनिस्टरों
रियासत के अफ़सरों की लम्बी फ़ेहरिस्तें तैयार कीं, जिनको वे तबदी
बरख़ास्त करना चाहते थे। वे फ़ेहरिस्तें टाइप करवा कर मोतीबाग पैलेस
दूसरी मंज़िल पर महाराजा के प्राइवेट कमरे में मेज़ की दराज में रख दी
जहाँ सिर्फ़ महाराजा और उनके ख़ास ख़िदमतगार के अलावा कोई पहुँच न
सकता था। फ़ेहरिस्तों में उन मिनिस्टरों और अफ़सरों के नाम थे जि
बरख़ास्तगी का ऐलान बारी-बारी से होने वाला था। कुल मिला कर
आदमी रियासत की नौकरी से निकाले जाने वाले थे। फ़ेहरिस्तों में उन
मिनिस्टरों और अफ़सरों के नाम थे जो महाराजा के स्वर्गीय पिता के
वफ़ादार और विश्वासपात्र रह चुके थे।

पहले, मुझे विश्वास न हुआ कि इस मनमाने ढंग से महाराजा मिनिस्
और अफ़सरों के ख़िलाफ़ कोई कार्यवाही करेंगे, लेकिन जब मैंने देखा
फ़ेहरिस्त के मुताबिक, किसी न किसी बहाने उनको नौकरी से हटाने का
शुरू हो गया, तो अन्देशे से मेरी आँखें खुल गईं। फ़ेहरिस्त में सर सिकन्
हयात ख़ाँ का नाम सीरियल नम्बर ३७ पर था। मैंने प्राइम मिनिस्टर
सूचना दे दी कि उनकी मुलाज़िमत के दिन पूरे हो गये हैं और मुनासिब है
कि वे ऐसी स्थिति से बचने का उपाय करें। मगर उन्होंने मेरी बात का
नहीं किया, हालांकि मैंने यह भी ज़ाहिर कर दिया था कि मैंने निकाले
वाले मिनिस्टरों और अफ़सरों की फ़ेहरिस्त देखी है, जिसमें उनका नाम
सैंतीसवाँ है।

गर्मियों में, महाराजा यादवेन्द्र सिंह अपने परिवार और नौकर-चाकरों
लेकर चैल गये हुए थे जो पटियाला की ग्रीष्मकालीन राजधानी थी। गर्मि
की बैठकें वहीं हुआ करती थीं और प्राइम मिनिस्टर, मिनिस्टर तथा अ

ग उनमें शरीक होने के लिए पटियाला से जाया करते थे। चैल में बहुत
ा क्रिकेट का मैदान है जो दुनिया में अपने ढंग का अनोखा है। समुद्र-तल
७,५०० फ़ीट की ऊँचाई पर तैयार किये गये उस क्रिकेट के मैदान में बाहर
आई टीमों से रियासत की टीम के मैच खेले जाते थे। इंग्लैंड तथा योरप
अन्य देशों से भी टीमों को वहाँ मैच खेलने के लिए आमन्त्रित किया जाता
। उस मैदान के चारों तरफ़ पहाड़ों का दृश्य बड़ा सुहावना है। वहाँ से
मालय की बर्फ़ से ढकी हुई ऊँची-ऊँची चोटियाँ बद्रीनारायण, कैलाश पर्वत
दि बड़ी सुन्दर दिखाई देती हैं।

एक दिन क्रिकेट का बड़ा दिलचस्प मैच हो रहा था। महाराजा मैदान के
नारे बने हुए क्रिकेट-मण्डप में बैठे थे। कुछ ज़रूरी बातें करने के लिए उन्होंने
इम मिनिस्टर को वहीं बुलवाया। महाराजा आरामकुर्सी पर अकेले बैठे
। बगल में पर्दा पड़ा था जिसके दूसरी तरफ़ कमरे में महारानियाँ तथा महल
अन्य औरतें बैठी थीं। इधर की बातचीत उधर साफ़ सुनाई देती थी।
र लियाक़त हयात खाँ के आते ही महाराजा ने एक पत्र उनके हाथों में पकड़ा
या और उसे पढ़ने को कहा। पत्र पर सर लियाक़त हयात खाँ के दस्तख़त
। पत्र का मज़मून ऐसा था जो राजमाता के विनाशकारी प्रभाव में दबे
हाराजा की हुकूमत पर आरोप लगा कर उनसे स्वत: गद्दी छोड़ देने की माँग
सम्बन्ध रखता था। वह पत्र आनरेबुल सर हारोल्ड विल्वरफ़ोर्स बेल, के०
०० आई० ई०, पंजाब की रियासतों के रेज़ीडेन्ट के नाम लिखा गया था जिनका
डक्वार्टर जाड़ों में लाहौर और गर्मियों में शिमला रहता था। पत्र निजी तौर
र रेज़ीडेन्ट को सम्बोधित था—"माई डियर विल्वरफ़ोर्स बेल" और अन्त में
खा था—"योर्स सिन्सियरली, लियाक़त हयात खाँ।" ख़त का मज़मून पढ़
र प्राइम मिनिस्टर के होश उड़ गये। उन्होंने साफ़ इन्कार कर दिया कि
त्र उनका लिखा नहीं है। उन्होंने महाराजा को बतलाया कि यह पत्र जाली
है, पूरे तौर से जाली है।

महाराजा ज़िद पकड़ गये कि प्राइम मिनिस्टर ने ही वह ख़त लिखा था।
न्होंने बतलाया कि सर विल्वरफ़ोर्स बेल के विश्वस्त क्लर्क को पचास हज़ार
पये की रिश्वत दे कर चुपचाप रेज़ीडेन्ट की फ़ाइल में मौजूद असली ख़त की
ोटो द्वारा नकल ली गई है। महाराजा ने प्राइम मिनिस्टर पर विश्वासघात
और बग़ावत का आरोप लगाया। इस बीच क्रिकेट का मैच बराबर चलता
हा।

बाहर से आई हुई टीम के स्वागत में जलपान और शराब का इन्तज़ाम
ाम को था। क्रिकेट के मैदान में इस समारोह के अवसर पर एक तरफ़
महाराजा टीम के खिलाड़ियों, मेहमानों, मिनिस्टरों और अफ़सरों की ख़ातिर-
दारी कर रहे थे। दूसरी तरफ़ मण्डप में मेहमानों के साथ आई हुई महिलाओं
की ख़ातिरदारी में महारानियाँ व्यस्त थीं। काफ़ी रात बीत गई, तब तक यह

समारोह चलता रहा। इसी बीच मशहूर संगीतज्ञ मैक्स गैगर ने जो फ्रान्स
जर्मनी के ओपेरा में अपने संगीत के लिए शोहरत हासिल कर चुका था,
आरकेस्ट्रा पर भारतीय लोक गीतों और पंजाबी प्रचलित संगीत की धुनें
कर मेहमानों का मनोरंजन किया।

निश्चित तारीख और वक़्त आने पर प्राइम मिनिस्टर को नौकरी से
तो कर ही दिया गया, साथ-साथ उनकी मौरूसी जागीर छीन ली गई
लाख बीस हज़ार का सालाना नज़राना और ५ हज़ार रुपये महीने की ज़ि
भर की पेन्शन व एक हज़ार रुपये महीने के भत्ते, जो सरकारी ख़ज़
उनको दिये जाते थे, वे भी बन्द कर दिये गये। सर लियाक़त ख़ाँ ने
बाकी ज़िन्दगी, एक दिवालिये की हैसियत से देहरादून में गुज़ारी। बरख़
की फ़ेहरिस्त में जिन १२८ अफ़सरों के नाम बाकी रह गये, उनको भी ऐ
बदकिस्मती का सामना करना पड़ा।

बाद में, पूछताछ करने पर मुझे पता चल गया कि महाराजा य
सिंह ने किस तरह जाल-फ़रेब करके वह पत्र तैयार कराया था जिसका
माल उन्होंने सर लियाक़त हयात ख़ाँ और कुछ दूसरे अफ़सरों को ब
करने में कामयाबी के साथ किया।

कर्नल रघुबीर सिंह ने, जब वे पेप्सू स्टेट के मुख्य मन्त्री बने और म
की धर्मगत राजनीति का विरोध खुले तौर पर करने लगे, तब एक सा
सभा में बतलाया कि उस पत्र का रहस्य क्या था। कर्नल रघुबं
महाराजा के यहाँ सरदार साहब ड्योढ़ी मुअल्ला (लार्ड चैम्बरलेन) के
नियुक्त थे और महाराजा के गुप्त रहस्यों की उनको पूरी जानकारी रह
सर लियाक़त हयात ख़ाँ के दस्तख़त किसी एक अर्ज़दाश्त (सरकारी टि
जो मिनिस्टर रियासत के शासकों को लिख कर भेजा करते थे) पर
कर, दफ़्ती पर चिपकाये गये और कई दफ़ा उनकी फ़ोटो ली गई जब
असली दस्तख़त जैसे न लगने लगे। इसके बाद, ख़त का मज़मून भी
करके उसी दफ़्ती पर बड़ी सफ़ाई से चिपकाया गया—दस्तख़त के ठीक
इसके बाद रासायनिक क्रियाओं से, दोनों की एक साथ ली हुई फ़ोटो क
बनाया गया और आख़िरी फ़ोटो प्रिन्ट कर ली गई। इस फ़ोटो को दे
कोई यह नहीं कह सकता था कि मूल रूप से टाइप किये गये पत्र क
असली फ़ोटो नहीं है।

जाली कागज़ात तैयार करने का यह तरीक़ा एक आदमी ने ईजा
था जिसका नाम गुरबचन सिंह था। इस प्रकार की फ़ोटोग्राफ़ी से स
तमाम क्रियाओं का वह विशेषज्ञ था। यादवेन्द्र सिंह ने काफ़ी बड़ी त
पर, ऐसे ही जालफ़रेब के कामों के लिए उसको अपने यहाँ नौकर र
उसने भी स्वीकार किया कि महाराजा यादवेन्द्र सिंह की आज्ञा से उ
[illegible] थे।

१६. ब्रिटिश की हार

महाराजा यादवेन्द्र सिंह ने एक दफा अपनी फौज के सेनाध्यक्षों की मीटिंग
[illegible] कर उनसे पूछा कि रियासत के आसपास के जिलों को, जो उस वक्त
[illegible]टिश भारत का इलाका समझे जाते थे, हमला करके फतह कर लिया जाय
[illegible] कैसी रहे ? सेनाध्यक्षों ने जवाब दिया कि तजवीज कारामद है। रियासत
[illegible] फौज उन इलाकों के बाशिन्दों की मदद से फतह हासिल कर सकती है।
[illegible]होंने सोचा था कि उन इलाकों को जीत कर रियासत में मिला लेने पर
[illegible]हाराजा खुश होंगे और अफसरों को नामवरी हासिल होगी। मैंने साफ-साफ
[illegible]पनी राय देते हुए महाराजा से कहा कि--"मेरी समझ से ऐसा हमला नाका-
[illegible]याब तो होगा ही। साथ ही नतीजा यह भी होगा कि इस बेजा कोशिश से
[illegible]प अपनी राजगद्दी से हाथ धो बैठेंगे।"

अपने सेनाध्यक्षों की राय की सच्चाई परखने के इरादे से हिमालय की
[illegible]लहटी में कालका के करीब पिंजौर में महाराजा ने सैनिक-अभ्यास का कार्य-
[illegible]म शुरू कर दिया। हमले के उस नाटक में भाग लेने के लिए एक सीनियर
[illegible]गरक्षक कर्नल हामिद हुसैन खाँ को ब्रिटिश फौज का सेनापति और पटियाला के
[illegible]माडर-इन-चीफ जेनरल हरीका को रियासती फौज का सेनापति बनाया गया।
उस पहाड़ी इलाके में सैनिक-अभ्यास के बीच कई दफा दोनों तरफ की फौजों
में मुठभेड़ हुई, अन्त में, महाराजा की सेना ने ब्रिटिश इलाके को फतह कर
लिया। "ब्रिटिश फौज के सेनापति" कर्नल हामिद हुसैन खाँ कैद कर लिये
गये। ब्रिटिश हेडक्वार्टर्स पर महाराजा का झंडा फहराया गया जो महाराजा की
फौज द्वारा ब्रिटिश इलाका फ़तह होने की निशानी थी।

कर्नल हामिद हुसैन खाँ की कमान में ब्रिटिश फौज की हार होने पर चाँदी
का एक रुपया, जिस पर बादशाह एडवर्ड सप्तम की आकृति बनी थी, फ़र्श पर
पर फेंक कर महाराजा के सैनिक अफसरों के जूतों से रौंदा गया। कर्नल हामिद
हुसैन खाँ, जिनकी शक्ल सूरत चाँद की वजह से बादशाह एडवर्ड सप्तम की
शक्ल से मिलती-जुलती थी, जूतों से पीटे गये। महाराजा और उनके सेनापतियों
ने कर्नल को गालियाँ भी दीं। इस नाटक की कामयाबी के बावजूद ब्रिटिश
इलाके पर हमला करने की हिम्मत महाराजा ने नहीं की।

१७. मंत्रिमण्डल की कामुक बैठकें

पंजाब के दोग्राब इलाक़े में कपूरथला रियासत उत्तर भारत की प्रसि रियासतों में गिनी जाती थी। उन दिनों गुलाम गीलानी वहाँ के प्राइम मिनि स्टर थे। कपूरथला नरेश महाराजा निहाल सिंह के ज़माने में एक तरह उनकी तानाशाही चलती थी।

रियासत के मिनिस्टर और अफ़सरान उनसे डरते थे, यहाँ तक कि महाराज भी हर काम में उनका सहारा पकड़ते थे। उनके अधिकारों पर राज्य में किसी तरह की रोकटोक न थी। वे इटली देश के मुसोलिनी और मैसूर के हैदर अली की तरह अपना दबदबा लोगों पर क़ायम रखते थे।

उस जमाने में, महाराजा और राजा सिर्फ़ नाम-मात्र के शासक होते थे। असली शासन का अधिकार तो प्राइम मिनिस्टरों के हाथों में रहता था जो वास्तव में तानाशाह हुआ करते थे उसी तरह जैसे नेपाल के राना लोग। वे तानाशाह रियाया को सन्तुष्ट रखने के लिए राजाओं का इस्तेमाल महज़ हुकूमत की एक शाही निशानी के बतौर किया करते थे जब कि हुकूमत की पूरी बागडोर खुद उनके मज़बूत हाथों में रहती थी।

गुलाम गीलानी सबसे अलग, बड़ी शानशौकत से रहते थे। वे अपने मंत्रिमण्डल की बैठकें रोज़ दीवानखाने में किया करते थे। दीवानखाना राज कुमारी गोविन्द कौर के महल के क़रीब था जो अपनी खूबसूरती, सुडौल शरीर और स्त्रीसुलभ आकर्षण के लिए मशहूर था। वह महाराजा निहाल सिंह की पुत्री और कपूरथला नरेश खरकसिंह की बहन थी। गुलाम गीलानी का अपना हरम था मगर वे गोविन्द कौर के इश्क़ में दीवाने थे।

उन दिनों, हिन्दू रियासतों में मुसलमान प्राइम मिनिस्टर आम तौर पर रखे जाते थे और अदालतों का काम-काज उर्दू और फ़ारसी भाषाओं में होता था। तमाम सरकारी कागज़ात और फ़ाइलें फ़ारसी में या फ़ारसी मिली उर्दू में लिखी जाती थीं। मिनिस्टरों और रियासत के अफ़सरों को उर्दू और फ़ारसी जानना ज़रूरी था। इससे यह ज़ाहिर होता था कि सल्तनते मुग़लिया ख़त्म हो जाने के बाद भी उसका असर उस ज़माने पर बरक़रार है।

रियासत के मुसलमान अफ़सर हिन्दुओं, सिक्खों और ईसाइयों के विरोधी थे। दूसरों के धर्म की इज्ज़त करने और उदारता का व्यवहार करने में वे कुन[illegible] करते थे।

गुलाम गीलानी अरब से आने वाले उन मुसलमानों के वंशज थे जिन्होंने
ाने ज़माने में भारत पर हमले किये थे और जालंधर तथा लाहौर में बस
ए थे। जैसा औरंगजेब की हुकूमत में हुआ कि लाखों हिन्दू मुसलमान बना
ि गये थे, वैसे धर्म बदल कर हिन्दू से मुसलमान बने लोगों में गुलाम गीलानी
गिनती न थी। पटियाला के प्राइम मिनिस्टर सर लियाकत हयात खाँ और
के भाई सर सिकन्दर हयात खाँ से, जो बाद में पंजाब राज्य के प्राइम
निस्टर बने, गुलाम गीलानी की नजदीकी रिश्तेदारी थी।

गुलाम गीलानी रईसाना तबियत के आरामपसन्द आदमी थे। उनके कई
वियाँ थीं जो मुसलमानी धर्म के अनुसार सख्त पर्दे में रहती थीं। दीवानखाने
ा एक हिस्सा उनके निजी इस्तेमाल के लिए अलग कर दिया गया था और
रे हिस्से में मंत्रिमण्डल की बैठकें हुआ करती थीं। ये बैठकें रोज़ होती थीं
व बहुतेरे मिनिस्टर अपनी सरकारी फ़ाइलें लाकर प्राइम मिनिस्टर के आगे
ा करते और उन पर उनका हुक्म हासिल करते थे, दीवानखाने के पिछवाड़े
नके आराम के लिए खुशनुमा बाग भी था।

मकान के एक हिस्से में गुलाम गीलानी ने एक पोशीदा सुरंग बनवाई जो
ावानखाने से पास के उस महल में चली गई थी जिसमें राजकुमारी गोविन्द
ौर रहती थी। इस सुरंग के बारे में किसी को पता न था, सिर्फ़ गुलाम
ीलानी और गोविन्द कौर ही जानते थे। सुरंग में दाखिल होने के रास्ते से
हले एक बहुत बड़ा कमरा था जिसमें रोज़ाना गुलाम गीलानी मुकदमों की
ुनवाई करते और रियासत के कागज़ात देखते थे।

उस कमरे के ठीक सामने एक बड़ा हॉल था जहाँ मंत्रिमण्डल की बैठक
ें शामिल होने के लिए मिनिस्टर लोग इकट्ठे होते थे। बैठक का वक़्त
ाड़ों में २ बजे दिन और गर्मियों में ९ बजे सुबह रखा गया था। हॉल और
उससे मिले हुए अपने पढ़ने के कमरे के दरमियान गुलाम गीलानी ने एक बड़ा
र्दा लगवा दिया था। अपने कमरे में ईरानी क़ालीन पर सफ़ेद मसनद के
सहारे लेट कर वे हुक्का पीते और बैठक की कार्रवाई का संचालन करते
थबकि बाकी मिनिस्टर लोग बड़े कमरे में कालीन पर बैठते मगर उनको
हुक्का पीने की इजाज़त न थी। पर्दे की आड़ में प्राइम मिनिस्टर क्या कर
रहे हैं, यह कोई न देख पाता था। उनकी जब मर्ज़ी होती, वे सुरंग के रास्ते
गोविन्द कौर के महल में चले जाते और बाहर बैठे मिनिस्टरों को कुछ पता न
चलता। जाहिरा तौर पर यही जान पड़ता कि वे रियासती कागज़ात देख
रहे हैं।

जब कभी मंत्रिमण्डल की बैठकें होतीं तो मिनिस्टर और रियासत के
महकमों के ऊँचे अफसर, जिनकी तादाद बीस के क़रीब थी, तलब किये जाते।
उनके साथ अहलकार, क्लर्क, मुंशी वगैरह भी आते जो तादाद में ४०-५० से कम
न होते। बैठक में आने वाले होते थे—फाइनेन्स मिनिस्टर, रेवेन्यू मिनिस्टर,

१८. राजकुमारी गोविन्द कौर

कपूरथला नरेश महाराजा निहाल सिंह की बेटी गोविन्द कौर अपने पि
के दरबार की शानशौकत के बीच बड़े लाड़-प्यार में पली थी। उसके ए
सगा भाई था जिसका नाम था हिज़ हाइनेस महाराजा रनधीर सिंह। इ
१९४७ के बाद देश का बटवारा होने पर भारत सरकार की स्वास्थ्य मं
स्वर्गीया राजकुमारी अमृत कौर के पिता राजा सर हरनाम सिंह, गोविन्द कौ
के भतीजे थे।

एक प्रतिष्ठित, धनी, राजघराने के व्यक्ति से गोविन्द कौर का विवाह
हुआ था। विवाह के समय उसने शर्त मनवा ली थी कि वह पति के सा
कपूरथला रियासत में ही रहेगी और अपनी ससुराल कर्त्तारपुर—जो कपूरथल
से १० मील पर एक छोटा कस्बा है—कभी न जायेगी। उसके पति ने य
शर्त स्वीकार कर ली और महाराजा ने अपनी बेटी और दामाद के लि
जलावख़ाना (शाही महल) के करीब ही एक दूसरा महल दे दिया।

उस महल की इमारत छः मंज़िली थी और पुरानी भारतीय शिल्प-शैली
का एक नमूना थी। वह छोटी-छोटी ईंटों, कंक्रीट और लकड़ी के शहतीरों
की बनी थी। महल में सिर्फ़ एक फाटक था और वही अकेला महल का प्रवेश-
द्वार था। फाटक पर हथियारबन्द संतरी पहरा देते थे और ड्योढ़ी के अफ़सर
से हुक्म लिये बिना कोई अन्दर नहीं आ सकता था।

महल में विशुद्ध पूर्वी ढंग की सजावट थी और एक छज्जा बड़ा ख़ूबसूरत
बना हुआ था जिसे 'शाह नशीन' कहते थे। पहले ज़माने में महाराजा वहीं
खड़े होकर रोज़ सवेरे अपनी प्रजा को दर्शन दिया करते थे। राजकुमारी
गोविन्द कौर ज़्यादातर उसी छज्जे पर बैठी रहती और नीचे रास्ते पर आने-
जाने वालों को देखा करती। शाहनशीन में पर्दे का ऐसा अच्छा इन्तज़ाम था
कि वहाँ बैठने वाला व्यक्ति बाहर के लोगों को देख सकता था लेकिन उस
पर बाहर वालों की नज़रें किसी हालत में नहीं पड़ सकती थीं। महल के
भीतर ख़ूब लम्बे-चौड़े कई ड्राइंग-रूम, डाइनिंग रूम और शयनागार थे। मह
का आँगन भी ख़ूब बड़ा था जिसके एक तरफ़ कुआँ था।

राजकुमारी असाधारण रूप से विलासिनी, लम्पट और भोग-विलास प्रि
उसकी कामपिपासा और शारीरिक भूख उसके पति द्वारा पूरी न ह
थी जो बदसूरत, कमज़ोर और कमअक्ल था। विकृत मस्तिष्क की

रीर बाना वह व्यक्ति नीच प्रकृति, कमज़ोर और व्यभिचारी था। राज-
मारी प्रायः सुन्दर, जवान और हट्टे-कट्टे लोगों को किसी न किसी बहाने
ल के अन्दर बुलाती और उनसे सम्भोग करती थी। उसने फाटक पर
ात फ़ौजी संतरियो तक को न छोड़ा। अपने कामुक प्रेम-प्रसंगों में वह
स की रानी क्लिओपेट्रा और रूस की साम्राज्ञी कैथेराइन महान् से किसी
तरह कम न थी। उसके प्रेम और व्यभिचार की करतूतें उसके पति से छिपी
थीं। परेशान होकर अपनी किस्मत को कोसता हुआ वह महल से बाहर
 बारादरी में जाकर रहने लगा और कभी-कभी राजकुमारी को देखने
ाता था। उन दोनो का शारीरिक सम्बन्ध टूट चुका था।

हिज़ ऐक्सीलेन्सी नवाब गुलाम गीलानी, कपूरथला रियासत के प्राइम-
िनिस्टर, रोज़ मन्त्रिमण्डल की बैठक बुलाते और अपना ज़्यादा वक्त पास
 महल में, जिसे दीवानखाना कहा जाता था, गुज़ारते थे। उनकी अपनी
ोठी, जिसमें उनकी बेगमात रहती थीं, दीवानखाने से करीब एक मील के
ासले पर थी।

गुलाम गीलानी लम्बे और खूबसूरत व्यक्ति थे। वे सिर पर सुनहली
ोपी पहनते थे और जिसकी बनावट इंग्लैंड के राजमुकुट जैसी थी—फ़र्क
ह था कि उसमें कीमती जवाहरात नहीं लगे थे। छँटी हुई दाढ़ी, लम्बा
ोट और रेशमी पाजामा उनके बदन पर खूब जँचते थे। उन्होंने राजकुमारी
की खूबसूरती की तारीफ़ सुन रखी थी। एक दिन दीवानखाने से उन्होंने
देखा कि अपने महल की छत पर खड़ी हुई राजकुमारी सिर के बाल सुखा
रही है। बस, फिर क्या था, पहली नज़र में ही गुलाम गीलानी राजकुमारी
के इश्क में गिरफ़्तार हो बैठे।

प्राइम मिनिस्टर ने राजकुमारी से मिलने की भरसक कोशिश की मगर
यह काम आसान न था। रजवाड़ों के तौर-तरीके और पाबन्दियाँ, खास तौर
पर राजकुमारियों की निस्बत, बेहद सख्त थे।

महल के फाटक पर तैनात फ़ौजी संतरियों और नौकर-चाकरों की नज़र
बचा कर कोई महल के अन्दर दाखिल नहीं हो सकता था। राजकुमारी हर
रोज़ दो घोड़ों की गाड़ी में बैठ कर घूमने जाती थी मगर महल से निकलते
वक्त वह सख्त परदे में होती जिससे दरबारी लोग और संतरी उसका चेहरा
या बदन न देख सकें। ड्योढ़ी से लेकर घोड़ा गाड़ी तक दोनों तरफ़ कनातें
लग जाती थीं जिससे कोई राजकुमारी को महल से निकलते और गाड़ी में
बैठते देख न सकता था। जब कभी राजकुमारी घूमने जातीं, तब प्राइम
मिनिस्टर उसे देखा करते, उसके हुस्न, नज़ाकत और अदाओं ने प्राइम मिनिस्टर
के दिल में मोहब्बत की आग और भी भड़का दी।

दीवानखाने में कुछ कमरे गुलाम गीलानी ने अपने इस्तेमाल के लिए रखे
थे। अब वे रात में भी वहीं रहने लगे। उनसे पहले दस्तूर यह था कि

१८. राजकुमारी गोविन्द कौर

कपूरथला नरेश महाराजा निहाल सिंह की बेटी गोविन्द कौर अपने पिता के दरबार की शानशौकत के बीच बड़े लाड़-प्यार में पली थी। उसके एक सगा भाई था जिसका नाम था हिज़ हाइनेस महाराजा रनधीर सिंह। सन् १९४७ के बाद देश का बटवारा होने पर भारत सरकार की स्वास्थ्य मंत्री स्वर्गीया राजकुमारी अमृत कौर के पिता राजा सर हरनाम सिंह, गोविन्द कौर के भतीजे थे।

एक प्रतिष्ठित, धनी, राजघराने के व्यक्ति से गोविन्द कौर का विवाह हुआ था। विवाह के समय उसने शर्त मनवा ली थी कि वह पति के साथ कपूरथला रियासत में ही रहेगी और अपनी ससुराल कर्त्तारपुर—जो कपूरथला से १० मील पर एक छोटा कस्बा है—कभी न जायेगी। उसके पति ने यह शर्त स्वीकार कर ली और महाराजा ने अपनी बेटी और दामाद के लिए जलावखाना (शाही महल) के करीब ही एक दूसरा महल दे दिया।

उस महल की इमारत छः मंजिली थी और पुरानी भारतीय शिल्प-शैली का एक नमूना थी। वह छोटी-छोटी ईंटों, कंक्रीट और लकड़ी के शहतीरों की बनी थी। महल में सिर्फ़ एक फाटक था और वही अकेला महल का प्रवेश-द्वार था। फाटक पर हथियारबन्द संतरी पहरा देते थे और ड्योढ़ी के अफ़सर से हुक्म लिये बिना कोई अन्दर नहीं आ सकता था।

महल में विशुद्ध पूर्वी ढंग की सजावट थी और एक छज्जा बड़ा खूबसूरत बना हुआ था जिसे 'शाह नशीन' कहते थे। पहले ज़माने में महाराजा वहीं खड़े होकर रोज सवेरे अपनी प्रजा को दर्शन दिया करते थे। राजकुमारी गोविन्द कौर ज्यादातर उसी छज्जे पर बैठी रहती और नीचे रास्ते पर आने-जाने वालों को देखा करती। शाहनशीन में पर्दे का ऐसा अच्छा इन्तजाम था कि वहां बैठने वाला व्यक्ति बाहर के लोगों को देख सकता था लेकिन उस पर बाहर वालों की नजरें किसी हालत में नहीं पड़ सकती थीं। महल के भीतर खूब लम्बे-चौड़े कई ड्राइंग-रूम, डाइनिंग रूम और शयनागार थे। महल का आंगन भी खूब बड़ा था जिसके एक तरफ कुआं था।

राजकुमारी असाधारण रूप में विलासिनी, नटखट और भोग-विलास प्रिय थी। उसकी कामपिपासा और शारीरिक भूख उसके पति द्वारा पूरी न हो पाती थी जो बदसूरत, कमजोर और कमअक्ल था। विकृत मस्तिष्क और

शरीर वाला वह व्यक्ति नीच प्रकृति, कमज़ोर और व्यभिचारी था। राजकुमारी प्रायः सुन्दर, जवान और हट्टे-कट्टे लोगों को किसी न किसी बहाने महल के अन्दर बुलाती और उनसे सम्भोग करती थी। उसने फाटक पर तैनात फ़ौजी संतरियों तक को न छोड़ा। अपने कामुक प्रेम-प्रसंगों में वह मिस्र की रानी क्लिओपेट्रा और रूस की साम्राज्ञी कैथेराइन महान् से किसी प्रकार कम न थी। उसके प्रेम और व्यभिचार की करतूतें उसके पति से छिपी न थीं। परेशान होकर अपनी किस्मत को कोसता हुआ वह महल से बाहर एक बारादरी में जाकर रहने लगा और कभी-कभी राजकुमारी को देखने आता था। उन दोनों का शारीरिक सम्बन्ध टूट चुका था।

हिज़ ऐक्सीलेन्सी नवाब गुलाम गीलानी, कपूरथला रियासत के प्राइम-मिनिस्टर, रोज़ मन्त्रिमण्डल की बैठक बुलाते और अपना ज्यादा वक्त पास के महल में, जिसे दीवानखाना कहा जाता था, गुज़ारते थे। उनकी अपनी कोठी, जिसमें उनकी बेगमात रहती थीं, दीवानखाने से करीब एक मील के फ़ासले पर थी।

गुलाम गीलानी लम्बे और खूबसूरत व्यक्ति थे। वे सिर पर सुनहली टोपी पहनते थे और जिसकी बनावट इंग्लैंड के राजमुकुट जैसी थी—फ़र्क यह था कि उसमें कीमती जवाहरात नहीं लगे थे। छँटी हुई दाढ़ी, लम्बा कोट और रेशमी पाजामा उनके बदन पर खूब जँचते थे। उन्होंने राजकुमारी की खूबसूरती की तारीफ़ सुन रखी थी। एक दिन दीवानखाने से उन्होंने देखा कि अपने महल की छत पर खड़ी हुई राजकुमारी सिर के बाल सुखा रही है। बस, फिर क्या था, पहली नज़र में ही गुलाम गीलानी राजकुमारी के इश्क में गिरफ़्तार हो बैठे।

प्राइम मिनिस्टर ने राजकुमारी से मिलने की भरसक कोशिश की मगर यह काम आसान न था। रजवाड़ों के तौर-तरीके और पाबन्दियाँ, खास तौर पर राजकुमारियों की निस्बत, बेहद सख्त थे।

महल के फाटक पर तैनात फौजी संतरियों और नौकर-चाकरों की नज़र बचा कर कोई महल के अन्दर दाखिल नहीं हो सकता था। राजकुमारी हर रोज़ दो घोड़ों की गाड़ी में बैठ कर घूमने जाती थी मगर महल से निकलते वक्त वह सख्त परदे में होती जिससे दरबारी लोग और नतरी उसका चेहरा या बदन न देख सकें। ड्योढ़ी से लेकर घोड़ा गाड़ी तक दोनों तरफ़ कनातें लग जाती थीं जिससे कोई राजकुमारी को महल से निकलते और गाड़ी में बैठते देख न सकता था। जब कभी राजकुमारी घूमने जाती, तब प्राइम मिनिस्टर उसे देखा करते, उसके हुस्न, नज़ाकत और अदाओं ने प्राइम मिनिस्टर के दिल में मोहब्बत की आग और भी भड़का दी।

[illegible] कुछ कमरे गुलाम गीलानी ने अपने इस्तेमाल के लिए रखे थे। [illegible] भी वहीं रहने लगे। उनसे पहले दस्तूर यह

प्राइम मिनिस्टर उन कमरों का इस्तेमाल सिर्फ़ मंत्रिमंडल की बैठकों और रियासत के काम-काज के लिए करते थे । वे इन कमरों में रहते न थे । गुलाम गीलानी अक्सर राजधानी से १२ मील दूर जालन्धर चले जाते थे जहाँ अपने परिवार के लोगों के साथ एक-दो दिन रहते थे । हालाँकि फ़ासला कुल १२ मील था, मगर घोड़ागाड़ी से वहाँ पहुँचने में दो घंटे लगते थे । जल्द पहुँचने के ख़याल से रास्ते में दो-तीन जगह घोड़े बदल दिये जाते थे । राजकुमारी की एक बाँदी को, जिसका नाम मौलो था, प्राइम मिनिस्टर ने खासी रिश्वत देकर मिला रखा था । एक रोज़ उस बाँदी के ज़रिये उन्होंने राजकुमारी को संदेसा भेजा कि वे राजकुमारी से मुलाक़ात करना चाहते हैं । राजकुमारी राज़ी हो गई । अब मुश्किल यह थी कि मुलाक़ात हो कैसे ? दीवानखाने से महल तक एक ज़मींदोज़ सुरंग बनवाई गई जिसके ज़रिये दोनों एक दूसरे के पास आने-जाने लगे । मगर गुलाम गीलानी को थोड़ी देर की उन मुलाकातों से संतोष न होता था । वे राजकुमारी को अपने साथ अपनी जालंधर की कोठी पर ले जाना चाहते थे जिससे इत्मीनान के साथ बेखटके वे उसकी सोहबत के मज़े लूट सकें । आख़िरकार उनको एक तरकीब सूझ गई ।

प्राइम मिनिस्टर की बग्घी में दो घोड़े जोते जाते थे । एक कोचवान और एक खिदमतगार बग्घी के आगे की सीट पर बैठते थे और दो सईस गाड़ी के पीछे पावदानों पर खड़े रहते थे । वे सभी भड़कीली वर्दियाँ पहनते थे जिनमें सोने-चाँदी के बटन और गोटा लगा रहता था । उनकी पगड़ियाँ रेशमी होती थीं । उनकी बग्घी लैण्डो ढंग की थी जो खोली और बन्द की जा सकती थी । यह बग्घी ठीक वैसी ही थी जैसी राजकुमारी इस्तेमाल करती थी । फ़र्क़ इतना था कि राजकुमारी की बग्घी के घोड़ों के साज में हीरे-जवाहरात टँके रहते थे जब कि प्राइम मिनिस्टर के घोड़ों के साज में चाँदी और मामूली रंगीन पत्थर टँके रहते थे । बग्घी के बीचोंबीच आमने-सामने की सीटों के दरमियान एक बक्स बना था जिसमें घोड़ों का चारा रखा जाता था । जहाँ कहीं रास्ते में कुछ देर को बग्घी रुकती थी, वहाँ बक्स से चारा निकाल कर घोड़ों के आगे डाल दिया जाता था ।

प्राइम मिनिस्टर ने राजकुमारी से मिल कर यह तय किया कि किसी निश्चित दिन, जब वे जालन्धर जा रहे हों, तब राजकुमारी उनके साथ बग्घी में चले । राजकुमारी ने मेहतरानी का भेस बनाया, मुँह पर घूँघट डाला और बग्घी के अन्दर चारा रखने वाले बक्स में छिप कर बैठ गई । बग्घी में बैठने से पहले उसने झाड़ू से घोड़ों की लीद बुहारी और फ़र्श साफ़ किया जिससे देखने वालों को किसी तरह का शक न हो । वह पूरे तीन घण्टे बग्घी के अन्दर बैठी रही । बात यह हुई कि महाराजा ने एक ज़रूरी काम प्राइम-मिनिस्टर के पास भेजा था जिसे निपटाने में उन्हें देर लग गई । हमेशा की तरह प्राइम मिनिस्टर बग्घी में बैठ कर चल दिये । ज्यों ही बग्घी आम रास्तों

को पार कर शहर से बाहर पहुँची, त्योंही बग्गी का कप्तान प्राइम मिनिस्टर ने खोल दिया और राजकुमारी बाहर निकल आई। फिर दोनों एक दूसरे से लिपटते-चिपटते और प्यार करते हुए बग्गी में यात्रा करते रहे। प्राइम मिनिस्टर की बग्गी में उनका बड़ा सा सोने का हुक्का भी रखा था जिससे वे तम्बाकू पीते जाते थे। वे खुशबूदार खमीरा तम्बाकू इस्तेमाल करते थे जो खास तौर पर उनके लिए लखनऊ से मँगाया जाता था और बहुत मँहगा होता था।

जालन्धर तक दो घन्टे की यात्रा राजकुमारी के साथ प्राइम मिनिस्टर ने बड़े मजे में पूरी की। वहाँ एक मकान उन्होंने पहले ही ठीक कर रखा था जिसमें वे दोनों जा कर ठहर गये। प्राइम मिनिस्टर और राजकुमारी कई घण्टे एक दूसरे के गले में बाँहें डाले पलंग पर लेटे रहे और उनका खुला प्रेमालाप चलता रहा क्योंकि मिलन का यह सुअवसर उनको पहली दफा प्राप्त हुआ था। खास तरीके से तैयार की गई कई तरह की शराब, बढ़िया खाना, देशी और विलायती इत्र, फूलों के हार वगैरह उन प्रेमियों की कामवासना को तीव्र करते रहे। आलिंगन, चुम्बन और रतिक्रीड़ा में घण्टों का समय उनके लिए मिनटों और सेकेण्डों में बीत गया। गुलाम गीलानी नशे के लिए अफीम और सखिया का मत भी इस्तेमाल करते थे।

महीने में कई दफा ऐसी यात्राओं का दौर चला करता था और कई महीनों तक किसी को पता न चल सका। एक दिन, रियासत के सीनियर मिनिस्टर दीवान रामजस को (जो इस पुस्तक के लेखक के प्रपितामह थे) गुलाम गीलानी और राजकुमारी के प्रेम-प्रसंगों की खबर लग गई। गोबिन्द कौर की एक बाँदी महाराजा की पाकशाला के खास बावर्ची अमानत खाँ से मोहब्बत करती थी। उसने अमानत खाँ को कुल रहस्य बतला दिया। अमानत खाँ ने यह बात अपने दोस्त अली मुहम्मद से कह दी जो सीनियर मिनिस्टर का बड़ा वफादार खिदमतगार था। रियाया प्राइम मिनिस्टर की बदइन्तजामी से बेहद असंतुष्ट थी क्योंकि उसकी फरियाद या तकलीफ की सुनवाई न होती थी। लोग बगावत पर तुले बैठे थे और चाहते थे कि प्राइम मिनिस्टर को हटा दिया जाय।

चूँकि प्राइम मिनिस्टर को निकालने के लिए कोई स्पष्ट आरोप नहीं था इसलिए रियासत के मिनिस्टर मौका ढूँढने लगे कि गोबिन्द कौर के साथ में वे प्राइम मिनिस्टर को पकड़ सकें।

मिनिस्टरों ने एक गुप्त मीटिंग करके यह निश्चय किया कि गुलाम गीलानी और गोबिन्द कौर को रंगे हाथों पकड़ा जाय जब वे दोनों जालन्धर जा रहे हों। रियासत की सीमा पर फौज की एक रेजीमेन्ट तैनात कर दी गई। गुलाम गीलानी और गोबिन्द कौर हमेशा की तरह बग्घी में बैठ कर जालन्धर के लिए रवाना हो गये। आने वाली मुसीबत का उनको कुछ पता न था। ज्योंही [illegible] र से बाहर पहुँची त्योंही प्राइम मिनिस्टर को

रियासत से बाहर निकाल दिया गया और गोविन्द कौर को महल में बन्द कर दिया गया। कई महीनों तक उसे महल से बाहर निकलने की मनाही कर दी गई।

राजकुमारी को अपनी और गुलाम गीलानी की किस्मत पर पछतावा न था क्योंकि उसे गुलाम गीलानी से प्रेम न था। वह तो वासना की पूर्ति का उनको एक साधन बनाये हुए थी। वह ऐसी औरत थी जिसने वफ़ा सीखी ही न थी। उसकी असलियत तब खुली जब वह वरयामसिंह से मुहब्बत करने लगी।

१६. एक राजकुमारी की दुर्दशा

राजकुमारी गोविन्द कौर के गुप्त प्रेम-प्रसंग बहुतेरे थे। परन्तु सबसे ज्यादा दिलचस्प, सनसनीखेज और स्थायी था—कर्नल बरयाम सिंह से उसका प्रेम। कर्नल बरयाम सिंह रियासत की फौज में ऊँचा अफसर था जिसके बाप-दादों ने राज्य के शासकों की बहुमूल्य सेवायें की थीं। एक दफा कर्नल बरयाम सिंह महल पर तैनात फौजी गार्द का मुआयना करने गया और वहीं वह राजकुमारी गोविन्द कौर के हुस्न और नाजो-अदा का शिकार हो गया।

वही समस्यायें फिर आ खड़ी हुईं कि बरयाम सिंह किस तरह राजकुमारी से मुलाकात करे। महल के फाटक पर सन्तरियों का पहरा था। राजकुमारी का बाहर घूमने-फिरने जाना बन्द हो चुका था। उसकी एक दूसरी बाँदी, जिसका नाम बासन्ती था, बरयाम सिंह और राजकुमारी के संदेसे एक-दूसरे को पहुँचाया करती थी। बरयामसिंह ने राजकुमारी से मिलने का एक उपाय खोज निकाला। महल के अन्दर पानी का कुआँ था। कुएँ की दीवार ही महल की बाहरी दीवार थी। बरयाम सिंह ने नीचे नींव के पास उस दीवार में सेंध बना ली। वह इसी रास्ते कुएँ में उतर आता। दूसरी तरफ से राजकुमारी रस्सी में पीतल की बाल्टी बाँध कर कुएँ में लटकाती। उस रस्सी को पकड़ कर बरयामसिंह ऊपर चढ़ आता और चुपचाप महल के भीतर दाखिल हो जाता। राजकुमारी अपनी विश्वस्त बाँदियों की मदद से बरयामसिंह को रस्सी के सहारे कुएँ से बाहर खींच लेती।

महल में पहुँच कर बरयाम सिंह अपनी रात राजकुमारी के शयनागार में ही गुजारता। राजकुमारी कीमती पोशाक पहने उसका स्वागत करती। सुनहले पलंग पर बनारसी जरी की रेशमी चादर और कामदार तकिए रहते। चमेली और गुलाब के फूल पलंग पर बिछाये जाते जिस पर बरयाम सिंह और गोविन्द कौर एक दूसरे को सीने से चिपटाये, दृढ़ आलिंगन में बँधे रति-क्रीड़ा का आनन्द लिया करते। सारी रात कामुक चेष्टाओं और सम्भोग में बीत जाती। सवेरा होने के पहले बरयाम सिंह महल से बाहर उसी रास्ते निकल जाता जिधर से आया था। बाहर निकल कर वह सावधानी से, दीवार में बनाई हुई सेंध को हर दफा ईंटों से बन्द कर देता था जिससे किसी को शक न हो। इसके बाद वह अपने घर चला जाता था। इन रूमानी मुलाकातों का सिलसिला दो साल तक जारी रहा।

अन्त में, कपूरथला रियासत के होम मिनिस्टर सरदार दानिशमन्द को यह भेद मालूम हो गया। चूँकि वरयाम सिंह से उनकी दुश्मनी थी, इसलिए उनको बदला लेने का मौक़ा मिल गया। रात की गश्त लगाती हुई पुलिस की एक टोली ने वरयाम सिंह को महल में दाखिल होते देख लिया। उन्होंने थाने पर जा कर अपने अफ़सर को इत्तिला दी। तुरन्त होम मिनिस्टर को खबर की गई। वे पुलिस के इंस्पेक्टर जेनरल को बारह कांस्टेबुलों के साथ ले कर महल में जा पहुँचे। वरयाम सिंह और राजकुमारी को पकड़ने के लिए पुलिस दरवाज़े तोड़ने लगी। जब वरयाम सिंह और राजकुमारी को दरवाज़े टूटने की खबर मिली और पता चला कि पुलिस आई है, तो वे फ़ौरन, जिस हालत में थे, उसी तरह, एक पोशीदा सुरंग के रास्ते भाग खड़े हुए। यह सुरंग ज़मीन के नीचे ही नीचे महल के बाहर एक कुएँ के पास, १०० गज़ दूर जा निकली थी जहाँ राजकुमारी रोजाना स्नान करती थी। कुएँ के अन्दर ठंडे पानी में छिपकर सारी रात उन दोनों ने बिताई और सवेरा होते ही वहाँ से चल पड़े। किसी की नज़र उन पर नहीं पड़ी।

इधर सरदार दानिशमन्द और पुलिस कई दरवाज़े तोड़ कर जब राजकुमारी के रहने के कमरों में गये तो देखा कि वरयाम सिंह और राजकुमारी, दोनों ग़ायब हो चुके हैं। उनको बड़ी निराशा हुई कि हाथ में आई हुई चिड़िया उड़ गई। वे वापस चले गये।

धीरे-धीरे पाँव-पैदल चलते हुए वरयाम सिंह और गोविन्द कौर कपूरथला से करीब २० मील के फ़ासले पर एक गाँव में पहुँचे जो कल्यान कहलाता था और सुलतानपुर के पास था। यह गाँव कपूरथला की रियासत से बाहर ब्रिटिश इलाक़े में था जहाँ रियासत के हाकिम या पुलिस, कोई उनको पकड़ न सकता था।

वरयाम सिंह और गोविन्द कौर के पास गुज़र-बसर का कोई सहारा न था। राजकुमारी के ज़ेवरात, धन-दौलत और भत्ता, सब ख़त्म हो चुका था। वरयाम सिंह के घरवालों ने उसको अलग कर दिया और जायदाद में हिस्सा भी नहीं दिया। कल्यान में ही मिट्टी का एक घर बना कर दोनों रहने लगे और खेती करके अपना पेट पालने लगे। वरयाम सिंह खेत में हल चलाता और राजकुमारी घर पर जानवरों के गोबर से कंडे पाथती। मुहब्बत में गिरफ़्तार दो दिलों का यह अंजाम किस्मत का एक खेल था।

२०. महाराजा और खान

हिज हाईनेस फर्जन्द-ए-दिलबन्द रासिखुल एतका
राजगान महाराजा सर जगतजीत सिंह, जी० सी० ए[illegible]
आई० ई०, जी० बी० ई० कपूरथला नरेश थे। उनके पि[illegible]राजा खरक
सिंह के कोई औलाद नहीं थी और कपूरथला की राजगद्दी उनके खानदान के
दूसरे राजवंश में चली गई होती यदि रियासत के वरिष्ठ मिनिस्टरों ने बड़ी
चतुरता और सूझबूझ से परिस्थिति को सँभाला न होता। सभी मिनिस्टर,
राज्य के उच्चाधिकारी और साधारण प्रजा के लोग कदापि नहीं चाहते थे
कि कपूरथला की रियासत खानदान की किसी दूसरी शाखा के हाथों में चली
जाय—खास तौर पर उस राजवंश में, जिसके लोग ईसाई हो गये थे।

प्राइम मिनिस्टर दीवान रामजस सी० एस० आई० अपने जमाने के
प्रसिद्ध राजनीतिज्ञ और समाज सुधारक थे। उन्होंने अपने सहयोगियों और
प्रजा के लोगों की इच्छा पूरी करने का फैसला कर लिया। खानदान वालों में
इने-गिने लोग ही ईमानदार और सच्चरित्र थे। कपूरथला राज्य की रियाया
की आँखों में उनकी न तो इज्जत थी और न वह उन्हें विशुद्ध-रक्त ही मानती
थी। अधिकारी वर्ग अच्छी तरह समझता था कि उनमें से कोई भी राजगद्दी
पर बैठा तो रियासत में बगावत फैल जायेगी। अलावा इसके, महाराजा
निहाल सिंह की मृत्यु के बाद, खरक सिंह के पिता महाराजा रनधीर सिंह से
अनेक वर्षों तक खानदान वालों के झगड़े चलते रहे थे और खून खराबी की
नौबत आ चुकी थी। ऐसी हालत में, उन्हीं खानदान वालों में से कोई अगर
राजगद्दी का मालिक बन जाता तो कपूरथला के राजपरिवार, मिनिस्टर,
उच्चाधिकारी वगैरह सभी के प्राणों और इज्जत का खतरा पैदा हो जाता।
इसलिए हर तरह से कोशिश की गई कि किसी खानदान वाले को कपूरथला
की राजगद्दी हासिल न हो सके।

बहुत साल बीत चुके थे मगर कपूरथला नरेश महाराजा खरक सिंह के
कोई औलाद नहीं हुई थी। इस बात से रियासत में बड़ा असंतोष फैला था।
किसी लड़के को लाकर रियासत का वारिस करार देने की कई तजवीजें गुप्त
रूप से प्राइम मिनिस्टर के आगे पेश हुईं मगर कारामद न समझी गईं।
दीवान रामजस और मिनिस्टर सरदार भगत सिंह ने मिल कर एक तरकीब
सोची जो कामयाब हो गई। तजवीज यह थी कि रियासत के किसी प्रतिष्ठित

अन्त में

भेद भाव घराने का एक लड़का लाकर महारानी की गोद में दे दिया जाय और उसी को महाराजा खरक सिंह का पुत्र घोषित कर दिया जाय। राज्य के चिकित्सक डॉक्टर रामरखा थे। उन्होंने महाराजा को पागल क़रार दे दिया था हालाँकि वे सिर्फ़ गर्म दिमाग़ के नरेश थे। उनको कपूरथला से १५० मील दूर, काँगड़ा जिले में धर्मशाला के नज़दीक भागसू नाम के पहाड़ी स्थान पर एक मकान में नज़रबन्द करके रखा गया था और उनकी देख-रेख के लिए तैनात डॉक्टर की इजाज़त वग़ैर कोई उनसे भेंट नहीं कर सकता था।

महारानी भी प्राइम मिनिस्टर के प्रस्ताव से सहमत थीं और उन्होंने मंजूर कर लिया कि अपने को गर्भवती ज़ाहिर कर देंगी।

एक बूढ़ी खूसट दाई जिसका नाम केसरदेई था और जो महारानी के पास दिन में रात में, हर समय पहुँच सकती थी, तैनात कर दी गई कि प्रसव के समय महारानी की देखभाल करे। महारानी को समझा दिया गया था कि जब कोई शिशु उनकी गोद में लाकर दिया जाय तो उसे अपना ही शिशु बतलायें। राजधानी में एक स्त्री के बच्चा होने की सम्भावना की सूचना दीवान को दे दी गई थी। कपूरथला में एक लाला हरीचन्द थे जो बाद में रियासत के फ़ाइनेन्स मिनिस्टर नियुक्त हुए और दीवान की पदवी प्राप्त की। उनकी पत्नी ने एक पुत्र को जन्म दिया। लाला हरीचन्द दीवान रामजस के अत्यन्त घनिष्ठ मित्र थे और नगर के बड़े बाजार में उनकी कोठी के ठीक सामने के घर में रहते थे। सन् १८७२ की २६ नवम्बर को २ बजे रात में उस शिशु को महल में लाकर महारानी की गोद में दे दिया गया। नौ महीने पहले से ही महल के डॉक्टरों और नर्सों ने महारानी को गर्भवती घोषित कर रखा था।

राजकुमार के जन्म पर तोपें छूटीं और ४० दिन तक उत्सव मनाया गया जिसमें क़रीब १० लाख रुपये ख़र्च हुए। उत्सव में पंजाब के गवर्नर, अनेक अंग्रेज अफ़सर, कश्मीर, पटियाला, ग्वालियर और पड़ोसी रियासतों के राजे-महाराजे आमन्त्रित थे। तमाम क़ैदी रिहा कर दिये गये और भिखमंगों को रीगात बाँटी गई। चूँकि महाराजा खरक सिंह पागल करार दे दिये गये थे, इसलिए उनकी कोई बात सुनी न गई हालाँकि वे चिल्लाते रहे कि उनके कोई पुत्र नहीं हुआ और कई वर्षों से महारानी से उनका शारीरिक सम्बन्ध क़तई नहीं रहा है। मगर महारानी ने साफ़ एलान करा दिया कि उन्होंने एक पुत्र को जन्म दिया है। डॉक्टरों, नर्सों और दाइयों को भरपूर इनाम देकर उनके मुँह बन्द कर दिये गये थे।

खानदान वालों को जब खबर मिली तो उन्हें सन्देह हो गया कि कुछ दाल में काला ज़रूर है। उन्होंने भारत सरकार से इस मामले में [illegible] देने की [illegible] की। इस पर एक सिविल सर्जन, जिसका नाम कर्नल मास्टर्टन था [illegible] को [illegible] [illegible] कर [illegible]

की जाँच करके अपनी रिपोर्ट भारत सरकार को पेश करे। रियासत की रस्म के मुताबिक कर्नल ने एक महिला दुभाषिये की मदद लेकर महारानी से कुछ सवालात किये और जाँच पड़ताल शुरू कर दी। पालिसी और कूटनीति को ध्यान में रख कर कर्नल ने प्राइम मिनिस्टर का पक्ष लेने का निश्चय किया और उसने तमाम मिनिस्टरों, महल के अफसरों, लेडी डॉक्टरों, और नर्सों आदि के बयान दर्ज किये क्योंकि वे सभी लोग पुत्र-जन्म के समय उपस्थित थे। उसने आम रिआया से भी पूछ-ताछ की। जाँच-पड़ताल से उसको पूरा पता चल गया कि किसी परिवार के लड़के को ला कर गद्दी का वारिस घोषित किया गया है मगर दीवान और उनके खास दोस्तों ने भारी रकमें रिश्वत में देकर कर्नल का मुँह बन्द कर दिया। उसने भी मामला रफा-दफा कर दिया और भारत सरकार को रिपोर्ट भेज दी कि महारानी ने सचमुच एक पुत्र को जन्म दिया है। भारत सरकार ने तुरन्त उसे कपूरथला की गद्दी का वारिस मंजूर कर लिया। खानदान वालों ने तब भारत सरकार के फैसले के खिलाफ खुद जा कर वायसराय से व्यक्तिगत बातचीत की। इसी बीच दीवान ने रियासत के करीब एक लाख प्रतिष्ठित व्यक्तियों के दस्तखत लेकर एक 'मेजरनामा' तैयार कराया जिसमें रियासत और महाराजा के अन्दरूनी मामलों में दखल देने का इलज़ाम खानदान वालों पर लगाया गया था। वह 'मेजर नामा' भारत सरकार को भेज दिया गया। परन्तु, एक दफा फिर, भारत सरकार के राजनीतिक विभाग का एक बड़ा अफसर कपूरथला भेजा गया कि महल में जा कर उन इलज़ामों की जाँच करे जो खानदान वालों ने लगाये थे। वह अंग्रेज अफसर भी दीवान के प्रलोभनों का शिकार बन गया। इस दफा अंग्रेज अफसर की पत्नी को, जो साथ में आई थी, दीवान ने मोतियों का एक बेशकीमत हार भेंट में दिया। हार को देख कर वह महिला चकित रह गई। अट्ठारहवीं सदी में अफगान आक्रमणकारी अहमदशाह अब्दाली ने अपनी मैत्री के चिह्न-स्वरूप वह मोतियों का हार कपूरथला नरेश को दिया था। वस्तुत. अंग्रेज अफसर ने जा कर वायसराय को यही रिपोर्ट दी कि महारानी का पुत्र असली है और कपूरथला की राजगद्दी का वारिस वही होगा।

खानदानवाले अब बेतरह चिढ़ गये और दीवान के परिवार से उनकी सख्त दुश्मनी हो गई। झगड़ा इतना बढ़ा कि दीवान ने मजबूर हो कर उन सबको एक ही साथ रियासत से बाहर निकलवा दिया। वे लोग जालन्धर जा कर रहने लगे। भारत सरकार ने उनके गुजारे के लिए अच्छी खासी रकम तय कर दी, उनको राजा का खिताब मौरूसी दिया गया और क़ैसरे हिन्द की उपाधि प्रदान की गई। उन्हीं लोगों के परिवार में राजा हरनाम सिंह भी थे जिनको भारत की ब्रिटिश सरकार ने अनेक प्रकार से सम्मानित किया और 'नाइट' की उपाधि दी।

कुछ रहस्यमय परिस्थितियों के बीच महाराजा खड़कसिंह की मृत्यु हो

पर राजकुमार जगतजीत सिंह, जो अभी पाँच वर्ष के बालक ही थे; महाराजा घोषित कर दिये गये। दीवान रामजस के सभापतित्व में एक 'शासन-कार्य-पालिका समिति' नियुक्त कर दी गई जो महाराजा की ओर से रियासत की शासन-व्यवस्था चलाती रही। जब १८ साल की आयु में महाराजा बालिग हुए, तब पंजाब के गवर्नर ने एक मानाभिषेक समारोह आयोजित करके उनको शासन के सम्पूर्ण अधिकार सौंप दिये।

महाराजा, राजपूतों के सुप्रतिष्ठित परिवार भट्टी राजपूतों के वंशज थे। यह वंश-परम्परा हिन्दुओं के पूज्य भगवान श्री रामचन्द्र जी के पुत्र-पौत्रों द्वारा चलाई गई थी। महाराजा के पूर्वज थे जस्सा सिंह, जिन्होंने अहमद शाह अब्दाली से मुग़लों की हार होने पर एक बड़ा इलाक़ा फ़तह करके कपूरथला राज्य की नींव डाली। उनके उत्तराधिकारियों में महाराजा रनधीर सिंह हुए जो जगतजीत सिंह के पितामह थे। महाराजा रनधीर सिंह को भी उनके भाई-बन्धुओं ने खूब सताया और उन्हीं के वंशज खानदान वालों ने वायसराय से शिकायत करके खरक सिंह के पुत्र को कपूरथला का राजा बनाने का विरोध किया था।

महाराजा निहाल सिंह वसीयत कर गये थे कि रियासत तीन बराबर हिस्सों में बाँट दी जाय। एक हिस्सा उनके ज्येष्ठ पुत्र रनधीर सिंह को मिले, बाकी दोनों हिस्से उनकी विशेष प्रिया दूसरी रानी से उत्पन्न दो पुत्रों को दिये जायें। महाराजा रनधीर सिंह कपूरथला नरेश ने उस वसीयत को मानने से इन्कार कर दिया और कहा कि दूसरी महारानी ने महाराजा पर दबाव डाल कर अपने दोनों बेटों के फ़ायदे के लिए वसीयत लिखवाई है इसलिए वसीयत ग़ैरकानूनी और अवैध है। दूसरी महारानी के दोनों बेटों—कुँवर विक्रमाजीत सिंह और कुँवर सुचेतसिंह ने पंजाब के गवर्नर सर हेनरी लारेन्स से अपील की कि उनके स्वर्गीय पिता की वसीयत को मान्यता प्रदान की जाय परन्तु गवर्नर ने अपना फ़ैसला रनधीर सिंह के हक़ में दे दिया। दोनों राजकुमारों ने तब वायसराय सर जॉन लारेन्स से, जो पंजाब के गवर्नर सर हेनरी लारेन्स के भाई थे, अपील की। वायसराय ने हुक्म दे दिया कि महाराजा निहाल सिंह की वसीयत को कानूनी और वैध माना जाय। महाराजा रनधीर सिंह ने वायसराय का फ़ैसला स्वीकार न करके विलायत में भारत के सेक्रेटरी ऑफ स्टेट और इंग्लैंड की महारानी विक्टोरिया के पास अपील की। महाराजा ने, दीवान रामजस के पुत्र दीवान मथुरादास को, जो उस समय रियासत के रेवेन्यू मिनिस्टर थे, अपने मुक़दमे की पैरवी करने तथा महारानी विक्टोरिया से भेंट करने के लिए इंग्लैंड भेजा। महाराजा ने दीवान के नाम मुख़्तारनामा भी लिख दिया जिससे मुक़दमे की पैरवी में कोई अड़चन न पड़े। मुख़्तारनामे का मज़मून पढ़ने में हमारे पाठकों को दिलचस्पी होगी, इस ख़याल से उसकी नक़ल यहाँ दिये देते हैं—

'इन सभी को, जो इस मुख़्तारनामा को पढ़ें, मैं, फ़र्ज़न्द-दिलबन्द...

रासिखुल-एतकाद, दौलत-ए-इंग्लीशिया, राजा-ए-राजगान, रनधीर सिंह बहादुर अहलुवालिया, वली कपूरथला (पंजाब) व बौंडी, व बटुमालो, व इकौना, जी० सी० एस० आई०, अभिवादन करता हूँ।

"मेरे स्वर्गीय पिता राजा निहाल सिंह की अभिव्यक्त वसीयत के अनुसार सरदार बिक्रम सिंह और कुँवर सुचेत सिंह ने मुझसे जो अधिकारों की माँग की है, उनके सम्बन्ध में भारत सरकार द्वारा जारी की गई आज्ञा के सिलसिले में मैं राइट ऑनरेबुल दी सेक्रेटरी ऑफ स्टेट फार इण्डिया के समक्ष यह अपील प्रस्तुत कर रहा हूँ। साथ ही, मैं उपरोक्त सेक्रेटरी महोदय को यह ज्ञापन देता हूँ कि मैं अपने विश्वासी और सुयोग्य कर्मचारी दीवान मथुरादास को नियुक्त करने का इच्छुक हूँ जो मेरे ज्ञापन या अपील से सम्बन्धित सभी मामलों और कार्यों में मेरा प्रतिनिधित्व करेंगे क्योंकि मैं स्वयं इस समय उपरोक्त सेक्रेटरी महोदय की सेवा में उपस्थित हो कर ज्ञापन में लिखित प्रार्थना प्रस्तुत करने में असमर्थ हूँ और मैं चाहता हूँ कि दीवान मथुरादास मेरी ओर से अथवा मेरे नाम पर जो भी काम करेंगे, उसको पूरे विश्वास से मेरे द्वारा किया हुआ, सत्य और प्रमाणित माना जाये।

"अतएव, इस अधिकार-पत्र द्वारा मैं, फर्जंद-ए-दिलबन्द, रासिखुल-एतकाद, दौलत-ए-इंग्लीशिया, राजा-ए-राजगान रनधीर सिंह अपने दीवान मथुरादास को अपना विश्वस्त और कानूनी मुख्तार व एजेन्ट मनोनीत व नियुक्त करता हूँ ताकि वे मेरे नाम पर हाज़िर हो कर सेक्रेटरी ऑफ स्टेट-फार इण्डिया अथवा अन्य सरकारी ब्रिटिश अफसरों के सामने; जिनको मेरा ज्ञापन, विचारार्थ सौंपा जाये, आवश्यकतानुसार समस्त सूचनायें विवरण आदि प्रस्तुत करें तथा तत्सम्बन्धी अन्य मामलों में समुचित कार्यवाही यथावसर करते रहें। उपरोक्त मुख्तार मेरी जगह हस्ताक्षर करके अन्य ज्ञापन या कागजात जिनकी ज़रूरत पड़े दाखिल करेंगे और मेरे ज्ञापन में दी गई प्रार्थना अथवा अन्य ज्ञापनों में दी जाने वाली याचनाओं की परिपूर्ति सम्बन्धी समस्त कार्य करेंगे। उनको यह भी अधिकार होगा कि मेरी अपील और ज्ञापन के सिलसिले में ज़रूरत के अनुसार वकील, बैरिस्टर, लिपिक, परिचारक, अनुचर आदि नियुक्त करेंगे और उनकी फीस, मेहनताना, वेतन, भत्ता, सवारी खर्च, निवास व्यय आदि सभी खर्च देंगे जो मेरी ओर से देय होंगे। उनको वे समस्त सामान्य कार्य करने तथा मेरी ओर से प्रमाण-पत्र, अधिकार-पत्र, आदि आवश्यक कागज़ात हस्ताक्षर करने, दाखिल करने तथा प्रेषित करने का अधिकार होगा जिनकी आवश्यकता पड़े अथवा जिनसे मेरी अपील या ज्ञापन को लाभ पहुँचता हो। उनके द्वारा किये गये समस्त कार्य मेरे द्वारा किये गये समझे जायें और उनका उत्तरदायित्व मेरा माने जाये। अन्त में, मैं उन समस्त कार्यों का अनुमोदन करता हूँ जो इस अधिकार-पत्र में दिये गये विवरण के अनुसार मेरे द्वारा नियुक्त मुख्तार सम्पन्न करें अथवा सम्पन्न करेंगे।

मेरे हस्ताक्षर व मोहर द्वारा प्रमाणित, लखनऊ में, १२ अगस्त, ईसाई वर्ष सन् १८६८।

(हस्ताक्षर)

कपूरथला के रनधीर सिंह अहलुवालिया

हिज़ हाईनेस राजा-ए-राजगान रनधीर सिंह ने, जिनको व्यक्तिगत रूप से मैं जानता हूँ, मेरे सामने मोहर लगाई और अपने नाम के हस्ताक्षर किये।

(हस्ताक्षर)
आर० ए० डेवीज़
चीफ़ कमिश्नर, अवध

दीवान मथुरादास के साथ काफ़ी लम्बी रक़म भेजी गई थी। वे अपने साथ रसोइये, बैरे, और खिदमतगार भी ले गये थे। भोजन-सामग्री और गंगा जल भी उनके साथ था क्योंकि विदेशी भोजन और पानी से उनको परहेज़ था। अगर कभी मजबूरी से विदेश में उनको भोजन करना ही पड़ता, तो उस पर गंगा-जल छिड़क कर पवित्र कर लेते थे। कार्यकुशल और चतुर होने के कारण दीवान मथुरादास ने इंग्लैंड के अच्छे से अच्छे क़ानूनदाँ और वकील नियुक्त करके उनसे सलाह ली तब काम शुरू किया। काफ़ी कोशिश के बाद महारानी विक्टोरिया के सामने सारा मामला पेश कर दिया। उस ज़माने में इंग्लैंड की सबसे बड़ी अदालत प्रिवी कौन्सिल भी भारत से सम्बन्धित मामलों में महारानी से ही निर्देश प्राप्त करती थी। ईस्ट इण्डिया कम्पनी खत्म हो चुकी थी। महारानी विक्टोरिया भारत की सम्राज्ञी बन गई थीं। वे वास्तव में बड़ी धर्मपरायण और ईश्वर-भक्त महिला थीं। उनको यह बात पसन्द न आई कि कपूरथला की गद्दी का वारिस तो रियासत का एक तिहाई भाग पाने का अधिकारी हो और उनसे छोटे तथा सौतेले दो भाई मिल कर दो-तिहाई भाग के अधिकारी बनें। महारानी भारत के वायसराय द्वारा किये गये फ़ैसले से सहमत न हुईं। उन्होंने तय कर दिया कि दोनों सौतेले भाइयों को १६,०००) रु० सालाना बतौर गुज़ारे के दिये जायें और उनको रियासत से एकदम बाहर जा कर बसने की इजाज़त दी जाये। इस सम्बन्ध में उन्होंने अपना हुक्म जारी कर दिया।

खानदान वालों की साज़िश के खिलाफ़ महाराजा की जीत हो जाने पर भी पारिवारिक झगड़े बन्द न हुए। वे लोग हालांकि जालन्धर में रहते थे मगर कपूरथला के राजपरिवार को चैन से न बैठने देते थे। महाराजा रणधीर सिंह के विरुद्ध उन्होंने राजमाता को ले जा कर पंजाब के गवर्नर के [illegible] इल्ज़ाम दिलवाया कि रणधीर सिंह उनके असली पुत्र नहीं हैं मगर [illegible]

तक बहुत देर हो चुकी थी। कोई नतीजा न निकला और उनकी यह बात भी बेकार गई। रियासत के सिविल सर्जन ने महारानी को [illegible] करार दे दिया।

महाराजा ने दीवान मथुरादास को विशेष रूप से सम्मानित किया। उनको जागीर और ज़ेवरात इनाम में दिये। किसानों को खुश करने के लिए लगान कम कर दिया गया, मिनिस्टरों, अफ़सरों और मातहतों की तनख़्वाहें दुनी कर दी गईं और मन्दिरों, मस्जिदों तथा गिरजों में धन्यवाद सूचक प्रार्थनायें की गईं।

ईरान के बादशाह नादिरशाह से भेंट में मिली तलवार और एक बहुमूल्य पुखराज महाराजा रनधीर सिंह धारण करते थे। महाराजा जगतजीत सिंह ने वह पुखराज अपनी उस कमर पेटी में टँकवा लिया जिसे वे खास मौक़ों पर पहना करते थे। नादिरशाह ने ये दोनों वस्तुयें महाराजा फ़तेहसिंह को उपहार में दी थी। जगतजीत सिंह को सोने-चांदी की बनी गाड़ी में सवार होने का भी सौभाग्य प्राप्त था जिसमें कभी छः और कभी आठ घोड़े जोते जाते थे। उन घोड़ों के साज में हीरे, मोती, नीलम वगैरह जवाहरात टँके थे जिनकी क़ीमत कई लाख रुपये थी। यह साज भी बादशाह नादिरशाह ने महाराजा के पूर्वज फ़तेहसिंह को भेंट में दिया था।

भारत सरकार द्वारा महाराजा सरकसिंह के क़ानूनी वारिस होने की मान्यता पा कर महाराजा जगतजीत सिंह ने ६६ साल तक राज्य किया। ब्रिटिश सरकार ने उनको सम्मानित किया और इंग्लैंड के बादशाह तथा विदेशों के राजाओं ने उनको तमाम तमग़े और उपाधियों से विभूषित किया। फिर भी, भारत सम्राट् से जी० सी० वी० ओ० की उपाधि प्राप्त करने की उनकी अभिलाषा पूरी न हो सकी। जब वे इंग्लैंड जा कर भारत सम्राट् [illegible] मिले, तब इस सम्बन्ध में उनको एक आश्वासन [illegible]। अन्य राजा-महाराजाओं की भाँति उनको भी ज़्यादा से ज़्यादा [illegible] प्राप्त करने की तीव्र लालसा रहती थी और वे इसी चेष्टा में [illegible]।

७४ साल की उम्र में उनका स्वर्गवास हुआ। इस अवसर पर समस्त भारत में सरकारी तौर पर शोक मनाया [illegible] कपूरथला और भारत में ही नहीं, बल्कि यूरोप के देशों में [illegible] में [illegible] शोक में शाही झण्डे झुका दिये [illegible] उनको अपना [illegible] समझता था और उनके जीवन-काल [illegible]

मेरे हस्ताक्षर व मोहर द्वारा प्रमाणित, लखनऊ में, १२ अगस्त, ईसाई वर्ष सन् १८६८।

(हस्ताक्षर)

कपूरथला के रनधीर सिंह अहलुवालिया

हिज़ हाईनेस राजा-ए-राजगान रनधीर सिंह ने, जिनको व्यक्तिगत रूप से मैं जानता हूँ, मेरे सामने मोहर लगाई और अपने नाम के हस्ताक्षर किये।

(हस्ताक्षर)

आर० ए० [illegible]

चीफ़ कमिश्नर, [illegible]

दीवान मथुरादास के साथ काफ़ी लम्बी रकम भेजी गई थी। वे अपने रसोइये, वैरे, और खिदमतगार भी ले गये थे। भोजन-सामग्री और गंगा [illegible] उनके साथ था क्योंकि विदेशी भोजन और पानी से उनको परहेज़ था। कभी मजबूरी से विदेश में उनको भोजन करना ही पड़ता, तो उस पर [illegible] जल छिड़क कर पवित्र कर लेते थे। कार्यकुशल और चतुर होने के [illegible] दीवान मथुरादास ने इंग्लैंड के अच्छे से अच्छे क़ानूनदाँ और वकील [illegible] करके उनसे सलाह ली तब काम शुरू किया। काफ़ी कोशिश के बाद म[illegible] विक्टोरिया के सामने सारा मामला पेश कर दिया। उस ज़माने में इं[illegible] सबसे बड़ी अदालत प्रिवी कौन्सिल भी भारत से सम्बन्धित मामलों में म[illegible] से ही निर्देश प्राप्त करती थी। ईस्ट इण्डिया कम्पनी खत्म हो चुकी [illegible] महारानी विक्टोरिया भारत की सम्राज्ञी बन गई थीं। वे वास्तव [illegible] धर्मपरायण और ईश्वर-भक्त महिला थीं। उनको यह बात पसन्द न [illegible] कपूरथला की गद्दी का वारिस तो रियासत का एक तिहाई भाग पाने [illegible] कारी हो और उससे छोटे तथा सौतेले दो भाई मिल कर दो-तिहाई [illegible] अधिकारी बनें। महारानी भारत के वायसराय द्वारा दिये गये फ़ैसले से [illegible] न हुई। उन्होंने तय कर दिया कि दोनों सौतेले भाइयों को ३६,००[illegible] सालाना बतौर गुजारे के दिये जायँ और उनको रियासत से एकदम [illegible] जाकर बसने की इजाजत दी जाये। इस सम्बन्ध में उन्होंने अपना हुक्म जारी कर दिया।

खानदान वालों की ख़्वाहिश के खिलाफ़ महाराजा की जीत हो [illegible] की पारिवारिक झगड़े बन्द न हुए। वे लोग [illegible] जालंधर में [illegible] मगर कपूरथला के राजपरिवार को चैन से न बैठने देते थे। महाराजा [illegible] और सिंह के विरुद्ध उन्होंने [illegible] को ले जा कर पंजाब के [illegible] दिखलाया कि रनधीर सिंह उनके उत्पन्न पुत्र नहीं हैं [illegible]

यह कुत्तों के भूँकने की आवाजें कहाँ से आ रही थीं ? फिर, मुसलमान बादशाहों के महलों में कुत्तों को नहीं रखा जाता ? मुसलमान तो इन पशुओं को नजिस और नापाक मानते हैं ? सरदार के सवालात सुन कर उस अधिकारी ने चुप्पी साध ली। सरदार जिद पकड़ गये और फिर पूछा। तब धीरे से उसने सरदार के कान में बतलाया कि वह आवाजें हिज मैजेस्टी शाह के खाँसने की आ रही थी।

शाह की मुलाकात में करीब पन्द्रह मिनट लगे, तब तक वह आवाजें बराबर सुनाई देती रहीं। वापसी पर, जब हम लोग मेमीरेमिस होटल में आ गये, तब महाराजा ने समझाया कि शाह के खाँसने पर कुत्तों के भूँकने जैसी आवाजें निकलती थीं। वजह यह थी कि कई साल पहले, हिज मैजेस्टी ने गले का आपरेशन कराया था। तभी से गला साफ करने के लिए जब वे खखारने या खाँसते थे, तब ऐसी अजीब आवाजें निकलती थी।

शाह ने महाराजा को और मुझे "आर्डर आफ द' नाइल" का खिताब दिया। महाराजा को मिस्र का सबसे बड़ा खिताब "अब्बास हालमी" प्राप्त करने की कामना थी। महाराजा ने मुझे आदेश दिया कि मैं मिस्र के विदेश-मंत्री से मिलूँ और बतलाऊँ कि महाराजा को जो खिताब दिया गया है, वह महाराजा की प्रतिष्ठा और मान-मर्यादा के आगे उपयुक्त नहीं है। यदि हिज मैजेस्टी उनको "आर्डर ऑफ अब्बास हालमी" प्रदान करें, तो महाराज बहुत अनुग्रहीत होंगे। मैंने महाराजा को समझाया कि इस प्रकार का दबाव डालना ठीक न होगा मगर महाराजा न माने और अपनी बात पर अड़े रहे।

लाचार होकर, मुझे मिस्र के विदेश मंत्री हिज एक्सीलेन्सी अब्दुल खलक पाशा से भेंट करनी पड़ी। वे पहले ही मेरी मुलाकात का प्रयोजन समझ गये थे क्योंकि पिछली रात को एक स्वागत-समारोह में महाराजा ने उनसे इसी विषय पर बातचीत की थी। फिर क्या था, उन्होंने मुझ से भारत, भारतीय नरेशों और रियासतों के बारे में बातचीत शुरू कर दी। उसके बाद भारत में अंग्रेजों के अत्याचार और अंग्रेज अफसरों द्वारा भारतीय नरेशों के अपमान का जिक्र छेड़ दिया।

मैं अपनी मुलाकात के मुख्य विषय पर बातचीत करने को बेताब हो रहा था पर वह चतुर विदेश-मंत्री मुझे मौका ही नहीं दे रहा था। वह लगातार अपनी कहता रहा कि अंग्रेजों ने किस तरह मिस्र के राजनीतिक जीवन में दखल दिया, उसने किस प्रकार उन्हें रोकने में सफलता पाई। यह जाहिर था कि विदेश-मंत्री असली बात को टाल कर वक्त बिता रहा था। आध घंटे बाद, अचानक उसने मेज के नीचे लगी हुई घंटी बजाई और फ़ौरन तीन वर्दीधारी लाल टोपी वाले अफसर कमरे में दाखिल हुए।

इशारा काफी था। मुलाकात खत्म हो गई। मैं अपने मतलब की बात विदेश-मंत्री से कहने का मौका न पा सका, महाराजा को बड़ी निराशा हुई।

२१. आब्दीन महल में

कपूरथला नरेश महाराजा जगतजीत सिंह जब क़ाहिरा में थे, तब उन्होंने मिस्र के शाह फ़ऊद से विशेष भेंट की याचना की। शाह ने उनसे मुलाक़ात करना मंजूर किया और साथ ही उनको एक राजकीय भोज में सम्मिलित होने का निमंत्रण भी दिया। उस भोज में प्राइम मिनिस्टर मुस्तफ़ा ज़गलुल पाशा, वफ़्द के नेता, मंत्रिमंडल के सदस्य तथा दरबार के सर्वोच्च पदाधिकारी शामिल हुए जो राजकीय पोशाकें पहने और लाल टोपियाँ लगाये थे।

ब्रिटिश ए० डी० सी० 'पाशा' की उपाधि प्राप्त थे और उनका रंग कुछ अधिक गोरा होने के कारण ही अंग्रेज़ होना प्रकट करता था। प्रवेश-द्वार पर दरबार के मुख्य स्वागताधिकारी ने आगे बढ़ कर महाराजा को सम्मान दिया। बाद में, महाराजा को फ़ौजी सलामी दी गई। स्वागताधिकारी के साथ तब वे मुख्य हॉल में पहुँचे जहाँ राज्य के अन्य उच्चाधिकारियों से उनकी मुलाक़ात हुई। फिर वे ड्राइंग-रूम में ले जाये गये जहाँ शाह उनकी प्रतीक्षा कर रहे थे।

भोज में तरह-तरह के मिस्री व्यंजन परोसे गये और फ़्रांस की शराब पेश की गई। अपने ज़माने के अत्यन्त लोकप्रिय व्यक्ति और मिस्र के प्राइम मिनिस्टर ज़गलुल पाशा, शाहज़ादे जिनमें शाहज़ादा मुहम्मद अली भी थे, और देश के अनेक प्रतिष्ठित लोग वहाँ उपस्थित थे। हीरे जड़े प्यालों में मेहमानों को काफ़ी पेश की गई। भड़कीली वर्दियाँ पहने और लाल तुर्की टोपियों में सुनहरे झब्बे लगाये परिचारक बैरे बड़े सम्मानपूर्वक झुक कर मेहमानों को काफ़ी पिला रहे थे।

भोजन समाप्त होने पर, शाह महाराजा को प्राइवेट बातचीत के लिए अपने पढ़ने के कमरे में ले गये। महाराजा के प्राइवेट सेक्रेटरी सरदार मुहब्बत राय के साथ मुझको स्वागताधिकारी के दफ्तर में पहुँचाया गया जहाँ हम लोग महाराजा की वापसी का इन्तज़ार करने लगे।

हमारे ठीक सामने वह कमरा था जहाँ महाराजा शाह से बातचीत कर रहे थे। कमरे के दरवाज़े खुले हुए थे। उनकी बातचीत के दरमियान कुछ अजीब सी आवाज़ें, मानों कुत्ते भूँक रहे हों, उस कमरे से सुनाई पड़ने लगीं।

उन आवाज़ों को सुन कर उत्सुकतावश सरदार मुहब्बत राय ने स्वागता-धिकारी से पूछा कि इस समय जब कुत्ते कहीं आस-पास नज़र न आते थे,

पर कुत्तों के भूँकने की आवाजें कहाँ से आ रही थीं ? फिर, मुसलमान बादशाहों के महलों में कुत्तों को कहीं रखा जाता ? मुसलमान तो इन पशुओं को नजिस और नापाक मानते हैं ? सरदार के सवालात सुन कर उन अर्दलियों ने चुप्पी साध ली। सरदार फिर पकड़ गये और फिर पूछा। तब धीरे से उसने सरदार के कान में बतलाया कि यह आवाजें हिज मैजेस्टी शाह के सोने की आ रही थीं।

शाह की मुलाकात में करीब पन्द्रह मिनट लगे, तब तक यह आवाजें बराबर सुनाई देती रहीं। वापसी पर, जब हम लोग सेमीरामिस होटल में आ गये, तब महाराजा ने समझाया कि शाह के सोने पर कुत्तों के भूँकने जैसी आवाजें निकलती थीं। वजह यह थी कि कई साल पहले, हिज मैजेस्टी के गले का आपरेशन कराया था। तभी से सांस साफ करने के लिए जब वे खर्राटे या सोते थे, तब ऐसी अजीब आवाजें निकलती थीं।

शाह ने महाराजा को और मुझे "आर्डर आफ द नाइल" का खिताब दिया। महाराजा को मिस्र का सबसे बड़ा खिताब "मरवान हाशमी" प्राप्त करने की कामना थी। महाराजा ने मुझे आदेश दिया कि मैं मिस्र के विदेश-मंत्री से मिलूँ और बतलाऊँ कि महाराजा को जो खिताब दिया गया है, वह महाराजा की प्रतिष्ठा और मान-मर्यादा के आगे उपयुक्त नहीं है। यदि हिज मैजेस्टी उनको "आर्डर आफ मरवान हाशमी" प्रदान करें, तो महाराजा बहुत अनुगृहीत होंगे। मैंने महाराजा को समझाया कि इस प्रकार का दबाव डालना ठीक न होगा मगर महाराजा न माने और अपनी बात पर अड़े रहे।

लाचार होकर, मुझे मिस्र के विदेश मंत्री हिज एक्सीलेन्सी अब्दुल खालक पाशा से भेंट करनी पड़ी। वे पहले ही मेरी मुलाकात का प्रयोजन समझ गये थे क्योंकि पिछली रात को एक स्वागत-समारोह में महाराजा ने उनसे इसी विषय पर बातचीत की थी। फिर क्या था, उन्होंने मुझ से भारत, भारतीय नरेशों और रियासतों के बारे में बातचीत शुरू कर दी। उसके बाद भारत में अंग्रेजों के अत्याचार और अंग्रेज अफसरों द्वारा भारतीय नरेशों के अपमान का जिक्र छेड़ दिया।

मैं अपनी मुलाकात के मुख्य विषय पर बातचीत करने को बेताब हो रहा था पर वह चतुर विदेश-मंत्री मुझे मौका ही नहीं दे रहा था। वह लगातार अपनी कहता रहा कि अंग्रेजों ने किस तरह मिस्र के राजनीतिक जीवन में दखल दिया, उसने किस प्रकार उन्हें रोकने में सफलता पाई। यह जाहिर था कि विदेश-मंत्री असली बात को टाल कर वक्त बिता रहा था। आध घंटे बाद, अचानक उसने मेज के नीचे लगी हुई घंटी बजाई और फौरन तीन वर्दीधारी लाल टोपी वाले अफसर कमरे में दाखिल हुए।

इशारा काफी था। मुलाकात खत्म हो गई। मैं अपने मतलब की बात विदेश-मंत्री से कहने का मौका न पा सका. महाराजा को [illegible]

२१. आब्दीन महल में

कपूरथला नरेश महाराजा जगतजीत सिंह जब क़ाहिरा में थे, तब उन्होंने मिस्र के शाह फ़ऊद से विशेष भेंट की याचना की। शाह ने उनसे मुलाक़ात करना मंज़ूर किया और साथ ही उनको एक राजकीय भोज में सम्मिलित होने का निमंत्रण भी दिया। उस भोज में प्राइम मिनिस्टर मुस्तफ़ा जगलुल पाशा, वफ़्द के नेता, मंत्रिमंडल के सदस्य तथा दरबार के सर्वोच्च पदाधिकारी शामिल हुए जो राजकीय पोशाकें पहने और लाल टोपियाँ लगाये थे।

ब्रिटिश ए० डी० सी० 'पाशा' की उपाधि प्राप्त थे और उनका रंग कुछ अधिक गोरा होने के कारण ही अंग्रेज़ होना प्रकट करता था। प्रवेश-द्वार पर दरबार के मुख्य स्वागताधिकारी ने आगे बढ़ कर महाराजा को सम्मान दिया। बाद में, महाराजा को फ़ौजी सलामी दी गई। स्वागताधिकारी के साथ तब वे मुख्य हॉल में पहुँचे जहाँ राज्य के अन्य उच्चाधिकारियों से उनकी मुलाक़ात हुई। फिर वे ड्राइंग-रूम में ले जाये गये जहाँ शाह उनकी प्रतीक्षा कर रहे थे।

भोज में तरह-तरह के मिस्री व्यंजन परोसे गये और फ़्रांस की शराब पेश की गई। अपने ज़माने के अत्यन्त लोकप्रिय व्यक्ति और मिस्र के प्राइम मिनिस्टर जगलुल पाशा, शाहज़ादे जिनमें शाहज़ादा मुहम्मद अली भी थे, और देश के अनेक प्रतिष्ठित लोग वहाँ उपस्थित थे। हीरे जड़े प्यालों में मेहमानों को काफ़ी पेश की गई। भड़कीली वर्दियाँ पहने और लाल तुर्की टोपियों में सुनहरे झब्बे लगाये परिचारक बैरे बड़े सम्मानपूर्वक झुक कर मेहमानों को काफ़ी पिला रहे थे।

भोजन समाप्त होने पर, शाह महाराजा को प्राइवेट बातचीत के लिए अपने पढ़ने के कमरे में ले गये। महाराजा के प्राइवेट सेक्रेटरी सरदार मुहब्बत राय के साथ मुझको स्वागताधिकारी के दफ़्तर में पहुँचाया गया जहाँ हम लोग महाराजा की वापसी का इन्तज़ार करने लगे।

हमारे ठीक सामने वह कमरा था जहाँ महाराजा शाह से बातचीत कर रहे थे। कमरे के दरवाज़े खुले हुए थे। उनकी बातचीत के दरमियान कुछ अजीब सी आवाज़ें, मानों कुत्ते भूँक रहे हों, उस कमरे से सुनाई पड़ने लगीं।

उन आवाज़ों को सुन कर उत्सुकतावश सरदार मुहब्बत राय ने स्वागता-धिकारी से पूछा कि उस समय जब कुत्ते कहीं आस-पास नज़र न आते थे,

खड़ा हो गया और महाराजा का परिचय देने के लिए फ़्रेन्च भाषा में उसने कहा—"यौर मैजेस्टी ! हिज़ हाइनेस कपूरथला के महाराज, जिनकी रियासत उत्तरी-भारत में प्रसिद्ध है, आपको सलाम करने और अपनी शुभ-कामनायें भेंट करने पधारे हैं।" सुलतान ने कोई संकेत नहीं किया और गूंगे बने बैठे रहे।

जब रेज़ीडेण्ट कई बार भाषण कर चुका, तब दरबार के दुभाषिए ने त्यन्त धीमी आवाज़ में, जिसे सिर्फ सुलतान ही सुन पाते थे, उन भाषणों ा अनुवाद करके सुनाया। दुभाषिए की बात सुनने के पश्चात् सुलतान ने पना हाथ सफ़ेद लम्बे चोगे से बाहर निकाला, महाराजा से हाथ मिलाया और मस में रखी सोने की एक कुर्सी पर बैठने का इशारा किया।

सोने की दूसरी कुर्सी पर बैठने के पहले रेज़ीडेण्ट ने दरबारी मिनिस्टर की सियत से मेरा तथा अन्य अफसरों का परिचय सुलतान से कराया पर न तो म लोगों से बैठने को कहा गया और न सुलतान ने हमारी तरफ ध्यान ही या। परिचय का काम समाप्त करके रेज़ीडेण्ट फिर सुलतान के आगे कई ार झुका, फिर आ कर कुर्सी पर बैठ गया। महाराजा ने बातचीत शुरू की—"यौर मैजेस्टी ! मैं आपका अभिवादन करने आया हूं। आपकी राजधानी देख कर मैं चकित रह गया हूँ। मैं धन्यवाद देता हूँ उस महान् अतिथि-सत्कार के लिए जो आपने मेरा और मेरे और मुलाज़िमों का धूमधाम से किया।"

जवाब में सुलतान कुछ न बोले। दुभाषिए ने महाराज का वक्तव्य अनुवाद करके सुलतान को सुनाया। सुलतान ने अरबी भाषा में बड़े धीरे से कुछ कहा। दुभाषिए ने महाराजा को बतलाया कि सुलतान आपसे भेंट करके प्रसन्न हुए। इसके बाद वज़ीर तथा अन्य दरबारी, जो कतार बांधे वहाँ खड़े थे, बड़े अदब से सुलतान के आगे झुके और उनको सलाम किया। बस, समारोह की रस्म पूरी हो गई।

महाराजा ने झुक कर सुलतान का दाहिना हाथ हिलाया, जो लम्बे चोगे में मुश्किल से नज़र आता था। रेज़ीडेण्ट ने मुझसे कहा कि मैं भी आगे बढ़ कर सुलतान से हाथ मिलाऊँ लेकिन मेरी कोशिश का नतीजा यह निकला कि सिर्फ उनके चोगे को ही मैं छू सका।

रेज़ीडेण्ट कई दफा सुलतान के आगे झुका फिर दरबार की रस्म के अनुसार वह मुंह सामने किये धीरे-धीरे पीछे हटने लगा। जल्दी और घबराहट में पीछे हटते वक्त उसकी कमर-पेटी से बँधी तलवार टांगों के बीच में फँस गई और धड़ाम से फर्श पर गिर गया। सुलतान कुछ न बोले और न कोई रेज़ीडेण्ट की सहायता देने आगे बढ़ा। रेज़ीडेण्ट संभल कर उठा और दूसरी बार महाराजा के साथ हो लिया जो पहले ही कमरे से बाहर जा चुके थे। हम सब लोग, नंगी तलवारें लिए काले हब्शियों की कतारों के बीच से हो कर बाहर निकल गये। शाम को, वज़ीरे आज़म और मुख्य स्वागताध्यक्ष ने आ कर सुलतान की

२२. मोरक्को की सैर

'शरीफ़ वंश' के प्रधान होने के नाते, मोरक्को के सुलतान सांसारिक ह
में देश के शासक होने के अलावा मुसलमानों के आध्यात्मिक धर्म-नेता भी मा
जाते हैं । टर्की में ख़िलाफ़त की समाप्ति के बाद से मोरक्को के सुलतान समस
संसार के मुसलमानों के धर्म-नेता माने गये और इस्लाम धर्म के प्रधान क
हैसियत से पूजनीय बने ।

कपूरथला के महाराजा को मोरक्को के सुलतान मौले हाफ़िज़-ई-रबार
मुलाक़ात के लिए जाना एक बड़ी दिलचस्प घटना थी । मुलाक़ात की तारी
और वक़्त तय हो चुके थे । महाराजा की कार में फ़्रेन्च रेज़ीडेण्ट भी साथ बैठ
था । कार के दोनों तरफ़ घुड़सवार पलटन सुरक्षा के लिए चल रही थी । दूसर
कार में फ़्रेन्च रेज़ीडेण्ट के सहकारी अफ़सर, मैं और सुलतान के कुछ स्वागत
धिकारी बैठे थे । तीसरी कार में महाराजा के ए० डी० सी० सुलतान के कु
छोटे अफ़सरान थे । इस जलूस के पीछे कई मोटर गाड़ियाँ चल रही थी जिन
सुलतान के दरबारी और मुसाहब लोग थे ।

जैसे ही हम लोग सुलतान के महल के करीब पहुँचे, वैसे ही फ़्रेन्च रेज़ीडे
के अफ़सरों ने मना कर दिया कि हम ऊपर की तरफ़ नजर न डालें क्यों
सुलतान की रानी तथा हरम की दूसरी बेग़मात हमारे जलूस को देख रही थी
ऊपर की तरफ़ देखना राजकीय कूटनीति की दृष्टि से अवांछनीय और अनुचि
भी होगा ।

प्रवेश-द्वार से लेकर उस कमरे तक, जिसमें सुलतान से भेंट होनी थी, नं
तलवारें लिए काले हब्शियों की पलटन का पहरा था ।

फ़्रेन्च अफ़सरों के मना करने के अलावा ऊपर की तरफ़ देखने का हमा
इरादा इस ख्याल ने दिमाग से निकाल दिया कि अगर हमने ऊपर की तर
नजर उठाई तो नंगी तलवारें लिए हब्शी सैनिक फौरन हमारे सिर उड़ा देंगे ।

प्रवेश-द्वार पर सुलतान के प्रमुख स्वागताध्यक्ष अफ़सर ने हमारा अभिवाद
किया । हम उस कमरे में पहुँचाये गये जहाँ एक बड़े [illegible] के बी
सुलतान विराजमान थे । एक बगल में सोने की दो खाली कुर्सियाँ रखी थीं
हम लोगों के कमरे में दाखिल होने पर सुलतान एक शब्द भी न बोले । रेज़ी
[illegible] ने झुककर उनको सलाम किया पर सुलतान ने स्वीकृति में सिर भी न हि
[illegible] । सुलतान के आगे [illegible] दफ़ा झुकने के बाद रेज़ीडेण्ट सीधा [illegible]

खड़ा हो गया और महाराजा का परिचय देने के लिए फ़्रेन्च भाषा में उसने कहा—"यौर मैजेस्टी ! हिज़ हाइनेस कपूरथला के महाराज, जिनकी रियासत उत्तरी-भारत में प्रसिद्ध है, आपको सलाम करने और अपनी शुभ-कामनायें भेंट करने पधारे हैं ।" सुलतान ने कोई संकेत नहीं किया और गूँगे बने बैठे रहे ।

जब रेज़ीडेन्ट कई बार भाषण कर चुका, तब दरबार के दुभाषिए ने अत्यन्त धीमी आवाज़ में, जिसे सिर्फ़ सुलतान ही सुन पाते थे, उन भाषणों का अनुवाद करके सुनाया । दुभाषिए की बात सुनने के पश्चात् सुलतान ने अपना हाथ सफ़ेद लम्बे चोगे से बाहर निकाला, महाराजा से हाथ मिलाया और पास में रखी सोने की एक कुर्सी पर बैठने का इशारा किया ।

सोने की दूसरी कुर्सी पर बैठने के पहले रेज़ीडेन्ट ने दरबारी मिनिस्टर की हैसियत से मेरा तथा अन्य अफ़सरों का परिचय सुलतान से कराया पर न तो हम लोगों से बैठने को कहा गया और न सुलतान ने हमारी तरफ़ ध्यान ही दिया । परिचय का काम समाप्त करके रेज़ीडेन्ट फिर सुलतान के आगे कई बार झुका, फिर आ कर कुर्सी पर बैठ गया । महाराजा ने बातचीत शुरू की—"यौर मैजेस्टी ! मैं आपका अभिवादन करने आया हूँ । आपकी राजधानी देख कर मैं चकित रह गया हूँ । मैं धन्यवाद देता हूँ उस महान् अतिथि-सत्कार के लिए जो आपने मेरा और मेरे और मुलाज़िमों का धूमधाम से किया ।"

जवाब में सुलतान कुछ न बोले । दुभाषिए ने महाराज का वक्तव्य अनुवाद करके सुलतान को सुनाया । सुलतान ने अरबी भाषा में बड़े धीरे से कुछ कहा । दुभाषिए ने महाराजा को बतलाया कि सुलतान आपसे भेंट करके प्रसन्न हुए । इसके बाद वज़ीर तथा अन्य दरबारी, जो कतार बाँधे वहाँ खड़े थे, बड़े अदब से सुलतान के आगे झुके और उनको सलाम किया । बस, समारोह की रस्म पूरी हो गई ।

महाराजा ने झुक कर सुलतान का दाहिना हाथ हिलाया, जो लम्बे चोगे में मुश्किल से नज़र आता था । रेज़ीडेन्ट ने मुझसे कहा कि मैं भी आगे बढ़ कर सुलतान से हाथ मिलाऊँ लेकिन मेरी कोशिश का नतीजा यह निकला कि सिर्फ़ उनके चोगे को ही मैं छू सका ।

रेज़ीडेन्ट कई दफ़ा सुलतान के आगे झुका फिर दरबार की रस्म के अनुसार वह मुँह सामने किये धीरे-धीरे पीछे हटने लगा । जल्दी और घबराहट में पीछे हटते वक़्त उसकी कमर-पेटी से बँधी तलवार टाँगों के बीच में फँस गई और धड़ाम से फ़र्श पर गिर गया । सुलतान कुछ न बोले और न कोई रेज़ीडेन्ट को सहायता देने आगे बढ़ा । रेज़ीडेन्ट सँभल कर उठा और बढ़ कर महाराजा के साथ हो लिया जो पहले ही कमरे से बाहर जा चुके थे । हम सब लोग, नंगी तलवारें लिए काले हब्शियों की क़तारों के बीच से हो कर बाहर आये । शाम [illegible] पाशा और मक्र [illegible] ने आ कर

ओर से कई तमगे महाराजा के तथा मेरे सीने पर लगा दिये और दरबारी रस्म अदा की ।

सुलतान की मृत्यु के बाद उनका बेटा सीदी मोहम्मद-बिन-यूसुफ़ मोरक्को के तख्त पर बैठा । राष्ट्रीय आन्दोलन की तरफ़ झुकाव के कारण उसे तख्त से उतार दिया गया । तब उसके चचा मौले मोहम्मद-बिन-आरफ़ जो ७२ साल के थे, तख्तनशीन हुए । सीदी मोहम्मद को जलावतन करके कार्सिका भेज दिया गया । वह अपने साथ दो बीवियाँ और सात खूबसूरत रखेलें ले गया ।

२३. ब्राज़ील में फ़ील्ड मार्शल

ब्यूनस आयर्स एक खूबसूरत आधुनिक नगर है जहां शानदार इमारतें और चिकनी साफ़-सुथरी सड़कें है। यूरोप के सबसे अच्छे शहरो की तरह, यहाँ की मशहूर चौड़ी सड़कों पर गगनचुम्बी इमारतें और सुन्दर, बेहद लम्बे-चौड़े चौराहे हैं जो बड़े आकर्षक लगते हैं। ऐसी ही एक जगह 'अविनेदा-डेल मायो' है जो बहुत प्रसिद्ध है। दूसरी तरफ कुछ तग, संकरे रास्ते हैं जिनके दोनो तरफ दूकानें हैं। वहां बड़ी भीड़ रहती है। दूकानो पर एक से एक अच्छी चीजें, कलापूर्ण वस्तुएं, जो यूरोप के नगरो से मँगाई जाती हैं, मिलती हैं। वहां खरीदारों का जमघट लगा रहता है। भीड़ की वजह से आवागमन रुक जाता है। ट्राम की पटरियों ने रास्ते को और भी संकुचित कर दिया और रास्ता चलनेवाले बहुत सँभाल कर उधर आने-जाते हैं। व्यापारिक केन्द्रो मे प्राय: सभी जगह यही हालत रहती है।

व्यापारिक सुगमता के विचार से इन तंग रास्तो पर ४ बजे शाम से ७ बजे रात तक पहियोंवाली गाड़ियो का आना-जाना बन्द कर दिया गया है। अविनिदा अलुविअर, जो ब्यूनस आयर्स की सबसे सुन्दर बस्ती है, दोनो तरफ भव्य ऊँचे महलो और कलापूर्ण इमारतों से अलकृत है। वहाँ थोड़ी-थोडी दूर पर फ़ौव्वारे हैं जो सुन्दरता मे अपना सानी नही रखते।

दक्षिण अमेरिका के देशो में कपूरथला नरेश महाराजा जगतजीत सिंह अपनी विश्व-भ्रमण यात्राओं के लिए विख्यात तो थे ही, साथ ही, स्पेन देश की एक सुन्दरी से विवाह करने की वजह से और भी प्रसिद्ध हो गये थे। उन स्पेनिश महारानी से उनके एक पुत्र भी था—महाराजकुमार अजीत सिंह—जो एक अच्छे खिलाडी और सच्चरित्र युवक थे। महाराजा बड़ी सुगमता से स्पेनिश बोलते और पढ लेते थे। उनके अनेक दक्षिण अमेरिकन दोस्त थे जिनसे यूरोपीय यात्राओं मे उनका परिचय हुआ था। वे अनेक बड़े-बड़े व्यापारियों और उद्योगपतियो को जानते थे। राजनीतिक पार्टियों के नेताओं से भी उनकी घनिष्ठता थी। ये लोग रियासत की राजधानी मे महाराजा से भेंट करने आया करते थे। महाराजा उनकी दिल खोल कर खातिरदारी करते थे। मेहमान-नवाज़ी में महाराजा बड़े उदार थे अतएव जो उनके यहाँ एक दफा मेहमान बनता, वही उनको चाहने लगता था।

लन्दन की टामस कुक ऐण्ड सन्स नामक कम्पनी के चेयरमैन से मेरा

बहस होने के बाद महाराजा की दक्षिण अमेरिका के देशों की यात्रा का प्रोग्राम बनाया गया। यह यात्रा ब्राज़ील से प्रारम्भ होकर पश्चिम में पनामा नहर और क्यूबा, दक्षिणी अमेरिका के उत्तरी भागों, और चिली तक की निश्चित हुई। प्रोग्राम निम्नलिखित था—

मार्ग-सूची

१९२५

जुलाई २५	बोर्डो से रवानगी, फ़्रेंच लाई सुड ऐटलांटिक एस० एस० लुटेशिया
जुलाई २६	ठहरना वीगो, स्पेन
जुलाई २७	ठहरना लिस्बन, पुर्तगाल
अगस्त ८	पहुँचना रायो द' जनेरियो, ब्राज़ील
अगस्त ८-११	रायो द' जनेरियो में, होटल ग्लोरिया
अगस्त ११	रवानगी रायो द' जनेरियो से साओ पाओलो, ब्राज़ील
अगस्त १२	साओ पाओलो, होटल कपलानादा
अगस्त १४	रवानगी सैंटास, ब्राज़ील, ज़रिये ब्रिटिश रायल मेल स्टीम पैकेट क० का 'डेसना'
अगस्त १८	पहुँचना ब्यूनस आयर्स, अर्जेन्टाइना प्रजातन्त्र
अगस्त १९ से सितम्बर १	ब्यूनस आयर्स में, माण्टी विडो, युरागुआ और इगुआज़ू जल-प्रपात भ्रमण, होटल प्लाज़ा, ब्यूनस आयर्स
सितम्बर २	ब्यूनस आयर्स से रवानगी ९ बजे सुबह ट्रैन्सन्डाइन रेलवे, ऐण्डीज़ पर्वत पार—ऊँचाई १३,०८२ फ़ीट
सितम्बर ३	पहुँचना सैन्टिआगो द' चिली, ११-२० रात होटल सवाय
सितम्बर ४	सैन्टिआगो द' चिली में
सितम्बर ५	रवानगी, वालपरायसो, चिली, ब्रिटिश पैसिफ़िक स्टीम नैविगेशन एस० एन० ओराागा
सितम्बर ७	ठहरना एन्टोफ़गास्ता, चिली
सितम्बर ८	ठहरना मेजोलिनीज़, चिली
सितम्बर ९	ठहरना ईक्वीक, चिली
सितम्बर ९	ठहरना अरीका, चिली
सितम्बर १०	ठहरना मोलेन्डो, पेरू
[illegible] १२	ठहरना कलाओ, पेरू
[illegible] १८	ठहरना बालबोआ, पनामा कैनाल ज़ोन
[illegible] १९	ठहरना क्रिस्टोबल (कोलोन), पनामा कैनाल ज़ोन
[illegible] २३	पहुँचना हवाना, क्यूबा, होटल [illegible]

सितम्बर २५ रवानगी हवाना, क्यूबा, अमेरिकन स्टीमर, यूनाइटेड फ्रूट कम्पनी का एस० एस० कलामेयर्स
सितम्बर २७ पहुँचना न्यूयार्क, यूनाइटेड स्टेट्स आफ़ अमेरिका
सितम्बर २८ से अक्तूबर २ न्यूयार्क में, यू० एस० ए०, होटल प्लाज़ा
अक्तूबर ३ रवानगी, न्यूयार्क, यू० एस० ए० फ्रेंच लाईन, जेनरल ट्रान्स-अटलांटिक एस० एस० फ्रान्स
अक्तूबर १० पहुँचना, हाव्रे, फ्रान्स

ब्यूनस आयर्स से सैन्तियागो द' चिली जाते समय लॉस ऐन्डीज़ पर्वत को पार करना एक विलक्षण अनुभव था। रेलवे ट्रेन बर्फ से ढके पहाड़ों को काटती हुई निकलती है तब वह दृश्य संसार में सबसे अनोखा प्रतीत होता है। इंजन में आगे लगे हुए बर्फ काटने के यन्त्र रेलवे लाइन के दोनों तरफ बर्फ काटते जाते हैं और ट्रेन उस प्रदेश के सर्वोच्च पर्वत पर चढ़ती उतरती आगे बढ़ती जाती है।

प्रत्येक पहाड़ी स्टेशन पर उस प्रदेश के निवासियों ने महाराजा का बड़े उत्साह से स्वागत किया। उन्होंने महाराजा और उनके साथ के लोगों को हाथ की बुनी अनेक चीज़ें भेंट में दी जो दक्षिण अमेरिका यात्रा के चिह्न स्वरूप अब तक सुरक्षित रखी है।

अर्जेन्टाइना प्रजातन्त्र के राष्ट्रपति डॉक्टर मार्सेलो द' अलुवियर असाधारण योग्यता के व्यक्ति थे। उन्होंने अपने महल लॉ कॉर्मा रोसादा में महाराजा का बड़ी धूमधाम से स्वागत किया। स्वतन्त्रता दिवस के उपलक्ष्य में राष्ट्रपति के सैनिक अभिवादन के बाद हज़ारों व्यक्तियों ने, जो सैनिक परेड देखने आये थे, महाराजा की मोटर को घेर लिया और अपनी बोली में महाराजा की जयजयकार करते हुए ज़ोर-ज़ोर से 'बॉइवॉ महारजकों' कह कर चिल्लाने लगे।

दक्षिण अमेरिका के लोग भारत के इतिहास और भारतीय रियासतों के बारे में बहुत कम जानकारी रखते हैं। वे सिर्फ़ इतना समझते थे कि कपूरथला के महाराजा भारत से आये हुए एक बादशाह हैं और राजसी प्रतिष्ठा के अनुकूल उनका स्वागत करना चाहिए। महाराजा अपने साथ तमाम अफसरों को ले गये थे जिनमें बड़ी भड़कीली पोशाक पहने सफेद दाढ़ीवाला एक सिक्ख भी था। उसको देखने के लिए लोगों की भीड़ लग जाती थी क्योंकि अपनी ज़िन्दगी में उन्होंने किसी सिक्ख भद्र पुरुष को पहले कभी न देखा था।

एक दफा अर्जेन्टाइना प्रजातन्त्र के राष्ट्रपति द्वारा आयोजित ओपेरा महाराजा [illegible] थे। दर्शकों ने कई मिनट तक महाराजा का [illegible]

किया मगर उनकी नजरें विशेषरूप से उस सफेद दाढ़ी वाले सिक्ख पर लगी थीं जो आम तौर पर ऐसे समारोहों में महाराजा के साथ रहता था। ओपेरा समाप्त होने पर उस सिक्ख का, जिसका नाम इन्दर सिंह था, दर्शकों की भारी भीड़ ने थियेटर के भीतर और बाहर ऊँचे स्वर में जयजयकार किया। मर्द, औरतें और बच्चे तो सिक्ख की लम्बी सफ़ेद दाढ़ी देख कर मगन थे ही पर उसकी सुनहले पट्टे वाली पगड़ी, ज़री के काम की पोशाक, सफ़ेद रेशम की शलवार, और रेशमी जूते देखकर कुत्ते भी, जिन्हें लोग अपनी गोद में लिए थे, आश्चर्यचकित होकर देख रहे थे। कुछ कुत्ते सरदार इन्दर सिंह को देख कर खुशी से उछल रहे थे। सरदार भी अर्जेन्टाइना की जनता द्वारा स्वागत-सम्मान पाकर प्रसन्न था और सबसे अधिक हर्ष उसे इस बात का था कि बेजुबान जानवरों तक ने उसे मान दिया था।

महाराजा ने कुछ दिन पहले से मुझे ब्यूनस आयर्स भेज दिया था जिससे अर्जेन्टाइना की सरकार द्वारा महाराजा के स्वागत की व्यवस्था पूरी करा सकूँ।

मैं माण्टीविडिओ से स्टीमर पर रवाना हुआ और कई दिनों की यात्रा करके ब्यूनस आयर्स के बन्दरगाह तक पहुँचा। देखता क्या हूँ—तमाम पत्रकार, फ़ोटोग्राफ़र और कैमरामैन मेरे स्वागत के लिए मौजूद हैं। मैं डेक पर खड़ा हुआ स्टीमर के किनारे लगने का इन्तजार कर रहा था, मेरे हाथ में एक छोटी सी छड़ी थी जिसकी मूठ सोने की थी। हिज हाइनेस नवाब रामपुर से वह छड़ी मुझे उपहार में मिली थी। अगले दिन सवेरे ब्यूनस आयर्स के तमाम अखबारों में छप गया कि *फ़ील्ड मार्शल सरदार जर्मनी दास ब्यूनस* आयर्स पधारे हैं और उनके हाथ में फ़ील्ड मार्शल का पद-सूचक "बैटन" है। वह कपूरथला राज्य के मिनिस्टर भी हैं। इसके बाद, जहाँ-जहाँ मैं गया, लोगों ने मेरा भव्य स्वागत किया। सौभाग्य से किसी ने मुझ से यह न पूछा कि कपूरथला की सेना कितनी है क्योंकि सैनिक और अफ़सर सब मिला कर कुल एक हजार आदमी सेना में थे।

तमाम सुन्दर महिलायें मेरा पीछा करतीं, मुझे घूर घूर कर देखतीं, बातें करतीं और बड़ी रात तक मेरे पास बैठी रहतीं। इसका कारण मेरा सद्व्यवहार और हृष्ट-पुष्ट शरीर न था बल्कि सैनिक पद का परिचायक फ़ील्ड मार्शल का बैटन—वह सोने की मूठवाली छड़ी थी जो मैं अपने साथ रखता था। मैंने अखबारों की खबर का प्रतिवाद नहीं किया, इस ख्याल से कि वहाँ के लोगों को निराशा होगी। मुझे अनेक पत्र और तार बड़े ऊँचे घरानों की [illegible] से प्राप्त हुए, जिनमें सामान्य शिष्टाचार की आड़ में प्रेम-निवेदन [illegible]।

[illegible] अर्जेन्टाइना के लोग कट्टर रूढ़िवादी हैं। यूरोप के देशों के [illegible] [illegible] है। अर्जेन्टाइना में किसी विवाहित स्त्री को साथ लेकर

चलना कठिन है परन्तु अविवाहिता लड़कियाँ अजनबी लोगों के साथ डिनर, चाय वगैरह खाती-पीती हैं और कभी-कभी उनके साथ रविवार व्यतीत करने चली भी जाती हैं। पुरुष बड़े ईर्ष्यालु होते हैं और अपनी पत्नियों पर निगाह रखते हैं। विवाहित पुरुषों में स्त्रियों के पीछे द्वन्द्व युद्ध की नौबत भी आ जाती है जिसमें दो-चार जानें चली जाती हैं। इतना सब होते हुए भी, विवाहिता स्त्रियाँ विदेशियों के पीछे पागल रहती हैं यद्यपि ऐसे प्रेमालापों का परिणाम विदेशियों की जान का खतरा ही होता है।

उन दिनों इंग्लैंड के युवराज, जो बाद में बादशाह एडवर्ड अष्टम हुए, अर्जेन्टाइना सरकार के अतिथि थे, उनको जब पता चला कि ब्रिटेन के शासन में भारत की एक छोटी रियासत के मिनिस्टर का यहाँ इतना भव्य स्वागत-सम्मान हुआ तो उनको बुरा लगा और वे चिढ़ भी गये।

२४. पगड़ियाँ और दग़ा

राजपूताने की धौलपुर रियासत के महाराजा राणा सर रामसिंह, के० सी० आई० ई०, जिनको हिज़ मैजेस्टी इंग्लैंड के बादशाह की सेना में कप्तान का अवैतनिक पद प्राप्त था, जब नहीं रहे, तब उनके भाई हिज हाईनेस रईसुद्दौला, सिपहदारुलमुल्क, राज-ए-हिन्द, महाराजाधिराज श्री सवाई महाराजा राणा लोकेन्द्र बहादुर, दिलेरजंग, देव उदयभान सिंह, जी० सी० आई० ई० राजसिंहासन पर बैठे।

महाराजा राणा ने अपनी बेटी का विवाह महाराजा नाभा से किया जो पटियाला नरेश भूपेन्दर सिंह के निकट सम्बन्धी थे। महाराजा धौलपुर के पिता और पटियाला नरेश के पिता ने आपस में पगड़ियाँ बदल कर भाई का रिश्ता कायम किया था और उनमें आपस में बड़ा स्नेह था। भारत में पगड़ियों की अदला बदली दो व्यक्तियों के परस्पर स्नेह और घनिष्टता का पवित्र बन्धन माना जाता है। पगड़ी बदलने की रस्म बहुत पुरानी है। ईरान के बादशाह नादिरशाह ने चालाकी से मुगल बादशाह मुहम्मद शाह से पगड़ियाँ बदल कर मशहूर कोहेनूर हीरा पाया था।

भाईचारा क़ायम करने की दो रस्में हुआ करती थीं। एक तो थी—पगड़ियाँ बदल कर और दूसरी थी कमर तक पानी में खड़े होकर, सूरज की तरफ़ देखते हुए एक-दूसरे के हाथ से पानी पीने की। इन रस्मों को पूरा करके कोई भी दो व्यक्ति आपस में एक दूसरे के भाई बन जाते थे और मरते दम तक यही नाता निभाते थे। धौलपुर के महाराजा राणा हालांकि महाराजा पटियाला के निकट सम्बन्धी थे मगर हमेशा उनको राजनीतिक और पारिवारिक मामलों में नुक़सान पहुँचाने की सोचा करते थे। भूपेन्दर सिंह उनके चचेरे भाई लगते थे मगर इस रिश्ते को भुला कर महाराजा राणा धौलपुर ने उनके खिलाफ़ बदनामी और नफ़रत का आन्दोलन चलाया जब कि वे चेम्बर ऑफ़ प्रिन्सेज़ के चैम्सलर पद के लिए चुनाव में खड़े हुए। महाराजा धौलपुर चुनाव में हार गये मगर पटियाला नरेश के खिलाफ़ उन्होंने राजनीतिक निन्दा का कार्यक्रम जारी रखा। इस काम में भारत सरकार, ब्रिटिश रेज़ीडेन्ट तथा पोलीटिकल एजेन्टों ने उनकी मदद भी की क्योंकि इन लोगों की नीति थी कि महाराजा पटियाला की बढ़ती हुई प्रतिष्ठा और शक्ति पर अंकुश लगाया जाय। भूपेन्दर सिंह बड़े चतुर और बुद्धिमान शासक थे अतएव उनके सभी

भाई महाराजा धौलपुर को हर जगह नीचा देखना पड़ता था।

जितनी बार महाराजा धौलपुर ने महाराजा पटियाला को चुनौती दी, उतनी ही बार वे परास्त हुए और इन झगड़ों में उन्हीं को अपमान सहना पड़ा। उनका राजनीतिक जीवन अब खत्म होने के करीब था, तब उन्होंने कहना शुरू किया कि वही अकेले शासक थे जो राजे-रजवाड़ों की प्रतिष्ठा और अधिकारों की रक्षा कर सकते थे। उन्होंने राष्ट्रीय कांग्रेस और उदार दल तथा अन्य पार्टियों का विरोध करके रजवाड़ों का एक संघ बनाने की भी चेष्टा की।

महाराजा धौलपुर सोचते थे कि अगर सभी रजवाड़े एक हो जायें तो देश की राजनीतिक उन्नति को रोक कर एक शक्तिशाली इकाई के रूप में वे भारतीय राजनीति को मनमाना मोड़ दे सकते हैं। यह युक्ति चातुर्यपूर्ण और रजवाड़ों के हित में थी मगर इसका भंडाफोड़ हो गया। भारत के बुद्धिमान राजनीतिज्ञों और नेताओं ने खुल कर इसका विरोध किया और असमय ही इसका अन्त हो गया।

इंग्लैंड के बादशाह की सहानुभूति और सहायता प्राप्त करने के विचार से धौलपुर नरेश ने वहाँ के प्रधान मंत्री मिस्टर स्टैनली बाल्डविन को बादशाह एडवर्ड अष्टम और मिसेज सिम्पसन के विवाह के सम्बन्ध में एक तार भेजा।

महाराजा ने यह तर्क सामने रखा कि भारत के सभी राजे-महाराजे उस विवाह-सम्बन्ध का अनुमोदन करते हुए ब्रिटिश सरकार से निवेदन करते हैं कि इस विषय में कोई विरोधी रुख न अपनाये अन्यथा वह भारतीय नरेशों की सहानुभूति, सहायता और निष्ठा खो बैठेगी। मिस्टर बाल्डविन पहले ही पार्लमेंट के 'हाउस आफ़ कामन्स' में कह चुके थे कि बादशाह की पत्नी की स्थिति देश के किसी नागरिक की पत्नी की स्थिति से भिन्न है। बादशाह की पत्नी देश की रानी बनती है अतएव रानी का चुनाव करने में जनता की रुचि पर भी ध्यान दिया जाना चाहिए।

जब बाल्डविन ने महाराजा के उस तार का मजमून पढ़ा जो चैम्बर ऑफ़ प्रिन्सेज़ की स्वीकृति के बिना भेजा गया था, तो वे बहुत झुँझला उठे। उन्होंने वह तार भारतीय राज्य-सचिव के पास भेजा जिसने उसको भारत के वायसराय के पास रवाना कर दिया।

वायसराय ने इस बात पर सख्त एतराज़ किया कि महाराजा ने सीधे वह तार इंग्लैंड के प्रधान मंत्री को कैसे भेजा। इस पर, बकिंघम पैलेस के घरेलू मामले में तथा हिज़ मैजेस्टी की सरकार की शासन-नीति में हस्तक्षेप करने के लिए महाराजा ने वायसराय से माफ़ी माँगी। चूँकि महाराजा की वायसराय और राजनीतिक विभाग के अफ़सरों से ख़ासी दोस्ती थी, और जीवन भर वे ब्रिटिश सरकार के पिट्ठू रहे थे, इसलिए भारत सरकार ने उनके खिल...

कार्रवाई नहीं की। राजाओं की सत्ता समाप्त होने तक महाराजा भारत के राष्ट्रीय आन्दोलन के खिलाफ़ साजिशें करते रहे और सदा जनता की आवाज को दबाते रहे। देश स्वतन्त्रता प्राप्त कर ले—यह बात वे सहन न कर सकते थे। उन्होंने अपनी पूरी शक्ति लगा कर स्वतन्त्रता आन्दोलन को बढ़ने से रोका, जितना भी वे रोक सके।

अन्त में उनकी साज़िशों का पर्दा फ़ाश हुआ। भूपाल के शासक हिज़ हाईनेस नवाब हामिदुल्ला महमूद और उनके ख़ास मददगार चैम्बर आफ प्रिन्सेज़ के सेक्रेटरी मीर मक़बूल अहमद के साथ महाराजा का गुप्त रूप से पत्र-व्यवहार चल रहा था कि भारत की राजनीतिक समस्याओं को देखते हुए अगर राजे-महाराजे मिल कर एक स्वतन्त्र निजी साम्राज्य की स्थापना कर लें तो वे जनता की राष्ट्रीय भावनाओं को कुचल सकेंगे और सम्पूर्ण भारत पर भी अधिकार कर सकेंगे। भारत सरकार को इस षड्यंत्र की जानकारी हो गई।

महाराजा धौलपुर अपने को भारत का विक्रमादित्य कहते थे। उनके निजी दोस्त और आम जनता इस मूर्खता पर हँसती थी। एक रोज़ सुबह जब वे सोकर उठे, तब उनको पता चला कि अब वे रियासत के शासक नहीं रह गये और उनके महल भारत सरकार की जायदाद बन गये हैं। उनकी प्रिवी पर्स की रक़म घटा दी गई और रहने के लिए उनको एक मकान दे दिया। उनके प्रिय महलों और शिकारगाहों पर भारत सरकार ने क़ब्ज़ा कर लिया, जहाँ सार्वजनिक संस्थायें खोल दी गईं।

२५. रामप्यारी का दुःखद अन्त

धौलपुर नरेश महाराजा उदयभान सिंह की राजधानी से पाँच मील के फ़ासले पर बड़ी मनोहर प्राकृतिक छटा लिये हुए एक झील थी जिसे 'ताल-शाही' या राजा का तालाब कहा जाता था। महाराजा को वह जगह बहुत पसन्द थी और वे अक्सर बत्तखों का शिकार करने वहाँ जाया करते थे। झील के आसपास जंगल में चीते और तेंदुएँ वगैरह पले हुए थे। महाराजा मोटर-बोट में बैठ कर झील में जाते और अपने हाथ से उन जंगली जानवरों को खाना खिलाते थे जो किनारे आकर इकट्ठे हो जाते थे। ताल-शाही को मुगल बादशाह शाहजहाँ ने करीब तीन-सौ साल पहले बनवाया था।

झील के चारों तरफ संगमरमर और सीमेन्ट के लम्बे चौड़े बरामदे कई मील के घेरे में बने हुए थे। झील में बरसात का पानी तो रहता ही था उसके अलावा अनेक नहरों पर बंधियाँ बना कर उनका पानी झील में भरा जाता था।

यह मसनूई तालाब करीब दस मील के घेरे में है और बत्तखों के शिकार की मशहूर जगह है। महाराजा राणा अनेक राजा-महाराजाओं; विदेशी शासकों, भाई-बन्धुओं और अन्य प्रतिष्ठित व्यक्तियों को इसी जगह शिकार खेलने का निमंत्रण दिया करते थे। यहाँ उनके स्वागत्-सत्कार का अच्छा इन्तजाम किया जाता और बत्तखों के शिकार की सुविधायें भी सुलभ होती थीं। मेहमान लोग यहाँ आसानी से बहुत सी बत्तखें मार लेते थे क्योंकि इस तालाब में बड़े वैज्ञानिक ढंग से बत्तखें पाली जाती थीं और एक उड़ान में एक से डेढ़ हज़ार तक बत्तखें उड़ती थीं। उनके अलावा पास-पड़ोस के इलाकों से भी झुण्ड की झुण्ड बत्तखें आकर तालाब में रहने लगती थीं क्योंकि उनको बधा गुथा चारा यहाँ मिल जाता था। चिड़ियों की हिफ़ाज़त के ख्याल से तालाब के बीच में कई दरख्त भी लगाये गये थे।

जब कभी प्रतिष्ठित मेहमान शिकार के लिए आमन्त्रित होते, तब तालाब से बत्तखों को छेड़ कर उड़ाया जाता। ये महाराजा व मेहमानों की तरफ उड़ कर आतीं, उसी वक़्त मेहमान लोग गोलियाँ चलाते और हर गोली से ५-१० बत्तखें नीचे आ गिरतीं।

इसी से अन्दाजा लगाया जा सकता है कि दिन भर के शिकार में हर मेहमान कितनी बत्तखों का शिकार करता होगा। रात होने पर, बरामदों में अलग-अलग बिखरे हुए सारे मेहमान बीच के बड़े हॉल में इकट्ठे होते जहाँ जायकेदार

खाने की वस्तुओं के साथ उनको शराब पिलाई जाती। डिनर के साथ और बाद में भी, मेहमानों को अच्छी से अच्छी फ्रान्स की बनी व्हिस्की और ब्राण्डी दिल खोल कर पेश की जाती।

आम तौर पर ऐसी पार्टियों में मेहमान लोग अपनी महिला-मित्रों और चहेतियों को साथ लाते थे। अंग्रेज़ रेज़ीडेन्ट भी, जो अपने प्रेम-प्रसंगों में हिन्दुस्तानियों से अलग रहा करते थे, ऐसी पार्टियों में मौज में आ जाते और अपने दोस्तों की बीवियों व लड़कियों को, जिनसे उनका प्रेम-सम्बन्ध होता, ज़रूर अपने साथ लाते। ये पार्टियाँ एक हफ़्ते से ज्यादा समय तक चला करतीं और उनकी समाप्ति पर सभी मर्द-औरतें तन-बदन से और कामुकता की दृष्टि से थके-माँदे जान पड़ते।

महाराजा कभी शराब नहीं पीते थे। वे केवल कुछ दवाइयाँ सूँघा करते थे जो एक प्राइवेट कमरे में छिपा कर रखी रहती थीं। इस बात को सिर्फ़ उनका प्रिय ए० डी० सी० तिरनार सिंह ही जानता था। बातों-बातों में अक्सर महाराजा कह जाते थे कि उनको औरतों से नफ़रत है और उन्हें अपनी पत्नी की भी परवाह नहीं।

मगर जब वे ताल-शाही की पार्टियाँ होतीं, तब महाराजा अपनी एक बाँदी रामप्यारी को आगरे से चुपचाप बुलवा लेते। बहुत फ़ासले पर महाराजा का एक बँगला था जहाँ शिकार के बाद महाराजा चले जाते थे, यह ज़ाहिर करने के लिए कि तालशाही के शानदार महल में रहने की बनिस्बत उनको सादी सजावट के एक बँगले की शान्त और एकान्त ज़िन्दगी पसन्द है। उसी बँगले में रामप्यारी से उनकी मुलाक़ातें हुआ करती थीं।

असलियत यह थी कि रामप्यारी की ख़ातिर ही महाराजा उस सुनसान बँगले में जा कर रहते थे। वह सारे दिन उसी बँगले के कमरों में छिपी रहती थी। उसे न किसी से मिलने की इजाज़त थी और न बँगले से बाहर जाने की।

धौलपुर के महाराजा की कमज़ोरी थी—सादे लिबास में रहने वाली बाँदियाँ—चाहे वे शादीशुदा हों या क्वाँरी। जहाँ उनकी नज़र किसी बाँदी पर पड़ी, चाहें वह जवान हो या बूढ़ी, ख़ूबसूरत हो या बदसूरत, उसको सादे कपड़ों में देखते ही उनकी कामवासना जाग उठती थी। उस वक्त महाराजा अपने तन-मन को काबू में नहीं रख पाते थे जिसका नतीजा ख़राब होता था। एक दफ़ा वे महाराजा भूपेन्दर सिंह के मेहमान बन कर काँडाघाट गये हुए थे। वहाँ बागू नाम का एक ख़िदमतगार था। उसकी बीबी फगनी बाँदी का काम करती थी। महाराजा धौलपुर ने एक रोज फगनी को अकेले में पकड़ लिया। बड़ी मुश्किल से यह मामला दबाया जा सका।

जाड़े की रात थी। सर्दी कड़ाके की थी। रामप्यारी ने ठण्ड से बचने के लिए अपने कमरे में कोयले की अँगीठी सुलगा कर रख ली। चूँकि महाराजा हुक्म था, इसलिए वह कमरे की खिड़कियाँ और दरवाज़े बन्द रखती थी।

कोयलों का धुआँ कमरे के अन्दर भरता रहा। रामप्यारी का दम घुटने लगा और वह बेहोश हो गई। जब महाराजा ने आ कर दरवाजे का ताला खोला तो देखा कि रामप्यारी बेहोश पड़ी है। पहले तो महाराजा ने यह वाक्या छिपाना चाहा मगर जब देखा कि कोशिश के बावजूद उसे होश में लाना मुश्किल हो रहा है, तब उन्होंने महल के डाक्टर को बुलवाया जो उस वक़्त ताल-शाही में दोस्तों के साथ बैठा हुआ शराब पी रहा था।

जैसे ही महाराजा की प्राइवेट मोटर डाक्टर को ले कर बँगले पर वापस आई त्योंही महाराजा आगे बढ़ कर डाक्टर से मिले हालांकि यह दस्तूर के खिलाफ़ बात थी। मोटर से उतरते ही डाक्टर के कान में महाराज ने कुछ बात कही। फिर डाक्टर को उस कमरे में ले जाया गया जहाँ रामप्यारी बेहोश पड़ी थी।

उस जवान लड़की की हालत देख कर डाक्टर के होश उड़ गये। उसने महाराजा से कहा कि बन्द कमरे में, जिसमें हवा जाने की गुंजाइश तक नहीं, अँगीठी जला कर एक औरत को कैद कर रखना परले सिरे की बेरहमी है। महाराजा ने काफी रिश्वत देने का वायदा करते हुए डॉक्टर से मामले को जाहिर न करने का वायदा ले लिया। डाक्टर ने बड़ी कोशिश की मगर वह रामप्यारी की जान न बचा सका। बात लाख छिपाने पर भी न छिप सकी। तालशाही में हलचल मच गई। महाराजा ने भरसक कोशिश की कि वह वाक्या पोशीदा रहे मगर लोगों को पता चल गया और उनकी बदनामी होने लगी।

तालशाही में ठहरे हुए मेहमानों को भी खबर लग चुकी थी। महल का डॉक्टर, जो मोटा और खुशमिजाज था, महाराज की बेरहमी से नफरत करने लगा। उसने मेहमानों के आगे पर्दा फ़ाश कर दिया। मेहमान भी महाराजा को नफरत की नजर से देखने लगे और एक-एक करके तालशाही से विदा हो गये।

महाराजा की पारसाई और सच्चरित्रता का भंडाफोड़ हो गया जिस पर परदा डालने और प्रजा को अपनी नेकनीयती का सबूत पेश करने के ख्याल से उन्होंने चार दिन तक व्रत रखा और बाद में, पाप का प्रायश्चित करने वे हरिद्वार गये। शिमले की पहाड़ियों में एक कस्बा सोलन नाम का है। महाराजा वहाँ जा कर अपने आध्यात्मिक गुरु से मिले और अपने पापों की क्षमा के लिए उनसे ईश्वर-प्रार्थना की याचना की।

खाने की वस्तुओं के साथ उनको शराब पिलाई जाती। डिनर के साथ और बाद में भी, मेहमानों को अच्छी से अच्छी फ्रान्स की बनी व्हिस्की और ब्राण्डी दिल खोल कर पेश की जाती।

आम तौर पर ऐसी पार्टियों में मेहमान लोग अपनी महिला-मित्रों और चहेतियों को साथ लाते थे। अंग्रेज़ रेज़ीडेन्ट भी, जो अपने प्रेम-प्रसंगों में हिन्दुस्तानियों से अलग रहा करते थे, ऐसी पार्टियों में मौज में आ जाते और अपने दोस्तों की बीवियों व लड़कियों को, जिनसे उनका प्रेम-सम्बन्ध होता, जरूर अपने साथ लाते। ये पार्टियाँ एक हफ़्ते से ज्यादा समय तक चला करतीं और उनकी समाप्ति पर सभी मर्द-औरतें तन-बदन से और कामुकता की दृष्टि से थके-माँदे जान पड़ते।

महाराजा कभी शराब नहीं पीते थे। वे केवल कुछ दवाइयाँ सूँघा करते थे जो एक प्राइवेट कमरे में छिपा कर रखी रहती थीं। इस बात को सिर्फ़ उनका प्रिय ए० डी० सी० तिरनार सिंह ही जानता था। बातों-बातों में अक्सर महाराजा कह जाते थे कि उनको औरतों से नफ़रत है और उन्हें अपनी पत्नी की भी परवाह नहीं।

मगर जब वे ताल-शाही की पार्टियाँ होती, तब महाराजा अपनी एक बाँदी रामप्यारी को आगरे से चुपचाप बुलवा लेते। बहुत फ़ासले पर महाराजा का एक बँगला था जहाँ शिकार के बाद महाराजा चले जाते थे, यह ज़ाहिर करने के लिए कि तालशाही के शानदार महल में रहने की बनिस्बत उनको सादी सजावट के एक बँगले की शान्त और एकान्त जिन्दगी पसन्द है। उसी बँगले में रामप्यारी से उनकी मुलाक़ातें हुआ करती थीं।

असलियत यह थी कि रामप्यारी की खातिर ही महाराजा उस सुनसान बँगले में जा कर रहते थे। वह सारे दिन उसी बँगले के कमरों में छिपी रहती थी। उसे न किसी से मिलने की इजाज़त थी और न बँगले से बाहर जाने की।

धौलपुर के महाराजा की कमजोरी थी—सादे लिबास में रहने वाली बाँदियाँ—चाहे वे शादीशुदा हों या क्वाँरी। जहाँ उनकी नज़र किसी बाँदी पर पड़ी, चाहे वह जवान हो या बूढी, ख़ूबसूरत हो या बदसूरत, उसको सादे कपड़ों में देखते ही उनकी कामवासना जाग उठती थी। उस वक्त महाराजा अपने तन-मन को काबू में नहीं रख पाते थे जिसका नतीजा ख़राब होता था। एक दफ़ा वे महाराजा भूपेन्दर सिंह के मेहमान बन कर कांडाघाट गये हुए थे। वहाँ बागू नाम का एक खिदमतगार था। उसकी बीवी फगनी बाँदी का काम करती थी। महाराजा धौलपुर ने एक रोज फगनी को अकेले में पकड़ लिया। बड़ी मुश्किल से यह मामला दबाया जा सका।

जाड़े की रात थी। सर्दी कड़ाके की थी। रामप्यारी ने ठण्ड से बचने के लिए अपने कमरे में कोयले की अँगीठी सुलगा कर रख ली। चूँकि महाराजा का हुक्म था, इसलिए वह कमरे की खिड़कियाँ और दरवाज़े बन्द रखती थी।

कोयलों का धुम्रों कमरे के अन्दर भरता रहा। रामप्यारी का दम घुटने लगा और वह बेहोश हो गई। जब महाराजा ने आ कर दरवाजे का ताला खोला तो देखा कि रामप्यारी बेहोश पड़ी है। पहले तो महाराजा ने यह वाकया छिपाना चाहा मगर जब देखा कि कोशिश के बावजूद उसे होश में लाना मुश्किल हो रहा है, तब उन्होंने महल के डाक्टर को बुलवाया जो उस वक्त ताल-शाही में दोस्तों के साथ बैठा हुआ शराब पी रहा था।

जैसे ही महाराजा की प्राइवेट मोटर डाक्टर को ले कर बँगले पर वापस आई त्योंही महाराजा आगे बढ़ कर डाक्टर से मिले हालाँकि यह दस्तूर के खिलाफ बात थी। मोटर से उतरते ही डाक्टर के कान में महाराज ने कुछ बात कही। फिर डाक्टर को उस कमरे मे ले जाया गया जहाँ रामप्यारी बेहोश पड़ी थी।

उस जवान लड़की की हालत देख कर डाक्टर के होश उड गये। उसने महाराजा से कहा कि बन्द कमरे मे, जिसमे हवा जाने की गुंजाइश तक नही, अँगीठी जला कर एक औरत को कैद कर रखना परले सिरे की बेरहमी है। महाराजा ने काफ़ी रिश्वत देने का वायदा करते हुए डॉक्टर से मामले को ज़ाहिर न करने का वायदा ले लिया। डाक्टर ने बड़ी कोशिश की मगर वह रामप्यारी की जान न बचा सका। बात लाख छिपाने पर भी न छिप सकी। तालशाही मे हलचल मच गई। महाराजा ने भरसक कोशिश की कि वह वाकया पोशीदा रहे मगर लोगो को पता चल गया और उनकी बदनामी होने लगी।

तालशाही मे ठहरे हुए मेहमानो को भी खबर लग चुकी थी। महल का डॉक्टर, जो मोटा और खुशमिज़ाज था, महाराज की बेरहमी से नफरत करने लगा। उसने मेहमानों के आगे पर्दा फ़ाश कर दिया। मेहमान भी महाराजा को नफरत की नजर से देखने लगे और एक-एक करके तालशाही से विदा हो गये।

महाराजा की पारसाई और सच्चरित्रता का भंडाफोड़ हो गया जिस पर परदा डालने और प्रजा को अपनी नेकनीयती का सबूत पेश करने के ख्याल से उन्होंने चार दिन तक व्रत रखा और बाद में, पाप का प्रायश्चित करने वे हरिद्वार गये। शिमले की पहाड़ियों में एक कस्बा सोलन नाम का है। महाराजा वहाँ जा कर अपने आध्यात्मिक गुरु से मिले और अपने पापों की क्षमा के लिए उनसे ईश्वर-प्रार्थना की याचना की।

२६. फ़ाइलों का तुरन्त निपटारा

भरतपुर के शासक महाराजा किशन सिंह अपने प्राइवेट सेक्रेटरी कुँवर भरतसिंह से कह चुके थे कि महल के कान्फ्रेन्स-रूम में लगी बड़ी मेज़ पर हर इतवार को सवेरे तमाम सरकारी फ़ाइलें (स्मृति-पत्र और याचिकायें) क़ायदे से रख दी जाया करें। मेज़ इतनी बड़ी थी कि डिनर-पार्टियों और दावतों के मौकों पर क़रीब सौ मेहमान उसके इर्द-गिर्द बैठ सकते थे। महाराजा के हुक्म बमूजिब कुँवर भरतसिंह दिन भर की सारी फ़ाइलें, जिनका सम्बन्ध कत्ल के मुकदमों, लाखों रुपयों के दीवानी के मुकदमों, रियासत के उच्च अफ़सरों की तैनाती और बरख़ास्तगी, राज-परिवार के निजी मुक़दमों तथा भारत सरकार के राजनीतिक विभाग—से होता था, मेज़ पर लगा दिया करते थे।

इतवार की रात को, डिनर से पेश्तर, महाराजा अपनी महारानियों और रनिवास की महिलाओं के साथ कान्फ्रेन्स रूम में आते थे। इसी कमरे में घंटों तेज शराब के दौर चला करते, हँसी-मज़ाक़ और चुहलबाज़ियाँ होतीं। उठने से पहले, महाराजा अपनी प्रिय महारानियों से कहते कि मेज़ पर रखी हुई फ़ाइलों के अपने मन के माफ़िक, दो ढेर अलग-अलग लगा दें। जब दो ढेर लगा दिये जाते तो बिना उनको देखे या पढ़े, क़लम के एक ही झटके से महाराजा एक ढेर की फ़ाइलें मंजूर और दूसरे ढेर की नामंजूर करने की ज़ुबानी हिदायत कर देते थे। महाराजा को न रुचि थी, न वक्त था कि मेज़ पर रखी हुई एक फ़ाइल को देखें या पढ़ें। महाराजा की ज़ुबानी हिदायत के अनुसार कुँवर भरत सिंह उनका अन्तिम फ़ैसला लिख देते थे जो अगले दिन सुना दिया जाता था।

नतीजा यह हुआ कि सैकड़ों बेगुनाह आदमी सजा पा गये और मुजरिम साफ़ छूट गये। यही हालत माल और दीवानी के सरकारी मुक़दमों की हुई। जिन लोगों को क़र्ज़दारों से रकम वापस मिलनी थी, वे खाली हाथ लौट गये और जो लोग रुपया उधार लिये थे, वे महाजन बन बैठे। इन्साफ़ की इस छीछालेदर का नतीजा यह हुआ कि रियासत में उत्तेजना फैल गई। ब्रिटिश रेजीडेन्ट ने [illegible] से शिकायत कर दी। वायसराय ने एक दीवान (प्राइम [illegible]िनिस्टर) तैनात कर दिया और उसे हुकूमत के सारे अधिकार सौंप दिये। [illegible], पूर्ण मताधारी शासक के बजाय रियासत के नाम-मात्र के नरेश [illegible]।

२७. क़िस्सोंवाले निज़ाम

ब्रिटिश सरकार के वफ़ादार दोस्त, लेफ़्टीनेन्ट जेनरल हिज एक्ज़ाल्टेड हाईनेस आसफ़जाह मुज़फ़्फ़र-उल-मुल्क निज़ामुल्मुल्क, निज़ामुद्दौला सर मीर उस्मान अली खाँ बहादुर, फतेहजंग, जी० सी० एस० आई०, जी० बी० ई०, वंश के दसवें शासक, सन् १६११ में हैदराबाद के तख्त पर रौनक-अफ़रोज़ हुए।

निज़ाम की राज्य-सीमा में एक बहुत दूर तक फैला हुआ पठार है जिसकी औसत ऊँचाई समुद्र-तल से १२५० फीट है, उस पठार के बीच बीच पहाड़ियाँ हैं जो २५०० फीट से ले कर ३५०० फीट तक ऊँची हैं। राज्य का कुल ८०,००० वर्ग मील का क्षेत्रफल, इंग्लैंड और स्कॉटलैंड के सम्मिलित क्षेत्रफल से भी अधिक है।

हैदराबाद राज्य की स्थापना नवाब आसफ़जाह बहादुर ने की थी जो औरंगज़ेब के सबसे प्रतिष्ठित सिपहसालार थे।

दिल्ली सम्राट् की वर्षों तक सेवा करके, युद्ध और राजनीति कुशलता में समान रूप से नाम और यश कमाने के बाद, सन् १७१३ में नवाब आसफ़-जाह को दक्खिन के इलाके का सूबेदार तैनात किया गया। उनको निज़ामुल्मुल्क का खिताब दिया गया जो उनके वंश का मौरूसी खिताब बन गया।

बाहरी हमलों और भीतरी फूट की वजह से मुग़लों की सल्तनत के बुरे दिन आ गये थे। उन आम गड़बड़ी के दिनों में नवाब आसफ़जाह को दिल्ली तख्त के कमजोर वारिसान के खिलाफ़ आज़ादी का एलान करने में जरा भी दिक्कत पेश न आई। इतना ज़रूर हुआ कि अपनी नई हासिल की हुई सल्तनत के पश्चिमी इलाके पर हमला करने वाले मराठों से उनको लोहा लेना पड़ा और जीत नवाब की हुई। नवाब के आज़ादी के एलान से दिल्ली की हुकूमत नाराज़ हो गई और खानदेश के सूबेदार मुबारिज़ खाँ को पोशीदा तौर पर हुक्म जारी किया गया कि नवाब आसफ़जाह को फौजी ताक़त से दबाया जाय। बरार के बुलडाना ज़िले में एक जगह है शाकरखेल्डा। सन् १७२४ में, वहाँ पर बड़ी सख्त लड़ाई हुई जिसमें मुबारिज़ खाँ हार गया और मारा गया।

इस लड़ाई ने नवाब आसफ़जाह की आज़ादी कायम कर दी। बरार को सल्तनत में मिला लिया गया और हैदराबाद में राजधानी बनी।

सन् १७४१ में, अपनी मृत्यु के समय, नवाब अपने राज्य के एकछत्र

स्वतंत्र शासक थे और वरार का सूवा उनकी सल्तनत में शामिल था।

निज़ाम का अर्थ है—हाकिम—जो मुग़लों के ज़माने में हैदरावाद का सूवेदार हुआ करता था। मुग़ल साम्राज्य के खात्मे के वाद, निज़ाम ने, जो स्वतंत्र हो चुके थे, ईस्ट इण्डिया कम्पनी से सुलह कर ली।

वाद में, जव भारत में व्रिटिश सत्ता स्थापित हो गई तव देश के अन्य राजा-महाराजाओं की तरह निज़ाम भी ग्रेट व्रिटेन के सम्राट् के आधीन हो गये।

निज़ाम के वुज़ुर्गों ने वेहिसाव दौलत जमा कर रखी थी। उनके पास दुनिया की तवारीख में वेमिस्ल जवाहरात का एक ज़खीरा था। निज़ाम उस्मान अली खाँ ने विरासत में वज़नदार सोने के छड़ और ईंटें, हीरे-जवाहरात का भंडार और वेशुमार कीमती ज़ेवरात, हासिल किये। उनके महल में कई तहखाने, इकट्ठे किये हुए जवाहरात, गहनों और सोने-चाँदी की ईंटों से भरे थे। उन तहखानों के तालों की चाभियाँ निज़ाम खुद अपने पास रखते थे और अपने किसी अफ़सर या अहलकार का यक़ीन न करते थे, जिसे भूले से भी वे चाभियाँ कभी न सौंपते थे।

जवानी के दिनों में हैदरावाद के निज़ाम को अपनी वेशुमार दौलत से वड़ा मोह था। तहखानों में जा कर, जव-तव, वे अपनी सोने-चाँदी की ईंटें गिना करते थे।

निज़ाम को उन दिनों सोने की ईंटों के चट्टे पर चट्टे लगे देख कर वड़ा सन्तोष होता था। वेशुमार दौलत, जो सोना, चांदी, जवाहरात और ज़ेवरात की शक्ल में उनके पास थी, उसके अलावा तमाम ज़मीन और मकानात-कोठियाँ उनकी जायदाद में शामिल थीं जिनसे कई लाख रुपयों की आमदनी होती थी। निज़ाम के पास मशहूर हीरा 'जैकव' था जो कीमत में कोहनूर से दूसरे नम्बर पर समझा जाता था। कोहनूर अव रानी एलिज़वेथ के राजमुकुट में जड़ा हुआ, इंग्लैंड के शाही खज़ाने में है।

वेशुमार दौलत के मालिक होते हुए भी निजाम कंजूस थे। वे अपने पर वहुत कम पैसा खर्च करते थे। जैसे-जैसे उनकी उम्र वढ़ती जाती थी वैसे-वैसे उनकी कंजूसी भी वढ़ती जाती थी। अपनी इस सनक में निजाम इतना [illegible] चुके थे कि जव कभी वे किसी को अपने साथ खाने की दावत देते, तव मेहमान के आगे किफ़ायती और वेज़ायका खाने की चीजें परोसी जाती थीं। चाय के साथ सिर्फ़ दो विस्कुट पेश किये जाते थे—एक मेहमान के लिए और एक निज़ाम के लिए। अगर मेहमानों की तादाद ज्यादा होती तो उसी हिसाब से विस्कुटों की तादाद भी वढ़ा दी जाती थी। शाही मेज पर किफ़ायतशाही और [illegible] की किल्लत ऐसे भद्दे ढंग से नज़र आती थी कि कोई भी मेहमान [illegible] [illegible] से मेज़वान के मिज़ाज से वाकिफ़ हो सकता था। अक्सर ऐसे भी [illegible] आते थे जव निज़ाम मेहमानों को उन दावतों में वुलाते थे जिनका खर्च

उनको अपनी जेब से नहीं देना पड़ता था बल्कि शाही खज़ाने से दिया जाता था। उस वक़्त उनकी कंजूसी और किफ़ायत के नमूने नज़र न आते थे।

निज़ाम की आदत थी कि जिन दावतों के खर्च का बोझ शाही खज़ाने पर पड़ता हो, उनमें मेहमानों की दिल खोल कर खातिर करते। ऐसी दावतों में अंग्रेज़ी और हिन्दुस्तानी, दोनों तरह के स्वादिष्ट व्यंजन और व्हिस्की भी मेहमानों को पेश की जाती। दावत में शरीक किसी खास रईस को, उससे बहुत दूर बैठे निज़ाम एक ग्लास शैम्पेन भिजवाते। ग्लास को मंज़ूर करके वह रईस खड़ा होकर निज़ाम को कई दफा झुक-झुक कर सलाम करता और इस तरह उनकी इज़्ज़त-अफ़ज़ाई का शुक्रिया अदा करता। इसका मतलब यह समझा जाता कि निज़ाम ने खास तौर पर उस रईस को बड़ी प्रतिष्ठा दी है। दस्तूर के मुताबिक़ उस बेचारे को एक ग्लास शैम्पेन की कीमत, जो उसने पिछली रात को पिया था, निज़ाम को कम-से-कम एक लाख रुपयों का तोहफ़ा देकर चुकानी पड़ती थी।

निज़ाम ने यह आदत अख्तियार कर ली कि हर दावत में अपनी रियासत के पाँच-छः रईस और मालदार लोगों को बुलाना, उनको शैम्पेन के ग्लास पेश करवाना और उनसे पाँच-छः लाख रुपये कमा लेना जब कि शैम्पेन की कीमत शाही खज़ाने से चुकाई जाती थी। रईसों को अक्सर निज़ाम की तरफ से छोटे-छोटे मामूली उपहार भेजे जाते जिनके एवज़ में उनके लिए लाज़िम हो जाता कि निज़ाम को कीमती उपहार भेजें। इस तरीके से भी निज़ाम काफी दौलत इकट्ठी किया करते थे।

धन इकट्ठा करने की एक तरकीब और निज़ाम ने निकाली थी। वे रईसों के यहाँ गमी, शादी-ब्याह व दूसरी रस्मों में चले जाया करते थे। वहाँ उनको भेंट में सोने की गिन्नियाँ ज़रूर मिलती थीं।

उन्होंने अपनी रियाया से पैसा घसीटने के ऐसे अजीबो गरीब तरीके अख्तियार कर रखे थे कि हर शख्स फ़ौरन समझ जाता था कि निज़ाम से रुतबा और इज़्ज़त हासिल होने पर उसकी कितनी ज़्यादा कीमत चुकानी पड़ेगी।

निज़ाम के जवाहरात सैकड़ों बक्सों में बन्द करके रखे जाते थे मगर सोने चाँदी की ईंटें बड़े-बड़े तहखानों में रखी रहती थीं। अपना बुढ़ापा आने पर, जब उनके बच्चों की तादाद अस्सी से ऊपर तक पहुँच चुकी तो उन्होंने हर एक लड़के और लड़की के नाम एक-एक बक्स कर दिया मगर शर्त यह रखी कि उनके मरने के बाद ही यह बटवारा अमल में लाया जाय। इस तरह, किसी को पता न चल सका कि उन बक्सों में क्या है सिवाय निज़ाम के, जिन्होंने अपनी निजी कापी में सब कुछ लिख रखा था।

जब भारतीय रियासतों को भारतीय प्रजातन्त्र में शामिल करना निश्चित हो गया, तब भारत सरकार ने निज़ाम को सलाह दी कि अपनी संचित की हुई धनराशि, सोने-चाँदी की ईंटें और जेवर-जवाहरात सुरक्षा की दृष्टि

वम्बई के एक बैंक के सेफ़ डिपोज़िट वॉल्ट में रखवा दें।

भारत सरकार का सन्देह करना उचित ही था कि इस वेशुमार दौलत का निज़ाम या उनके सलाहकारों द्वारा कहीं अनुचित इस्तेमाल न हो क्योंकि अफ़वाहें उड़ रही थीं कि निज़ाम ने सारी दौलत गुप्त तरीक़ों से हटा कर पाकिस्तान या किसी ग़ैर मुल्क में भेज देने का इरादा कर लिया है।

अतएव, ४६ करोड़ रुपए का एक ट्रस्ट कायम किया गया और सारे जवाहरात पहले वम्बई के इम्पीरियल बैंक ऑफ़ इंडिया में रख दिये गये। इस बैंक में जव असंख्य वक्सों और कई ठेले भर सोने-चाँदी की ईंटें रखने के लिए जगह की कमी पड़ी, तव उनको मर्केन्टाइल बैंक ऑफ़ इंडिया के विशेष मज़बूत तहखानों में रखवा दिया गया जो ख़ास तौर पर तैयार कराये गये थे।

इस वेहिसाव दौलत के अकेले स्वामी होते हुए भी जव उसे निज़ाम ने भारत सरकार की 'पुलिस कार्रवाई' और क़ासिम रिज़वी की गिरफ़्तारी (जिसने भारत-विरोधी आन्दोलन चलाया था) के वाद, अपने महल से वाहर जाते देखा, तव वे रो पड़े थे। मजवूर हो कर निज़ाम ने अपने प्रधान मन्त्री की वग़ावत की निन्दा करते हुए केन्द्रीय सरकार से समझौता कर लिया और यह एलान कर दिया कि वे भारत सरकार का साथ देंगे तथा पाकिस्तान से उनका कोई सम्वन्ध न रहेगा।

निज़ाम का कथन सत्य मान कर भारत सरकार ने उनको हैदराबाद (संघीय राज्य) का राजप्रमुख वना दिया। वाद में निज़ाम ने इस पद से इस्तीफ़ा दे दिया और सार्वजनिक जीवन से हट कर फ़क़ीरी ले ली। जिस शाही कोठी में वे रहते थे, उससे वाहर वहुत कम निकलने लगे।

निज़ाम के वारिस, शाहज़ादा हिमायत अली खाँ (आज़म जाह) और उनके दूसरे वेटे, शाहज़ादा शुजात अली खाँ (मुअज़्ज़म जाह) के विवाह तुर्की की शाहज़ादियों से हुए थे जो तुर्की के भूतपूर्व ख़लीफ़ा अब्दुल मजीद की लड़की और भतीजी थीं।

शादी के कुछ साल वाद शाहज़ादी निलोफ़र ने अपने पति मुअज़्ज़म जाह को छोड़ दिया, जो निज़ाम के दूसरे वेटे थे। वह अपनी दादी के पास चली गईं जो अब्दुल मजीद की चचाजाद वहन और तुर्की की सवसे धनी महिला थीं।

भारत सरकार की मंजूरी से दोनों शाहज़ादों को भारी रक़में 'प्रिवी पर्स' में मिला करती थीं लेकिन जव निज़ाम की सम्पत्ति का ट्रस्ट कायम कर दिया गया, तो ये रक़में ट्रस्ट से दी जाने लगीं। निज़ाम को पाँच लाख रुपये अपनी ज़मीन-जायदाद से और कुछ अतिरिक्त रक़म ट्रस्ट से मिलती थी।

हाथ में करोड़ों रुपये होते हुए भी निज़ाम मुश्किल से कुछ हज़ार रुपयों में अपना और अपनी रखैलियों का सारा खर्च चलाते थे। उनकी तमाम [illegible] महल में भरी पड़ी थीं।

निज़ाम का कुनबा बहुत बड़ा था और उनकी कई बाँदियाँ थीं। जिनसे भी

नौकर थे। मगर कुल रकम जो उनके निजी मुलाजिमान और महल के खर्च में जाती थी वह भी उस रकम से कहीं कम थी जो कलकत्ते और बम्बई के किसी धनी परिवार में खर्च की जाती है।

निज़ाम की पोशाक बहुत सादी थी। वे एक मामूली कमीज़ और छोटा ढीला पायजामा पहना करते थे। मोज़े टाँगों से नीचे आ जाते थे, पायजामा इतना ऊँचा रहता कि उनकी टाँगों का कुछ हिस्सा मोज़ों के ऊपर दिखाई देता था। वे सिर पर फुन्देदार लाल तुर्की टोपी पहनते थे जिसके बारे में जानकारों का कहना था कि ३५ साल पुरानी थी। वह टोपी हालाँकि फट गई थी और खस्ता-हाल थी, मगर निज़ाम को पसन्द थी।

निज़ाम हैदराबाद के लिए बड़े उदार व्यक्ति थे। उन्होंने अपनी रियाया को हमेशा खुशहाल रखा। वे रियाया की हालत सुधारने और उसका जीवन सुखी बनाने के लिए शासन में नये सुधार लाने की कोशिश करते थे।

अपनी बहुतेरी बेगमों के होते हुए उनका ताल्लुक एक बदनाम औरत से था जो एक मारवाड़ी महाजन की भी रखैल थी। उस औरत के एक लड़का पैदा हुआ जो शक्ल-सूरत में मारवाड़ी से मिलता-जुलता था। निज़ाम के भाई-बन्धुओं का कहना था कि वही लड़का महल में लाया गया और उसे निज़ाम का बेटा करार दिया गया। ज्यों-ज्यों वह लड़का बड़ा होता गया, त्यों-त्यों उसका चाल-चलन और सूरत मारवाड़ी से मिलती गई। वैसी ही, पैसा जोड़ने की आदत उसमें आती गई।

अपने बेटे की आदतें सुधारने में नाकामयाब होने पर निज़ाम ने भारत सरकार को शिकायत लिखी कि वह लड़का उनका नहीं है बल्कि उनके दोनों सगे बेटे, जो सलाबत जाह और बसालत जाह हैं, उनकी कानूनन ब्याहता बीवियों से पैदा हैं, इसलिए वे दोनों ही तख्त के असली वारिस हैं। इन दोनों शाहज़ादों की शक्ल-सूरत व चाल ढाल निज़ाम जैसी थी। उस्मान अली, जो बचपन से ही चालाक था, इस तजवीज़ का पता पा गया और उसी दिन से दुआ माँगने लगा कि उसका बाप मर जाय। अचानक, निज़ाम बीमार पड़े और कुछ दिनों बाद मर गये परन्तु वह लड़का, जिसकी किस्मत में निज़ाम बनना लिखा था, उनकी बीमारी में उन्हें देखने तक न गया और मरते वक्त भी उनके करीब मौजूद न था।

जब उस्मान अली तख्त पर बैठे, तब फौरन ही उन्होंने शाही खानदान के सभी लोगों को महल से निकाल बाहर किया। उनमें से कुछ तो सड़कों पर भीख माँगते फिरने लगे। सलाबत जाह और बसालत जाह ने ब्रिटिश सरकार से अपील की कि हैदराबाद का राज्य उनको दिया जाय क्योंकि निज़ाम के जायज़ बेटे वे ही हैं और उस्मान अली खाँ ज़बरदस्ती तख्त पर काबिज़ है जब कि वह निज़ाम की औलाद नहीं है।

उस्मान-अली की खुशकिस्मती से, इंग्लैंड के बादशाह एडवर्ड सप्तम जिनके

आगे अपील पेश थी, और जो सलावत जाह और वसावत जाह को तख़्त का असली वारिस मान कर उनके हक़ में फ़ैसला देने वाले थे, उसी जमाने में मर गये। वादशाह के मरने से उस्मान अली को काफ़ी मौका मिल गया और उन्होंने सोने की ईंटों व झलमलाते जवाहरात की मदद से ऐसी तरकीबें लगाईं कि उन भाइयों की अपील खारिज कर दी गई और वे हैदराबाद रियासत के जायज़ व एकछत्र शासक बन बैठे।

निज़ाम के बाप ने बम्बई का हैदराबाद पैलेस सलावत जाह को दे दिया था मगर उस्मान अली ने उसे जब्त कर लिया। सलावत जाह ने महल की जब्ती की शिकायत अंग्रेज रेज़ीडेन्ट से की। निज़ाम को महल वापस देने का हुक्म उसने जारी कर दिया। उस्मान अली ने फिर चाल चली और रेज़ीडेन्ट से कहा कि महल की क़ीमत का तख़मीना लगवा लिया जाय और जो क़ीमत तय पाई जाय, वह सलावत जाह को दिला कर महल खुद उनके क़ब्ज़े में रहने दिया जाय। रेज़ीडेन्ट और सलावत जाह, दोनों ने यह बात मंजूर कर ली। रेज़ीडेन्ट ने बम्बई के सर कावसजी जहाँगीर को महल की क़ीमत तय करने के लिए तैनात कर दिया।

उस्मान अली ने अपने विश्वासपात्र प्राइवेट सेक्रेटरी को सर कावसजी जहाँगीर के पास मिलने भेजा और प्रार्थना की कि महल की क़ीमत कम आँकी जाय। सर कावसजी जहाँगीर बड़े ईमानदार आदमी थे और न्यायप्रिय थे। उन्होंने उस्मान अली की प्रार्थना ठुकरा कर महल की कीमत सत्रह लाख रुपये निश्चित कर दी। जल्दबाज़ी में उस्मान अली ने सत्रह लाख रुपये अपनी जेब से दे तो दिये मगर बाद में पछताते रहे कि उनकी जमा-पूँजी में उतनी रक़म घट गई। उन्होंने महल को सरकारी जायदाद करार दे दिया।

बाद में सलावत जाह की मृत्यु कुछ रहस्यमय परिस्थितियों में हो गई। उनकी तमाम जायदाद और सारा रुपया निज़ाम के हाथ लगा मगर वसावत जाह को गुज़ारे का ५,०००) रुपया माहवार मिलता रहा जो भारत सरकार ने निश्चित कर दिया था। यह रुपया हैदराबाद के खजाने से दिया जाता था।

२८. निज़ाम और मक्खन

मध्य-भारत में दतिया नाम की एक रियासत थी। दतिया के महाराजा ने निज़ाम की खासी दोस्ती थी। निज़ाम उस्मान अली ने दतिया के महाराजा से कहा कि अपने यहाँ से खालिस मक्खन के कुछ डिब्बे भेज दें। दतिया रियासत का मक्खन उन दिनों दूर-दूर तक मशहूर था। महाराजा ने अपने दोस्त निज़ाम की इच्छानुसार अपने महल के गोदाम से बारह दर्जन डिब्बों में खालिस, घर का बना, सबसे उम्दा मक्खन भिजवा दिया। मक्खन के इतने डिब्बे देख कर उस्मान अली बेहद खुश हुए और उन्होंने हुक्म दिया कि सारे डिब्बे महल के गोदाम में हिफ़ाज़त से रख दिये जायें। दो साल तक वे डिब्बे जहाँ के तहाँ रखे रहे और किसी ने उनको हाथ तक नहीं लगाया। नतीजा यह हुआ कि डिब्बों में बन्द मक्खन सड़ गया और उससे बदबू आने लगी। गोदाम के अफ़सरों को अन्दर जाने पर जब बदबू मालूम हुई तब उन्होंने जाँच की। सड़े मक्खन की बदबू फैल रही थी। किसी छोटे या बड़े अफ़सर या अहलकार की हिम्मत न थी जो निज़ाम को इत्तिला करता।

अन्त में, हैदराबाद रियासत के प्राइम मिनिस्टर नवाब सालार जंग ने, जो बड़े दबंग और आज़ाद तबियत के आदमी थे, निज़ाम को यह सूचना दे दी। निज़ाम ने गालियाँ देकर सालार जंग को भगा दिया।

बाद में, तुरन्त उस्मान अली ने हैदराबाद कोतवाली के इन-चार्ज मिस्टर रेड्डी को बुलवा कर हुक्म दिया कि मन्दिरों में घूम-फिर कर वह मक्खन बेच दें। उस अफ़सर ने जब कहा कि मक्खन आदमियों के खाने लायक नहीं है और उसे फिंकवा देना चाहिये, तब निज़ाम ने उसे खूब गालियाँ दीं। उस्मान अली ने मिस्टर रेड्डी से कहा कि मक्खन आदमियों के खाने लायक तो नहीं रहा मगर मन्दिरों में देवी-देवताओं पर चढ़ाने और हवन में इस्तेमाल किया जा सकता है।

निज़ाम के तेवर देख कर मिस्टर रेड्डी ने झुक कर सलाम किया और हुक्म बजा लाने का भरोसा दिलाया। महल के फाटक से बाहर आते ही उन्होंने मक्खन के सारे डिब्बे एक नाले में फेंक दिये। चन्द घंटे बाद, वे बहुत खुश-खुश निज़ाम के पास पहुँचे और बतलाया कि सारा मक्खन २०१ रुपयों का बिक गया। निज़ाम अपने अफ़सर की कारगुज़ारी देख कर बेहद खुश हुए और २०१ रुपये अपने बैंक के हिसाब में जमा करा दिये, जिस हिसाब में लाखों रुपये जमा थे। अपनी सेवाओं की सराहना के उपलक्ष्य में मिस्टर रेड्डी और भी ऊँचे ओहदे पर तैनात कर दिये गये।

२६. हैदराबाद की झलकियाँ

हैदराबाद के निज़ाम का क़ायदा था कि वे हमेशा अपने अफ़सरान, उ
बेटे-बेटियों और रियासत के पायागाह रईसों की शादियों में ज़रूर शरी
हुआ करते थे। दुल्हन और दूल्हे को कोई तोहफ़ा देने के बजाय वे दहेज
सामान में से कोई क़ीमती ज़ेवर उठा लिया करते थे। इस तरह शा
मेहरबानी का शिकार बन कर वर-वधू उस ज़ेवर से हाथ धो बैठते थे।

अपनी रियासत में, किसी को ख़ूबसूरत और बेशक़ीमत मोटर में आ
जाते अगर निज़ाम देखते थे तो फ़ौरन अपने ख़ास अफ़सरान को उस मोटर
मालिक के पास भेजकर कहलाते कि निज़ाम ज़रा मोटर में घूमने-फिरने जा
चाहते हैं। मोटर का मालिक समझता था कि निज़ाम ने उसे इज्ज़त ब
है और वह फ़ौरन राज़ी हो जाता। जहाँ एक दफ़ा मोटर शाही गैरेज
दाख़िल हुई, फिर उसकी वापसी का सवाल कभी नहीं उठता था। मोट
का मालिक हाथ मलता रह जाता था। इस तरह निज़ाम ने तीन-चार सं
मोटरें अपने यहाँ इकट्ठी कर ली थीं हालाँकि ये इस्तेमाल में नहीं आती थीं।
रियासतों के विलयन के बाद, हैदराबाद राज्य के मुख्य मंत्री ने निज़ाम से
कहा कि अपनी ढाई सौ मोटरें, जो, गैरजों में पड़ी धूल खा रही हैं, वे बेच
डालें पर निज़ाम राज़ी न हुए बल्कि ढाई लाख रुपये ख़र्च करके उनकी सफ़ाई
करवाई और वे फिर जहाँ की तहाँ खड़ी कर दी गईं। वे हमेशा अपने मन
की करते थे।

सिगरेट के टुर्रें

निज़ाम सिगरेट बहुत पीते थे मगर सस्ती और मामूली क़िस्म की। सोफ़
पर घंटों बैठे-बैठे, एक के बाद एक, सिगरेट पीते रहते थे। जो सिगरेट वे
पीते, उनके टुर्रें और राख फ़र्श पर जमा होती रहती मगर उनका हटाया
जाना निज़ाम को पसन्द न था। जब सिगरेट के टुकड़ों और राख का कमरे
के फ़र्श पर एक अम्बार लग जाता तब महल का मुन्तज़िम सफ़ाई क
देता था।

अगर निज़ाम के दोस्त या ऊँचे ओहदे के सरकारी अफ़सरान कभी उन्हें
के क़िस्म की अमेरिकन, ब्रिटिश या टर्किश सिगरेटें पेश करते तो ए
ट लेने के बजाय निज़ाम एक दफ़ा में ४ या ५ सिगरेटें उनकी डिब्बी से

निकाल कर अपने सिगरेट-बक्स मे रख लेते और अपनी पसन्द की सस्ती मामूली सिगरेट पीना जारी रखते।

एक मौक़े पर, मिस्टर वी० पी० मेनन, जो रियासतो की मिनिस्ट्री मे भारत सरकार के सलाहकार थे, निजाम से मुलाकात करने गये। कुछ देर बाद, निजाम ने उनको हैदराबाद की बनी चार-मीनार सिगरेट पेश की, जो कि निजाम खुद पिया करते थे और १० सिगरेटों की डिब्बी १२ पैसो की बिका करती थी। मिस्टर मेनन ने उस सिगरेट को हाथ भी नहीं लगाया। उन्होंने अपनी सिगरेट पेश करते हुए निजाम से कहा कि वे नई किस्म की सिगरेट पी कर देखें। निजाम को वह सिगरेट पसन्द आई और उन्होंने मिस्टर मेनन से तीन-चार सिगरेटें माँग कर अपने सिगरेट-बक्स मे रख ली। कुछ दिनों बाद, जब मिस्टर मेनन फिर मुलाकात के लिये आये, तो निजाम ने चार-मीनार के बजाय उनको वही सिगरेटें पेश कीं जो कुछ दिनो पहले उनसे माँग कर अपने पास रख ली थी।

निजाम असाधारण रूप से धनवान थे। उनके निजी जवाहरात की कीमत पचास करोड़ रुपये आँकी गई थी। अपने जवाहरात और जेवरात की पूरी फेहरिस्त निजाम सोते-जागते, हर वक़्त अपने पास रखते थे।

उनको ठीक-ठीक पता रहता था कि कितना क्या उनके पास है, किस बक्स मे कौन से जवाहरात है और जेवरात में से कौन-सी चीज़ कहाँ रखी मिलेगी। जिस जगह जो सामान रखा जाता था, वहीं वह रखा जाय और उनकी मजूरी बग़ैर उसकी जगह बदली नहीं जा सकती थी। अगर कमरे की सफाई के लिए सामान हटाना पड़ता तो खजांची आकर निजाम को कई दफा सलाम करता और इजाजत हासिल करता था। निजाम स्वभाव से ही शक्की तबियत के थे और जवाहरात के मामलो मे अपने किसी अफसर का विश्वास न करते थे। खज़ाने की खास चाभियाँ निजाम बड़ी हिफ़ाजत से अपने पास रखते थे। खजाने का अफसर उनसे चाभियाँ माँगने के बाद ही खज़ाने के ताले खोल सकता था।

हीरे का पेपर-वेट और साबुनदानी

हैदराबाद के निजाम के पास दुनिया का मशहूर 'जैकब' नाम का हीरा था जो वजन मे २८२ कैरेट था। उसकी बनावट पेपर-वेट जैसी थी। उस पर किसी की नजर न लगे, इस ख्याल से निजाम उसको क्यूटीकोरा साबुन की डिब्बी मे रखा करते थे। जब मौज आती, तब अपनी लिखने की मेज पर पेपर-वेट की जगह उस हीरे का इस्तेमाल करते।

सर सुल्तान अहमद ने, जो निजाम के खास सलाहकार की हैसियत से सभी वैधानिक मामलों मे सलाह दिया करते थे, जब अपनी सेवाओं और

चापलूसी से उनको खुश करने में कामयाब हो गये तब निज़ाम ने वह हीरा चन्द मिनटों के लिए उनके हाथ में, देखने को दिया। सुलतान अहमद के हाथ में हीरे पर निज़ाम की नज़रें इस तरह जमी हुई थीं कि उनका हाथ बरबस काँपने लगा।

बरार का ख़त और प्राइम मिनिस्टर

आसफ़जाही ख़ानदान के महान् इतिहास में, जिससे निज़ाम उस्मान अली का सम्बन्ध था, वीरता और राजनीति कुशलता के अनेक उदाहरण थे। भारत सम्राट् के आदेशानुसार लार्ड कर्ज़न ने, जो उस समय वायसराय थे, निज़ाम को राज़ी किया कि बरार का सूबा, जो उनकी रियासत में शामिल था, ब्रिटिश सरकार को सौंप दें। ब्रिटिश रेज़ीडेण्ट ने अपनी कूटनीति की चालें चल कर निज़ाम से एक ख़त लिखा लिया कि बरार के सूबे पर उनका कोई हक़ नहीं है। जब निज़ाम के प्राइम मिनिस्टर महाराजा सर किशन प्रसाद को इस ख़त के बारे में पता चला तो वे निज़ाम के पास गये और कहा कि—"बड़े दुर्भाग्य की बात है जो आपने ब्रिटिश वायसराय की बात मान ली।"

अब निज़ाम को अपनी ग़लती समझ में आई। उन्होंने प्राइम मिनिस्टर से कहा कि ब्रिटिश रेज़ीडेन्ट से वह ख़त वापस लेने की कोई तरकीब सोचें। महाराजा सर किशन प्रसाद ने रेज़ीडेन्ट से मिलने का वक़्त मुक़र्रर किया और उससे मुलाक़ात की। मुलाक़ात में उन्होंने रेज़ीडेन्ट से कहा कि बरार के सूबे से अपना हक़ छोड़ देने के बारे में निज़ाम ने जो ख़त लिखा है, उसे वे देखना चाहते हैं और उसकी एक नक़ल करके अपने काग़ज़ात में रखना चाहते हैं। ज्यों ही वह ख़त हाथ में आया त्योंही प्राइम मिनिस्टर ने उसे अपने मुँह में रख लिया और रेज़ीडेन्ट के देखते-देखते उसको एकदम निगल गये। इस तरह ख़त का नामोनिशान मिट गया। कई साल बाद, हालाँकि प्राइम मिनिस्टर ख़त को निगल चुके थे, ब्रिटिश सरकार ने बरार का सूबा ले लिया, मगर तभी से निज़ाम को अंग्रेज़ों से नफ़रत हो गई। जब कभी मौक़ा मिलता, निज़ाम अपनी ब्रिटिश-विरोधी भावनायें प्रकट कर देते थे।

जब सन् १९३७ में, निज़ाम की 'रजत जुबली' मनाई जा रही थी, उस मौक़े पर ब्रिटिश दुर्गरक्षक सेना के २४,००० सैनिकों ने निज़ाम को फ़ौजी सलामी देनी चाही। मुश्किल से १,००० सैनिक सलामी देते हुए सामने से गुज़र पाये थे कि निज़ाम ने ब्रिटिश कमाण्डर को बुला कर बतलाया कि अब वे वहाँ नहीं ठहरना चाहते। ब्रिटिश सेना के प्रति यह अपमान और अशिष्टता का व्यवहार था जिसका नतीजा निज़ाम के चालचलन की पुस्तक में वायसराय द्वारा काला निशान लगाना था।

एक मौक़े पर निज़ाम ने बहुत बड़ी दावत दी जिसमें ब्रिटिश रेज़ीडेन्ट,

भारत सरकार के बड़े-बड़े अधिकारी और 'पायगाह' रईस आमंत्रित थे। निज़ाम ने, भोज के उपरान्त भाषण देने की रस्म के खिलाफ खाने का पहला दौर खत्म होते ही अपना भाषण शुरू कर दिया। रेज़ीडेन्ट के स्वागत में अपना भाषण समाप्त करके निज़ाम अपने तमाम दरबारियों के साथ दावत से चले गये। सिर्फ रेज़ीडेन्ट और कुछ अंग्रेज अफसरान खाना खाते रहे। यह भी भारत सम्राट् के प्रतिनिधि ब्रिटिश रेज़ीडेन्ट के प्रति बड़ी अशिष्टता का व्यवहार था।

३०. स्पेनवाली महारानी

अपनी जवानी के दिनों में, हैदराबाद के निज़ाम, उसमान अली खाँ ने, अपना पैसा खर्च करने और जवाहरात बांटने के अजीब तरीक़े अख्तियार कर रखे थे।

एक दफ़ा, उन्होंने कपूरथला की स्पेनवाली महारानी प्रेमकौर की खूबसूरती की तारीफ़ सुनी। बस, कपूरथला के महाराजा को दो-चार दिन के लिए हैदराबाद आने का निमंत्रण भेज दिया गया। निज़ाम स्पेनवाली महारानी की खूबसूरती पर ऐसा लट्टू हुए कि उन्होंने कई हफ़्ते तक महाराजा और महारानी को हैदराबाद से जाने ही नहीं दिया।

रोज़ रात को खाने की मेज़ पर महारानी प्रेम कौर को अपने सामने रखे नैप्किन (छोटा तौलिया) में बेशक़ीमत जवाहरात लपेटे हुए मिलते। जब वे नैप्किन की परतें खोलतीं तो कभी कोई हीरा, कभी अँगूठी, कभी गले का हार और कभी कोई क़ीमती जवाहर उसमें निकलता।

इस एकदम अनोखे तरीक़े से जवाहरात भेंट करने का सिलसिला कई हफ़्ते जारी रहा मगर निज़ाम को प्रेमकौर से अकेले में मुलाक़ात का कोई मौक़ा न मिल सका। वजह यह थी कि जगतजीत सिंह स्पेनवाली महारानी की तरफ़ से बड़े ईर्ष्यालु थे और एक सेकेण्ड के लिए भी उनको निज़ाम के पास अकेली न छोड़ते थे।

जब निज़ाम को सब्र न हुआ, तब उन्होंने अपनी बड़ी बेगम से संदेशा भिजवा कर शाही कोठी पर महारानी को स्वागत-सत्कार के लिए आमंत्रित किया। महाराजा को इस पर कोई एतराज़ न हुआ क्योंकि बड़ी बेगम की तरफ़ से महल में महारानी को बुलाया गया था।

जब महारानी की मोटर, जिसमें उनके दो ए० डी० सी० और एक महिला सहेली भी साथ आये थे, महल तक पहुँची, तब महल के ख़ास ख़्वाजा-सरा अब्दुल रहमान ने दोनों ए० डी० सी० को इत्तिला दी कि वे ख़ास महल के बाहर एक कमरे में ठहरेंगे क्योंकि आगे जाने का उनके लिए हुक्म नहीं है और सिर्फ़ महारानी अपनी फ्रेंच सहेली कुमारी लुइसा ड्यूजान के साथ महल के अन्दर जा सकेंगी।

महारानी कई घंटे निज़ाम के महल में रहीं। उधर महाराजा फ़िक्रमन्द थे कि कोई दुर्घटना तो नहीं हुई। मगर पता लगाने का कोई रास्ता भी न था

कि महारानी कहाँ है, क्योंकि न तो कोई संदेशा महल के अन्दर भेजा जा सकता था और न अन्दर की खबर बाहर आ सकती थी।

बाद में, महल के बाहर से कुछ गज के फासले पर आकर महारानी ने मुझे अपना विश्वासपात्र समझते हुए बतलाया कि निजाम उनका इन्तजार कर रहे थे और बाद बस कर उनको अपनी बेगमात के पास पहुँचा आये। फिर वे कमरे में आते ही उनके साथ बैठ कर बात की। उन्होंने यह नहीं बतलाया कि उनके और निजाम के बीच कैसी गुजरी मगर निजाम के स्वागत-सत्कार से प्रसन्न थीं।

महाराजा बहुत पछताते हुए और अपने को धिक्कारते रहे कि उन्होंने महारानी को निजाम के महल में क्यों भेजा। वह फ़ौरन हैदराबाद से रवाना हो गये और फिर कभी उधर न आये। कुछ महीनों बाद, महाराजा को निजाम ने एक तार भेज कर इत्तिला दी कि वे कपूरथला आकर महाराजा से मुलाकात करना चाहते हैं। महाराजा ने बड़ी नम्रता से जवाब में तार भेजा कि चूँकि उनको यूरोप जाना पड़ रहा है, इसलिए वे निजाम के स्वागत-सत्कार के लिए मौजूद न होंगे। इस तरह दो रियासतों के शासकों में आपस में मन-मुटाव हो गया क्योंकि दोनों ही रंगवाली सुन्दरी के पीछे दीवाने थे।

३१. फ़ौव्वारे और रंगरलियाँ

राजपूताने में भरतपुर रियासत थी जहाँ के शासक अपने को राजा रा
चन्द्र जी का वंशज कहा करते थे। महाराजा सर किशन सिंह को रियासत
उन्नीस तोपों की और रियासत से बाहर सत्रह तोपों की सलामी दी जाती थ
स्वतन्त्र भारत में मिलने से पहले रियासत की आमदनी साढ़े सैंतीस ल
रुपये थी। इस आमदनी का एक बड़ा हिस्सा घोड़ों, घुड़सवार सैनिकों, म
राजा के अंगरक्षकों पर खर्च होता था और बाक़ी शाही रसोईघर, अहलक
की वर्दियों, मिनिस्टरों, अफ़सरों और नौकर-चाकरों की तनख़्वाहों में
जाता था। दस फ़ी सदी से भी कम रुपया तालीम, अस्पताल, सड़कों तथा
सार्वजनिक कामों पर ख़र्च किया जाता था।

रियासत की आमदनी का तीन-चौथाई भाग वर्दियों, जीनों, घोड़ों के स
घुड़सवार सेना और घुड़सवार अंगरक्षकों के बैण्ड पर खर्च हो जाता
महाराजा यूरोप गये थे और लन्दन के बकिंघम पैलेस में जहाँ इंग्लैंड के ब
शाह रहते थे, संतरियों को पहरा बदलते देखा था। वे अपने यहाँ वैसी
वर्दियों में वैसे ही संतरी रखना चाहते थे मगर ऐसी शाही शान क़ायम
के लिए रियासत में पैसा न था।

महाराजा को अच्छे घोड़े खरीद कर बड़ी खुशी होती थी। उन घोड़
लिए बढ़िया चमड़े की ज़ीनें जिन पर कीमती धातुओं का सजावट का
बना होता था, तैयार कराई जाती थीं। उनके अंगरक्षकों की पोशाकें वि
तरीके की नये और पुराने ढंग की मिली-जुली होती थीं।

ब्रिटिश रेज़ीडेन्ट और वायसराय के कहने पर महाराजा ने अपने अंगर
की पोशाकें अंग्रेज दर्जियों की दूकानों—फेल्प्स ऐंड कम्पनी तथा रैन्किन
कम्पनी—में सिलवाईं जिन्होंने लाखों रुपये खींचे। महाराजा जब फ्रान्स, ज
या अन्य देशों में नये नमूने देख आते थे तो बदल-बदल कर उसी ढंग
पोशाकें अपने यहाँ सिलवाते थे।

जब फ़ौजी सलामी देने के लिए पूरे आरकेस्ट्रा, ढोल और बाजों के
घुड़सवार सेना का जलूस निकलता था, तब उसकी शान देखते ही बनती थ

इस झूठी शान का एक और नमूना थीं—महाराजा किशन सिंह का
का रिक्शा खींचनेवाले छः कुलियों की वर्दियाँ जिन पर सोने-चाँदी के ता
कारचोबी और जरी का काम बनवाया गया था। शिमला की मशहूर अं
दूकान फ़ैल्प्स ऐंड कम्पनी ने वर्दियों की कीमत ५०,०००) रुपये महाराज
वसूल की थी। गर्मियों में महाराजा को शिमले में सजे-सजाये तड़क-भड़क

३१. फ़ौव्वारे और रंगरलियाँ

राजपूताने में भरतपुर रियासत थी जहाँ के शासक अपने को राजा रा
चन्द्र जी का वंशज कहा करते थे। महाराजा सर किशन सिंह को रियासत
उन्नीस तोपों की और रियासत से बाहर सत्रह तोपों की सलामी दी जाती थी
स्वतन्त्र भारत में मिलने से पहले रियासत की आमदनी साढ़े सैंतीस ल
रुपये थी। इस आमदनी का एक बड़ा हिस्सा घोड़ों, घुड़सवार सैनिकों, म
राजा के अंगरक्षकों पर खर्च होता था और बाक़ी शाही रसोईघर, अहलक
की वर्दियों, मिनिस्टरों, अफ़सरों और नौकर-चाकरों की तनख्वाहों में न
जाता था। दस फ़ी सदी से भी कम रुपया तालीम, अस्पताल, सड़कों तथा दू
सार्वजनिक कामों पर खर्च किया जाता था।

रियासत की आमदनी का तीन-चौथाई भाग वर्दियों, ज़ीनों, घोड़ों के सा
घुड़सवार सेना और घुड़सवार अंगरक्षकों के बैण्ड पर खर्च हो जाता थ
महाराजा यूरोप गये थे और लन्दन के बकिंघम पैलेस में जहाँ इंग्लैंड के ब
शाह रहते थे, संतरियों को पहरा बदलते देखा था। वे अपने यहाँ वैसी
वर्दियों में वैसे ही संतरी रखना चाहते थे मगर ऐसी शाही शान क़ायम क
के लिए रियासत में पैसा न था।

महाराजा को अच्छे घोड़े खरीद कर बड़ी खुशी होती थी। उन घोड़ों
लिए बढ़िया चमड़े की ज़ीने जिन पर कीमती धातुओं का सजावट का क
बना होता था, तैयार कराई जाती थीं। उनके अंगरक्षकों की पोशाकें विदे
तरीके की नये और पुराने ढंग की मिली-जुली होती थीं।

ब्रिटिश रेज़ीडेन्ट और वायसराय के कहने पर महाराजा ने अपने अंगरक्ष
की पोशाकें अंग्रेज दर्जियों की दूकानों—फेल्प्स ऐंड कम्पनी तथा रैन्किन
कम्पनी—में सिलवाईं जिन्होने लाखों रुपये खींचे। महाराजा जब फ्रान्स, जर्म
या अन्य देशों में नये नमूने देख आते थे तो बदल-बदल कर उसी ढंग
पोशाकें अपने यहाँ सिलवाते थे।

जब फ़ौजी सलामी देने के लिए पूरे आरकेस्ट्रा, ढोल और बाजों के स
घुड़सवार सेना का जलूस निकलता था, तब उसकी शान देखते ही बनती थी

इस झूठी शान का एक और नमूना थीं—महाराजा किशन सिंह बहा
का रिक्शा खींचनेवाले छः कुलियों की वर्दियाँ जिन पर सोने-चाँदी के तारों
कारचोबी और जरी का काम बनवाया गया था। शिमला की मशहूर अं
दूकान फ़ेल्प्स ऐंड कम्पनी ने वर्दियों की कीमत ५०,०००) रुपये महाराजा
वसूल की थी। गर्मियों में महाराजा को शिमले में सजे-सजाये तड़क-भड़क व

हॉल गर्मियों की तेज़ धूप से बचा रहता था। महाराजा तोते की तरह किसी पेड़ पर जा बैठते थे। दो पेड़ों के बीच उन्होंने एक छोटा-सा झूलेदार पलंग जैसा खूब ऊँचाई पर बनवा लिया था। उसी पर लेट कर महाराजा फ़ौव्वारों की फुहारें पेड़ों से भी ऊँची जाते देखा करते थे। उनको जान पड़ता कि वे किसी वातानुकूलित कमरे में लेटे हैं।

महाराजा के भोजन की व्यवस्था भी अजीब थी। अपने महल की छत पर उन्होंने अर्द्ध-चन्द्राकार घेरे में लाल पत्थर की क़रीब दो सौ कुर्सियाँ और मेज़ें बनवा कर लगवा दी थीं। वहीं पर महाराजा दावतें देते और इष्टमित्रों तथा उच्च अफ़सरों को अपने सामने खाना खिलाते थे।

वहाँ रोशनी के लिए या तो चाँदनी होती या नक़्क़ाशीदार लकड़ी के शमादानों में मोमबत्तियाँ जलती थीं। उन दावतों में महाराजा रियासत का बहुत रुपया फूँक देते थे। मनोरंजन के ऐसे कार्यक्रम सारी रात चला करते थे। हर क़िस्म की क़ीमती शराब मेहमानों को पिलाई जाती और दरबार की मशहूर तवायफ़ें गाने और नाच से मेहमानों का दिल बहलाती थीं।

महाराजा हर साल छः दफ़ा दरबार या रियासती स्वागत-सत्कार के जलसे करते थे। हर मौसम में एक दरबार लगता था। हर दरबार में मुसाहबों को खास रंग की पोशाक पहन कर शरीक़ होना पड़ता था। मिसाल के तौर पर—वसन्त में सिर से पाँव तक केसरिया, तीज के मौके पर गहरा लाल, होली पर एक दम सफ़ेद, और जाड़ों में नीली या हरी। औरतें भी इसी तरीक़े से अपने वस्त्र पहनती थीं। राह चलते लोग भी मौसम के मुताबिक़ महाराजा के दस्तूर की नक़ल करते थे।

दरबार जितना ही प्रफुल्लचित्त था, रियासत की दशा उतनी ही ख़राब थी। सड़कों की देख-भाल नहीं होती थी। बरसों से उनकी मरम्मत नहीं हुई थी। अस्पतालों में अच्छे डॉक्टर और नर्सें नहीं थीं क्योंकि उनको बहुत कम तनख्वाह दी जाती थी। अदालतों का इन्तज़ाम भी बिगड़ा हुआ था क्योंकि बिना वेतन या थोड़े वेतन पर योग्य जज और मुन्सिफ़ मिलते ही न थे। शहर की सफ़ाई के लिए भंगी या मेहतर तैनात न थे। पैसे की कमी के कारण नगरपालिका या कमेटियाँ काम नहीं कर रही थीं। रियासत में चारों तरफ़ गड़बड़ी फैली थी। हुकूमत नाम को बाक़ी नहीं रह गई थी।

भारत में ब्रिटेन की सत्ता स्थापित होने के पहले भरतपुर एक स्वतन्त्र रियासत थी। सत्रहवीं सदी के अन्त में एक जाट लुटेरे ने, जिसका नाम रुस्तम था, इस रियासत की नींव डाली थी। सन् १७३३ में भरतपुर राजधानी बनी। लार्ड कोम्बरमियर ने भरतपुर महाराजा को इंग्लैंड के बादशाह के अधीन करने में सफलता प्राप्त की थी।

डेढ़ सौ बरस बाद, महाराजा किशन सिंह बहादुर ने अपनी फ़िज़ूलख़र्ची से रियासत को दिवालिया बना दिया।

३२. भूख नहीं है !

मेजर जेनरल हिज़ हाईनेस महाराजा सर हरी सिंह, इन्दर मोहिन्दर बहादुर सिपर-ए-सल्तनत, जी० सी० एस० आई०, जी० सी० आई० ई०, के० सी० वी० ओ०, एडी काँग बादशाह जार्ज पंचम भारत सम्राट, शासक जम्मू व कश्मीर, ने भारत की ब्रिटिश सरकार के प्रतिनिधि रेजीडेन्ट और उनकी पत्नी को अपने महल में डिनर पर आमन्त्रित किया। ब्रिटिश रेजीडेन्ट तथा लेडी रेजिनाल्ड ग्लैन्सी के सम्मान मे दिये गये उस भोज मे ५०० मेहमान निमन्त्रित थे। सभी मेहमान भोज से पहले ठीक समय पर आ गये पर महाराजा को एक घण्टे की देर हो गई।

अन्त में, जब महाराजा पधारे तब वे शिकार की पोशाक पहने थे—बन्द गले का कोट, बिरजिस, जूतों में कीचड लगा हुआ। वहाँ से थोड़ी दूर पर एक तलैया में वे मछली का शिकार खेल कर सीधे चले आये थे। हरी सिंह ने रेजीडेन्ट से देर होने की माफी नहीं माँगी। रेजीडेन्ट को उम्मीद थी कि महल में उनके पहुँचने पर महाराजा स्वागत के लिए मौजूद होंगे। ड्राइंग रूम में महाराजा के दाखिल होते ही रेजीडेन्ट तथा अन्य मेहमानों से उनका परिचय कराया गया, जिनसे महाराजा ने हाथ मिलाया। रेजीडेन्ट राजनीतिक पोशाक पहने थे और सोने के बटन, तमगे वगैरह लगाये थे। हिन्दुस्तानी मेहमान या तो अचकन-पायजामे मे थे, या सूट पहने थे और सफेद टाई लगाये थे।

इन्दौर नरेश महाराजा तुकोजीराव होलकर, पूँछ नरेश राजा पी० सिंह और अन्य राजे-महाराजे, जो भोज में निमन्त्रित थे, कलगी लगाये और हीरे-जवाहरात पहने थे। गले मे वे सफेद और काले सच्चे मोतियों के कण्ठे धारण किये थे।

दावत का हॉल खूब सजाया गया था। संगमर्मर के खम्भे बड़े शानदार लग रहे थे। छत से लटकते हुए सैकड़ों झाड़-फानूस रंग-बिरंगी रोशनी फैला रहे थे। महाराजा कुछ प्रसन्न नहीं लग रहे थे और जैसा उन्होंने अपने कुछ विश्वासपात्र मुसाहबों को बतलाया, रेजीडेन्ट उनको अच्छे आदमी नहीं जान पड़ते थे।

शराब और जलपान पेश होने के बाद, जिसमें महाराजा शरीक न थे, मेहमान लोग भोजन के कमरे मे चले गये जहाँ ५०० मेहमानों के लिए मेजें लगी थीं। महाराजा के लिए सोने-चाँदी की कुर्सी मेज़ के सिरे पर लगी थी, उनके

दाहिनी तरफ़ इन्दौर की महारानी शर्मिष्ठा देवी (भूतपूर्व मिस नैन्सी मिलर जो अमेरिकन महिला थीं) विराजमान थीं। मेज़ के दूसरी तरफ़, हर हाईनेस महारानी कश्मीर थीं जिनके दाहिनी ओर रेज़ीडेन्ट सर रेजिनाल्ड ग्लैन्सी और बाईं ओर महाराजा तुकोजी राव बैठे थे। अन्य मेहमान श्रेष्ठता और प्रतिष्ठा के अनुसार बैठे थे।

सोने और चाँदी के बड़े-बड़े थालों में खाना परोसा गया। मेहमानों के आगे थाल लगाने में ही आबदारों और बैरों को क़रीब आधा घण्टा लगा। दस्तूर यह था कि पहले महाराजा भोज शुरू करें तब मेहमान लोगों की बारी आये।

जब भोजन परोस दिया गया और यह समझा गया कि महाराजा खाना शुरू करेंगे, जो दूसरे मेहमानों के लिए इशारा होगा कि वे भी खाना शुरू करें, तभी भोजन को हाथ लगाये बिना अचानक महाराजा उठ खड़े हुए और बोले—"मुझे भूख नहीं है!" वे बाहर चले गये। उनके पीछे-पीछे उनके हिन्दुस्तानी मेहमान भी उठ कर चल दिये। उनमें से कोई भी दावत के हॉल में फिर वापस न आया। बिना भोजन किये सारे मेहमान विदा हो गये। उतनी रात में भूख मिटाने की उनके लिए कोई और व्यवस्था न थी।

अपनी रवानगी की सूचना महाराजा को दिये बिना ही सर रेजिनाल्ड और लेडी ग्लैन्सी अगले दिन सवेरे राजधानी से चले गये। उन्होंने सारी घटना की रिपोर्ट वायसराय को जा कर दी। वायसराय ने सम्राट जार्ज पंचम को सूचना भेजी कि महाराजा हरिसिंह ने ब्रिटिश रेज़ीडेन्ट के प्रति, जिसका ओहदा विदेशी दरबार में राजदूत से कम नहीं होता बड़ी अशिष्टता दिखलाई है। सच पूछा जाय तो रेज़ीडेन्ट का पद राजदूत से बड़ा था क्योंकि भारतीय नरेश के दरबार में वह सार्वभौम सत्ता का एकमात्र प्रतिनिधि होता था।

वायसराय ने महाराजा से जवाब तलब किया। महाराजा ने कोई जवाब न दिया।

३३. इन्दौर में एक नाचने वाली

महाराजा तुकोजी राव होल्कर ने इन्दौर के डैली कालिज में शिक्षा प्राप्त की। यह राजा-महाराजाओं का कालिज था, वैसा ही जैसे कि लाहौर का ऐचिसन चीफ्स कालिज, अजमेर का मेयो कालिज और राजकोट का राजकुमार कालिज थे। इन कालेजों से पढ़ कर निकले छात्रों की योग्यता में बड़ी विभिन्नता होती थी।

इन कालिजों में, जिस तरह की शिक्षा दी जाती थी, वह शासकों और शासितों, राजा और प्रजा में एक गहरी खाई तैयार कर देती थी। जो राजा-महाराजा इन कालिजों से पढ़ कर निकलते थे, वे कुलाचार भ्रष्ट होते थे। आम तौर पर, इन कालिजों पर अंग्रेजों का नियन्त्रण होता था और वे ही इनको चलाते थे हालांकि छोटे शिक्षक और धर्म शिक्षक ज्यादातर हिन्दुस्तानी हुआ करते थे। लड़कों को इस प्रकार के धार्मिक वातावरण में शिक्षा दी जाती थी कि जिन्दगी में कदम रखते ही वे साम्प्रदायिकता के विचारों से प्रभावित हो जाते थे। कालिज की चहारदीवारी में अलग-अलग पूजा के स्थान बने हुए थे। मिसाल के तौर पर—मुसलमानों के लिए अलग मस्जिद, हिन्दुओं के लिए मन्दिर, ईसाइयों के लिए गिरजा और सिक्खों के लिए गुरुद्वारा। धार्मिक शिक्षा, उनके प्रशिक्षण में बड़ी आवश्यक समझी जाती थी।

ब्रिटिश राजनीतिज्ञ इस बात पर बड़ा जोर देते थे कि इन कालिजों में छात्रों को कट्टर धार्मिक शिक्षा दी जाये जिससे रियासतों के भावी शासकों के विचार साम्प्रदायिक बनें। इस कोशिश के पीछे, अलग-अलग धार्मिक गुट बनाने के प्रशिक्षण की भावना रहती थी। इन कालिजों में अंग्रेजों की 'फूट डाल कर शासन' नीति का पूरा बोलबाला रहता था।

जो लड़के इन कालिजों से निकलते थे, वे हर तरह के दुर्व्यसनों में ग्रस्त हो जाते थे, खास तौर पर बचपन से ही उनको शराब पीने की लत पड़ जाती थी। इन राजकुमारों की देखभाल के लिए तैनात नौकर-चाकर, जो साधारणतया महाराजा के सम्बन्धी हुआ करते थे, इनको शराब पीना सिखाते थे। वे लोग चोरी से सोडावाटर की बोतलों में बाहर से शराब खरीद लाते और बोतलों को बागीचे में गड्ढे खोद कर गाड़ दिया करते थे।

रात को, जब अध्यापक लोग डिनर और नाच के लिए क्लबों में चले जाते, तब नौजवान राजकुमार लोग शराब की बोतलें खोलने और इस तरह

कम उम्र से ही उनको पीने की लत लग जाती। ये कालिज, विलायत के मशहूर हैरो और ईटन कालिजों से बिल्कुल भिन्न थे। इन कालिजों में रजवाड़ों के लड़कों से शाही ढंग का बर्ताव होता था। सरदारों के लड़कों से बर्ताव जुदा किस्म का होता था। सरदारों के लड़कों को बचपन से ही तालीम दी जाती थी कि राजाओं-महाराजाओं को कैसे ताज़ीम देना और कैसे उनकी चापलूसी करना। राजकुमार लोग छोटी उम्र से ही अपने को ऊँचा और प्रतिष्ठित समझने लगते थे क्योंकि सरदारों के लड़के उनको ताज़ीम देते थे और नौकर-चाकर बड़ी इज्जत से उनके पैर छूते थे, ठीक उसी तरह जैसे राजा महाराजाओं के यहाँ चलन होता है।

महाराजा तुकोजी राव जब सयाने हुए, तब उन के दिमाग में यह सनक समा गई कि वे बहुत बड़े राजा हैं। उन्होंने ब्रिटिश सरकार से ऐसी तमाम रियासतें और सहूलियतें हासिल कर लीं जो दूसरे रजवाड़ों को हासिल न थीं। उनको ब्रिटिश सैनिक सलामी दी जाती थी और उनके दरबार का एक राजदूत दिल्ली में रहता था। उनको बड़ा अहंकार हो गया और राजनीतिक मामलों में वे अंग्रेज रेज़ीडेन्ट लोगों तथा भारत के वायसराय से मतभेद रखने लगे। कुछ अरसे बाद, उनके दिमाग़ का सन्तुलन ऐसा बिगड़ गया कि वे खुले तौर पर भारत की ब्रिटिश सरकार की आलोचना करने लगे। बात यहाँ तक बढ़ी कि अपनी रियासत के राजनीतिक मुक़दमे वे इंग्लैंड की प्रिवी कौन्सिल में अपील के लिए भेजने लगे। यह अदालत रजवाड़ों की शिकायतें दूर करने के लिए खुली थी।

प्रिन्स आफ़ वेल्स—इंग्लैंड के युवराज ने, जो बाद में एडवर्ड अष्टम के नाम से बादशाह बने, अपने छोटे भाई के पक्ष में राजगद्दी त्याग दी। वह भाई जॉर्ज षष्ठम के नाम से राजा बना। युवराज एडवर्ड भारत पधारे और उनको इन्दौर आने का निमंत्रण दिया गया। उनकी दावत के मौके पर, महाराजा अपनी सनक में आकर जर्मनी के बादशाह क़ैसर विलियम द्वितीय तथा जर्मनी के सेनाध्यक्षों की प्रशंसा करने लगे जिससे युवराज को बड़ी निराशा हुई और वे बुरा मान गये। तभी से, भारत सरकार से महाराजा के सम्बन्ध बिगड़ गये और अंग्रेज़ों ने उनको नीचा दिखाने की कोई कोशिश बाक़ी न रखी।

महाराजा की कुछ अपनी कमज़ोरियां थीं—ख़ास तौर पर औरतों का जहाँ सम्बन्ध था। अमृतसर से वे एक निहायत खूबसूरत और होशियार नाचने वाली जवान लड़की को, जिसका नाम मुमताज बेगम था, इन्दौर अपने महल में ले आये। उस लड़की ने महाराजा का मन मोह लिया था और कुछ अरसे, बाद, महाराजा उसको बेहद चाहने लगे। अपनी तरफ़ से, मुमताज को महाराजा की कतई परवाह न थी। उसने कई दफ़ा भाग जाने की कोशिश की मगर उस पर सख्त पहरा लगा था, इसलिए कामयाबी न मिल सकी।

अन्त में, जब एक दफ़ा महाराजा अपनी स्पेशल ट्रेन से मसूरी जा रहे थे,

जब दिल्ली में वह स्टेशन पर अपने कुछ रिश्तेदारों से मिली। उनकी साजिश से मुमताज अपने डब्बे से गायब हो गई। वे लोग उसको चुपचाप अमृतसर ले गये। उसको भगाने में पहरेदारों ने भारी रिश्वत ली थी। अगले रोज जब देहरादून स्टेशन पर ट्रेन रुकी, तब महाराजा को पता चला कि मुमताज दिल्ली में ही डब्बे से भाग गई थी। उनको बड़ा गुस्सा आया। पहरेदारों में से कुछ तो वहीं बरखास्त कर दिये गये और कुछ पकड़ कर जेल में डाल दिये गये। महाराजा फौरन इन्दौर वापस आये। वे मुमताज को अपना दिल दे बैठे थे। उसके भाग जाने का उनको बड़ा गम था।

कुछ अरसे बाद, मुमताज बेगम अपनी माँ के साथ बम्बई पहुँची। वहाँ उसकी मुलाकात मिस्टर बावला से हुई जो बम्बई के मेयर थे। वह बावला की रखैल बन गई। इधर, महाराजा के दरबारियों ने सोचा कि महाराजा को खुश करने और उनसे कीमती उपहार हासिल करने का एक तरीका यह है कि मुमताज को जबरदस्ती पकड़ कर बम्बई से इन्दौर ले आया जाय।

बावला को इस षड्यन्त्र का कुछ भी पता न था। रोज शाम को वह अपनी मोटर में बैठ कर हैंगिंग गार्डेन घूमने जाया करता था। महाराजा के दरबारियों को वह वक्त और वह जगह मालूम थी जहाँ बावला और मुमताज रोज घूमने जाया करते। इन्दौर रियासत की दो-तीन मोटर गाड़ियाँ हैंगिंग गार्डेन के करीब देखी गईं जिनमें रियासत के कुछ अफसरान बैठे थे। उनमें इन्सपेक्टर जेनरल पुलिस भी थे। उन लोगों ने बावला की मोटर रोकी और मुमताज को जबरदस्ती बाहर घसीट लेना चाहा। बावला के पास रिवाल्वर था। जो लोग मुमताज को बाहर खींच रहे थे, उसने उन पर गोली चलाई। अफसरों ने भी अपने बचाव में गोलियाँ चलाईं। उस गोली बारी में बावला मारा गया। जब मुमताज को खींच कर दूसरी गाड़ी में बिठाया जा रहा था, उसी वक्त ब्रिटिश तोपखाने के दो अफसर, जो वहाँ सैर करने आये थे, मौके पर पहुँच गये। इन्दौर रियासत के अफसरान जिनमें पुलिस के इन्सपेक्टर जेनरल भी थे, रंगे हाथों गिरफ्तार कर लिये गये।

अंग्रेजों को महाराजा को सजा देने का यह अच्छा मौका मिला क्योंकि वे अंग्रेजों के आगे कभी झुके न थे। न्यायिक जांच का हुक्म और महाराजा को सूचना दी गई कि वे या तो अपने बेटे के पक्ष में राजगद्दी त्याग दें या बावला के कत्ल का मुकदमा चलेगा, जिसका सामना करें।

महाराजा ने अपने मिनिस्टरों और रियासत के प्रतिष्ठित रईसों से मशविरा करने के बाद अपने जसवन्त राव होल्कर के हक में राजगद्दी त्याग देने फैसला किया। उन्होंने सोचा कि कत्ल के मुकदमे में फँसने पर नाहक उनकी बदनामी होगी। इन्दौर पुलिस के इन्सपेक्टर जेनरल, रेजीडेन्ट सर रेजिनाल्ड ग्लैन्सी का अनुग्रह प्राप्त करने के लिए सरकारी गवाह बन गये थे।

ब्रिटिश रेजीडेन्ट की राजनीतिक चतुरता, जो उन्होंने वायसराय के

पर महाराजा से राजगद्दी का त्यागपत्र हस्ताक्षर कराने में दिखाई, खास अंग्रेज जाति के अनुकूल थी। दरबारी रस्म के अनुसार महाराजा ने पूरी आवभगत से रेज़ीडेन्ट का स्वागत सत्कार किया। महाराजा से हाथ मिलाने के बाद सर रेजिनाल्ड एक सोफ़े पर महाराजा के पास ही बैठ गये और भारत सरकार के पोलीटिकल विभाग द्वारा लिखा गया त्यागपत्र महाराजा को हस्ताक्षर के लिए दिया। महाराजा उदास और गम्भीर थे। उन्होंने दस्तखत कर दिये। तब उस पत्र को लेकर रेजिनाल्ड बच्चे की तरह बिलख कर मगरमच्छ के आँसू गिराने लगे, फिर ज़ाहिरा तौर पर उतरा हुआ चेहरा बनाये वे महल से बाहर निकल गये।

महल से बाहर आते ही उनकी नज़र ऊँचे पर लहराते हुए रियासती झण्डे पर पड़ी। उन्होंने अपने आँसू पोंछ कर ड्यूटी पर तैनात ए० डी० सी० को हुक्म दिया कि झण्डा उतार दिया जाय, क्योंकि महाराजा अब इस सम्मान के अधिकारी नहीं रह गये हैं। महाराजा को और भी नीचा दिखाने की गरज़ से उनके निजी ज़ेवर-जवाहरात, प्रिवी पर्स और निजी जायदाद के कई मामले विचाराधीन रखे गये। महाराजा के बेटे जसवन्त राव होल्कर का वायसराय और ब्रिटिश अफ़सरों ने ऐसा पक्ष लिया कि बाप-बेटे में झगड़े की नौबत आ पहुँची। बेचारे तुकोजी राव, जिनका शासनाधिकार छिन चुका था, अब सुख सुविधाओं के लिए अपने बेटे के मोहताज हो गये।

महाराजा की ज़िन्दगी ने एक नया मोड़ लिया जब उन्होंने कुमारी नैन्सी मिलर नाम की एक अमेरिकन महिला से, जो रूप, गुण, योग्यता और चरित्र में बहुत ऊँची थी अपना विवाह किया। अपने मित्रों और सम्बन्धियों में यह महिला लोकप्रिय थी और सभी उसकी प्रशंसा तथा सराहना करते थे। मानिक बाग़ महल से क़रीब डेढ़ मील दूर, एक कोठी में महाराजा अपनी पत्नी और बेटे बेटियों के साथ जा कर रहने लगे। उन्होंने भारतीय रियासतों के भूतपूर्व नरेशों के परिवारों में अपने बेटे-बेटियों की शादियाँ कर दीं।

शासक न रहने पर भी तुकोजी राव बड़ी तड़क-भड़क और शान से रहते थे और अपना दरबार लगाते थे। उनके चेहरे को देखकर प्रकट होता था कि वे महान मराठा परिवार के वंशज हैं और उनमें उनके पूर्वज शिवाजी राव का [illegible]न मौजूद है।

एक बात और भी थी जिसकी वजह से अंग्रेज उनसे ज्यादा चिढ़ते थे। [illegible] थी—अलवर नरेश महाराजा जयसिंह से उनकी दोस्ती—जो बड़े सनकी [illegible]र स्वभाव से बेरहम थे। अलवर नरेश अंग्रेज़-विरोधी थे और उन्होंने अपनी बग़ावत की हरकतों तथा भाषणों से ब्रिटिश रेज़ीडेन्ट के अलावा वायसराय को भी बेहद नाराज़ कर दिया था। वे खुले तौर पर अंग्रेज़ी शासन की खिलाफ़ करते थे और तुकोजी राव की उनसे बहुत ज्यादा घनिष्टता देख कर ब्रिटिश अफ़सरों को खास सन्देह हो गया था कि वे इंग्लैण्ड के बादशाह के प्रति वफ़ा-

दार नहीं रह गये हैं।

रेजीडेन्सी, जहाँ सर रेजिनाल्ड रहते थे इन्दौर शहर से कुछ मील दूर थी और उसकी इमारत एक ऊँचे पठार पर बनी थी। इमारत के चारों तरफ़ एक खुशनुमा बाग़ भी था। रेजिडेन्सी के अपने कर्मचारी और फौजी गारद थी। रेज़ीडेन्सी के अहाते में सेक्रेटरी वर्ग तथा कार्यकर्त्ताओं के निवास के लिए अनेक मकान बने हुए थे। उस पूरे क्षेत्र की व्यवस्था ब्रिटिश कानून के अनुसार होती थी और वहाँ महाराजा की हुकूमत नहीं चलती थी। अंग्रेज़ रेज़ीडेंट लोगों को उस क्षेत्र में जितनी सुविधायें मिलती थी उतनी किसी स्वतन्त्र देश में नियुक्त विदेशी राजदूतों को भी नहीं प्राप्त होती।

अख़बारों ने बावला हत्याकांड का उल्लेख विभिन्न तरीकों से किया मगर यहाँ दिया गया विवरण प्रामाणिक है क्योंकि वह महाराजा तुकोजी राव के एक विश्वस्त मित्र और रिश्तेदार के बयान से लिया गया है। उसे ठीक-ठीक पता था कि मुमताज़ बेग़म को वापस लाने के लिये क्या षड्यन्त्र रचा गया है।

३४. नीली आँखोंवाली रचनी

हिज़ हाईनेस फ़र्ज़न्द-ए-अर्जुमन्द अक़ीदत-पालमन्द, रिपुदमन सिंह नाभ नरेश, पंजाब की नाभा रियासत पर शासन करते थे।

पंजाब के महाराजा रंजीत सिंह के मरने के बाद वह सूबा तमाम छोटी बड़ी रियासतों में बँट गया। फुलकियाँ रियासतों के राजा हालाँकि आपस सगे चचेरे भाई थे, मगर उनमें लगातार झगड़े-फ़साद और प्रतिद्वन्द्विता चल करती थी। ख़ास तौर पर पटियाला नरेश भूपेन्दर सिंह और नाभा के महाराज रिपुदमन सिंह में ज़रा भी नहीं पटती थी। नाभा राज्य की सरहद पर ब एक गाँव से रचनी नाम की एक जवान लड़की को पटियाला महाराजा अफ़सरान ज़बरदस्ती घर से उठा ले गये। नतीजा यह हुआ कि नाभा औ पटियाला के महाराजा में दुश्मनी हो गई।

रचनी एक किसान की लड़की थी। वह बेहद ख़ूबसूरत थी, इकहरा बद सुनहले बाल और नीली आँखें थीं। वैसी ख़ूबसूरती पंजाब की औरतों में नह पाई जाती।

महाराजा पटियाला जब नाभा गये हुए थे, तब इत्तिफ़ाक़ से पहली दफ़ उनकी नज़र रचनी पर पड़ गई। बात यह हुई कि महाराजा को सड़क पास एक जंगली बारहसिंगा दिखाई पड़ा। उन्होंने गोली चलाई मगर निशान चूक गया और जानवर भाग खड़ा हुआ। महाराजा के कहने पर ड्राइवर मोटर दौड़ा कर उसका पीछा किया। अन्त में मसाना गाँव के पास महाराज ने गोली से उसे मार गिराया। गाँव के तमाम मर्द, औरतें और बच्चे शिका को देखने आ पहुँचे। उस भीड़ में रचनी भी थी जिस पर महाराजा की नज पड़ गई।

रचनी से चार आँखें होते ही महाराजा का अपने दिल पर क़ाबू न रहा महाराजा ने उसके माँ-बाप को कई दफ़ा संदेसे भेजे कि वे अपनी बेटी के सा पटियाला आयें मगर उन लोगों ने महाराजा का हुक्म मानने से इन्कार क दिया। जब समझाना-मनाना कुछ काम न आया तब कुछ सिक्ख फ़ौजी अफ़सरों को भेज कर रचनी को उसके घर से उठवा कर मँगाया गया पटियाला लाकर उसे महल में पहुँचा दिया गया जहाँ महाराजा की तमाम रखैलों और सहेलियों में उसे भी शामिल होना पड़ा। इस घटना ने दोनों महाराजाओं के आपसी ताल्लुक़ात में ख़ासा फ़र्क़ आ गया।

नाभा नरेश ने पटियाला से कितनी ही औरतें जबरदस्ती उठवा लीं,
इस तरह महाराजा पटियाला से बदला चुकाया। इससे दोनों में झगड़ा
और बढ़ गया। एक दफ़ा महाराजा नाभा ने अपनी फ़ौज भेज दी। दोनों
रियासतों की फ़ौजों में जम कर मुठभेड़ हुई और कितने ही सिपाही मरे तथा
घायल हुए।

खूँरेज़ी के इस झगड़े में भारत सरकार ने दख़ल दिया। एक कमीशन
मुक़र्रर किया गया कि मामले की जाँच करे और अपनी रिपोर्ट वायसराय को
पेश करे। फ़ैसला वायसराय के हाथ में रहा कि क़त्ल, आग लगाने, बदअमनी
और खूँरेज़ी जैसे संगीन जरायम का गुनहगार दोनों में से कौन था। दो
साल तक जाँच-पड़ताल का काम जारी रहा। वायसराय ने अन्त में महाराजा
भूपिन्दर सिंह पटियाला नरेश के हक़ में अपना फ़ैसला दे दिया। रिपुदमन सिंह
से कहा गया कि अपने बेटे के पक्ष में राजगद्दी त्याग दें।

वायसराय ने अपने फ़ैसले की इत्तिला देने के लिए अपने एजेन्ट कर्नल
मिन्चिन को महाराजा नाभा के पास भेजा। कर्नल मिन्चिन हथियार बन्द
ब्रिटिश पैदल सेना, घुड़सवार अंगरक्षकों का दल और अम्बाला छावनी के एक
फ़ौजी रेजिमेन्ट को लेकर नाभा पहुँच गया। महाराजा को गवर्नर जेनरल के
एजेन्ट के आने की ख़बर दी गई मगर वे महल से बाहर न निकले। महल के
भीतर बहस छिड़ी हुई थी कि महाराजा अधीन हो जायें या लड़ें। गुस्से में भर
कर कर्नल मिन्चिन ज़ोर से चिल्लाया—"ऐ अकाली! बाहर निकल!" उन
दिनों, भारत में अकाली सिक्खों ने ब्रिटिश-विरोधी आन्दोलन छेड़ रखा था
और ब्रिटिश सरकार को शक था कि महाराजा नाभा उनकी मदद करते हैं।
जब रिपुदमन सिंह ने देखा कि कर्नल मिन्चिन ने महल के बाहर फ़ौजी मोरचा
क़ायम कर दिया है, तब बाहर आकर उन्होंने आत्म समर्पण कर दिया। फ़ौरन
एक बन्द गाड़ी में बिठा कर उनको रियासत से बाहर अम्बाला भेज दिया
गया। वहाँ से वे दक्षिण भारत में कोडाईकैनाल ले जाकर नज़रबन्द कर
दिये गये। अनेक वर्षों बाद देशनिकाले की हालत में उनकी मृत्यु हुई।

३५. जूनागढ़ की कुतिया शाहज़ादी !

सौराष्ट्र में जूनागढ़ रियासत के नवाब, हिज़ हाईनेस सर महाबत ख़ाँ, रसूल ख़ाँ, जी० सी० एस० आई०, के० सी० एस० आई० का दिमाग़ बड़ा सनकी था। उनकी ज़िन्दगी के हर काम में यह नज़र आता था कि आम इन्सान से उनकी हरकतें बिल्कुल जुदा हैं।

एक रोज़ उनके दिमाग में यह सनक आई कि उनकी एक कुतिया, जिसका नाम रोशनआरा था, उसका जोड़ा मिलाना चाहिए। उस कुतिया को छोटेपन से उन्होंने बड़े ऐशोआराम में पाला था। सारी रियासत में मशहूर था कि वह नवाब की खास कुतिया थी जिसको वह दिन-रात कभी अकेली नहीं छोड़ते थे।

फ़ारसी में एक कहावत है जिसका अर्थ है—एक कुत्ता अगर बादशाह के क़रीब है, तो वह कई आदमियों से बढ़ कर है जो दूर पर हों। जब रोशन-आरा जवान हुई और उसकी शादी की ज़रूरत महसूस की जाने लगी, तब नवाब ने अपने प्राइम मिनिस्टर सर अल्लाबख्श को हुक्म दिया कि रोशनआरा की शादी उतनी ही धूम-धाम से होनी चाहिए जैसी कि शाहज़ादियों की शादी में होती है।

अतएव, राजा-महाराजाओं, नवाबों और जागीरदारों को तो निमंत्रण भेजे ही गये, साथ ही, नवाब के खास दोस्त-अहबाब जो भारत सरकार में थे और भारत के वायसराय व उनकी पत्नी—लार्ड व लेडी इर्विन, गवर्नर-जेनरल के एजेण्ट व उनकी पत्नी को भी शादी में आमन्त्रित किया गया। क़रीब-क़रीब सभी लोगों ने शादी में शरीक होना मंजूर कर लिया, सिर्फ़ वायसराय और उनकी पत्नी ने सोचा कि ऐसा मौक़ा तो पहले कभी नहीं आया और अगर आया है तो वह किसी की परले सिरे की बेवक़ूफ़ी व दिमाग का फ़ितूर है। उन्होंने इन्कार कर दिया।

शादी के रोज़ रोशनआरा को इत्र और सेन्ट से नहलाया गया और क़ीमती जेवरात से सजाया गया। फिर उसको दरबार हॉल में लाया गया जहाँ उसका निकाह जूनागढ़ नवाब के बहनोई मंगलोर के नवाब के शिकारी कुत्ते बूबी से होने वाला था। मोतियों का हार, साथ में कुछ और जेवरात कुतिया को [illegible]हिनाये गये। कुत्ते के पैरों में बाज़ूबन्द और गले में सोने का हार पहिनाया [illegible]। उसको रेशमी ज़री के काम की पोशाक भी पहिनाई गई मगर कुतिया [illegible] नहीं पहिने थी। दूल्हे की आगवानी के लिए नवाब जूनागढ़ [illegible] [illegible] पर पहुँचे जिनके साथ क़ीमती पोशाकों में हीरे-जवाहरात पहने [illegible]

कुत्तों का जलूस हाथियों पर सोने-चांदी के हौदों में सवार हो कर
गया था। मिनिस्टर लोग, रियासत के बड़े-बड़े अफसरान, अहलकार,
के परिवार के लोग, सभी दूल्हे बूबी की अगवानी के लिए स्टेशन पर
थे। खास तरह के शानदार स्टेशन पर बिछा दिये गये और फौज ने बूबी
को सलामी दी। वहां से बूबी को साथ लेकर जलूस निकाह के लिए दरबार हॉल
पहुंचा।

रियासत में तीन दिन की छुट्टी का एलान कर दिया गया और मेहमानों
समेत कम से कम पचास हज़ार लोगों को बहुत उम्दा खाना खिलाया गया।
यह दावत नये ढंग की थी जिसमें दिन में तीन दफा—सुबह, दोपहर और रात
में—खाने का सामान ट्रकों, गाड़ियों और छकड़ों में लाद कर लोगों के घरों
में पहुंचाया गया। प्रतिष्ठित लोगों और खास तौर पर बुलाये गये राजाओं-
नवाबों की बढ़िया दावत का इन्तज़ाम था। दावत के बाद, बड़ौदा, बम्बई
और इन्दौर से आई हुई खूबसूरत तवायफों ने नाच-गाने से मेहमानों की
खातिर की।

निकाह की रस्म पूरी करने के लिए काज़ी बुलवाये गये जिन्होंने उसी
ढंग से निकाह पढ़वाया जैसे शाहज़ादियों की शादी में पढ़वाते थे। करीब
७०० दरबारियों और सारे हिन्दुस्तान से आये हुए मेहमानों की मौजूदगी में
निकाह की रस्म अदा हुई। राजे-महाराजे और रईस लोग, जो दूल्हे की बारात
के साथ स्पेशल ट्रेन से आये थे, उस शादी की रस्म को बड़ी दिलचस्पी से
देखते रहे।

निकाह के बाद दावत हुई जिसमें रोशनआरा को खास इज्ज़त की जगह
पर नवाब के दायें तरफ और उसके पास बूबी को बिठाया गया। दूसरे लोगों
की तरह दूल्हा-दुल्हन के सामने भी उम्दा खाना परोसा गया।

अखबारों के प्रतिनिधि भी मौजूद थे। शादी की फिल्म बनाई गई और
फ़ोटो उतारे गये जो हिन्दुस्तान और विदेशों के अखबारों में छपे। यह बड़ी
सनसनीखेज़ शादी थी जिसकी रस्म पूरी होने पर नवाब ने एलान किया
कि अपने कुत्तेघर में वे ८० मादा और २० नर कुत्तों का इज़ाफ़ा करेंगे।
इस तरह उनके कुत्तों की तादाद १००० के करीब पहुंच गई।

नवाब की प्यारी कुतिया रोशनआरा को शादी के बाद भी बड़ी खातिर
से उम्र भर रखा गया। उसे खास खाना मिलता था, कीमती मलमल की
गद्दियों पर सोती थी और हमेशा वातानुकूलित कमरे में रखी जाती थी, जब
कि उसका शौहर बूबी, शादी के बाद, दूसरे कुत्तों के साथ कुत्ताघर में डाल
दिया गया था।

इस मौके की धूम-धाम व चहल-पहल देख कर कई रजवाड़ों ने, जैसे
जिन्द के रनबीर सिंह और पटियाला के भूपेन्दर सिंह ने भी अपने कुत्ते-कुत्तियों
की ब्याह- , नया फैशन ही उत्तरी भारत में जारी कर दिया।

३६. डाकुओं का बादशाह

पुलिस के हाथों गिरफ़्तार होने के पहले, क़ातिलों के बादशाह भूपत डाकू ने ७० से ज़्यादा हत्याएँ करके शोहरत या बदनामी हासिल कर ली थी। इस मामले में, जिस पुलिस ने भूपत को पकड़ा, वह पाकिस्तानी पुलिस थी। श्री अश्विनी कुमार ने, जो भारतीय पुलिस के बड़े अफ़सर थे, अपने जीवट और मर्दानगी से भूपत को भारत की सीमा के बाहर खदेड़ दिया। वह पाकिस्तान में पनाह खोजने को मजबूर हो गया। स्वतन्त्रता के बाद, सौराष्ट्र के रियासती इलाक़े में होने वाले रक्तपात के नाटक का यह एक छोटा-सा दृश्य था।

सब कुछ होते हुए, भूपत को देश से बाहर निकाल देने की तजवीज़ नहीं थी। योजना यह थी कि भारत-पाकिस्तान सरहद पर रेगिस्तान और दलदल में भूपत के छिपने के जितने भी अड्डे हों, उन सब पर क़ब्ज़ा करके भूपत को हथियार डाल देने को मजबूर कर दिया जाय। इस योजना को अमल में लाने के लिए श्री अश्विनी कुमार की कमान में बहुत बड़ी पुलिस फ़ोर्स तैनात कर दी गई।

जगह-जगह भूपत का पीछा किया गया। कई दफ़ा उसने भारत-पाकिस्तान सरहद पार की—फिर आया, फिर भागा।

लुकाछिपी का यह खेल क़रीब पांच महीने चलता रहा। अचानक, लोगों ने अख़बारों में पढ़ा कि पाकिस्तान की पुलिस ने सिन्ध में भूपत को गिरफ़्तार कर लिया। इस ख़बर से भूपत के ज़ुल्म से सताये हुए इलाक़ों के रहने वालों को राहत की साँस लेने का मौक़ा मिला मगर पुलिस विभाग के अधिकारी यह सोच कर ताज्जुब करते रहे कि यह सब कैसे हुआ और भूपत व उसके साथी किसकी मदद से इतने दिनों तक पुलिस से लड़ते और बचते रहे, उनकी समझ में न आता था कि भूपत इतने साधन कैसे जुटा पाया जो वह पुलिस की आँखों में धूल झोंकता रहा।

इसके पीछे एक कहानी है। भारत सरकार ने रियासतों के विलयन का जब कानून बनाया और राजा-महाराजाओं की सत्ता व शासनाधिकार समाप्त होने लगे, तब काठियावाड़ के रजवाड़ों और जागीरदारों ने सरकार से बदला लेने तथा देश की क़ानून-व्यवस्था को भंग करने के लिए भूपत का सहारा लिया जो परले सिरे का लुटेरा और डाकू था। वे लोग भूपत के डाकू-दल

को रुपए-पैसे की मदद देते थे और वह सारे इलाके मे लूट-मार, कत्ल और आग लगाने का अभियान चला रहा था।

अपने सरक्षको की इच्छानुसार भूपत ने ऐसा आतंक फैलाया कि पूरे सौराष्ट्र का इलाका क़ानून से बाहर हो कर भारत की सब से ज्यादा खतरनाक जगह समझा जाने लगा। सारे गाँव अत्याचार पीडित हो उठे और हत्यायें तो आये दिन का एक खेल बन गई। कुछ भूतपूर्व रजवाडे व जागीरदार बड़े प्रसन्न हुए और उन्होने भूपत को खूब धन दिया जिसके पूरे दल का खर्च तीन सौ रुपये रोज़ था।

भारत मे जैसे ही भूपत के पाकिस्तान भाग जाने की खबर आई, वैसे ही सौराष्ट्र की सरकार ने उन लोगो का गिरफ्तारी शुरू कर दी जिन्होने भूपत को उकसाया, उससे लूटमार कराई और भारत की सरहद पार करने मे उसे मदद दी थी। यह कोई ताज्जुब की बात न थी कि गिरफ्तार किये गये लोगों मे कम से कम ग्यारह रजवाड़े और उनके विश्वस्त अनुचर थे। यह ज़ाहिर था कि जनता मे बदअमनी फैला कर वे लोग अपनी गई-गुजरी शान किसी हद तक कायम रखना चाहते थे। उनमे से कुछ तो खुली बगावत कर रहे थे।

रजवाडों की यह साजिश शुरूआत मे ही ज़ाहिर हो जाने से मुनासिब रोक थाम मुमकिन हो सकी। अगर ऐसा न होता तो बदअमनी और बगावत फैलाने वाली हस्तियों को मिटाने की बहुत बड़ी कीमती भारत को चुकानी पड़ती।

ज्यों-ज्यों आम चुनाव के दिन करीब आ रहे थे, त्यो-त्यों सौराष्ट्र के ज़मीदार और राजगद्दी से हटाये हुए रजवाड़े डाकुओं को नौकर रख कर उनके ज़रिये अपने विरोधियों को कुचलने और नष्ट करने की कोशिशें बढाते जा रहे थे। उनका इरादा था कि इस तरीके से सौराष्ट्र के विधान-मडल पर अधिकार करके वे अपने हिमायती लोगो की सरकार कायम कर सकेंगे।

एक गाँव पर भूपत के हमले का आँखो देखा हाल हम आगे बता रहे हैं। बम्बई के एक समाचार-पत्र के जून के अक मे उस पत्र के वैतनिक सवाददाता ने लिखा था—

उस छोटे से, एकान्त मे बसे बरवाला गाँव पर भूपत के कातिलाना हमले का खास मकसद एक घर के छः भाइयों का कत्ल करना था जिनमे से एक राजनीतिक कार्यकर्त्ता था और किसानो को ज़मींदारो के खिलाफ भडकाया करता था। दो भाइयों को गोली से उडा दिया गया और उनकी नाकें काट ली गई। घटना इस प्रकार हुई।

"आसमान पर मौसमी हवाओं के शुरुआती बादल उमड़ आये थे जिस वक्त देदरदा नामक के छोटे से गाँव की सरहद पर छः घुड़सवार आ पहुँचे। वह गाँव .· ‾ ५ ६ मील दूर था। वे घुड़सवार खाकी कपड़े

नये ढंग के हथियारों से लैस थे और उनका सरग़ना हैट लगाये था। इसके पहले
कि घबराये हुए किसान कुछ पूछते, सरग़ना ने उनसे खाना लाने को कहा।
"जब खाना लाया जा रहा था, उतनी देर डाकू लोग अपनी बन्दूकें किसानों
के बच्चों की तरफ ताने रहे। भोजन करने के बाद उन्होंने सारे किसानों को
एक झोंपड़ी के अन्दर बन्द करके बाहर पहरा बिठा दिया और आराम करने
लगे। उनकी मंज़िल देदरदा नहीं बल्कि बरवाला था।
"शाम को चार बजे उन्होंने डरे हुए किसानों से बैलगाड़ी जुतवाई जिस
बैठ कर सूरज डूबने तक वे बरवाला जा पहुँचे। उन्होंने पोपट लाल का घ
पूछा। यह वही आदमी था जो ताल्लुक़दारों और ज़मीदारों की आँख का कां
बन चुका था। घर में घुसने पर डाकुओं को पता चला कि उनका शिकार घ
में मौजूद न था और किसी काम से जसदान गया हुआ था।
"डाकुओं ने अपने को पुलिस के आदमी बता कर पोपट लाल के हथिय
के लाइसेन्स देखने को माँगे। जब बन्दूकें, कारतूस और लाइसेन्स लाये ग
तब डाकुओं ने उन पर कब्ज़ा करके कहा—"तुम्हारे पोपट लाल की वजह
हम लोग आज तुम सबका सफ़ाया करने आये हैं।"
"भूपत ने अपना असली परिचय दिया, गाँधी जी की एक तस्वीर
चरखा तोड़ डाला और घर की तमाम क़ीमती चीज़ें ला कर सौंप दें
कहा।
"उस मौक़े पर छः में से सिर्फ़ दो भाई घर पर थे—कान्तीलाल
३४ साल) और छोटा लाल (उम्र ३६ साल)। घर में, रात का खाना पक
था। भूपत ने जलती हुई लकड़ी खींच कर कान्तीलाल पर फेंकी। जल ज
कान्तीलाल समझ गया कि अब उसकी मौत आ गई है जिससे बचना मुश्कि
उसने उन हत्यारों से लड़ कर मरना ही मुनासिब समझा मगर वह अके
क्या करता। वह डाकुओं से भिड़ गया। डाकुओं ने दोनों भाइयों को दबोच
और चाकू से उनकी नाकें काट डालीं। घर की औरतों ने रो-रो कर
से विनती की कि मर्दों को छोड़ दें पर उन्होंने एक न सुनी। डाकुओं ने
कि वे पोपट लाल से बदला लेने आये हैं क्योंकि वह ज़मीदारों और त
दारों की मुख़ालिफ़त करता है। जो लोग गिरासदारों के ख़िलाफ़
उठाते हैं, उनका क्या हाल होता है, उसकी मिसाल क़ायम करने वे आ
"दोनों भाइयों के बदन से ख़ून बह रहा था। डाकुओं ने उनको
से [illegible]। [illegible]ल को छः गोलियाँ मारी गईं। कमरे में चारों
हत्याकाण्ड से संतुष्ट हो कर कुछ देर डाकू लोग
और सुनते रहे। उनमें से एक को पोपट लाल
सब उसको पकड़ने चले। उस अभागे आदमी की
और पति को अपने शरीर से ढक कर डाकुओं से
मारना चाहते हो तो पहले मुझे मार डालो!" डाकू

भूपत के हत्यारे जीवन में यह पहला मौका था जब एक औरत ने उसका अपने शिकार तक पहुंचने का रास्ता रोका था। भूपत ने उसे छोड़ दिया और डाकुओं को साथ लेकर पोस्ट मास्टर के दूसरे भाई को लूटने चल पड़ा। वहां भूपत ने १५००) रुपये के जेवरात लूट लिए।

"पोस्ट मास्टर के और दो भाई मौत का सामना करने से बच गये। कालिदास घर में जाने ही वाला था, जहां उसके दो भाई मरे पड़े थे कि उसने शोर सुना। मारे डर के वह चालीस फीट गहरे कुएँ में कूद पड़ा। उसके काफी चोट आई और वह बेहोश हो गया। भूपत के चले जाने के बाद गांव वालों ने उसे कुएँ से निकाला। वह अस्पताल भेज दिया गया।

"अनूप चन्द ने गांव में दाखिल होने से पहले ही भूपत के आने की खबर पाई। वह भाग खड़ा हुआ। मौत, लूट मार और गाने का त्योहार मनाने के बाद डाकुओं ने पोस्ट मास्टर की दूकान में आग लगा दी और रात के अंधेरे में गायब हो गये।"

सौराष्ट्र में दबी-दबी अफ़वाहें उड़ रही थीं कि भूपत और उसके साथी डाकू, हत्या और लूटमार की बढ़ती हुई वारदातों के अकेले जिम्मेदार नहीं हैं बल्कि उनके पीछे अनेक गिरासदार और रियासतों के भूतपूर्व राजे-महाराजे भी हैं। नवानगर के जाम साहब महाराजा रन्जीत सिंह का नाम भी इस सिलसिले में लिया जाता था। यही वजह थी कि पुलिस डाकुओं के इस बादशाह को पकड़ने में कामयाब नहीं हो पाती थी।

३७. गायकवाड़ की छड़ी

हिज़ हाईनेस फ़र्ज़न्द-ए-खास दौलत-ए-इंग्लीशिया, महाराजा सर सयाजी राव गायकवाड़, सेना खास खेल शमशेर बहादुर, जी० सी० एस० आई०, जी० सी० आई० ई०, बड़ौदा के महाराजा दक्षिण-पश्चिमी भारत की एक प्रमुख रियासत के मराठा शासक थे। वे अपने स्वतंत्र राजनीतिक विचारों के लिए मशहूर थे। वे अंग्रेज़ों से बेहद नफ़रत करते थे, हालाँकि उनका लालन-पालन और तालीम बम्बई सिविल सर्विस के मिस्टर एफ़० ए० एच० इलियट की देख-रेख में हुई थी, जो उनके शिक्षक नियुक्त किये गये थे।

ब्रिटिश सरकार का बड़ा गम्भीर राजनीतिक मतभेद महाराजा से था। उनको कई दफ़ा चेतावनी दी गई थी कि अगर उन्होंने अपना रवैया न बदला तो राजगद्दी छोड़नी पड़ेगी।

जब सन् १९११ में, बादशाह जार्ज पंचम अपनी ताजपोशी मनाने भारत आये, तब दिल्ली दरबार में सम्राट् के सम्मुख पहुँच कर, उन्होंने बड़ी अशिष्टता का व्यवहार किया। सार्वजनिक दरबार की रस्म के अनुसार बादशाह के आगे झुक कर आदर से उनका अभिवादन करने के बजाय महाराजा ने एक नई हरकत की। अपने हाथ में छड़ी लिये मंच की तरफ़ बढ़े जहाँ सुनहले सिंहासन पर भारत सम्राट् विराजमान थे। उनके आगे झुकने के बजाय महाराजा ने उनको अपनी छड़ी से सलाम किया और हाथ में वही छड़ी घुमाते हुए आ कर अपने स्थान पर बैठ गये।

उन्होंने न तो राजनीतिक व्यवहार के नियमानुसार सम्राट् के सामने मुँह किये हुए सात क़दम पीछे हट कर घूमने की मर्यादा का पालन किया और न वायसराय द्वारा रजवाड़ों को दी गई हिदायतों के बमूजिब राजसी पोशाक़ पहन कर दरबार में आये। हीरे, जवाहरात और तमग़े वग़ैरह पहन कर आने के बजाय वे सादा सफ़ेद कोट, ढीला पायजामा और मराठा ढंग की पगड़ी पहने हुए थे। उनका यह रवैया सम्राट् का निश्चित अपमान समझा गया। [illegible] ज़ाहिरा तौर पर चिढ़े हुए थे और अंग्रेज अफ़सरों का खून खौल रहा [illegible]-महाराजे इस दबंगपने को देख कर हैरान थे मगर मन ही मन हँस [illegible] कि उनके एक भाई ने सम्राट् का अच्छा अपमान किया।

[illegible]यकवाड़ से, जिनको फ़र्जन्द-ए-खास दौलत-ए-इंग्लीशिया का खिताब [illegible] वायसराय ने सम्राट् के प्रति दुर्व्यवहार और अशिष्टता दिखाने का

जवाब तलब किया। गायकवाड़ ने यह कह कर जान छुड़ाई कि पहले निज़ाम सम्राट् के आगे पेश हुए फिर दूसरा नम्बर उनका आया था, इसलिए उनको औपचारिक रस्मों और दरबार के कायदे की जानकारी न थी कि सम्राट् के आगे कैसे व्यवहार करना चाहिए।

लन्दन मे शाम को प्रकाशित होने वाले अखबारो मे मोटे-मोटे अक्षरों छपा—"गायकवाड़ ने बादशाह का अपमान किया।" लन्दन के स्काला थियेटर में जब दिल्ली दरबार की फिल्म दिखाई जा रही थी तब दर्शक चिल्ला पड़े—"धिक्कार है! धिक्कार है! दगाबाज को फांसी दे दो! राजगद्दी से उतार दो!" हॉल के अन्दर खूब गुलगपाड़ा मचा और बड़ी मुश्किल से स्थिति सम्हाली गई।

बाद मे ठीक पता चल गया कि बड़ौदा के गायकवाड ने जानबूझ कर अशिष्ट व्यवहार किया था और वे सबके सामने सम्राट् का अपमान करना चाहते थे। कारण यह था कि महाराजा उस मराठा जाति के शिरोमणि थे, जो कभी सारे भारत पर शासन करती थी और उनके पूर्वजो की ऊँची प्रतिष्ठा के विरुद्ध था कि उनको ऐसी दीनतापूर्वक एक विदेशी शासक के सामने प्रस्तुत होने की मजबूरी का सामना करना पड़ा।

३८. शौचालय में कैबिनेट

हिज़ हाईनेस नवाब सर सैय्यद मोहम्मद हामिद अली खाँ बहादुर, रामपुर रियासत के शासक और किसी ज़माने की रुहेला ताक़त के एकमात्र प्रतिनिधि थे। ब्रिटिश सरकार ने उनको—आलीजाह, फ़र्जन्द-ए-दिल, पज़ीर-ए-दौलत-ए-इंग्लीशिया, मुख़लिस-उद्-दौला, नासिर-उल्-मुल्क, अमीर-उल्-उमरा, जी० सी० एस० आई०, जी० सी० आई० ई०, वगैरह ख़िताब औ तमग़े दिये थे। रामपुर के शासकों का परिवार सैय्यद लोगों का था उ उत्तर प्रदेश के मुजफ़्फ़र नगर के निवासी थे। हिज़ हाइनेस की ललित कला में रुचि थी और उनको उर्दू-फ़ारसी साहित्य का अच्छा ज्ञान था। अप मेहमान-नवाज़ी के लिए सारे भारत में उनका नाम था। वे अपने आलीशा ख़ास बाग़ पैलेस में रहते थे जिसका एक हिस्सा प्रतिष्ठित मेहमानों, रा महाराजाओं, रिश्तेदारों, वायसराय, विदेशी राजाओं और दुनिया की बड़ी बड़ी हस्तियों के ठहरने के लिए रिजर्व रहता था। इस महल में हिन्दुस्ता ढंग का बेहतरीन खाना मेहमानों के लिए पकता था। महल के बावर्चीख़ाने अंग्रेज़ी ढंग का जो खाना पकता था, वह भी ऊँचे दर्जे का होता था। उस बेहतर खाना सिर्फ़ महाराजा कपूरथला के महल में बनता था जहाँ फ़्रान्स होशियार बावर्ची मुस्तक़िल तौर पर मुलाज़िम थे।

कपूरथला के महल में मामूली पीने का पानी अच्छा नहीं समझा जात था। फ़्रान्स के लॉ वेन्स में एविग्रान से झरनों का पानी बराबर मँगाया जात था और उम्दा किस्म की मँहगीश रावों का कहना ही क्या, जो हमेश ज्यादा से ज्यादा आती रहती थीं। नवाब रामपुर के महल में भी मेहमान को एक से एक बढ़ कर खाने की चीज़ों और बढ़िया शराब की सुविधा रह थी।

जब कपूरथला नरेश हिज़ हाईनेस महाराजा जगतजीत सिंह रामपुर गर थे, तब रोजाना दावतें होती थीं जिनमें एक से एक उम्दा खाने की चीज़ [illegible] और विदेशी ढंग से पकी हुई, प्लेटों में सजा कर मेहमानों को [illegible] थीं जिनको देखते ही भूख लग आती थी। हालांकि नवाब ख़ुद [illegible] से परहेज करते थे मगर मेहमानों के तबियत भर पीने पर उनको [illegible] एतराज न था।

आम तौर पर, डिनर पार्टियों में नवाब अपने हँसमुख स्वभाव, [illegible]

और मीठी फ़ब्तियों की वजह से सब पर छाये रहते थे। राजनीति और समाज-विज्ञान में असाधारण विद्वान होने के अलावा उर्दू और फ़ारसी की गालियों की पूरी लुगत उनको हिफ़्ज़ थी। एक रात को दावत की मेज़ पर नवाब डींग हांकने लगे कि वहां मौजूद लोगों में जिसका जी चाहे पंजाबी, उर्दू और फ़ारसी में गालियां देने में उनका मुकाबला करे। पांच या छः मेहमान, जिनमें महाराजा कपूरथला के कुछ अफ़सरान, ख़ासतौर पर महल के डॉक्टर सोहन लाल थे, नवाब के मुकाबले को तैयार हो गये। नतीजा यह हुआ कि नवाब अलग-अलग ज़ुबानों में करीब ढाई घंटे तक चुनी-चुनी गालियां सुनाते रहे मगर उनकी लुगत ख़त्म न हो पाई जब कि दूसरे लोग आधे या एक घंटे बाद ख़ामोश हो गये। नवाब इस तरीक़े से ज़ाहिर करना चाहते थे कि वे पंजाबी, उर्दू और फ़ारसी ज़ुबानों के ही विद्वान नहीं हैं बल्कि किसी भी विषय पर बिल्कुल आसानी से अपने विचार प्रकट कर सकते हैं चाहे वह अशिष्ट और गंवारू मज़ाक़ क्यों न हो।

नवाब के दिल में अपने वतन भारत और भारत के निवासियों के प्रति गहरा अनुराग था। एक दफ़ा बातों-बातों में कपूरथला के डॉक्टर सोहन लाल ने कहा कि यूरोप की औरतें हिन्दुस्तानी औरतों के मुकाबले ज़्यादा ख़ूबसूरत होती हैं। यह सुन कर नवाब अपने आपे में न रहे। उन्होंने डॉक्टर को बुरी गालियां सुनाईं और कहा कि उनका मेहमान होकर उन्होंने हिन्दुस्तानी औरतों की शान के ख़िलाफ़ ऐसी बात ज़ुबान से क्यों निकाली? नवाब ने महाभारत के ज़माने से लेकर मौजूदा ज़माने तक के कवियों और शायरों की एक के बाद एक कविताओं का तांता बांध दिया जिन्होंने भारतीय स्त्रियों के रूप और सुन्दरता की खुले दिल से तारीफ़ की थी। इसके बाद वे तैश में आकर उठे और कपूरथला के महाराजा के समझाने पर भी—कि वे डॉक्टर सोहन लाल की मामूली सी बात को दिल में न रखें—वहां से चले गये। नवाब तभी वापस आये जब डॉक्टर सोहन लाल मेज़ पर से ही नहीं बल्कि महल की चहारदीवारी से बाहर चले गये। असल में, अपनी बात से नवाब को नाराज़ कर देने की सज़ा उनको यही मिली कि उनको कपूरथला वापस जाना पड़ा। नवाब को शान्त करने के लिए कपूरथला महाराजा ने ऐसा हुक्म दिया था जिससे बात आगे न बढ़े।

नवाब अपने मेहमानों की शाहाना ख़ातिर करने के लिए मशहूर थे। रियासत का आम दस्तूर था कि हर मेहमानों को ताज़े फलों की एक टोकरी में बढ़िया क़िस्म की सिगरेट का एक टिन और एक बोतल विलायती स्कॉच व्हिस्की की मिला करती थी। सवेरा होते ही, बैरों की एक लम्बी क़तार ये सब सामान लेकर आती और हर एक कमरे में ठहरे हुए मेहमानों को फलों की टोकरी, सिगरेट और शराब बांट दी जाती। कभी-कभी रात को, मेहमानों के सोने

साधारण मेहमानों को तोहफ़े दिये जाते थे और प्रतिष्ठित व्यक्तियों को शैम्पे
और व्हिस्की की बोतलों के पूरे-पूरे केस, देशी इत्र-फुलेल और विलायती सें
की शीशियाँ रोज़ाना भेंट की जाती थीं। यह निश्चित था इतनी ज्यादा चीज़
मेहमान इस्तेमाल न कर पाते थे अतएव जाते समय वे अपने साथ ले जाय
करते थे।

रियासत का शासन बड़े माक़ूल तरीके से चलाया जाता था हालांकि
कैबिनेट (मंत्रिमण्डल) की बैठकें शौचालय में हुआ करती थीं जहाँ नवा
शौच के लिए दो घंटे सुबह और दो घंटे शाम को नियम से बैठा करते थे
चूँकि रियासत के बहुत से जरूरी काम रोज़ के रोज़ निपटाने पड़ते थे, इ
लिए प्राइम मिनिस्टर साहबज़ादा अब्दुल समद खाँ, जो तख्त के वारि
शाहजादे के सुसर थे, अलावा इसके कि जब नवाब फ़ुर्सत से शौचालय में बै
हों, तभी उनके पास जाकर मंत्रिमण्डल की बैठक करें, और कोई मौक़ा ही
पाते थे। शौचालय में बैठने की जगह का डिज़ाइन रियासत के चीफ़ इन्जी
नियर ने इस तरह का बनाया था कि नवाब बड़े आराम से उस पर बैठे हु
हाजत रफ़ा करते रहें और मंत्रिमण्डल के सदस्य उनको देख न सकें। कैबिने
की बैठक नियमानुसार शौचालय में चलती रहती थी और नवाब हर माम
में अपना फ़ैसला लिखाते जाते थे। यहाँ पर इस बात का ज़िक्र करना ज़रू
है कि शौचालय के क़दमचे एक ऊँचे चबूतरे की शक्ल में बनाये गये थे औ
जिस वक़्त सुबह-शाम नवाब वहाँ बैठ कर रियासत का ज़रूरी काम का
करते हुए साथ-साथ मल-त्याग भी करते जाते थे, तब भी बाहर के लोगों क
कुछ दिखाई न देता था। सप्ताह में दो दफ़ा कैबिनेट की बैठक होती
जिसके अलावा प्राइम मिनिस्टर अन्य दिनों में भी उस बहुत बड़े शौचालय
कमरे में जाकर, शानदार तरीक़े से बैठे हुए नवाब से मशविरा करते थे।

३६. पागल सलाहकार

नवम्बर के महीने में, चैन्सलर के चुनाव के लिए चैम्बर ऑफ प्रिन्सेज की एक मीटिंग होने वाली थी। ऐसा चुनाव हर साल हुआ करता था। हिज हाईनेस १००८ सर भूपेन्दर सिंह पटियाला नरेश, जो पिछले कई वर्षों से बराबर चैन्सलर रहे थे, इस बार फिर चुनाव में खड़े हुए। आम तौर पर इस चुनाव में बिना मुकाबले के चैन्सलर चुन लिया जाता था। परन्तु इस दफा, हिज हाईनेस महाराजा राणा उदयभान सिंह धौलपुर नरेश, जो महाराजा पटियाला के चचेरे भाई थे, चैन्सलर पद के उम्मीदवार बन कर चुनाव में खड़े हुए। महाराजा धौलपुर को चुनाव में खड़े होने से रोकने की तमाम कोशिशें की गईं, समझाया-बुझाया गया, पर वे एक न माने। महाराजा पटियाला ने महाराजा राणा उदयभान सिंह धौलपुर नरेश को पत्र लिखा कि वे पारिवारिक झगड़े खड़े करने के जिम्मेदार होंगे अगर अपने चचेरे भाई के खिलाफ सार्वजनिक रूप से चुनाव लड़ेंगे। महाराजा धौलपुर के पक्ष में भारत सरकार का राजनीतिक विभाग था और उनको पूरा यकीन था कि भारतीय रियासतों के सारे रेज़ीडेन्ट और भारत के वायसराय लार्ड विलिंगडन की सक्रिय सहायता पा कर वे चुनाव में जरूर जीतेंगे।

चुनाव की तारीख निश्चित हो गई और वोट प्राप्त करने की कोशिशें दोनों प्रतियोगियों की तरफ से होने लगीं। चैम्बर ऑफ प्रिन्सेज में १०८ सक्रिय मेम्बर थे पर वास्तव में चैम्बर के सभी मेम्बर हमेशा बैठकों में शरीक नहीं होते थे—खास तौर से कुछ बड़ी रियासतों के शासक, जैसे हैदराबाद, मैसूर, बड़ौदा वगैरह के, हालांकि वे नियमित सदस्य थे। वे चैम्बर की कार्यवाही का विवरण प्राप्त करने के लिए अपने प्रतिनिधि भेज दिया करते थे।

महाराजा भूपेन्दर सिंह ने चुनाव में अपने लिए वोट हासिल करने की कोशिश के लिए एक कमेटी तैनात की जिसमें पटियाला रियासत के विदेश मंत्री मीर मकबूल अहमद, महाराजा नारायण सिंह और मैं, कुल तीन व्यक्ति शामिल थे। हर एक को अलग-अलग इलाके बाँट दिये गये। मीर मकबूल अहमद दक्षिण भारत की तरफ, महाराजा नारायण सिंह काठियावाड़ की रियासतों में और मैं यू० पी०, मध्य भारत और पंजाब की रियासतों में

भेजा गया। जिस इलाक़े में मुझे काम करना था, उसमें एक रियासत जावरा नाम की थी।

महाराजा ने इस अभियान के लिए खास तौर से रुपया अलग निकाल रखा था। उस रुपये से रेलभाड़ा, होटल में ठहरने व खाने-पीने का खर्च चलाने के अलावा महाराजाओं और उनके सलाहकारों को वोट के लिए राज़ी करने में भारी खर्च की रकम भी शामिल थी। कई जगह वोट हासिल करने के लिए रिश्वत के तौर पर लम्बी रक़में देनी पड़ीं। कुछ मामले ऐसे भी हुए जिनमें रिश्वत ले कर भी महाराजा के खिलाफ़ वोट दिये गये। कुछ राजा-महाराजाओं के हाथों से वोट के काग़ज़ात छीन लिये गये जब वे बैलट-बक्स में वोट छोड़ने जा रहे थे। भारत के वायसराय लार्ड विलिंग्डन चुनाव के सभापति थे। चरखारी रियासत के महाराजा जब पटियाला नरेश के पक्ष में वोट डालने चले तब धौलपुर नरेश ने उनके हाथों से वोट के काग़ज़ छीन लिये।

कई दफ़ा हमारी कमेटी के सदस्यों को प्राइवेट हवाई जहाज़ों, खास मोटरगाड़ियों, मोटर-किश्तियों और पानी के जहाज़ों से भी अपने काम के सिलसिले में यात्रा करनी पड़ी। महाराजा का निजी हवाई जहाज़ भी हमारे काम के लिए दे दिया गया था। इस अभियान में बेशुमार पैसा खर्च हुआ। उत्तर में कश्मीर से ले कर दक्षिण में कुमारी अन्तरीप तक हम लोगों ने महाराजा के लिए वोट हासिल करने की कोशिश में यात्रायें कीं।

मेरे जावरा रियासत पहुँचने की सूचना देते हुए महाराजा ने एक तार लेफ़्टीनेन्ट कर्नल हिज़ हाईनेस फ़ख्र-उद्-दौला, सर मोहम्मद इफ़्तिखार अली खाँ बहादुर सलाबत जंग, नवाब जावरा रियासत, को भेजा। यह रियासत मध्य भारत में रतलाम के पास थी। तार का कोई जवाब न आने पर यह समझा गया कि वहाँ मेरा अच्छा स्वागत हुआ होगा और नवाब के मेहमान की हैसियत से मुझको ठहराया गया होगा। नवाब को तार तो मिल गया था लेकिन उन्होंने कोई ध्यान न दिया था। जब मैं रतलाम स्टेशन पर ट्रेन से उतरा, जहाँ से नवाब जावरा का महल क़रीब २० मील दूर था, तब देखा कि मेरे लिए कोई मोटर भी मौजूद न थी जो मुझे राजधानी तक पहुँचा देती। मैंने स्टेशन पर मौजूद मोटरों और टैक्सीवालों से पूछताछ की कि जावरा से मुझको लेने कोई गाड़ी रतलाम स्टेशन पर तो नहीं आई है, पर सब ने यह कहा कि नहीं आई। स्टेशन पर जब कोई सवारी न मिली तब मैं एक पैसेन्जर ट्रेन में बैठ गया जिसने धीरे-धीरे चल कर जावरा तक १८ मील का सफ़र पूरे चार घन्टों में तय किया। उस वक्त रात हो गई थी। स्टेशन पर कोई सवारी न मिली जो मुझे नवाब के महल तक पहुँचाती। वहाँ कोई टैक्सी भी न थी। लाचार हो कर मैं एक तांगे पर बैठ कर महल तक पहुँचा। नवाब के प्राइवेट सेक्रेटरी और ड्यूटी पर तैनात ए० डी० सी०, दोनों ने मेरे आने के

ारे में महाराजा का तार पाने की जानकारी से इन्कार कर दिया। सच तो यह था कि वे मेरे साथ बड़ी घनिष्टता से पेश आ रहे थे और मेरे रात के ठहरने का कोई इन्तज़ाम नहीं करना चाहते थे। उनके इस व्यवहार से मुझे बड़ी झुंझलाहट हुई और मैंने महाराजा पटियाला को तार से खबर भेज दी कि जावरा के प्रशासन का रवैया ठीक नहीं है और यहां की हालत अपने माफ़िक़ नहीं है। यहां से कोई उम्मीद काम होने की नहीं दिखाई देती थी।

इत्तिफ़ाक़ से मेरी मुलाक़ात एक अंग्रेज़ मिस्टर मैकनाब से हो गई जो उन दिनों जावरा आये हुए थे। एक अरसे से बम्बई से उनको मैं जानता था। मिस्टर मैकनाब की मदद से उनके लिए रिज़र्व कमरों में से एक में रात भर के लिए मुझे पलंग मिल गया। मिस्टर मैकनाब नवाब, उनके शाहज़ादे और शाहज़ादियों के घनिष्ट मित्र थे। मैंने उनसे जावरा आने का अपना प्रयोजन बतलाया। मिस्टर मैकनाब, नवाब और उनके परिवारवालों के लिए हर तीसरे-चौथे दिन बम्बई से सूअर का मांस लाकर महल में पहुंचाते थे। उन्होंने वायदा किया कि मेरा संदेशा नवाब तक पहुंचा देंगे। यहां पर यह ज़िक्र करना ज़रूरी है कि इस्लाम धर्म के अनुसार मुसलमानों को सूअर का मांस खाना सख्त मना है, मगर चूंकि वह बहुत ज़ायक़ेदार होता है, इस लिए नवाब और उनका परिवार खाया करता था। इस तरह की वर्जित चीज़ें मिस्टर मैकनाब गुप्त रूप से पहुंचाया करते थे इसलिए जावरा के दरबार में वे बड़े विश्वासपात्र समझे जाते थे। वे दिन हो या रात, जब चाहते, नवाब, उनकी बेगम और परिवार वालों से मुलाक़ात कर सकते थे, महल के कमरों में वे ऐसी आज़ादी से घूमते-फिरते थे, मानों नवाब के सगे भाई-बन्धु हों।

मिस्टर मैकनाब ने मेरा संदेशा सीधे जा कर नवाब को दिया हालांकि नवाब को मेरे आने और ठहरने की खबर लग चुकी थी।

मैकनाब की बदौलत नवाब ने अगले दिन दस बजे मेरी मुलाक़ात का वक्त तय किया। वर्दी पहने ए० डी० सी० मेरे साथ चल कर मुझे मुलाक़ात के कमरे में पहुंचा गया। मैंने देखा कि नवाब एक ऊंची सुनहली कुर्सी पर बैठे हुए थे। उनके मिनिस्टर लोग मंच के नीचे कुर्सियों पर एक कतार में बैठे थे। वली-अहद और शाही परिवार के अन्य शाहज़ादे सुनहली कुर्सियों पर मेरी दाहिनी तरफ़ बैठे थे। सब मिला कर वहां चालीस आदमी थे। पीछे की तरफ़ एक कोने में काठ की एक खाली कुर्सी रखी थी।

जब मैंने वहां प्रवेश किया तो एकदम सन्नाटा छाया हुआ था। वहां इकट्ठे हुए लोगों में से कोई एक शब्द भी न बोला। प्राइम मिनिस्टर ने खाली कुर्सी की तरफ़ मुझसे इशारा किया। नवाब के आगे कई दफ़ा झुक कर मैंने ताज़ीम दी और जाकर उस खाली कुर्सी पर बैठ गया। नवाब को अच्छी तरह पता था कि महाराजा पटियाला के अलावा महाराजा धौलपुर भी चुनाव लड़ रहे हैं। मैंने बतलाया कि, [illegible] पटियाला चुनाव जीतने पर सभी रजवाड़ों के लिए

काम के आदमी साबित होंगे और उनके हितों की रक्षा करेंगे जिसकी उम्मी उनके प्रतिद्वन्द्वी से कभी नहीं की जा सकती। मैंने समझाया कि महारा धौलपुर अंग्रेज़ों के पिट्ठू हैं जो उनको चैन्सलर बनाने के लिए राजाओं प अपना दबाव डाल रहे हैं। महाराजा पटियाला के हक में, मुझसे जितना बन मैंने अच्छा खासा भाषण कर डाला और मुझे आशा थी कि नवाब या प्राइ मिनिस्टर मेरे प्रस्ताव को मंजूर या नामंजूर करते हुए कुछ कहेंगे मगर को कुछ न बोला।

उसी वक़्त छः अधेड़ उम्र के, गन्दे कपड़े पहने, गन्दी सूरतों वाले आदमं हॉल में लाये गये जिनके स्वागत में नवाब और सारे मिनिस्टर उठ कर ख हो गये। वे लोग फ़र्श पर बैठ गये और विचित्र हाव-भाव दिखाने लगे। मु उन अभ्यागतों की न तो ज़रूरत समझ में आई और न मैं उनके यकायक आ का मक़सद जान सका। वे लोग कभी अपनी उँगलियाँ चूसते, कभी नथुने फुल लाते और कभी नाचने लगते थे। मुझे यह तमाशा देख कर हँसी आती तो लोग मेरी तरफ़ घूर-घूर कर देखने लगते। मुझसे कहा गया कि मैं अपन प्रस्ताव दुबारा बयान करूँ। फिर मै एक घण्टे तक लगातार बोलता रहा इसके बाद नवाब ने उन लोगों से पूछा कि मेरे प्रस्ताव के बारे में उनकी क्य राय है। यह सुन कर वे सभी छः आदमी तरह-तरह से मुँह बनाने और आं मटकाने लगे। दो तीन अपने हाथ हिला कर नामंजूरी ज़ाहिर करने लगे औ बाक़ी खमोश बैठे रहे गोया कि उनसे कुछ मतलब ही नहीं। उनमें से एक पास छड़ी थी जिसे उठा कर उसने मुझे पीटने का इशारा किया।

यह सारा नाटक देखने के बाद नवाब उठ खड़े हुए और मुझसे कहा कि उनके सलाहकारों ने मना कर दिया है इसलिए वे महाराजा पटियाला को वोट न देंगे। मुलाक़ात इस तरह अचानक खत्म हो गई और मुझे विदा कर दिया गया। परन्तु, मैं यह जानने को परेशान था कि वाक़य क्या था। मिस्टर मैक्नाब ने, जो नवाब की सारी गुप्त बातों की जानकारी रखते थे, मुझ पर विश्वास करके बतलाया कि वे छः आदमी पागलखाने से लाये गये थे और नवाब उन्हीं की सलाह से रियासत के काम-काज करते हैं। नवाब के मन में विश्वास घर कर चुका था कि पागल-खाने के लोग अपनी निष्पक्ष और सच्ची राय बेधड़क दे सकते हैं। मैक्नाब ने यह भी बतलाया कि वे पागल मुँह से कुछ नहीं बोलते, सिर्फ़ इशारे करते हैं जिनको समझ कर नवाब रियासत के मामलों का फ़ैसला करते हैं। रियासत के और लोगों से भी पता चला कि क़त्ल, फ़ौज- दारी, दीवानी और माल वग़ैरह के सभी मुक़दमों में नवाब उन पागलों की सलाह लेते हैं।

अन्त में, नवाब ने महाराजा पटियाला के ख़िलाफ़ अपना वोट दिया। उसके बावजूद, नतीजा यह हुआ कि भूपेन्दर सिंह बहुत ज्यादा वोटों से चुनाव जीते और चैन्सलर चुने गये।

४०. नये नोटों का दीवाना

कपूरथला नरेश हिज़ हाईनेस महाराजा परमजीत सिंह बहादुर ६३ साल की उमर तक युवराज ही रहे थे जब वे अपने पिता महाराजा जगतजीत सिंह बहादुर की मृत्यु के बाद राजगद्दी पर बैठे। परन्तु सन् १९४७ मे सभी राजा-महाराजाओं ने अपने शासनाधिकार भारत सरकार को सौंप दिये थे, अतएव परमजीत सिंह को हुकूमत करने का मौका ही नही मिला। उनको निराशा ही हाथ लगी थी, इसलिए वे अपनी चहेती मिस स्टेला मज के साथ यूरोप के देशों की यात्रा में घूम-फिर कर अपना समय बिताते थे।

उनका एक अजीब शौक़ था—बिल्कुल नये करेन्सी नोट, जो सीधे रिज़र्व बैंक से निकले हों और इस्तेमाल मे न आये हों, किसी कीमत पर खरीद कर इकट्ठा करना। हिज़ हाईनेस एक दफा दिल्ली में मुझ से मिले और पूछा कि राजधानी में अपना प्रभाव होते हुए क्या बिल्कुल नये नोट दिलाने में मैं उनकी मदद कर सकूँगा? मैं नये नोटों के बारे मे उनकी कमज़ोरी अच्छी तरह जानता था। मैंने जवाब दिया—"योर हाईनेस! आपको नोटों की कीमत से १० प्रतिशत ज्यादा देना पड़ेगा क्योंकि नये नोट हासिल करने मे लोगों को खिलाना-पिलाना पड़ता है।" हिज़ हाईनेस ने फौरन मंजूर कर लिया और सौ-सौ रुपये वाले नोट कुल एक लाख रुपये के देकर मुझ से कहा कि सौ रुपये वाले बिल्कुल नये नौ सौ नोट लाकर उनको दूँ। रिज़र्व बैंक मे मैं अपने एक दोस्त के पास गया जिसने मुझे विश्वास दिलाया कि मैं जितने नोट चाहता हूँ, सब नये मिल जायेंगे। उसने तुरन्त मुझको सौ रुपये वाले नौ सौ नोट लाकर दे दिये।

जब मैंने वह नौ सौ नये-नये नोट महाराजा को दिये तब उनका चेहरा मारे खुशी के खिल उठा। उन्होंने मुझे सीने से लगा लिया और बोले—"आप कपूरथला परिवार के सचमुच विश्वासी और वफादार मिनिस्टर हैं।" रिज़र्व बैंक से नये नोट दिलाने का यह सिलसिला कई साल तक चलता रहा। इसके बाद, आज लाये हुए नोट अगले दिन बासी समझे जाने लगे और दस फी सदी ज्यादा खर्च करके दुबारा उनको बदलना जरूरी होने लगा। अन्त मे, परमजीत धीरे-धीरे समझने लगे कि नये नोट जमा करने के शौक ने उनके पास की निजी जमा-पूँजी को कितना कम कर दिया है मगर मजबूर थे—आदत से मजबूर थे। उनका शौक कम नहीं पड़ा।

४१. भूलें और रंज

टेहरी गढ़वाल, उत्तर प्रदेश में एक पहाड़ी रियासत है जहाँ अग्निकुल के पवाँर राजपूत परिवार के लोग शासक रहे हैं। इस वंश के प्रथम शासक राजा कनक पाल हुए जो धारंगारी परिवार के थे। उन्होंने सन् ६८८ में गढ़वाली राज्य स्थापित किया।

महाराजा नरेन्द्र सिंह शाह २६ मई को सन् १६२१ में पैदा हुए। वे राजा कनक पाल के वंशजों में साठवें थे। उनके पिता मेजर हिज़ हाईनेस राजा नरेन्द्र शाह के० सी० एस० आई० ३ अगस्त, सन् १८६८ को पैदा हुए थे और २६ अप्रैल सन् १६१३ को अपने पिता सर कीर्त्ति शाह बहादुर के बाद गद्दी पर बैठे। ४ अक्तूबर सन् १६१६ को उनको शासन के सारे अधिकार प्राप्त हुए। वे अजमेर के मेयो कालिज में पढ़े थे। सन् १६१६ में वे अवैतनिक लेफ़्टीनेंट बनाये गये, फिर ४ अक्तूबर १६१६ को तरक़्क़ी पाकर कप्तान बना दिये गये। २ जनवरी सन् १६२२ को उनको के० सी० एस० आई० का खिताब मिला और १७ जनवरी सन् १६२० से मेजर का ओहदा उनको दिया गया। बाद में उनको के० सी० आई० ई० का भी खिताब मिला। हिज़ हाइनेस को १८वीं गढ़वाल राइफ़ल्स का अवैतनिक अफ़सर भी बना दिया गया।

रियासत का रक़बा ५०० वर्ग मील है। पहले रियासत की सीमा बहुत बड़ी थी। एक ओर तिब्बत तक तथा दूसरी ओर यू० पी० और पंजाब तक। रियासत की अपनी एक बहुत बड़ी व ताक़तवर फ़ौज थी। एक घटना के कारण, जिसे टेहरी गढ़वाल के शासकों की बदक़िस्मती कहना चाहिए रियासत का बहुत बड़ा इलाक़ा अंग्रेज़ों ने हड़प लिया—नेपाल के राजा के हमले से बचाने में उन्होंने मदद की थी, उस कृपा के बदले में।

कहा जाता है कि टेहरी गढ़वाल के शासक ने गोरखाओं के प्रधान महाराजा नेपाल को अपनी शुभ-कामनायें और मैत्री का सन्देश पहुँचाने के लिए अपने प्रधान राजपुरोहित के बेटे को नेपाल भेजा। उस युवक का नाम मँगतू था और वह बड़ा खूबसूरत था। अपने महाराजा की ओर से नेपाल महाराजा के लिए भेंट की वस्तुयें और सामान लेकर मँगतू चल पड़ा। उन दिनों, यह आम रिवाज था कि भेंट-उपहार के साथ सुरक्षा के लिए पैदल या घुड़सवार या थोड़ी फ़ौज, पूरे तौर से हथियार बन्द, राजदूत के साथ भेजी जाती थी।

रास्ते में ठहरते और कूच करते हुए राजपुरोहित का बेटा मंगतू काठमाँडू के राजमहल तक पहुँचा। संयोग से, नेपाल महाराजा के राजपुरोहित की बेटी विजया ने मंगतू को देखा। वह राजमहल के छज्जे पर खड़ी थी जहाँ से उसकी नजर उस खूबसूरत नौजवान की नजर से टकराई। पहली नजर में ही विजया प्रेम का शिकार बन गई। अपनी एक सहेली की मदद से, जो नेपाल के किसी प्रतिष्ठित सामन्त की बेटी थी, विजया ने, नेपाल दरबार के उस दूत को जो टेहरी-गढ़वाल के महाराजा का पत्र मंगतू से लेकर नेपाल महाराजा को देने जा रहा था, रिश्वत दिला कर पत्र अपने पास मँगवा लिया। विजया ने उस पत्र में कुछ शब्द अपनी तरफ से जोड़ दिये कि—टेहरी-गढ़वाल के महाराजा की इच्छा है कि टेहरी-गढ़वाल और नेपाल के राज-पुरोहितों के बीच शादी ब्याह के सम्बन्ध हो जायें और यह इच्छा पूरी इस तरह हो सकती है कि टेहरी-गढ़वाल के राजपुरोहित के पुत्र का ब्याह महाराजा नेपाल के राजपुरोहित की पुत्री से सम्पन्न कर दिया जाय। फिर, विजया ने वह पत्र दूत को वापस भिजवा दिया जो उसे लेकर चला गया।

ज्यों ही नेपाल नरेश को वह पत्र मिला, उन्होंने तुरन्त टेहरी-गढ़वाल के राजदूत को बुला भेजा। मंगतू ने आकर भेंट की तमाम सामग्री जो टेहरी-गढ़वाल के महाराजा ने भेजी थी उनके आगे रखी।

नेपाल महाराजा भेंट की सामग्री देख कर बड़े प्रसन्न हुए और इस बात से उनकी प्रसन्नता दुगनी हो गई कि दोनों राज्यों के राजपुरोहितों में विवाह-सम्बन्ध हो जाने पर आपस में सद्भाव और मित्रता पक्की हो जायेगी। मंगतू को बड़े आदर-सत्कार से ठहराया गया और उसकी बड़ी खातिर होने लगी। वह बेचारा हैरान था कि इस स्वागत का अर्थ क्या है। एक दिन, नेपाल नरेश ने उसे बुलाकर अपने राजपुरोहित की बेटी विजया से विवाह करने का प्रस्ताव सामने रखा। मंगतू को इस प्रतिष्ठा का पात्र बनने का हर्ष हुआ, फिर भी वह उलझन में पड़ा रहा। उसने सपने में भी नहीं सोचा था कि वह नेपाल के राजपुरोहित की बेटी से विवाह कर सकेगा। अन्त में, उन दोनों का विवाह हो गया।

नेपाल में कुछ महीने रहने के बाद, मंगतू ने घर वापस जाने की इच्छा प्रकट की, खास तौर से अपने महाराजा के दर्शन करने की। नेपाल नरेश ने उसकी प्रार्थना स्वीकार कर ली। मंगतू और उसकी पत्नी को हिफाजत के साथ टेहरी-गढ़वाल पहुँचाने का मुनासिब इन्तजाम किया गया और नेपाल महाराजा ने तमाम भेंट-उपहार की सामग्री महाराजा टेहरी-गढ़वाल के लिए मैत्रीस्वरूप, साथ कर दी। वर-वधू की प्रतिष्ठा तथा टेहरी-गढ़वाल के महा-राजा और वहाँ की जनता की निगाह में अपना ...

भेजे जायँ। १००० हथियारबन्द गोरखा सिपाहियों की छोटी सी अंगरक्षक
मँगतू के साथ टेहरी-गढ़वाल रवाना कर दी गई।

इधर मँगतू नेपाल की सरहद पार कर रहा था और उधर ग
अफ़वाहें उड़ रही थीं कि नेपाल के महाराजा ने टेहरी गढ़वाल पर हम
के लिए मँगतू को सेनापति बना कर उसके अधीन सेना भेजी है। उ
और उसकी अंगरक्षक सेना के लोग टेहरी-गढ़वाल की राजधानी से
दूर थे, तभी महाराजा ने मारे घबराहट के अपनी फ़ौजी तैयारी क
बड़ी सेना मँगतू से लड़ने के लिए, जिसे वे बाग़ी समझ बैठे थे, रवाना
बेचारा मँगतू महाराजा के पास सँदेसे पर सँदेसा भेजता रहा कि वह
बल्कि महाराजा के प्रति अपनी भक्ति और श्रद्धा प्रकट करने आ रा
महाराजा का विश्वास उठ गया था और वे किसी तरह मँगतू की
मानने को तैयार न थे। लाचारी थी—दोनों तरफ़ की फ़ौजों में डट क
हुई और-दोनों तरफ़ के तमाम सिपाही मारे गये। कई दिनों तक लड़
रही और टेहरी-गढ़वाल की फ़ौजों के हाथों मँगतू और उसकी पत्नी, द
गये। नेपाल की थोड़ी सी फ़ौज ने, जो बाक़ी बची थी, हथियार डाल
ज्योंही नेपाल नरेश को इस हत्याकाण्ड और टेहरी-गढ़वाल के महारा
अपने सैनिकों के अपमान की खबर मिली, त्यों ही उन्होंने अपने प्रधा
पति के मातहत बहुत बड़ी फ़ौज टेहरी-गढ़वाल पर हमला करने
भेज दी।

जब ऐसा वक़्त आ पड़ा तब अपनी रियासत और प्राण बचाने
टेहरी-गढ़वाल के महाराजा ने भारत की अंग्रेज़ सरकार से मदद माँगी।
फ़ौज की मदद से नेपाल नरेश की फ़ौज को पीछे लौटा दिया गया लेकि
मदद के बदले में महाराजा को अपने राज्य के बहुत बड़े इलाक़े को
सरकार के अधीन कर देना पड़ा जिसमें देहरादून, मसूरी, सहारनपुर,
और ऋषीकेश वग़ैरह का सारा क्षेत्र था।

टेहरी-गढ़वाल के नरेशों का बड़ा दुर्भाग्य था कि वे भूलों पर भू
रहे और अपनी सनक न छोड़ी जिसके नतीजे उनकी रियासत की सीमा
छोटी रह गई और जो कुछ इलाक़ा बचा भी था, वह भारतीय संघ
लिया गया।

४२. मनहूस तोता

टेहरी-गढवाल की राजधानी, नरेन्द्र नगर को काफी धन व्यय करके राजा नरेन्द्र शाह ने अपने नाम पर बनवाया था।

टेहरी-गढ़वाल की पिछली राजधानी टेहरी, गंगा के किनारे हिमालय के अन्तराल में बसी थी जहाँ से हिन्दुओं का पवित्र तीर्थ स्थान ऋषीकेश ६० मील दूर है। कई शताब्दियों तक वह टेहरी-गढवाल के राजाओं की राजधानी रही। अन्य शानदार इमारतें, म्युनिसिपल हॉल, न्यायालय, महल और ऊँची-ऊँची कोठियाँ, राजपरिवार के आवास-भवन आदि, टेहरी की शोभा बढ़ाते थे। यहाँ की आबहवा गर्मियों में वेहद गर्म और जाड़ों में बेहद ठण्डी होती है मगर लोगों को उससे तकलीफ नहीं पहुँचती।

गढ़वाल के हर कोने में सुन्दर औरतें दिखाई देती हैं जिनकी अधखुली, रसीली आँखें, गेहुँआ रंग, सुडौल नाक, पतली सुराहीदार गर्दन और गठा हुआ बदन, राह चलते लोगों का ध्यान बरबस खींच लेते हैं। महाराजा नरेन्द्र शाह से पहले, कई पीढ़ियों तक यहाँ के शासक ३० वर्ष की आयु तक पहुँचते-पहुँचते मर जाते थे, इस बात से महाराजा बहुत डरे हुए थे। उन्होंने अपने सलाहकारों और राजपुरोहितों से मशविरा किया और बहुत दिनों तक साधु-सन्तों, ऋषि-मुनियों और ज्योतिषियों से पूछ-ताछ करने के बाद यह फैसला किया कि अपने ऐतिहासिक महल और राजधानी को छोड़कर किसी और जगह राजधानी बनाई जाय। यहाँ एक बात याद रखनी चाहिये कि केवल टेहरी-गढवाल के राजा लोग ही ३० वर्ष की उम्र आते-आते मर जाते थे मगर उसी इलाक़े में बसी हुई प्रजा के लोग, मर्द-औरतें सब लम्बी उम्र तक जीते थे। इससे यह ज़ाहिर होता है कि राजाओं की मृत्यु से टेहरी की आबहवा या प्रकृति का कोई सम्बन्ध न था। उन मौतों का मनोवैज्ञानिक प्रभाव महाराजाओं के दिमाग़ पर पर पड़ता रहता था।

नरेन्द्र शाह ने नई राजधानी नरेन्द्र नगर स्थापित करने में अपनी सारी संचित सम्पत्ति लगा दी और भारत सरकार, अपने मित्र रजवाड़ों से तथा अन्य लोगों से भी कर्ज़ लिया। उन्होंने राजधानी बहुत सुन्दर बनाने में कोई कसर न उठा रखी। उन्होंने अपना निजी महल और अपनी दोनों महारानियों के, जो सगी बहनें थीं, दो महल बनवाये। पहली महारानी की मृत्यु के बाद, दूसरी महारानी कमलेन्दु मती शाह महाराजा की प्रेमपात्री बन गई। उनके

लिए महाराजा ने पहाड़ी के किनारे एक बहुत सुन्दर महल बनवाया जो
पैलेस' के नाम से मशहूर है। यह महल गंगा के किनारे है और मीलों
घने जंगल से घिरा हुआ है। महाराजा ने अपने मंत्रियों, रियासत के अ
और अहलकारों के लिए भी बहुत से मकान व कोठियाँ बनवाईं। नरेन्द्र
में ही, महल से एक मील दूर ५०० पैदल सैनिकों के लिए बैरकें भी बनव
इस प्रकार दो क़स्बे बस गये—एक नागरिकों का और एक फ़ौजी छाव
महाराजा अपने मंत्रियों, परिवारवालों और रियासत के अफ़सरों के
का पूरा ध्यान तो रखते ही थे, साथ ही साथ वे जनसाधारण की सुख-सु
और आराम का पूरा ख्याल रखते थे। उन्होंने एक बहुत अच्छा बा
बनवाया जिसकी ऊपरी मंज़िल पर दूकानदारों के परिवारों के लिए कमरे
बने। इसमें सन्देह नहीं कि इस शासक ने सब की भलाई के काम किये प
उद्देश्य यही था कि राजधानी बदलना और अधिक समय तक जीवित रह

नरेन्द्र शाह अपनी महारानियों और दरबार के साथ सुख से नरेन्द्र न
में रहने लगे। प्रायः वे भारत सरकार के ऊँचे अधिकारियों और अन्य रा
महाराजाओं को नरेन्द्र नगर आने का निमन्त्रण देते थे और दिल खोल
उनका स्वागत-सत्कार करते थे। मैदानों के क़रीब होने के कारण मेहम
लोग नरेन्द्र नगर के प्राकृतिक सौन्दर्य और वन्य शोभा के बीच वहाँ दे
और विदेशी स्वादिष्ट भोजन तथा अधिक से अधिक शराब का आनन्द प्रा
करने के विचार से सप्ताहान्त व्यतीत करना पसन्द करते थे। मेहमान लं
अक्सर टेहरी के भीतरी इलाक़ों की सैर करने जाते थे जहाँ महाराजा ने उन
रहने के लिए कोठियाँ और छोटे-छोटे महल बनवाये थे। कभी-कभी अप
महारानियों के साथ महाराजा भी वहाँ जा कर कुछ दिन रहते थे। महारा
और उनके मेहमानों के मनोरंजन के लिए मर्दों और औरतों के स्थानीय लो
नृत्य की भी व्यवस्था की जाती थी।

हालाँकि महाराजा चाहते थे कि वे सौ बरस जियें मगर उनकी क़िस्म
में कुछ और ही बदा था। टेहरी-गढ़वाल राज्य की परम्परा के अनुसा
टेहरी में दशहरे का त्योहार बड़ी धूमधाम से मनाया जाता था। विजयादशमी
के दिन रावण को आग देने के लिए ५ बजे शाम को रस्म के अनुसार महाराज
को टेहरी पहुँचना ज़रूरी था। टेहरी के शासक की हैसियत से उस शानि
समारोह में शरीक होने के लिए जाने को साढ़े नौ बजे जब महाराजा तैया
हुए, तब छोटी महारानी ने ख़बर दी कि उनका प्यारा गुलाबी रंग का तोत
कुत्तों से डर कर उड़ गया और हमेशा की तरह सीटियाँ बजाने के बावजू
अपने पिंजड़े में नहीं लौटा, न उसका कुछ पता ही लग रहा है। महारानी
अपने उस खूब बातें करने वाले तोते के लिए बहुत दुखी हो रही थीं क्योंकि
उसको जन्म से ही बड़ी सावधानी रख कर उन्होंने पाला था।

यहाँ पर यह बतलाना ज़रूरी है कि उस दशहरे के उत्सव में टेहरी-दरबार

के महाराजा बड़े गाजे-बाजे और अपनी सेना के साथ जलूस बना कर जाते थे और भगवान रामचन्द्र जी के प्रतिनिधि की हैसियत से वहाँ पहुँच कर रावण के पुतले को आग देते थे। यह समारोह तब तक समाप्त नहीं समझा जाता जब तक महाराजा अपने हाथों रावण को आग नहीं दे लेते थे। इसलिए महाराजा की वहाँ मौजूदगी अनिवार्य समझी जाती थी। महाराजा यह बात भूल कर कि उनको टेढ़े-मेढ़े खतरनाक पहाड़ी रास्तों से हो कर ५० मील का सफर करना है और समय कम रह गया है कि वे टेहरी पहुँच कर उत्सव में शरीक हो सकें, अपनी मोटर से उतर पड़े और जंगल में तोते की खोज करने लगे, एक घंटे बाद महाराजा वापस आये मगर तोता न मिला। महारानी ने जब उनको खाली हाथ लौटते देखा तो वे ज़ोर से चीखने और रोने लगी। महाराजा उनको बेहद प्यार करते थे और महारानी की हालत जब उनसे न देखी गई तब वे फौरन दुबारा जंगल में तोते को खोजने चल दिये। अन्त में, तोते की तलाश में पहाड़ों पर चढ़ते-उतरते महाराजा बहुत थक गये। जब वे रावण के पुतले को आग देने के लिए टेहरी जाने को मोटर में बैठे, उस समय थकावट से उनका बदन चूर-चूर हो रहा था। काफी देर हो गई थी इसलिए वे तेजी से गाड़ी चला रहे थे। टेहरी में दूर-दूर के गाँवों से लोग दशहरे का उत्सव देखने और महाराजा के दर्शन करने आये थे। वे इन्तज़ार कर रहे थे कि कब महाराजा पधारें और रावण के पुतले को अपने हाथों आग दें जो लंका के अत्याचारी और निरंकुश राजा को भगवान रामचन्द्र जी के हाथों मारे जाने की प्राचीन घटना की प्रतीक परम्परागत रस्म होती थी।

मोटर मुश्किल से अभी सौ गज आगे गई थी कि एक पत्थर से टकरा कर उलट गई और सैंकड़ों फीट गहरे पहाड़ी खड्ड में जा गिरी। महाराजा की मृत्यु हो गई पर महारानी और साथ के दूसरे लोगों की जानें बच गईं।

उस मनहूस राजधानी ने महाराजा को अधिक दिनों तक जीने न दिया, हालांकि वे अपनी स्वाभाविक मौत से नहीं मरे थे। स्थानीय कवियों ने बड़े दुःखान्त प्रेम-गीत इस दुर्घटना पर लिखे जिनको लोग अब तक नरेन्द्र नगर और टेहरी की सड़कों पर गाया करते हैं।

दलेर-ए-जंग, रईसुद्दौला, निजामुद्दौला, सिपहदारूल्मुल्क, और सिपर-ए-सल्तनत, वग़ैरह ।

ब्रिटिश रेज़ीडेन्ट कर्नल एस० ए० स्मिथ तथा भारत के वायसराय की सिफ़ारिश पर इंगलैंड के बादशाह भारत सम्राट् ने जून १९२१ में हुंज़ा के मीर को के० सी० आई० ई० का खिताब और १ जनवरी १९२३ को नगर के मीर को के० वी० ई० का खिताब दिया। ये दोनों शासक यह जानने को बेचैन हो उठे कि किसका ख़िताब ऊँचा है। प्रत्येक को इस बात की शिकायत और झुँझलाहट थी कि दूसरे का खिताब बड़ा है। इसी सनक में वे एक-दूसरे से ईर्ष्या रखने लगे और अन्त में दुश्मनी पर उतर आये।

ब्रिटिश रेज़ीडेन्ट ने उन शासकों को समझाया कि दोनों खिताबात में कोई फ़र्क़ नहीं है और उनको यक़ीन है कि भारत सम्राट् ने बराबर की श्रेष्ठता और प्रतिष्ठा दोनों को प्रदान की है, परन्तु मीर लोगों को सन्तोष नहीं हुआ। पंडित वज़ीर रामरतन, एक सुयोग्य हाकिम, उन दिनों गिलगिट के गवर्नर थे और महाराजा कश्मीर के विश्वास-पात्र होने के कारण उनकी वहाँ अच्छी धाक बैठ गई थी। उनकी क़ाबलियत और इन्साफ़पसन्दी सभी जानते थे। मीर लोग गुप्त रूप से आकर उनसे मिले और पूछा कि कौन-सा खिताब बड़ा और कौन-सा छोटा था। उन्होंने यह भी बतलाया कि रेज़ीडेन्ट तथा भारत के वायसराय ने उनको विश्वास दिलाया था कि दोनों शासकों के साथ बराबरी का बर्त्ताव होगा जब कभी उनको खिताबात दिये जायेंगे। पंडित रामरतन बड़े चतुर और समझदार कूटनीतिज्ञ थे। उन्होंने दोनों शासकों में से प्रत्येक से अलग-अलग मुलाक़ात की तारीख़ और समय निश्चित किया। हुंज़ा के मीर से उन्होंने कहा कि—"आपके ख़िताब के० सी० आई० ई० में अंग्रेज़ी के चार हुरूफ़ हैं जब कि नगर के मीर के ख़िताब के० वी० ई० में सिर्फ़ तीन हैं। ज़ाहिर है कि आपको बड़ा ख़िताब मिला है।" मुलाक़ात के बाद हुंज़ा के मीर गवर्नमेंट हाउस से चले गये। उनको पूरा सन्तोष था कि नगर के मीर से बड़ा खिताब भारत सम्राट् से उन्हें मिला है। उस मौक़े पर उनकी रियासत में जलसे हुए और खुशियाँ मनाई गईं। जब यह खबर नगर ... र को मिली तब वे फ़ौरन गवर्नर से मिल कर बात साफ़ करने पहुँ... ... व गवर्नर ने उनको बतलाया कि भारत सम्राट् ने जो ख़िताब हुंज़ा ... को दिया है, वह सिर्फ़ हिन्दुस्तानी है, मगर जो ख़िताब उनको हासिल ... बिल्कुल अंग्रेज़ी है और अंग्रेज़ी खिताबात ज़ाहिर है कि हिन्दु... ...तावात से ऊँचे होते हैं। वापस जाने पर नगर के मीर ने भी अपनी ...सत में खुशियाँ मनाईं, अपने महल में और आम रास्तों पर रोशनी ...ई और महल के छज्जे से रियाया को सोने-चाँदी के सिक्के लुटाये। ... गवर्नर पंडित रामरतन की दूरदर्शिता और बुद्धिमानी से यह राजनीतिक ... [illegible] गई।

४४. महल में क्लिओपेट्रा

कुमारी जरमेन मैलाफिनो थी, जो फ्रेन्च थी, पेरिस में रहने वाले एक करोड़पति व्यवसायी मिस्टर रैजिनाल्ड फोर्ड ने बचपन से पाला-पोसा और तालीम दिलाई थी।

सितम्बर १६३० में, दक्षिण फ्रांस में रिवीरा के कैनीज नामक स्थान में कुमारी जरमेन छुट्टियाँ बिता रही थी जहाँ सैर करने के लिए हर साल कपूरथला नरेश महाराजा जगतजीत सिंह मेरे साथ जाया करते थे।

संसार के सभी देशों से धनी-मानी रईस, मशहूर सिनेमा स्टार, राष्ट्रपति और राजा लोग यहाँ तैरने, धूप सेंकने और खेल-कूद में भाग लेने को इकट्ठे होते हैं। सड़कों पर, छोटी से छोटी पारदर्शक तैरने की पोशाकें और रंग-बिरंगे पायजामे पहने मर्दों व औरतों की खासी भीड़ रहती है। कैनीज, सारे संसार में एक सबसे ज्यादा फ़ैशनेबुल छुट्टी बिताने का अड्डा मशहूर है जहाँ नाचघरों, शानदार होटलों और क्लबों की भरमार है। यहाँ का समुद्र तट बहुत लम्बा और मनोरम है जिसकी छटा देखते ही बनती है। इस समुद्र तट पर स्नान करनेवाली अर्धनग्न सुन्दरियाँ, छातियों पर रेशमी जालों की चोलियाँ कसे, भीनी पोशाकों में घूमती-फिरती तथा लेटी हुई बहुत बड़ी संख्या में दिखाई देती हैं।

कुछ देर समुद्र के किनारे टहलने के बाद, महाराजा के साथ मैं एक दर्जी की दूकान के अन्दर गया जहाँ एक लम्बी, खूबसूरत लड़की, गोरी-चिट्टी, क्लिओपेट्रा की जैसी सुडौल, सुन्दर नाकवाली, गुलाबी रेशमी पायजामा-सूट पहने खड़ी हुई दूकान की सेल्स गर्ल्स से बातचीत कर रही थी। महाराजा ने भूखी नजरों से उसकी तरफ देख कर मुझे आँख मारी। जरमेन ने, हालांकि हम लोगों को फुसफुसा कर बातें करते देखा मगर उसने हमारी तरफ कोई ध्यान न दिया। महाराजा ने मुझे बतलाया कि वे उस सुन्दरी से मुलाकात करना चाहते थे। वे तुरन्त दूकान की मालकिन मदाँम जीनीन दुजाँन के पास गये और प्रार्थना की कि वह उनका परिचय उस लड़की से करा दे। मदाँम महाराजा से परिचित थी और हमेशा उनको 'हिज मैजेस्टी' के नाम से सम्बोधित करती थी। कैनीज में महाराजा बादशाह समझे जाते थे। मदाँम ने महाराजा का जरमेन से परिचय करा दिया।

थोड़ी देर फ्रेंच भाषा में बातचीत हुई जिसमें मैं भी शरीक हो गया।

सुरक्षित रहते थे और जहाँ से पार्क और बागों का मनोरम दृश्य सामने पड़ता था। उसी रात को एक बहुत बड़ी राजसी दावत हुई जिसमें रियासत के प्रतिष्ठित लोगों ने सम्मिलित होकर मेहमान का भव्य स्वागत किया। दावत में शैम्पेन का दौर चला और महाराजा प्रसन्न और हँसमुख बने हुए मेहमान से नज़रें लड़ाते रहे।

जरमेन की बुद्धिमानी, योग्यता और मामलों को शीघ्र समझ जाने की कुशलता देखकर महाराजा चकित थे। ड्राइंग रूम में बैठ कर जरमेन जब बड़े-बड़े राजनीतिज्ञों से ऊँचे दर्जे के राजनीतिक विषयों पर वाद-विवाद करती थी, उस समय उसकी प्रतिभा और असाधारण गम्भीर अध्ययन का परिचय मिलता था। महल में एक साल रह कर वह वहाँ की साज़िशों और रियासती दाँवपेंच से अच्छी तरह वाक़िफ़ हो गई। वह रियासत की राजनीति में दिलचस्पी लेने लगी और महाराजा तमाम मसलों में उससे सलाह लेने लगे। मैं उन दिनों दरबारी मन्त्री था और मेरा पद प्राइम मिनिस्टर से छोटा था। मैं प्राइम मिनिस्टर सर अब्दुल हमीद की नीति से सहमत न था। जरमेन मेरे विचारों को समझती और उन्हें पसन्द करती थी। हम दोनों ने मिल कर महाराजा के ख्यालात को बदला और अब्दुल हमीद को नीचा देखना पड़ा। एक प्रकार से मैं रियासत का मुख्य मन्त्री बन गया। इस तरह अब्दुल हमीद मुझ से बड़ी ईर्ष्या करने लगे और महाराजा के तीसरे पुत्र राजकुमार अमरजीत सिंह, जो अब्दुल हमीद के मित्र थे, वे भी मुझसे नाराज़ रहने लगे। वे दोनों मिल कर मुझे निकालने की चेष्टा करने लगे जिससे मेरी जगह खाली होने पर राजकुमार अमरजीत सिंह कोई मिनिस्टर बनाये जा सकें और अब्दुल हमीद की धाक बँध जाय।

कुछ महीने बाद, चैम्बर ऑफ प्रिन्सेज़ के चैन्सलर की सिफारिश पर रियासतों का प्रतिनिधि चुने जाने पर मुझे लन्दन में सन् १६३१ में होने वाली गोलमेज़ कान्फ्रेंस में कपूरथला से जाना पड़ा। मेरी ग़ैर मौजूदगी में अब्दुल हमीद और अमरजीत सिंह ने मेरे ख़िलाफ़ बड़ी साज़िशें की मगर जरमेन के दख़ल देने के कारण उनकी एक न चल सकी।

दूसरी गोलमेज़ कान्फ्रेंस में मेरे भाषण पसन्द किये गये। महात्मा गांधी और इंग्लैंड के प्राइम मिनिस्टर रैमज़े मैकडोनाल्ड ने उनकी सराहना की। प्राइम मिनिस्टर ने अपने हाथ से एक पुर्ज़ा लिख कर मुझे भेजा—"आपके भाषण के लिए बधाई!" कान्फ्रेंस में जिनके भाषण प्राइम मिनिस्टर को पसन्द आते थे, उनको इसी तरह पुर्ज़े लिख कर भेजे जाते थे। चैम्बर ऑफ प्रिन्सेज़ के चैन्सलर, ब्रिटिश भारत और रजवाड़ों के प्रतिनिधियों, ख़ास तौर पर सर तेज बहादुर सप्रू और एम० आर० जयकर ने, कान्फ्रेंस में मेरी वक्तृता पर,

महाराजा ने जरमेन से पूछा कि क्या वह अगले रोज़ पाँच बजे शाम को होटल नेग्रेको में, जहाँ वे ठहरे थे, चाय पीने आ सकेगी। जरमेन ने, जो मदाँम दुजॉन को अच्छी तरह जानती थी, उसकी तरफ़ देखा। उसने स्वीकार सूचक सिर हिलाया जिसका मतलब था कि जरमेन हिज़ मैजेस्टी का निमन्त्रण स्वीकार कर ले।

अगले रोज़, ठीक पाँच बजे जरमेन होटल में आई जहाँ महाराजा ने उसका स्वागत किया। उसने बतलाया कि उसका पूरा नाम जरमेन पेल्लाग्रिनो है। उसकी एक माँ और एक भाई है। मिस्टर रेजिनाल्ड फ़ोर्ड से उसकी शादी तय हो चुकी है। वे ही उसकी शिक्षा-दीक्षा का प्रवन्ध और देख-भाल करते हैं। उन्होंने विभिन्न विषयों पर तमाम साहित्य ला कर उसे पढ़ने को दिया है जिससे उसका ज्ञान बढ़े और वह मिस्टर रेजिनाल्ड की पत्नी वन कर उनके सुविस्तृत व्यवसायों में मदद दे सके।

कई मुलाक़ातों के बाद, जरमेन और महाराजा की ख़ासी दोस्ती हो गई। वे साथ बैठ कर सांस्कृतिक, सामाजिक, राजनीतिक तथा अन्य विषयों पर विचार-विनिमय करते, जिससे महाराजा को उसकी बुद्धिमत्ता और गम्भीर अध्ययन की पूरी जानकारी हो गई और वे उसकी सराहना करने लगे।

एक दिन शाम के वक़्त होटल की छत पर बैठे हुए, महाराजा ने उससे पूछा कि क्या वह भारत की सैर करना पसन्द करेगी? अपने स्वप्नों का देश देखने की सम्भावना जान कर जरमेन को वड़ी प्रसन्नता हुई और उसने तुरन्त महाराजा से कहा—"यौर मैजेस्टी! मुझे निमंत्रण स्वीकार है अगर रेजे—रेजिनाल्ड फ़ोर्ड—को एतराज़ न हो।" कुछ रोज़ बाद वह आई और महाराजा को बतलाया कि रेजे को उसके भारत जाने पर कोई एतराज़ नहीं है क्योंकि इस यात्रा से उसे एक अत्यन्त सुसंस्कृत प्राचीन देश देखने का अवसर मिलेगा। परन्तु, उसने महाराजा को सावधान किया कि उसको अपने हाथों का खिलौना न समझें कि जब जी चाहा, अलग फेंक दिया। महाराजा ने सिर हिलाकर स्वीकार कर लिया। अक्तूबर में महाराजा और मैं अहलकारों के साथ भारत लौटे और दो सप्ताह बाद जरमेन भी आ पहुँची। जब वह जालन्धर से मोटर द्वारा कपूरथला पहुँची, तब महाराजा महल के फाटक के पास तक आये और बड़ी धूमधाम से अपने राजकुमार, राजकुमारियों, प्राइम मिनिस्टर सर अब्दुल हमीद तथा दूसरे मंत्रियों सहित, आगे बढ़ कर उसका स्वागत किया। रास्ते के दोनों तरफ़ क़तार बांधे सैनिक मुख्य फाटक तक खड़े थे और मिस्टर मार्शल के संचालन में उस समय बैण्ड पर मार्सेलीज अर्थात् फ्रांस के राष्ट्रीय गीत की धुन बज रही थी क्योंकि मेहमान फ्रेंच थी जिसका स्वागत हो रहा था। महल के शानदार सजे हुए ड्राइंग रूम में सब लोगों से जरमेन का परिचय कराने के बाद महाराजा उसको दाहिनी तरफ़ के हिस्से में उन सुसज्जित कमरों में ले गये जो महारानियों और राजकुमारियों के लिए

सुरक्षित रहते थे और जहां से पार्क और बागों का मनोरम दृश्य सामने पड़ता था। उसी रात को एक बहुत बड़ी राजसी दावत हुई जिसमें रियासत के प्रतिष्ठित लोगों ने सम्मिलित होकर मेहमान का भव्य स्वागत किया। दावत में शैम्पेन का दौर चला और महाराजा प्रसन्न और हंसमुख बने हुए मेहमान से नजरें लड़ाते रहे।

जरमेन की बुद्धिमानी, योग्यता और मामलों को शीघ्र समझ जाने की कुशलता देखकर महाराजा चकित थे। ड्राइंग रूम में बैठ कर जरमेन जब बड़े-बड़े राजनीतिज्ञों से ऊँचे दर्जे के राजनीतिक विषयों पर वाद-विवाद करती थी, उस समय उसकी प्रतिभा और असाधारण गम्भीर अध्ययन का परिचय मिलता था। महल में एक साल रह कर वह यहां की साजिशों और रियासती दाँवपेंच से अच्छी तरह वाकिफ हो गई। वह रियासत की राजनीति में दिलचस्पी लेने लगी और महाराजा तमाम मसलों में उससे सलाह लेने लगे। मैं उन दिनों दरबारी मन्त्री था और मेरा पद प्राइम मिनिस्टर से छोटा था। मैं प्राइम मिनिस्टर सर अब्दुल हमीद की नीति से सहमत न था। जरमेन मेरे विचारों को समझती और उन्हें पसन्द करती थी। हम दोनों ने मिल कर महाराजा के ख्यालात को बदला और अब्दुल हमीद को नीचा देखना पड़ा। एक प्रकार से मैं रियासत का मुख्य मन्त्री बन गया। इस तरह अब्दुल हमीद मुझ से बड़ी ईर्ष्या करने लगे और महाराजा के तीसरे पुत्र राजकुमार अमरजीत सिंह, जो अब्दुल हमीद के मित्र थे, वे भी मुझसे नाराज रहने लगे। वे दोनों मिल कर मुझे निकालने की चेष्टा करने लगे जिसमें मेरी जगह खाली होने पर राजकुमार अमरजीत सिंह कोई मिनिस्टर बनाये जा सकें और अब्दुल हमीद की धाक बँध जाय।

कुछ महीने बाद, चैम्बर ऑफ प्रिन्सेज के चैन्सलर की सिफारिश पर रियासतों का प्रतिनिधि चुने जाने पर मुझे लन्दन में सन् १९३१ में होने वाली गोलमेज कान्फ्रेंस में कपूरथला से जाना पड़ा। मेरी गैर मौजूदगी में अब्दुल हमीद और अमरजीत सिंह ने मेरे खिलाफ बड़ी साजिशें कीं मगर जरमेन के दखल देने के कारण उनकी एक न चल सकी।

दूसरी गोलमेज कान्फ्रेंस में मेरे भाषण पसन्द किये गये। महात्मा गांधी और इंग्लैंड के प्राइम मिनिस्टर रैमजे मैक्डोनाल्ड ने उनकी सराहना की। प्राइम मिनिस्टर ने अपने हाथ से एक पुर्जा लिख कर मुझे भेजा—"आपके भाषण के लिए बधाई!" कान्फ्रेन्स में जिनके भाषण प्राइम मिनिस्टर को पसन्द आते थे, उनको इसी तरह पुर्जे लिख कर भेजे जाते थे। चैम्बर ऑफ प्रिन्सेज के चैन्सलर, ब्रिटिश भारत और रजवाड़ों के प्रतिनिधियों, खास तौर पर सर तेज बहादुर सप्रू और एम० आर० जायकर ने, कान्फ्रेन्स में मेरी सफलता महाराजा को तार भेजे। मेरे कपूरथला लौटने पर महाराजा ने मेरे
से एक [illegible] की और मेरी सेवाओं की सराहना में [illegible]

सैलून, जो उन्होंने तीन लाख रुपयों में खरीदा था और जो अब भी नई दिल्ली के निज़ामुद्दीन रेलवे स्टेशन पर खड़ा है, मेरे निजी इस्तेमाल के लिए दे दिया। स्वागत समारोह खत्म होने पर महाराजा ने मेरे कान में कहा कि भार के वायसराय से सलाह करके मुझे अपना मुख्य मन्त्री बनायेंगे। इस दावत मौक़े पर जरमेन बेहद खुश दिखाई देती थी। वह सोने की ज़री की कामदा साड़ी और महीन गुलाबी रेशम का ब्लाउज़, जड़ाऊ बाज़ूबन्द, कानों में ही के इयररिंग, और गले में सच्चे मोतियों का हार पहने थी, जो महाराजा ख़ज़ाने से मँगा कर उसे दिया था। सिर पर लाल और हीरे जड़ा मुकुट उसकी सुन्दरता को चार चाँद लगा रहा था। इस तरह जरमेन रियासत शक्ति और प्रतिष्ठा की एक सीढ़ी से दूसरी सीढ़ी तक बराबर चढ़ती चली ग और महाराजा ने एक फ़रमान निकाल कर उसको 'महान् सलाहकार' क पदवी दी। अब कुमारी जरमेन पेलाग्रिनो दरबार में मुख्य सलाहकार बन क महल के सभी रियासती जलसों में भाग लेने लगी। वायसराय और उनक पत्नी से उसने भेंट की और भारत सरकार के राजनीतिक विभाग के अफ़सर तथा उनकी पत्नियों से भी उसने खासा मेल-जोल पैदा कर लिया। महाराज के परिवार के सभी लोग उसे बहुत चाहते थे।

मुख्य-मन्त्री पद का झगड़ा चलता ही रहा। अगले साल, महाराजा कुमारी पेलाग्रिनो, मुझे और अपने अहलकारों को साथ ले कर यूरोप की यात्रा पर चल पड़े। हम लोग सीधे पेरिस पहुँच कर एल' एतोयला के पास फ़ाइव स्टार होटल जार्ज फ़िफ्थ में ठहर गये। पेरिस पहुँच कर कुमारी जरमेन कई दफ़ा मिस्टर रेजिनाल्ड फ़ोर्ड से मिलने गई। इस बात से महाराजा को बड़ी ईर्ष्या हुई और जब वे ज़्यादा बरदाश्त न कर सके तो सवेरे मुझे बुलाकर उन्होंने कहा कि जरमेन को अपनी महारानी बना कर उनको बड़ी प्रसन्नता होगी। हालांकि मैं अच्छी तरह समझता था कि जरमेन और मिस्टर रेजिनाल्ड फ़ोर्ड एक दूसरे से बड़ा प्रेम करते थे और अन्त में दोनों की शादी निश्चित से होनी है, पर मैंने महाराजा से कहा कि मैं उनका प्रस्ताव जरमेन के ने रखूँगा। महाराजा ने ज़ोर दिया कि जरमेन चूँकि मेरी सलाह मानती इसलिए मैं उसे ऐसा समझाऊँ कि वह इन्कार न कर सके। महाराजा अब जरमेन की सुन्दरता, रूप-लावण्य, चाल-ढाल और दिमाग़ी क़ाबलियत पर बुरी तरह मरने लगे थे। एक रोज शाम को वे मुझे और जरमेन को साथ लेकर रित्ज होटल में खाना खाने गये। थोड़ी शैम्पेन पीने के बाद उन्होंने जरमेन के आगे महारानी बनने का प्रस्ताव रखा। प्रस्ताव सुन कर वह एकदम चौंक पड़ी और बड़ी नम्रता से फ्रेंच भाषा में उसने अपनी आँखें नीची करके कहा—"यह बात ग़ैर मुमकिन है। मैं मिस्टर रेजिनाल्ड फ़ोर्ड को वचन दे चुकी हूँ।" यह सुन कर महाराजा को बड़ा रंज हुआ। वे अपने होटल वापस आये और निराशा के मारे सारी रात उनको नींद नहीं आई। सुबह चार बजे टेलीफ़ोन

रके उन्होंने मुझे बुलाया। वे क्रोध में थे, उनका दिल बैठा जा रहा था। उन्होंने मुझसे कहा कि मैं जाकर जरमेन को समझाऊँ और राजी करूँ वरना वे मर जायेंगे। मैंने जरमन को समझाने की जरूरत महसूस न की क्योंकि मैं जानता था कि महाराजा से उसकी शादी थोड़े दिन निभेगी और उसका दुखद अन्त होगा।

कुछ अरसे बाद, जरमेन का विवाह रेजिनाल्ड फोर्ड से हो गया। महाराजा को बेहद अफसोस हुआ और उन्होंने इस बात के लिए मुझे कभी माफ न किया कि मैंने उनका कहना नहीं माना और वे जमाने की अपूर्व सुन्दरी से शादी नहीं कर सके।

महाराजा को जरमेन की शादी का पता तब चला जब कपूरथला से उन्होंने मोतियों का एक बहुमूल्य हार जरमेन को सालगिरह पर भेंट-स्वरूप पेरिस भेजा। जरमेन ने महाराजा को धन्यवाद देते हुए उस भेंट को विवाह की भेंट कह कर स्वीकार कर लिया।

४५. तालाब में शमा-नाच

सन् १९३० के वाद के प्रारम्भिक वर्षों में, मध्य भारत में, चालीस मोमवत्तियों की कहानी मशहूर हो रही थी। हिज़ हाईनेस महाराजा किशन सिंह भरतपुर नरेश ने, जो अपनी विलासी तवियत और सनक के लिए नाम कमा चुके थे और जिनको पानी में तैरने का वड़ा शौक था, गुलावी संगमर्मर का एक वड़ा सुन्दर तैरने का कुण्ड अपने और अपनी चालीस चुनी हुई रानियों के लिए तैयार कराया। महाराजा ने कारीगरों के साथ अपना पूरा दिमाग़ लगा कर सुन्दर ढंग के वीस चन्दन की लकड़ी के ज़ीने कुण्ड के पानी तक पहुँचने हुए वनवाये। वे ज़ीने ऐसे लगाये गये थे कि सभी चालीस नंगी औरतें, हर ज़ीने पर दो-दो, खड़ी रह कर महाराजा का स्वागत कर सकें।

महाराजा पधारते, हर एक से नज़रें मिलाते, किसी को धक्का देते, किसी को वदन से लिपटाते और इसी तरह आगे वढ़ते हुए जव आखिरी ज़ीने तक पहुँचते, तव चालीसों औरतों से मुलाक़ात पूरी हो जाती। हर औरत के पास ख़ास तरह की वनी हुई एक शमा यानी मोमवत्ती रहती थी। जव वे कुण्ड में उतरतीं, जो सिर्फ़ दो फ़ीट गहरा था, तव विजली की रोशनी वुझा दी जाती। तव हर औरत अपनी शमा वदन के वीच के हिस्से में, नाभि के नीचे आनातीं से लगा कर उसे जला देती। शमा की रोशनी में कमर की सिलवटें, वदन का उभार और गुप्त अंग साफ़-साफ़ नज़र आते। इसके वाद वड़े क़ायदे से नाच शुरू होता जिसमे हर औरत सावधान रहती कि उसकी शमा वुझने न पाये। महाराजा को वीच में करके वे औरतें खूव उछल-कूद मचातीं और पानी के छींटें मारतीं। पानी के छींटों से एक-एक करके शमायें वुझती जातीं। यह खेल तव तक चलता जव तक सव शमायें न वुझ जातीं। जो औरत आखिर तक अपनी शमा जलती रखती, वह उस रात की हिरोइन मानी जाती। उसे [illegible]मती भेंट-इनाम मिलने और उसे महाराजा की सेज पर रात विताने का भाग्य प्राप्त होता था।

४६. प्रीतम और साँप

नाभा रियासत के शासक, हिज हाईनेस रिपुदमन सिंह, जिन खूबसूरत लड़कियों पर आशिक हो जाते थे, उनकी मुहब्बत और प्यार हासिल करने के लिए वे अजीब बेहूदे और नाटकीय तरीके अख्तियार करते थे। उनकी रियासत के लोग ऐसी तमाम मिसालें जानते हैं। महाराजा की कामवासना तृप्त करने के लिए औरतों को जिस्मानी तकलीफें दी जाती थी मगर इस बात को उनके इने-गिने विश्वासी अहलकार ही जानते थे। उनको पता था कि बेगुनाह, जवान, कुँवारी लड़कियाँ, जो महाराजा की संभोग-इच्छा पूरी करने के लिए लाई जाती थीं, उनके साथ वे किस बेरहमी से पेश आते थे।

एक लड़की प्रीतम कौर, जिसको महाराजा ने इत्तिफ़ाक़ से सड़क पर आते-जाते देखा था, महल में बुलवाई गई मगर उसने आने से इन्कार कर दिया। लड़की के पिता, जो नाभा रियासत में ऊँचे ओहदे पर मुलाजिम थे, महाराजा से मुलाक़ात के लिए तलब किये गये। उनसे कहा गया कि अपनी बेटी की शादी महाराजा से कर दें लेकिन वे तैयार नहीं हुए।

प्रीतम पढ़ी-लिखी लड़की थी और पंजाब यूनीवर्सिटी में उसने बी० ए० पास किया था। वह बड़ी तहज़ीबयाफ़्ता और बेहद हसीन थी। महाराजा के मुसाहबों ने तमाम कोशिशें की और उसको लालच भी दिया कि किसी तरह महाराजा से एक दफ़ा मुलाकात कर ले मगर प्रीतम उनकी मीठी-मीठी बातों में न आई। उसको कई दफ़ा महाराजा से शादी करने का पैग़ाम भेजा गया पर उसने इन्कार कर दिया।

कई महीने गुज़र गये, मगर प्रीतम महाराजा के फन्दे में न फँसी। बात ज्यादा बढ़ती देख कर, उसके माँ-बाप ने शहर के एक रईस शमशेर सिंह के बेटे से उसकी शादी कर देने का फ़ैसला किया। महाराजा ने दखल दे कर वह शादी रुकवा दी। माँ-बाप ने यह मुसीबत देख कर, रियासत छोड़ कर कहीं एकान्त और शान्त जगह चले जाने का इरादा किया मगर रियासत की सरहद पार करने के पहले ही पुलिस ने उनको गिरफ़्तार करके प्रीतम के साथ क़ैदखाने में डाल दिया। कई दिनों तक पुलिस के हाथों तकलीफें और जुल्म सह कर माँ-बाप, अपनी बेटी से जुदा करके, क़ैदखाने की अलग-अलग कोठरियों में बन्द कर दिये गये जहाँ वे एक-दूसरे को देख भी नहीं सकते थे।

महाराजा ने क़ैदियों जैसा भेस बदल कर अपना नाम बूटा रख लिया और क़ैदखाने के अन्दर प्रीतम और उसके माँ-बाप से मेल-जोल बढ़ा लिया क्योंकि वे लोग उनको पहचान न पाये थे। प्रीतम के बराबर की कोठरी बूटा को दी गई। मौका पा कर बूटा प्रीतम से बातें किया करता और...

कहानियाँ सुना कर उसका दिल बहलाता रहता। धीरे-धीरे बूटा, प्रीतम और उसके माँ-बाप में मित्रता बढ़ गई हालाँकि तब तक बूटा और प्रीतम में मुहब्बत का सवाल नहीं उठा था। पुलिस के सुपरिन्टेन्डेन्ट, बख़्तावर सिंह की मदद से बूटा ने कुछ ज़हरीले क़िस्म के साँप मँगा लिये जिनके ज़हर के दाँत पहले ही निकलवा दिये गये थे।

आधी रात के क़रीब, वे साँप प्रीतम की कोठरी में लोहे के सीख़चों के बीच से छुड़वा दिये गये, जहाँ फ़र्श पर प्रीतम सो रही थी। क़ैदख़ाने में, क़ैदियों को सोने के लिए चारपाइयाँ नहीं मिलती थीं। ज्योंही वे साँप प्रीतम के बदन पर चढ़ कर रेंगने लगे, त्योंही वह जग गई और अपने हाथों-पैरों में साँप लिपटे देखे। वह चीख़ने-चिल्लाने और मदद के लिए पुकारने लगी मगर कोई उसको साँपों से बचाने न आया। अचानक, बूटा उसकी कोठरी में आ पहुँचा और अपने भारी बूटों तथा लम्बे बरछे से, जो ख़ास तौर से पुलिस सुपरिन्टेन्डेन्ट से मँगाये गये थे, वह साँपों को कुचलने और मारने लगा। उस मौक़े पर बेहद डरी हुई प्रीतम को बूटा कस कर अपनी बाँहों में जकड़े हुए था और प्रीतम की छातियाँ उसके सीने को छू रही थीं जब वह एक-एक कर साँपों को मार रहा था।

क़ैदख़ाने के तमाम क़ैदी, जिनमें प्रीतम के माँ-बाप भी थे, प्रीतम की कोठरी के बाहर इकट्ठे हो गये थे। प्रीतम बराबर चीख़ती-चिल्लाती रही और बेहोश हो गई, फिर सुबह उसको कुछ होश आया। क़ैदख़ाने का डाक्टर बुलवाया गया जिसने बेहोशी की हालत में उसका मुनासिब इलाज किया। होश में आने पर प्रीतम बार-बार बूटा को आवाज़ दे रही थी। अपनी जान बचाने वाले बूटा से अब वह प्यार करने लगी और उसे इज़्ज़त की नज़र से देखने लगी। पुलिस के इन्सपेक्टर जेनरल ने, जो भेस बदले हुए क़ैदख़ाने में मौजूद थे, उसी दम हुक्म दिया कि बूटा, प्रीतम और उसके माँ-बाप को फ़ौरन क़ैद-ख़ाने से रिहा कर दिया जाय। छूटने के बाद, वे लोग दूर के एक गाँव में जा कर रहने लगे।

कुछ दिनों बाद, माँ-बाप की रज़ामन्दी से प्रीतम ने बूटा से शादी कर ली। शादी के बाद, प्रीतम को विदा करा कर बूटा अपने गाँव के लिए, जहाँ उसका घर था, रवाना हो गया। जब बूटा उसे अपने महल में ले आया, तब प्रीतम और उसके माँ-बाप को बूटा की असलियत का पता चला। महल की शान-शौक़त और तड़क-भड़क के बीच, कुछ महीनों तक शादीशुदा ज़िन्दगी हँसी-ख़ुशी से बिताने के बाद वह बेगुनाह, पढ़ी-लिखी औरत, बरतरफ़ करके पुराने क़िले में डाल दी गई, जहाँ उस जैसी बहुत सी बदनसीब औरतें पहले से पड़ी थीं। वहीं, तकलीफ़ों और मायूसी से घिरी रह कर उसने बाक़ी ज़िन्दगी के दिन काटे। महाराजा की इस दग़ाबाज़ी से प्रीतम के माँ-बाप को ज़बरदस्त सदमा पहुँचा और उनकी भी मौत हो गई।

४७. भेड़ के चोले में महाराजा

हिज हाईनेस महाराजा रिपुदमन सिंह की आशिक-मिज़ाजी के किस्सों में नाविलों जैसा रंग नज़र आता है। वे बेहूदगी और बहादुरी, दोनों में माहिर थे। जब कोई औरत उनकी जिस्मानी हविस पूरी करने को राज़ी न होती, तब वे किसी त्योहार के मौके पर जंगल में मेले लगवाया करते थे, जिनमे हर तबके के मर्द-औरतें खुद-बखुद शरीक होते थे, क्योंकि ऐसे मेलों-तमाशों में महाराजा की तरफ से बुलाये जाने का दस्तूर न था।

इन मेलों में आने वाले, जो रात में ठहरना चाहते, उनके लिए महाराजा की तरफ से डेरे लगवा दिये जाते थे। जंगल बहुत दूर तक फैला हुआ था और कुछ डेरे, दूर पर एकान्त जगह में भी लगाये जाते थे। कोई खास लड़की, जो महाराजा की नज़रों में चढ़ी होती, उसे और उसके घर वालों को जंगल की एकान्त जगह में लगे किसी डेरे में ठहराया जाता। इतने इन्तज़ाम के बाद, अब क़िस्सा आगे बढ़ता है।

कुछ किराये पर बुलवाये हुए बदमाश, रात के वक्त उस खास डेरे पर हमला कर देते और लड़की के घर वालों को मारपीट कर चारपाइयों से बाँध देते। फिर वे लड़की को जबरदस्ती उठा कर क़रीब के गाँव में ले जाते। लड़की चीखती-चिल्लाती और उनसे छोड़ देने की विनती करती मगर वे न मानते। कोई उसके कपड़े फाड़ देता, कोई जबरदस्ती करने की कोशिश करता। इस साज़िश में महाराजा का पूरा हाथ रहता था। ऐन मौक़े पर, एक मामूली राहगीर के लिबास में, महाराजा वारदात की जगह पर पहुँच जाते और बदमाशों के चंगुल से उस लड़की को छुड़ा लेते। इस तरह, लड़की के दिल में एहसान और शुक्रिये के जज़बात अपनी तरफ पैदा करके फ़ायदा उठाते। लड़की अपनी जान बचाने वाले बहादुर शख्स को अपनी अस्मत हवाले कर देती।

बदमाशों से लड़की को बचाते वक़्त महाराजा होशियार रहते और यह बहाना करते कि राहगीर के नाते वे अपना फ़र्ज़ अदा कर रहे हैं। बदमाशों को जेल में भेज दिया जाता और कई साल की सज़ा सुना दी जाती। मगर सज़ा भुगतने की नौबत न आती थी। उल्टे सोने-चाँदी का इनाम दे कर उनको रिहा कर दिया जाता।

४८. राज-ज्योतिषी

हिज़ हाईनेस जेनरल महाराजा जगतजीत सिंह, कपूरथला नरेश के कोई पौत्र न था। अपने मन में यही सोच कर वे परेशान थे कि पौत्र के न होने पर उनका नाम और वंश किस तरह आगे चल सकेगा।

उनके बड़े बेटे, युवराज हिज़ हाईनेस परमजीत सिंह का विवाह हिमालय की जव्वल रियासत के राजपरिवार की राजकुमारी बृन्दा से हुआ था जिससे तीन बेटियाँ थी। राज-ज्योतिषी पंडित श्रीराम ने भविष्यवाणी की थी कि उनकी अगली सन्तान एक पुत्र होगा। अतएव, जिस रात को चौथा बच्चा होने वाला था, उस रात को राज-ज्योतिषी, महारानी (युवराज की माता), महाराजा और राजपरिवार के लोग, प्राइम मिनिस्टर, रियासत के अन्य मंत्री, अफ़सरान, सरदार सार्वजनिक संस्थाओं के प्रतिनिधि, रियासती विधान मंडल के सदस्य और विभिन्न सम्प्रदायों के धर्मगुरु, युवारानी के होने वाले पुत्र की मंगल कामना के लिए महल में इकट्ठे हुए। उस मौक़े पर, पंजाब के गवर्नर, भारत सरकार के उच्च पदाधिकारी अंग्रेज़ और भारत सरकार के प्रतिनिधि की हैसियत से पंजाब की रियासतों के रेजीडेन्ट भी आये थे। जैसी पंडित श्रीराम ने भविष्यवाणी की थी कि इस बार पुत्र होगा, उसी के अनुसार रियासत की फ़ौज के प्रधान सेनापति, बख्शी पूरन सिंह को हुक्म दिया गया था कि अगले दिन सवेरे, नये राजकुमार को फ़ौजी सलामी दिये जाने का पूरा इन्तज़ाम रखें।

महल में और राजधानी भर में रंगविरंगे बिजली के लट्टुओं से रोशनी किये जाने की व्यवस्था थी। कलकत्ते से बढ़िया आतिशबाज़ी मँगाई गई थी, उस मौक़े पर खुशी मनाने के लिए। पौ फटते ही, युवरानी के पुत्र होने का ऐलान करने के लिए १०१ तोपों की सलामी दागी जाने वाली थी। ये सारी तैयारियाँ पहले से ही कर डाली गई थीं और राजकुमार के जन्म लेने के आखिरी संकेत का इन्तज़ार हो रहा था।

राजकुमार के जन्म पर उत्सव-समारोह के लिए रियासत के प्राइम मिनिस्टर मिस्टर एल० फ्रेन्च ने, जिनकी सेवायें भारत सरकार से प्राप्त हुई थीं, दो लाख रुपये का बजट मंजूर किया था। राज-ज्योतिषी को, युवरानी की प्रसूतावस्था में ही एक लाख रुपये ग्रहों की शान्ति के लिए यज्ञ और हवन करने को दिये गये थे जिसका ज्यादातर हिस्सा उन्होंने अपने घर में गाड़ कर

उन पर भपने हाथों ईंट, गारे और सीमेन्ट का एक चबूतरा बना दिया था।

मगर क़िस्मत के खेल भी अजीब होते हैं। १७ जुलाई १९२६ को सवेरे साढ़े तीन बजे युवरानी बृन्दा ने एक लड़की को जन्म दिया। इस समाचार की सूचना मुख्य लेडी डॉक्टर मिस पेरीरा ने दी, जो आँखों में आँसू भरे, भागती हुई, उस ड्राइंग रूम में आई जहाँ महाराजा सबके साथ बैठे हुए बड़ी उत्कण्ठा से इन्तज़ार कर रहे थे। इस पर महाराजा के हुक्म देते ही राज-ज्योतिषी को फ़ौरन गिरफ़्तार करके, पैरों में बेड़ियाँ डाल कर जेलखाने में बन्द कर दिया और बिना मुक़दमा चलाये नौ बरस की सख़्त क़ैद की सज़ा दी गई।

चालीस दिन तक दरबार ने मातम मनाया। महाराजा और महारानी, बड़े निराश हो कर उदासी से अपने-अपने कमरे बन्द करके पड़े रहे। चौथी बार भी पोती पा कर महारानी घंटों फूट-फूट कर रोया करती थी।

मेहमान लोग महल से निकल कर जल्दी-जल्दी अपने ठिकानों को चल दिये। एक लाख से ऊपर रियाया—मर्द, औरत, बच्चे, बूढ़े—जो महल के फाटक के बाहर, जलसे में शरीक होने की उम्मीद रखे, इन्तज़ार कर रहे थे, निराश और दुखी होकर अपने घरों को वापस गये। उनको कहते सुना गया कि राज-परिवार पर ईश्वर का कोप हुआ है और वंश के भाग्य पर उनको तरस आता है।

यहाँ यह बतलाना ज़रूरी है कि भारतीय रियासतों के हिन्दू कानून के अनुसार लड़कियों का पिता की राजगद्दी पर हक नहीं होता।

कुछ घंटे बाद, महारानी ने अपने प्राइवेट सक्रेटरी कर्नल भरपूर सिंह को मेरे पास भेज कर मुझे बुलवाया। हालाँकि मैं थका हुआ था और सारी रात जागता रहा था, मैं महारानी से मिलने उनके महल में तुरन्त जा पहुँचा। खबर पाते ही महारानी ने मुझे बुला लिया। उनके झुर्रियाँ पड़े उदास चेहरे पर आँसू बह रहे थे। वे बोलीं—"दीवान साहब! हम लोगों पर पहले से ही ईश्वर का शाप है क्योंकि महाराजा और युवराज, दोनों ही दाढ़ियाँ मुँडा चुके हैं और केश भी कटवा डाले हैं। अब ईश्वर का कोप और भी हम पर पड़ेगा अगर हमने ऊँची जात के ब्राह्मण राज-ज्योतिषी को जेलखाने में रखा।" मैंने महाराजा के पास जा कर महारानी का सँदेसा कहा और विनती की कि राज-ज्योतिषी को जेल से रिहा करा दें मगर महाराजा ने महारानी की ओर मेरी एक न सुनी और साफ़ इन्कार कर दिया। वे राज-ज्योतिषी की झूठी भविष्यवाणी पर जले-भुने बैठे थे।

महाराजा की एक चहेती थी—मदाम सेरी, जो महल में महाराजा के बराबर वाले कमरे में रहती थी। मैं उसके पास गया और राज-ज्योतिषी को जेल से छुटकारा दिलाने में उससे मदद माँगी।

मदाम [illegible] के इस काम में मदद देना मंजूर कर लि[illegible]।

उसी समय महाराजा से मिलने गईं। उस वक़्त महाराजा अपने गुलाबी संग-मर्मर के बने गुस्लखाने में नहा रहे थे जिसमें से फ्रान्स के बेहतरीन सेन्ट की खुशबू बाहर तक आ रही थी। स्नान के जल में पड़ी सुगन्ध-सामग्री से बादलों की तरह भाप उठ रही थी। मदॉम सेरी भी अपने प्रिय महाराजा के साथ स्नान करने गुस्लखाने के अन्दर चली गईं। उनके साथ जल-क्रीड़ा करने और उन पर गुलाब की पंखुड़ियाँ बिखेरने के बाद प्यार भरे शब्दों में उनसे कहा कि बेरहमी न बनें और राज-ज्योतिषी को जेल से रिहा कर दें। इस पर महाराजा ने पुलिस के इन्सपेक्टर जेनरल सरदार सुचेत सिंह को हुक्म दिया कि क़ैदी को छोड़ दिया जाय और रियासत से बाहर निकाल दिया जाय मगर उसकी सारी जायदाद ज़ब्त कर ली जाय। राज-ज्योतिषी के परिवार के जितने भी आदमी रियासत में ऊँची जगहों पर तैनात थे, वे सबके सब बरख़ास्त हो गये।

कुछ दिनों बाद, महाराजा के एक अत्यन्त विश्वासी और कृपापात्र मुख्य सेवक ने, जिसका नाम सरदार प्रताप सिंह था, सपना देखा कि सिखों के दसवें गुरु, गोविन्द सिंह जी कलगीदार अपने सफेद घोड़े पर सवार हो कर पधारे हैं और उससे कह रहे हैं कि महाराजा यदि शपथ ले लें कि उनका पौत्र दाढ़ी और केश धारण करेगा और उसका लालन-पालन सिक्ख धर्म के नियमानुसार किया जायगा तो गुरु जी महाराजा को पौत्र होने का वरदान देंगे।

सरदार प्रताप सिंह भागता हुआ तुरन्त पाँव-पैदल दो मील का फ़ासला तय करके महल में पहुँचा और महल के क़ानून-क़ायदे की रत्ती भर परवाह न करके रात को महाराजा के सोने के कमरे में घुस कर उनको जगाया, फिर काँपते काँपते पूरा सपना बयान किया। पूरी बात सुन कर महाराजा ने कहा कि गुरु की आज्ञा का तुरन्त पूरा पालन किया जायगा। महाराजा ने खुद उसी समय उठ कर प्राइम मिनिस्टर मिस्टर एल० फ्रेन्च को टेलीफ़ोन किया और कहा कि मन्त्रिमण्डल की आकस्मिक मीटिंग फ़ौरन बुलाई जाय। महाराजा ने अपने सभी मन्त्रियों को सपने की बात बतलाई। उन्होंने प्राइम मिनिस्टर को आदेश दिया कि एक सार्वजनिक सभा का गुरुद्वारे में कल सवेरे इन्तज़ाम किया जाय जिसमें तमाम प्रजा के लोग, मिनिस्टर, अफ़सरान और राजपरिवार के लोग बुलाये जायें जहां गुरु ग्रन्थ साहब के आगे वे शपथ लेंगे कि अपने पौत्र को वे सिक्ख धर्म की दीक्षा दिलायेंगे और उसे दाढ़ी व केश अवश्य धारण करायेंगे।

महाराजा ने ऑटोमैटिक टेलीफ़ोन एक्सचेंज की अपने यहाँ व्यवस्था कर रखी थी। प्राइम मिनिस्टर तथा अन्य मन्त्रियों से टेलीफ़ोन द्वारा हर वक़्त बातचीत हो सकती थी और इस तरह मन्त्रियों के इकट्ठा हुए बिना भी, जब चाहे तब, मन्त्रिमण्डल की मीटिंग हो सकती थी।

युवराज परमजीत सिंह के साथ महाराजा छः घोड़ों की सोने की गाड़ी में

बैठ कर महल से गुरुद्वारा पहुँचे । गाड़ी के साथ नंगी तलवारें लिए नीली वर्दी पहने महल के अंगरक्षक थे। गुरुद्वारा पहुँचने पर महाराजा और युवराज, गुरुद्वारे के मुख्य पुरोहित भाई हरनाम सिंह से मिले और उनके साथ हॉल में पहुँचे जहाँ पवित्र पुस्तक रखी थी । महाराजा गुरुग्रन्थ साहब के आगे झुके और उसे माथे से लगाया। फिर वहाँ मौजूद हिन्दू, सिक्ख, ईसाई और मुसलमान जनता की भारी भीड़ के आगे ग्रन्थ के सामने शपथ ली। मुख्य पुरोहित ग्रन्थी भाई हरनाम सिंह ने जोरदार किन्तु मधुर आवाज में अमृत-वाणी का पाठ किया। गुरु गोविन्द सिंह की मृत्यु के बाद से सिक्ख लोग गुरु ग्रन्थ साहब को अपना ग्यारहवाँ गुरु मानते हैं। भाई हरनाम सिंह ने गुरु ग्रन्थ साहब के आगे आदरपूर्वक निवेदन किया :—

"महान् गुरु जी ! आपकी सर्वोपरि सत्ता के सम्मुख कपूरथला के महाराजा जगतजीत सिंह सपरिवार, इष्ट-मित्र, अहलकारों सहित अपनी श्रद्धा भक्ति और सम्मान भेंट करने पधारे हैं। हे सच्चे सम्राट् ! अत्यन्त विनीत हो कर जगतजीत सिंह आपका आशीर्वाद माँगते हैं कि उनके पौत्र उत्पन्न हो जिसे वे सिक्ख धर्म की दीक्षा दिलाने की शपथ लेते हैं। लम्बे केश और दाढ़ी न रखाने का जो पाप महाराजा और युवराज से हुआ है, उसकी उन्हें क्षमा प्रदान की जाय। सत्य गुरु स्वामी ! जगत सिंह भेंट में ग्यारह हजार रुपये और एक सौ एक थाल कड़ाह-प्रसाद के लाये हैं जो आपके चरणों में रखे हैं।"

जिस समय महाराजा गुरु ग्रन्थ साहब के आगे झुके, उसी समय 'सत् श्री अकाल' की ध्वनि जनता में गूँज उठी और लोग अमृत-वाणी के गीत गाने लगे।

४६. दुलहन का चुनाव

पहली युवरानी बृन्दा, अपने पति, कपूरथला के युवराज परमजीत सि
के स्नेह से वञ्चित हो गईं। युवराज पहले से ही सुनहले केशों वाली अंग्रे
महिला मिस स्टेला मज के प्रेमपाश में गम्भीर रूप से बँध चुके थे। इ
महिला से उनकी मुलाक़ात एक रेस्टोरॉ में लन्दन में हुई थी, जहाँ कैबरे
वह प्यानो बजाया करती थी। पहली नज़र में ही युवराज मिस स्टेला
दिल दे बैठे और जब तक वह प्यानो बजाती रही, तब तक सारी रात उस
बग़ल में खड़े रहे। बृन्दा ने विदेशी यात्रा शुरू कर दी थी। युवराज भी सा
में कई महीने मिस स्टेला के साथ यूरोप और अमेरिका की सैर किया कर
थे। तीसरी बेटी के जन्म के बाद से युवराज और युवरानी में दाम्पत्य प्रे
का अन्त हो चुका था इसलिए बृन्दा के आगे कोई सन्तान होने की सम्भाव
नहीं थी।

भारत के वायसराय लार्ड कर्ज़न, कट्टर साम्राज्यवादी थे और भारत प
क़लम के बजाय तलवार के जोर से शासन करना चाहते थे। उनको यह बा
पसन्द न थी कि भारतीय राजा लोग अंग्रेज़ या अमेरिकन औरतों से शादी करें
उनकी राय में ऐसे सम्बन्ध भारतीय प्रजा की निगाह में शासक जाति
महिलाओं की हीनता सिद्ध करते थे। लार्ड कर्ज़न ने कुछ भारतीय नरेशों क
जिन्हें वे बेहद कामलोलुप समझते थे, गर्मियों में शिमले आने की मनादी क
दी जिससे वे यूरोपियन औरतों पर अपनी वासनाभरी निगाहें न डाल सकें
यह मनादी तब हुई जब पटियाला नरेश भूपेन्दर सिंह ने लेडी कर्ज़न को बेश
क़ीमत साड़ी और अपने खज़ाने के हीरे-जवाहरात जड़े आभूषण पहना क
लार्ड कर्ज़न के साथ उनका फ़ोटो खिचवाया।

लार्ड कर्ज़न के ज़माने में ही हुक्म जारी किया गया कि भारत का को
महाराजा बिना वायसराय की आज्ञा के भारत से बाहर न जा सकेगा
लार्ड कर्ज़न ने कपूरथला के महाराजा जगतजीत सिंह को यूरोप जाने
...त देने से इन्कार कर दिया, तब महाराजा ने वायसराय से मुलाक़ा
...रने की अनुमति मांगी। अपनी मुलाक़ात में महाराजा ने लार्ड कर्ज़न
कहा—"यौर एक्सीलेन्सी! मेरी रियासत का शासन-प्रबन्ध अच्छी तरह च
रहा है और मेरी ग़ैर मौजूदगी में भी उसी तरह चलता रहेगा।" लार्ड कर्ज़न
ने गुस्से से जवाब दिया—"तो फिर रियासत का शासक बने रहने की आप

क्या जरूरत है, अब वहाँ का शासन-प्रबन्ध आपके बिना भी अच्छी तरह चल सकता है ?" यह सुन कर महाराजा की बोलती बन्द हो गई और दुबारा कुछ कहने की हिम्मत न पड़ी।

मिस स्टेला परमजीत को दूसरी शादी नहीं करने देती थी। इसीलिए वे अपने पिता और दरबारियों के समझाने पर भी दूसरी शादी करने को राजी न थे। अन्त में, महारानी के लगातार दबाव डालने और बहुमूल्य उपहार मिलने पर युवराज ने दूसरी शादी कर ली। युवराज को दूसरी शादी के लिए रजामन्द करने के प्रयोजन से प्राइम मिनिस्टर लुई फ्रेन्च ने, जो अंग्रेज थे और भारत सरकार के राजनीतिक विभाग से आये थे, बड़ी सावधानी से एक षड्यंत्र रचा जिससे युवराज उस प्रस्ताव की ओर आकर्षित हों।

एक और बड़ी गम्भीर अड़चन थी। वायसराय ने एक कानून बना दिया था जिसके अनुसार किसी भी भारतीय शासक का, किसी अंग्रेज या विदेशी पत्नी से उत्पन्न बेटा, राजगद्दी का वारिस नहीं बन सकता था। अतएव, मिस स्टेला के अगर पुत्र होता तो उत्तराधिकार का हक उसे न मिलता। इसलिए, जहाँ तक उत्तराधिकार के कानून से सम्बन्ध था, युवराज और मिस स्टेला के विवाह का प्रश्न ही नहीं उठता था।

इस गुत्थी को सुलझाने के लिए कैबिनेट की एक मीटिंग बुलाई गई। महाराजा उसके सभापति बने। यह तय पाया गया कि युवराज के लिए दुल्हन तलाश करने के प्रयोजन से एक कमेटी बनाई जाय जिसमें हाई कोर्ट के चीफ जस्टिस दीवान सुरेश्वर दास, सरदार भरपूर सिंह, लेडी डॉक्टर मिस पेरीरा, महल के डॉक्टर सोहन लाल और मैं, शामिल हों। राजनीतिक विभाग के जरिये वायसराय से भी सहायता माँगी गई। वायसराय और ब्रिटिश रेजीडेन्ट, दोनों चाहते थे कि महाराजा के एक पौत्र हो।

सच पूछा जाय तो वायसराय और रेजीडेन्ट को भारत सम्राट् की ओर से आदेश मिल चुका था कि कुछ प्रतिबन्धों के साथ वे महाराजा की सनक और मानसिक प्रवृत्ति के अनुसार सम्मति दिया करें।

पंजाब के गवर्नर ने काँगड़ा के डिप्टी कमिश्नर को सरकारी पत्र भेजे कि वे हमारी कमेटी के काम को पूरा करने में मदद करें। डिप्टी कमिश्नर मिस्टर प्रेम थापर, जो आई० सी० एस० के सदस्य थे, ऐसा नाजुक कर्त्तव्य पालन करने में चिन्तित हो उठे और चीफ जस्टिस व कमेटी के मेम्बरान से हिदायतें लेने गये।

दिल ही दिल में मिस्टर थापर अपनी इस खास ड्यूटी से प्रसन्न थे हालांकि जाहिरा तौर पर यही कहते थे कि कमेटी की बैठक में हफ्ते में एक या दो बार से ज्यादा वे न आ सकेंगे। उन्होंने तहसीलदारों व जिले के छोटे अहलकारों को हुक्म जारी कर दिया कि उन्हें कुलीन राजपूत घरानों के लोगों

जिनमें से युवराज के लिए दुलहन का चुनाव किया जा सके। यह सूचना डुग्गी पिटवा कर और इश्तिहार बाँट कर पूरे जिले के गाँवों में पहुँचा दी गई।

धर्मशाला में बड़ा भारी तम्बू लगवा दिया गया और शादी कमेटी सदस्यों की सुविधा का प्रबन्ध करके डिप्टी कमिश्नर खुद वहाँ देखभाल लिए मौजूद रहने लगे। तमाम क्लर्क व चपरासी कामकाज के लिए तैना कर दिये गये। चार होशियार लेडी डॉक्टर और दो सिविल सर्जन भी मद के लिए आ गये। फ़ौजी गारद, सहकारी, बावर्ची, बैरे और खलासी, क़री १०० कर्मचारी वहाँ तैनात थे। २५० के लगभग लड़कियों को चुनाव कमेटी ने देखा। चुनाव कमेटी के निर्देश व लोगों की जानकारी के लिए नीचे लिखं सूचना हिन्दी और उर्दू में छाप कर बँटवाई गई थी :—

(१) लड़की मध्यम ऊँचाई की हो, दुबला, इकहरा वदन हो, शरी सुडौल हो।
(२) लड़की के भाई ज़रूर हों क्योंकि जिसके सगे भाई होते हैं, ऐसी लड़की आम तौर पर पुत्र को जन्म देती है।
(३) लड़की के वंश की दस पीढ़ियों तक जाँच की जाय।
(४) लड़की को जननेन्द्रिय सम्बन्धी कोई बीमारी न हो और तन्दुरुस्ती हर तरह से अच्छी हो।
(५) लड़की की उम्र १७ साल से ज़्यादा न हो।
(६) कमेटी की लेडी डॉक्टरों द्वारा हर तरह की जाँच कराने से लड़की को इन्कार न हो।
(७) अगर लड़की चुन ली गई तो वह युवराज परमजीत की पत्नी बनेगी और उसका पुत्र राजगद्दी का अधिकारी होगा।
(८) लड़की के माता-पिता को अच्छा इनाम मिलेगा।

ऊपर लिखी विज्ञप्ति के अनुसार लड़कियाँ एक-एक करके कमेटी के कमरे में बुलाई जाती थीं। पहले हाईकोर्ट के चीफ़ जस्टिस की अध्यक्षता में शादी कमेटी के मेम्बरान ज़बानी सवालात करके उनकी जाँच करते थे। फिर उन्हें महारानी के प्राइवेट सेक्रेटरी भरपूर सिंह के सिपुर्द कर दिया जाता जो एक अलग ख़ीमे में रहते थे। तीसरे ख़ीमे में मिस पेरीरा के अधीन लेडी डॉक्टर रहती थीं। वे लोग शारीरिक जाँच के लिए नये से नये औज़ार इस्तेमाल करती थीं जिनके कारण उनका ख़ीमा किसी अस्पताल का आपरेशन थियेटर जैसा जान पड़ता था। चौथे ख़ीमे में महल के डॉक्टर मोहन लाल बैठते थे जो लड़कियों के स्वास्थ्य की सामान्य जाँच करते थे। कई शामियाने और ख़ीमे थे जिनमें वेटिंग रूम और हाथ-मुँह धोने की व्यवस्था की गई थी। [illegible] की वह बस्ती एक क़स्बे जैसी दिखाई देती थी।

मेरी डॉक्टर लड़कियों की जननेन्द्रिय और गर्भाशय की जाँच करती थी कि उनमें पुत्रोत्पन्न की शक्ति है अथवा नहीं। डाक्टर लोग थूक, रक्त, पेशाब वगैरह की जाँच करते थे। सरदार भरपूर सिंह प्राइवेट सेक्रेटरी के जिम्मे लड़कियों के शरीर की लम्बाई चौड़ाई सिर से पैर तक नापने की थी। कामपिपासु और इन्द्रियलोलुप होने के कारण इसी नाप-जोख के बीच वह लड़कियों की छातियाँ टटोला करता था। उसकी शिकायत भी हुई और कमेटी के मेम्बरों को उसकी हरकतों का पता चल गया।

भरपूर सिंह को कमेटी ने सामने बुलवा कर पूछ-जाँच की। उसने कहा कि महारानी ने निजी तौर पर उसे कुछ हिदायतें दी थी जिनका वह पालन कर रहा था और कमेटी को उसके काम में दखल देने का कोई हक नहीं था। कमेटी ने पड़ोस के छः जिलों में जाकर खोज-बीन की और महीनों की कोशिश के बाद कुल चार लड़कियाँ चुनी गई जिनको खास मोटरों में बिठा कर महाराजा से भेंट करने राजधानी भेज दिया गया।

वे लड़कियाँ प्रतिष्ठित राजपूत परिवारों की थी जिनके पूर्वज उत्तर भारत के जागीरदार और राजा थे। मुसलमानों का हमला होने पर उनके अत्याचारों से बचने के लिए उन्होंने पहाड़ों में जा कर शरण ली थी और वहीं बस गये थे। जीविका के साधनों की कमी के कारण वे गरीब हो गये थे मगर अपनी पैतृक परम्परा और प्रतिष्ठा को न भूले थे। वे अपनी लड़कियों को जाति से बाहर नहीं ब्याहते थे और इतिहास में उनके आन पर मर मिटने की कितनी ही कहानियाँ मौजूद थी। अपने यहाँ की स्त्रियों की इज्जत बचाने में वे प्राण देने को तैयार रहते थे।

जब वे चारों लड़कियाँ मोटरों द्वारा कपूरथला पहुँची और चुनाव के लिए महाराजा के आगे पेश की गई तब महाराजा ने उनमें से एक को पसन्द किया कि वह युवरानी बनने योग्य थी, वह लड़की जो सुन्दर, सुडौल और इकहरे बदन की थी, तुरन्त युवराज की माता, सीनियर महारानी के पास महल के अन्दर भेज दी गई।

युवराज के विवाह की तैयारियाँ बड़ी धूमधाम से होने लगी। वायसराय भारत सरकार के उच्च अधिकारी अंग्रेजों, पड़ोस की रियासतों के राजा महाराजाओं, धनी मानी व्यवसायियों और उद्योगपतियों तथा बड़े-बड़े नेताओं को निमन्त्रण भेजे गये। विवाह के जलसे के लिए तीन लाख रुपये की रकम अलग रख दी गई। विवाह की तारीख निश्चित हो गई थी।

विवाह होने में केवल चार दिन बाकी रह गये थे। मिस मज ने तब, तब युवराज को अपनी मुट्ठी में कर लिया था जिस पर युवराज अपना प्रेम और दौलत न्यौछावर कर रहे थे। उसने युवराज को धमकी दी अगर वे शादी करेंगे तो वह उन्हें छोड़ कर चली जायगी। युवराज यह बात सुनते ही
होकर मिस म... गिर पड़े। डॉक्टर सोहन लाल को उन

के इलाज के लिए बुलाया गया। डॉक्टर ने स्मेलिंग साल्ट सुँघाया पर युवराज की बेहोशी न टूटी। जब इस तरह युवराज की हालत खराब हो रही थी, उस वक़्त मिस मज अपना सामान बाँध-बूँध कर महल से चले जाने की तैयारी कर रही थी। बुद्धिमान डॉक्टर ने महाराजा से जा कर कहा कि हिज हाईनेस युवराज को मानसिक धक्का पहुँचा है और वे तब तक ठीक न होंगे जब तक मिस मज ज़ोर से चिल्ला कर कई दफ़ा उनसे यह न कहेंगी कि महाराजा ने युवराजकी दूसरी शादी मंसूख कर दी है। युवराज की जान बचाने के ख़याल से महाराजा ने डॉक्टर सोहन लाल की तजवीज़ मंज़ूर कर ली।

रियासत की सरकार के आगे यह टेढ़ा मसला आ पड़ा क्योंकि तमाम निमन्त्रण भेजे जा चुके थे और काफ़ी रुपया खर्च करके शादी की सारी तैयारियाँ क़रीब-क़रीब पूरी हो चुकी थीं। महाराजा के सभापतित्व में कैबिनेट की एक मीटिंग हुई जिसमें तय पाया गया कि मिस मज को काफ़ी रुपये और जवाहरात रिश्वत में देकर इस बात पर राज़ी किया जाय कि वह युवराज को दूसरी शादी कर लेने दे। मिस मज की विश्वस्त नौकरानी को, जो स्विट्ज़रलैंड की रहने वाली थी, यह सँदेसा अपनी मालकिन तक पहुँचाने और उनको युवराज की शादी की इजाज़त देने को राज़ी कराने की ज़िम्मेदारी सौंपी गई।

नौकरानी के समझाने पर मिस मज ने युवराज की दूसरी शादी होने देने के एवज़ में दस लाख रुपये बतौर हर्जाने के तलब किये। उसकी दूसरी शर्त यह थी कि शादी के बाद युवराज महीने में सिर्फ़ एक दफ़ा, एक घंटे के लिए, सात बजे से ८ बजे रात तक अपनी पत्नी के पास जा सकेंगे जब तक वह गर्भवती न हो जाय। जब यह समझौता हो गया तब मिस मज युवराज के पास गई और जोर से चिल्ला कर बोली—"प्यारे! उठो, मैं तुम से प्रेम करती हूँ। महाराजा ने तुम्हारी शादी का इरादा छोड़ दिया है।" धीरे-धीरे युवराज को होश आने लगा।

कुछ दिनों बाद मिस मज के समझाने पर युवराज शादी के लिये राज़ी हो गये और धार्मिक कृत्य सम्पन्न होने के बाद बड़ी धूमधाम से शादी की रस्म पूरी हो गई। उस ख़ुशी के मौक़े पर शरीक़ होने हज़ारों मेहमान [illegible] आये और महाराजा ने अपने महल में उनकी खूब खातिरदारी की। दावतें हुई जिनमें वायसराय, पास के सूबों के गवर्नर, पोलीटिकल एजेन्ट्स, बड़ी बड़ी रियासतों के महाराजा लोग और उनके राज-परिवार के लोग तथा [illegible] उपस्थित थे। नागरिकों को हिन्दुस्तानी ढंग की दावतें दी गई और प्रतिष्ठित मेहमानों को अंग्रेज़ी ढंग की।

वायसराय ने वर-वधू को आशीर्वाद दिया और उनके पुत्र होने की [illegible] कामना की। फ्रान्स, इटली, स्पेन तथा यूरोप और अमरीका के [illegible]

दिन तक चलता रहा हालाँकि वायसराय सिर्फ़ दो दिन ठहर कर चले गये थे। रियासत के एक छोर से दूसरे-छोर तक बड़ी खुशियाँ मनाई गईं। गरीबों को खाना खिलाया गया और क़ैदी रिहा कर दिये गये। परम्परा के अनुसार मिस मज को समारोह में शरीक होने का निमत्रण नही दिया गया। वह देहरादून चली गई और पदम बहादुर नामक अपने एक हिन्दुस्तानी दोस्त के साथ दो हफ्ते तक रगरलियाँ मनाती रही, जिससे गुप्तरूप से उसका प्रेमालाप चला करता था।

महाराजा के महल से एक मील दूर सीनियर महारानी का एलिसीज नामक महल था जिसमें के कुछ सजे हुए शानदार कमरे युवरानी को रहने के लिए दे दिये गये जहाँ युवराज से उनकी मुलाकात हो सके। उस समय अपने पिता के महल के करीब एक काटेज मे युवराज मिस स्टेला मज के साथ रहा करते थे। युवराज की पहली पत्नी वृन्दा, राजधानी से चार मील दूर नदी किनारे बने हुए ब्यूनोविस्टा नामक महल मे रहा करती थी।

मिस मज के प्रेम में युवराज इस बुरी तरह से गिरफ्तार थे कि उनको अपनी नवविवाहिता पत्नी से मिलने की भी इच्छा न होती थी। महीने गुज़र जाने पर युवराज उससे भेंट करने नही गये हालाँकि मिस मज ने उन्हें महीने में एक बार ७ और ८ बजे के बीच जाने की इजाजत दे रखी थी। महारानी और युवराज के मित्रो ने बहुत समझाया कि वे युवरानी से ज़रूर मिलें। महारानी के हठ करने पर मिस मज से इजाजत लेकर युवराज ने युवरानी से भेंट करने का दिन निश्चित किया। उसके अनुसार महारानी ने अपने महल में युवराज के स्वागत की तैयारियाँ कराईं।

युवरानी को सुगन्धित जल से स्नान कराया गया और उनको ज़री के कपड़े और बहुमूल्य साड़ी पहनाई गई। मोती के हार, हीरे की अंगूठियाँ और नीलम व हीरे जड़ा मुकुट उन्होंने पहना। बाँदियों ने उनके हाथों और पैरों के नाखून काटे। उनके बदन मे इत्र लगाया गया। हाथों मे मेंहदी और पैरों में महावर लगा। महारानी की देख-रेख मे चालीस बाँदियो और सहेलियों ने उनका शृंगार किया और सजाया। सात बजे युवरानी अपने पति का स्वागत करने और सुहागरात मनाने को तैयार कर दी गई।

वस्त्रों और अलंकारों से सजी युवरानी स्वर्ग की अप्सरा जैसी सुन्दर लग रही थीं। दूसरी तरफ, युवाराज परेशानी में पड़े थे। मिस मज से काफी हुज्जत के बाद वे अपनी दुलहन से मिलने चले। उनका खिदमतगार ... लेकर चला जिसमें एक जोड़ी रेशमी पाजामा और ड्रेसिंग गाउन था। मिस मज ने युवराज को उनकी पत्नी से मिलने की इजाजत तो दे दी मगर स्मरण दिलाया था कि ८ बजे के बाद उनको वापस आना है। ... सात बजे महल पहुँच गये। उनको उस कमरे मे पहुँचाया गया जहाँ ... उनका इन्तज़ार कर रही थी। महारानी, रियासत के मंत्री और सर-

के इलाज के लिए बुलाया गया। डॉक्टर ने स्मेलिंग साल्ट सुँघाया पर युवराज को बेहोशी न टूटी। जब इस तरह युवराज की हालत खराब हो रही थी, उस वक़्त मिस मज अपना सामान बाँध-बूँध कर महल से चले जाने की तैयारी कर रही थी। बुद्धिमान डॉक्टर ने महाराजा से जा कर कहा कि हिज़ हाईनेस युवराज को मानसिक धक्का पहुँचा है और वे तब तक ठीक न होंगे जब तक मिस मज ज़ोर से चिल्ला कर कई दफ़ा उनसे यह न कहेंगी कि महाराजा ने युवराजकी दूसरी शादी मंसूख़ कर दी है। युवराज की जान बचाने के ख़याल से महाराजा ने डॉक्टर सोहन लाल की तजवीज़ मंजूर कर ली।

रियासत की सरकार के आगे यह टेढ़ा मसला आ पड़ा क्योंकि तमाम निमन्त्रण भेजे जा चुके थे और काफ़ी रुपया खर्च करके शादी की सारी तैयारियाँ क़रीब-क़रीब पूरी हो चुकी थीं। महाराजा के सभापतित्व में कैबिनेट की एक मीटिंग हुई जिसमें तय पाया गया कि मिस मज को काफ़ी रुपये और जवाहरात रिश्वत में देकर इस बात पर राज़ी किया जाय कि वह युवराज को दूसरी शादी कर लेने दे। मिस मज की विश्वस्त नौकरानी को, जो स्विट्ज़रलैंड की रहने वाली थी, यह सँदेशा अपनी मालकिन तक पहुँचाने और उनको युवराज की शादी की इजाजत देने को राज़ी कराने की ज़िम्मेदारी सौंपी गई।

नौकरानी के समझाने पर मिस मज ने युवराज की दूसरी शादी होने देने के एवज़ में दस लाख रुपये बतौर हर्जाने के तलब किये। उसकी दूसरी शर्त्त यह थी कि शादी के बाद युवराज महीने में सिर्फ़ एक दफ़ा, एक घंटे के लिए, सात बजे से ८ बजे रात तक अपनी पत्नी के पास जा सकेंगे जब तक वह गर्भवती न हो जाय। जब यह समझौता हो गया तब मिस मज युवराज के पास गई और ज़ोर से चिल्ला कर बोली—"प्यारे! उठो, मैं तुम से प्रेम करती हूँ। महाराजा ने तुम्हारी शादी का इरादा छोड़ दिया है।" धीरे-धीरे युवराज को होश आने लगा।

कुछ दिनों बाद मिस मज के समझाने पर युवराज शादी के लिये राज़ी हो गये और धार्मिक कृत्य सम्पन्न होने के बाद बड़ी धूमधाम से शादी की रस्म पूरी हो गई। उस ख़ुशी के मौक़े पर शरीक़ होने हज़ारों मेहमान कपूरथला आये और महाराजा ने अपने महल में उनकी ख़ूब ख़ातिरदारी की। दावतें हुईं जिनमें वायसराय, पास के सूबों के गवर्नर, पोलीटिकल एजेन्ट्स, बड़ी-बड़ी रियासतों के महाराजा लोग और उनके राज-परिवार के लोग तथा गणमान्य उपस्थित थे। नागरिकों को हिन्दुस्तानी ढंग की दावतें दी गईं और प्रतिष्ठित मेहमानों को अंग्रेज़ी ढंग की।

वायसराय ने वर-वधू को आशीर्वाद दिया और उनके पुत्र होने की शुभ-कामना की। फ्रान्स, इटली, स्पेन तथा यूरोप और अमरीका के अन्य देशों से आये हुए मेहमानों ने शादी के जलसों में भाग लिया। यह समारोह दस

दिन तक चलता रहा हालांकि बायसराय सिर्फ दो दिन ठहर कर चले गये थे। रियासत के एक छोर से दूसरे छोर तक बड़ी खुशियाँ मनाई गईं। गरीबों को खाना खिलाया गया और कैदी रिहा कर दिये गये। परम्परा के अनुसार मिस मज को समारोह में शरीक होने का निमंत्रण नहीं दिया गया। वह देहरादून चली गई और पदम बहादुर नामक अपने एक हिन्दुस्तानी दोस्त के साथ दो हफ्ते तक रंगरलियाँ मनाती रही जिससे गुप्तरूप से उसका प्रेमालाप चला करता था।

महाराजा के महल से एक मील दूर सीनियर महारानी का एलिसीज नामक महल था जिसमें के कुछ सजे हुए शानदार कमरे युवरानी को रहने के लिए दे दिये गये जहाँ युवराज से उनकी मुलाकात हो सके। उस समय अपने पिता के महल के क़रीब एक काटेज में युवराज मिस स्टेला मज के साथ रहा करते थे। युवराज की पहली पत्नी वृन्दा, राजधानी से चार मील दूर नदी किनारे बने हुए ब्यूनोविस्टा नामक महल में रहा करती थी।

मिस मज के प्रेम में युवराज इस बुरी तरह से गिरफ्तार थे कि उनको अपनी नवविवाहिता पत्नी से मिलने की भी इच्छा न होती थी। महीने गुज़र गये पर युवराज उससे भेंट करने नहीं गये हालांकि मिस मज ने उन्हें महीने में एक बार ७ और ८ बजे के बीच जाने की इजाज़त दे रखी थी। महारानी और युवराज के मित्रों ने बहुत समझाया कि वे युवरानी से ज़रूर मिलें। महारानी के हठ करने पर मिस मज से इजाज़त लेकर युवराज ने युवरानी से भेंट करने का दिन निश्चित किया। उसके अनुसार महारानी ने अपने महल में युवराज के स्वागत की तैयारियाँ कराईं।

युवरानी को सुगन्धित जल से स्नान कराया गया और उनको ज़री के कपड़े और बहुमूल्य साड़ी पहनाई गई। मोती के हार, हीरे की अँगूठियाँ और नीलम व हीरे जड़ा मुकुट उन्होंने पहना। बाँदियों ने उनके हाथों और पैरों के नाखून काटे। उनके बदन में इत्र लगाया गया। हाथों में मेंहदी और पैरों में महावर लगा। महारानी की देख-रेख में चालीस बाँदियों और सहेलियों ने उनका शृंगार किया और सजाया। सात बजे युवरानी अपने पति का स्वागत करने और सुहागरात मनाने को तैयार कर दी गईं।

वस्त्रों और अलंकारों से सजी युवरानी स्वर्ग की अप्सरा जैसी सुन्दर लग रही थीं। दूसरी तरफ, युवराज परेशानी में पड़े थे। मिस मज से काफी तू मैं-मैं के बाद वे अपनी दुलहन से मिलने चले। उनका खिदमतगार अटैची लेकर चला जिसमें एक जोड़ी रेशमी पाजामा और ड्रेसिंग गाउन था। मिस मज ने युवराज को उनकी पत्नी से मिलने की इजाज़त तो दे दी थी मगर स्मरण दिलाया था कि ८ बजे के बाद उनको वापस आना है। युवराज सात बजे महल पहुँच गये। उनको उस कमरे में पहुँचाया गया जहाँ युवरानी उनका ... कर रही थीं। महारानी, रियासत के मंत्री और सभी

सम्बन्धी उस मौक़े पर ड्राइंग रूप में बैठे हुए युवराज का आना और जाना देख रहे थे। पंडित और पुरोहित ग्रहों की शान्ति के लिए वेद-मंत्र पढ़ रहे थे। आते समय युवराज किसी से कुछ न बोले और सामने निगाह किये सीधे अपनी पत्नी के कमरे में चले गये। आठ बजने के पाँच मिनट पहले वे कमरे से बाहर आये। वे थके हुए और चिन्तित दिखाई देते थे। अपनी माँ से मिल कर उन्होंने विदा माँगी और अपने घर चल दिये जहाँ मिस मज उनका इन्तज़ार कर रही थी। युवरानी से पहली मुलाक़ात के बाद ही युवराज मिस मज के साथ यूरोप चले गये जहाँ हमेशा की तरह नाइट क्लब, थियेटर, नाचघर और मनोरंजन के स्थानों में सैर-सपाटे करने लगे।

दो महीने बाद, यह पता चला कि युवरानी गर्भवती हैं। कालान्तर में उन्होंने एक पुत्र को जन्म दिया। फिर, विवाह जैसी ही धूम-धाम, जलसे और समारोह हुए। महाराजा के पौत्र होने की ख़ुशी में १०१ तोपों की सलामी दागी गई। वायसराय को इस सुखद घटना की सूचना भेजी गई। उन्होंने लड़के को महाराजा जगतजीत सिंह का आगामी उत्तराधिकारी स्वीकार कर लिया।

महाराजा ने गुरु गोविन्द सिंह को वचन दिया था, उसे पूरा करने के लिए गुरुद्वारे में पवित्र के ग्रन्थ के सम्मुख प्रार्थना-सभा का आयोजन किया जिसमें दस हज़ार से भी ज़्यादा लोग आमंत्रित किये गये। इस सभा में गुरु ग्रन्थ साहब के सामने महाराजा ने अपनी शपथ फिर दुहरायी कि वे अपने पौत्र को सिक्ख धर्म की दीक्षा दिलायेंगे और वह दाढ़ी व लम्बे केश धारण करेगा। महाराजा अपने पौत्र को गोद में लिए थे औरउसका सिर उन्होंने गुरु ग्रन्थ साहब के आगे झुका कर अभिवादन कराया।

महल में नन्हें राजकुमार का नामकरण संस्कार भी सम्पन्न हुआ। उसका नाम सुखित सिंह रखा गया और अपने पिता के बाद वह कपूरथला नरेश कहलाया। जन्म से सिक्ख धर्म के पाँच ककार—पांच विशेष चिह्न—उसने धारण किये—केश, कड़ा, कच्छा, कंघा और कृपाण। (१) केश का अर्थ है सिर के लम्बे बाल जो सिक्खों का धार्मिक चिह्न होता है। (२) कड़ा लोहे का होता है और हाथ में पहना जाता है। (३) कच्छा, छोटा जाँघिया होता है जिसके ऊपर पायजामा या शलवार पहनते हैं। (४) कंघा सिर के बालों में लगा रखते हैं। (५) कृपाण छोटी तलवार होती है जो सिक्ख धर्म के अनुयायी होने की घोषणा करती है। सच्चा सिक्ख बनने के लिए 'पाल' दीक्षा लेकर पंच-ककार धारण करने पड़ते हैं।

इसी बीच, सुन्दरी युवरानी जो रूप, गुण और लावण्य में असाधारण थी, अभी २१ वर्ष की आयु भी पूरी न कर पाई थी। पति का बिछोह उनको बहुत अखर रहा था और वे दिनोंदिन सोच में घुलती जाती थीं। युवराज हमेशा यूरोप में रह कर मिस मज के साथ रंगरलियाँ मनाते और उन पर बुरी तरह

धन लुटा रहे थे। अन्त में, युवरानी को तपेदिक की बीमारी ने आ घेरा। दो साल तक गम्भीर यातना और कष्ट सह कर उन्होंने प्राण त्याग दिये मगर अपने जीवन का लक्ष्य उन्होंने गद्दी का एक सुसंस्कृत और योग्य उत्तराधिकारी उत्पन्न करके पूरा कर दिया था।

शहर के बाग में साधारण ढंग से उनका अन्तिम संस्कार किया गया पर उनकी स्मृति में कोई यादगार नहीं बनवाई गई।

५०. अलवर की रेत से

सवाई महाराजा श्री सवाई जयसिंह, अलवर नरेश जब राजस्थान के माउण्ट आबू में पोलो खेल रहे थे, तब एक दफ़ा उनको अपने घोड़े पर बड़ा गुस्सा आया। गवर्नर जेनरल के एजेण्ट सर रावर्ट हालैण्ड, अन्य पोलीटिकल आफ़िसरों तथा दर्शकों और जनता की बड़ी भीड़ के आगे महाराजा ने घोड़े को बड़ी बेरहमी से पीट डाला। उन्होंने हुक्म दिया कि दो दिन तक घोड़े को चारा-पानी कुछ न दिया जाय।

एक दफ़ा उन्होंने मशहूर ज्योतिषी अलास्टर को निमन्त्रित किया। अलास्टर बम्बई में था। उसने, बम्बई से जितने दिन बाहर रहना पड़े, उतने दिन के एक हज़ार रुपये रोज़, यात्रा, भोजन और निवास के खर्च के अलावा, अपने तथा अपने साथियों के लिए माँगे। अलास्टर की पेशीनगोई सच निकलती थी और भारत में उसने बड़ा नाम कमाया था, इसलिए महाराजा ने चैम्बर ऑफ़ प्रिन्सेज के चैन्सलर पद के लिए उम्मीदवार हो कर, अलास्टर से मशविरा करके अपनी कामयाबी की सम्भावना जानना चाही। उन्होने एक हज़ार रुपये रोज़ और सारा खर्च देना मंज़ूर कर लिया।

ज्योतिषी अलवर आ पहुँचा, पर रेलवे स्टेशन पर कोई उसे लेने न आया था, हालाँकि उसने तार द्वारा अपने आने की सूचना पहले ही महाराजा के प्राइवेट सेक्रेटरी को भेज दी थी। अलास्टर काफ़ी धनी व्यक्ति था। उसके पास अपनी मोटरें और बम्बई में कई मकानात थे। वह स्टेशन से आधे मील पाँव पैदल चला तब उसे एक टूटी फूटी घोड़ागाड़ी मिली जो उसने किराये पर कर ली। वह जब गेस्ट हाउस में पहुँचा तब उसे पता चला कि वहाँ उसके ठहरने का कोई इन्तज़ाम नहीं है। वह जगह-जगह भटकता फिरा पर कहीं उसके रात के ठहरने का इन्तज़ाम न हुआ।

अलास्टर जब सड़क पर चला जा रहा था तब उसकी भेंट इत्तिफ़ाक से रियासत के फ़ाइनेन्स मिनिस्टर मिस्टर आर० सी० खन्ना से हो गई। उन्होंने अलास्टर से पूछा कि वह कौन है और कहाँ जा रहा है। मिस्टर खन्ना का अलास्टर से निजी परिचय न था पर एक अच्छे कपड़े पहने परेशानहाल भी आदमी को देख कर उनसे पूछे बिना न रहा गया। अलास्टर ने पूरा किस्सा सुनाया और वह तार भी दिखलाया जो महाराजा ने उसको रियासत के मेह- मान की हैसियत से बुलाने को भेजा था। मिस्टर खन्ना महाराजा की सनकी आदतों से वाक़िफ़ थे और रात के वक़्त उनके प्राइवेट सेक्रेटरी या ए० डी० सी० को टेलीफ़ोन करने से डरते थे, इसलिए वे ज्योतिषी को अपने घर ले

५१. दस्ताने और सम्राट्

हिज़ हाईनेस अलवर के महाराजा इंग्लैंड की गोलमेज़ कान्फ्रेंस में शरीक़ हुए और भारत सम्राट् बादशाह जार्ज व रानी मेरी ने उनको बकिंघम पैलेस में स्वागत समारोह में आमन्त्रित किया। महाराजा ने लार्ड चैम्बरलेन को एक पत्र लिख कर सूचना दी कि वे बिना दस्ताने पहने हाथ न मिलायेंगे क्योंकि वे कट्टर हिन्दू हैं और भगवान रामचन्द्र जी के वंश में उत्पन्न होने के कारण विधर्मियों के हाथ छू नहीं सकते। हिन्दुओं को छोड़ कर वे किसी दूसरे से बिना दस्ताने पहने हाथ न मिलायेंगे।

यह सुन कर रानी को बड़ा क्रोध आया और उन्होंने लार्ड चैम्बरलेन को आज्ञा दी कि महाराजा अगर दस्ताने पहने रहेंगे तो सम्राट् और साम्राज्ञी भी उनसे हाथ कदापि न मिलायेंगे। बादशाह जार्ज भी इतने चिढ़ गये कि आमन्त्रित लोगों की फ़ेहरिस्त में से महाराजा का नाम काट देने का विचार भी एक बार उनके मन में आया। सेक्रेटरी ऑफ़ स्टेट ने धमकी दी कि महाराजा ने अगर अशिष्टता का व्यवहार किया तो उनको भारत वापस भेज दिया जायगा। महाराजा खुद भी डर गये कि न जाने क्या नतीजा हो। सोच-विचार कर उन्होंने एक हिकमत निकाली जिससे उनकी प्रतिष्ठा पर भी आँच न आये और सम्राज्ञी भी नाराज़ न हों।

वे लन्दन के सबसे मशहूर दर्ज़ी की दुकान में गये और पूछा कि क्या ऐसे दस्ताने भी तैयार हो जायेंगे जिनको बहुत जल्दी पहना और उतारा जा सके? दर्ज़ी ने स्वीकार कर लिया और एक होशियार कारीगर से सलाह ले कर उसने दस्तानों के अन्दर ऐसे पुर्ज़े लगाये जिनसे बात की बात में उनको पहना और उतारा जा सके। दस्ताने पा कर महाराजा को बड़ा सन्तोष हुआ। वे महल में गये और लार्ड चैम्बरलेन को सूचना दी कि वे समाट् और सम्राज्ञी से दस्ताने बिना पहने, हाथ मिलायेंगे। उस मौक़े पर क़रीब ५०० मेहमान मौजूद थे। सब लोगों ने देखा कि महाराजा दस्ताने पहने हुए आये। जब वे सम्राट् और सम्राज्ञी से हाथ मिलाने आगे बढ़े तो उनसे कुछ ही फ़ीट पहले हाथों के दस्ताने एक स्विच दबाते ही तुरन्त उतर गये। हाथ मिलाने की रस्म पूरी होते ही दस्ताने बात की बात में फिर हाथों पर आ गये।

मेहमानों को कुछ पता न चल सका। वे लोग यही समझे कि महाराजा

ने अपनी परम्परा नहीं छोड़ी और दस्ताने पहने हुए ही इंग्लैंड के बादशाह और रानी से हाथ मिलाया। इसमें सन्देह नहीं कि शाही दम्पति बहुत प्रसन्न हुए।

उस अवसर पर महाराजा अपनी राजसी पोशाक पहने थे और गहरे हरे रंग की पगड़ी बाँधे थे जिसमें हीरे टँके हुए थे। उनके दस्ताने हल्के रंग के थे जो हाथों के रंग से मिलता था।

५२. सिर्फ़ यूरोपियनों के लिए

अलवर के महाराजा की विचित्र आदतों में से एक आदत यह भी थी कि अंग्रेज़, अमेरिकन और विदेशी मेहमानों की मौजूदगी में वे अपने मिनिस्टरों और अफ़सरों की इज़्ज़त-आबरू का विचार नहीं रखते थे। एक दफ़ा दावत की मेज़ पर ही उन्होंने हुक्म दिया कि सिर्फ़ उनके यूरोपियन और अमेरिक मेहमानों को शैम्पेन व दूसरी शरावें पेश की जायें। भारतीय मेहमानों औ अफ़सर लोगों को सादा पानी दिया जाय। मैं भी वहाँ निमंत्रित था। महाराज ने वैरों को मना कर दिया कि मेरे सामने भी शराव पेश न करें। मेरे वराव में डचेज़ ऑफ़ सदरलैण्ड वैठी थीं। उन्होंने अपना शराव का ग्लास मेरे तरफ़ वढ़ा दिया। हर दफ़ा डचेज़ अपनी शराव के ग्लास इसी तरह मु को देती रहीं। यह देख कर महाराजा वड़े कच्चे पड़े और झुँझला उठे उनको यह पता न था कि सदरलैंड के ड्यूक और डचेज़, लन्दन से ही मे पुराने मित्र हैं।

अलवर नरेश की पसन्द और नापसन्दी, दोनों हद दरजे की होती थं और उनकी सनक का तो कुछ ठिकाना ही न था। यकायक, उनको नम की चीज़ों और कुत्तों से सख्त नफ़रत पैदा हो गई और हद तक पहुँच गई जिसको भारत सरकार के पोलिटिकल विभाग ने भी जान लिया। हुआ यह कि भारत के वायसराय लार्ड विलिंग्डन ने महाराजा को निमन्त्रण दिया कि वे शिमला आकर उनके साथ वायसरीगल लॉज में ठहरें। महाराजा ने निमन्त्रण मंजूर कर लिया। उस ज़माने में, राजे-रजवाड़े ऐसे निमन्त्रण के भूखे रहा करते थे। मगर अलवर नरेश ने अपनी पसन्द और सनक की मांग को शिमला पहुँचने पर भी क़तई कम न होने दिया। उन्होंने अपने फ़ौजी सेक्रेटरी को आदेश दिया कि वायसराय के मिलिटरी सेक्रेटरी को लिख कर सूचित कर दें कि महाराजा को कुत्तों से और हर तरह की चमड़े से वनी चीज़ों को छूने से नफ़रत है। सूचना पाकर वायसराय बहुत नाराज़ हुए। फिर भी कर्मचारियों को हुक्म मिला कि चमड़े की गद्दियों का फ़र्नीचर मेहमानों के कमरों से हटा दिया जाय और महाराजा के आने पर सारे कुत्ते ज़ंजीरों से वांध कर रखे जायें। लेडी विलिंग्डन को भी महाराजा की यह वात पसन्द न आई क्योंकि वे अपने पेकिनीज़ कुत्ते को बहुत प्यार करती थीं और हर वक़्त अपने साथ रखती थीं। महाराजा अपने अफ़सरों के

साथ वायसराय की कोठी पर पहुँचे और अपने आराम का सारा इन्तज़ाम ठीक देख कर सन्तुष्ट हुए हालांकि वायसराय और उनकी पत्नी को उस कोशिश में परेशानी उठानी पड़ी थी।

महाराजा दावत में शरीक हुए जो उनके स्वागत मे दी गई थी। काफी बड़ी तादाद में लोग उस दावत में मौजूद थे। जब वायसराय की कोठी के कर्मचारी दावत के इन्तज़ाम मे लगे थे, उस वक्त लेडी विलिंगडन का कुत्ता, अपनी मालकिन से अलग रखे जाने की वजह से चीखता-चिल्लाता, किसी तरह कुत्ते-घर से निकल भागा और मेज़ के नीचे पहुँच कर उनके पैरों पर लोटने लगा। महाराजा मुख्य मेहमान की हैसियत से लेडी विलिंगडन के दाहिनी तरफ बैठे थे। कुत्ते को न जाने क्या सूझी कि वह महाराजा की टाँगों और पैरों से लिपटने लगा। महाराजा उछल पड़े, मानो उन्हें बिजली का झटका लगा हो और उन्होंने उस छोटे से कुत्ते को अपने पैर-चाटते देखा। उनकी त्योरी चढ़ गई और बड़ा गुस्सा आया कि उनकी हिदायतों के बावजूद कुत्तों को खुला क्यों छोड़ दिया गया। वह बदइन्तज़ामी उनको बरदाश्त न हुई। वे वायसराय या उनकी पत्नी से बिना कुछ कहे-सुने दावत के बीच उठ खड़े हुए और चले गये। अपने कमरे मे पहुँच कर उन्होंने सारे कपड़े उतार दिये और गुसलखाने मे जाकर पानी के टब मे खूब नहाये जिससे कुत्ते के छूने की अपवित्रता दूर हो जाये।

दावत की मेज़ पर बैठे लोग महाराजा की इस अशिष्टता और भारत सम्राट् के सर्वोच्च प्रतिनिधि वायसराय के प्रति अनादर देख कर दंग रह गये। इसी बीच, कपड़े बदल कर दूसरी कीमती पोशाक पहने महाराजा हॉल मे दाखिल हुए। सारी नज़रें उनकी तरफ उठ गईं। वायसराय और उनकी पत्नी के मन मे कैसे विचार आ रहे थे, इसकी कल्पना-मात्र की जा सकती है। अपने व्यवहार के लिए माफी न माँग कर महाराजा ने सफाई दी कि वे किस वजह से उठ कर चले गये थे। वायसराय बड़े अनुभवी कूटनीतिज्ञ थे। वे अपनी भावनाओं को दबा गये मगर राजनीतिक विभाग ने इस घटना के कारण अपनी फ़ाइलो मे महाराजा के नाम के आगे काला निशान लगा दिया। वायसराय ने मासिक रिपोर्टों के साथ इस घटना की रिपोर्ट भी सेक्रेटरी ऑफ स्टेट द्वारा भारत सम्राट् को भेज दी।

कई वर्षों तक, निरंकुश शासन करने के बाद, ब्रिटिश सरकार ने पहली बार महाराजा को आदेश दिया कि वे रियासत से बाहर चले जायें और तीन साल या ज्यादा अवधि तक वापस न लौटें, जब तक उनकी रियासत में कानून व्यवस्था और शान्ति स्थापित न हो जाय। रियासत की माली हालत और इन्तज़ाम खराब होने का महाराजा पर आरोप लगा कर यह कार्रवाई की [illegible] सच था कि रियासत का खज़ाना खाली हो [illegible] [illegible]राजा की राजगद्दी छिन जाना ही उचित

वाद, वम्वई के 'रूई के राजा' सेठ गोविन्दराम सेक्सरिया के पास अपने क़ीमती जवाहरात रेहन पर रख कर महाराजा ने क़र्ज़ लिया और अपने ४० मर्द-औरत कर्मचारियों को साथ लेकर यूरोप की सैर करने चले गये।

उनका अन्त वड़ा दुःखद हुआ। राजगद्दी वापस मिलने की जव कोई उम्मीद न रही, तव वे सुवह से रात तक शराव के नशे में चूर रहने लगे। इससे उनकी सेहत ख़राव हो गई। उन दिनों वे पेरिस के एक होटल में ठहरे हुए थे। उन्होंने एक क्लव में जाकर जुआ खेलना शुरू कर दिया। वाद में, जव वे ज़ीने से नीचे उतर रहे थे, उनका पैर फिसल गया और वे गिर पड़े। उनके गहरी चोट आई। चार दिन तक यातना और कष्ट सह कर वे परलोक सिधार गये।

५३. बेगम ख़ान और अलवर की रँगरलियाँ

तमाम अजीबोगरीब ख़िताबात से सजा हुआ नाम—भारतधर्म प्रभाकर, राजऋषि, महाराजा हिज़ हाईनेस, हिज़ होलीनेस, श्री महाराजा जयसिंह जी, जो बहुत ऊँचे, बड़े पवित्र राजवंश में पैदा हुए थे, उन दिनों अलवर रियासत के महाराजा थे।

अजमेर मे राजे-रजवाड़ों का जो कालिज था, वहीं के तालीमयाफ्ता लड़कों मे से एक महाराजा अलवर भी थे। वे शासक तो बन गये, पर उनको रियाया की इच्छाओं से न तो कोई हमदर्दी थी और न रियासत की जनता की कठिनाइयों की जानकारी या तजुर्बा ही था। वे सबसे ऊँचे पद पर, सबसे दूर, अलग बैठे थे।

दूसरे राजाओं की तरह वे भी वैभव और विलास मे डूबने लगे। लाखों रुपये ख़र्च करके उन्होंने तमाम महल बनवा डाले, महलों तक जाने वाली पक्की सड़कें बनवाई और सजावट का सामान ख़रीदा। ये सड़कें रियाया के लिए नहीं, बल्कि महाराजा और उनके मेहमानों के इस्तेमाल के लिए बनवाई गई थीं। कुछ सड़कें सौ मील लम्बी थी जो उन घने जंगलों में बने महलों तक जाती थी जहां महाराजा चीतों, तेंदुओं वग़ैरह का शिकार खेलने जाया करते थे।

सिरिस्का का महल राजधानी से करीब २० मील दूर, ख़ास तौर से शिकार के लिए ही बनवाया गया था। एक सड़क सिर्फ़ इसी महल तक जाती थी। महलों और सड़कों के बनवाने मे रियासत के ख़ज़ाने से १० लाख रुपये ख़र्च हुए थे। इस महल की ख़ूबी यह थी कि महाराजा और उनके मेहमान छज्जे पर बैठे-बैठे चीतों और तेंदुओं का शिकार किया करते थे। इस महल के चारों तरफ बहुत घना जंगल दूर तक फैला हुआ था जहाँ ख़ूँख़ार जंगली जानवर फिरा करते थे।

उस लम्बी सड़क पर मोटर से जाते वक्त भी अक्सर चीते व दूसरे जंगली जानवर सड़क के दोनों तरफ दिखाई दे जाते थे और महाराजा तथा उनके मेहमान अपनी गोलियों का उन्हें निशाना बनाते थे। सड़क एकदम पक्की मसाले की बनी थी और ख़ूब चौड़ी थी जैसी बड़े-बड़े शहरों में बनाई जाती है।

सच पूछा जाय, तो रियासत का बजट देखने पर पता चलता था

सार्वजनिक निर्माण विभाग का तमाम खर्च महाराजा के इस्तेमाल के लिए इन नई सड़कों के बनाने पर हुआ था। राजधानी से जो रास्ते दूसरे क़स्बों या गाँवों को जाते थे उनकी हालत खराब थी। उनकी देख-भाल या मरम्मत कभी नहीं होती थी।

इसी तरह का खर्च दूसरी मदों पर भी होता था। महाराजा ने तमाम निजी कर्मचारी और अफ़सर नौकर रख लिये थे जो उनके साथ बाहर आते-जाते थे। वे अपने को सूर्यवंशी कहते थे। उन्होने अपने परिवार का एक शजरा (या वंशावली) तैयार कराया था, यह साबित करने के लिए कि भगवान् रामचन्द्र जी उनके पुरखे थे। उनके मन में यह विचार समा गया था कि वे खुद भी एक अवतार हैं।

हज़ारों साल पहले श्री रामचन्द्र जी की जो वेष-भूषा थी, वही महाराजा ने अपना ली थी। उन्होंने एक सुन्दर हीरे-मोती जड़ा मुकुट अपने लिए बनवाया था जो किसी हद तक इंग्लैंड के बादशाह के ताज से मिलता-जुलता था मगर देखने में रत्नजटित ईरानी टोपी जैसा लगता था।

महाराजा को औरतों से बिल्कुल लगाव न था। सच पूछा जाय तो अपनी ज़िन्दगी में न तो उन्होंने किसी स्त्री से सम्भोग किया और न किसी से जिस्मानी ताल्लुक़ रखा। हालाँकि उनकी चार शादियाँ हुई थीं और महल में महारानियाँ मौजूद थीं, पर उनको मर्दों की सोहबत ज्यादा पसन्द थी।

वे अपने मंत्रियों, निजी अफ़सरों, प्राइवेट सेक्रेटरी तथा ए० डी० सी० वग़ैरह का चुनाव बड़ी सावधानी से करते थे। चुनाव के पहले वे उम्मीदवार की शक्ल-सूरत, तन्दुरुस्ती, बदन की बनावट आदि पर ज्यादा ध्यान देते थे।

उनकी रियासत में एक से एक मशहूर और नामी-गरामी लोग मिनिस्टरों और ऊँचे अफ़सरों की जगहों पर तैनात थे। उनके यहाँ ग़ज़न्फ़र अली खाँ, जो असल मुग़लिया खानदान के थे, और बाद में पाकिस्तान के हाई कमिश्नर की हैसियत से भारत में तैनात हुए, नौकरी करते थे। महाराजा ने उनको अपना वित्त मंत्री नियुक्त किया था और उनका इतना ज्यादा विश्वास करने लगे थे, कि उनको अपने महल तथा रनिवास में आने-जाने की छूट दे दी थी।

महाराजा को हालांकि औरतों से नफ़रत थी मगर रात को, उनके महल में जश्न मनाया जाता था जिसमें उनकी महारानियाँ, चहेतियाँ, रखैलें, उनके खास मंत्री लोग और निजी अफ़सरान शरीक हुआ करते थे। उन मौक़ों पर महारानियों और चहेतियों का फ़र्क़ नहीं रहता था। जो मर्द लोग शरीक होते थे, उनको पूरी आज़ादी रहती थी कि मौक़ा मिलने पर, जिस औरत से चाहें, सोहबत का लुत्फ़ उठायें।

ऐसी रंगरलियों में, महाराजा बराबर मौजूद रहते थे और उनको इस बात पर कोई एतराज न होता कि उनके सामने उनके अफ़सरान महारानियों

और महल की औरतों के साथ बेतकल्लुफी से पेश आयें। शराब के दौर चला करें और मदहोशी की हालत में अफसरान अपनी मन-पसन्द औरतों को पकड़ कर बाहों में ले जायें जहाँ उनके साथ मोहब्बत करें। सारी रात, आलिंगन-चुम्बन और रतिक्रीड़ा का आमोद-प्रमोद चला करता था।

रनिवास की एक भी स्त्री ऐसी न बची थी जो अजफर अली खाँ की बगल-गीर न रह चुकी हो। यह बात तमाम अफसरान को मालूम थी कि खान को इस बात की छूट है कि महल की औरतों तथा मिनिस्टरों और अफसरों की बीवियों और बेटियों से, जिससे चाहें, उसी से नाजायज ताल्लुक रख सकते हैं।

महाराजा ईर्ष्यालु स्वभाव के थे इसलिए वे अपने मंत्रियों और अफसरों की पत्नियों और बेटियों को निमन्त्रित किया करते थे। इसका प्रयोजन होता था—महल की औरतों की प्रतिष्ठा और इज्जत पर पर्दा डालना, क्योंकि सभी जब एक ही रंग में रंग जायेंगी तो किसी का भंडाफोड़ न करेंगी। मंत्रियों और अफसरों की बीवियों और बेटियों की भी वही दशा होती थी जो महारानियों और रानियों की होती थी।

सच्चे मुसलमान होने के नाते खान ने महाराजा की मंजूरी ले ली थी कि उनकी बीवी और घर की औरतों को रात के जलसों में शरीक होने को नहीं बुलाया जायगा क्योंकि कुरान शरीफ में सख्त मनादी है कि मुसलमान औरतें गैर मर्द के आगे अपना चेहरा या जिस्म का कोई हिस्सा खुला नहीं रख सकतीं।

कई साल बीत गये। महाराजा और रनिवास की औरतों की कृपादृष्टि खान पर थी और रियासत में धन का बोलबाला था। किसी की मजाल न थी जो उनके खिलाफ़ जुबान खोल सकता। एक रोज रियासत के लाल किले में गुप्त जगह पर प्राइम मिनिस्टर चौधरी गिरधारी लाल के नेतृत्व में तमाम हिन्दू अफसरान इकट्ठा हुए और उन्होंने एक सभा की। उन्होंने इस बात पर बहस की कि खान बे रोक-टोक महल में जाते हैं और रनिवास की सब औरतों को खराब कर चुके हैं जब कि उनके घर की औरतें या तो सख्त पर्दे में रहती हैं या उनको रियासत से बाहर रखा जाता है। चौधरी गिरधारी लाल ने हिन्दू अफसरों को यकीन दिलाया कि उनकी प्रतिष्ठा और चरित्र पर यह बड़ा कलंक का टीका है कि खान उनके घर की औरतों से बेतकल्लुफी से पेश आता है मगर अपने घर की औरतों को न तो जश्न में शरीक करता है और न उनको हम लोगों से बेहिसाब मेल-जोल बढ़ाने देता है। परन्तु इस मसले पर महाराजा से बात-चीत करने से सब डरते थे।

एक रोज महाराजा जब मौज में थे और खान रियासत के काम से बाहर गये हुए थे, तब मौका देख कर चौधरी ने हिन्दू अफसरों की तरफ़ से नाजुक और गम्भीर मसले को महाराजा के आगे रखा। उन्होंने कहा—"योर हाईनेस ! हमें इस बात पर कतई एतराज नहीं है कि आपके हुक्म बमूजिब हमारे घरों की औरतें महल में आयें और आपके ए० डी० सी० वगैरह

मनचाहा व्यवहार करें, जैसा कि वे करते आ रहे हैं, मगर हम लोग खान के इस रवैये के सख्त खिलाफ़ हैं कि हमारी औरतों को तो वह बेइज़्ज़त करे और अपने घर की औरतों को महल से दूर रखे।"

महाराजा ने बड़े इतमीनान से पूरी बात सुनी। पहले तो वे चिढ़े और गरम पड़े मगर बाद में शान्त हो गये। उन्होंने समझ लिया कि चौधरी ने जो कुछ कहा, वह ठीक कहा है। ख़ान जब रियासत के दौरे से वापस आये और महाराजा से मिले, तो महाराजा ने उनको हुक्म दिया कि अगली दफ़ा जब महल में जलसा हो, तब अपनी बीवी को जलसे में ज़रूर लायें। यह सुन कर ख़ान के पैरों के नीचे से ज़मीन खिसक गई। वे परेशानी में पड़ गये और बहाने बताने लगे। फिर उनको महाराजा की सनकी आदत याद आ गई और वे घबराये कि महाराजा की मर्ज़ी के खिलाफ़ कुछ कहने पर शर्तिया जेल देखनी पड़ेगी। यही सब सोच कर वे राज़ी हो गये कि एक महीने बाद दिवाली के मौक़े पर जब जलसा होगा, तब वे अपनी बेगम को महल में ज़रूर लायेंगे। ख़ान ने दीवाली के त्योहार पर अपनी बेगम को लाहौर से लाने के लिए एक महीने का वक्त माँगा। महाराजा ने फ़ौरन खान को दस हज़ार रुपये दिलवाये कि लाहौर जा कर अपनी बेगम को जल्द ले आयें।

ख़ान राजधानी से रवाना हो गये और रास्ते में दिल्ली ठहर कर अपने कुछ दोस्तों से मिले जिनमें एक मिस्टर जे० एन० साहनी थे। ख़ान ने दोस्तों से अपनी मुसीबत बयान की। उन्होंने बतलाया कि उनकी बेगम कभी अलवर महाराजा के यहाँ जलसों में शरीक़ होने को तैयार न होंगी और अगर वे बेगम को अलवर नहीं ले जाते तो महाराजा उनको गिरफ़्तार करा कर जेल में डलवा देंगे। उनके दोस्तों ने समझाया कि मामला तो बिल्कुल सीधा-सादा है। खान हैं मुसलमान, और मुसलमान को क़ानूनी हक़ होता है कि वह मुताह किसी भी औरत से कर सकता है। शरअ की रू से भी वह सही समझा जाता है। ऐसी हालत में ख़ान किसी ख़ूबसूरत तवायफ़ से अगर मुताह कर लें, तो बेगम की जगह उसको ले जाकर पेश कर सकते हैं।

दोस्तों ने यह भी सलाह दी कि ख़ान किसी मुल्ला को पकड़ें जो मुताह रस्म अदा करवा दे। यह बात सुन कर ख़ान, जो अभी तक उदास और फ़िक्रमन्द थे, उछल पड़े। उन्होंने दोस्तों का शुक्रिया अदा किया कि उनकी बदौलत ख़ान की जान बच गई। अपने दो-चार दोस्तों के साथ ख़ान अब तवायफ़ों के अड्डों के चक्कर लगाने लगे, उन्होंने तमाम कोठों की खाक छानी तब आख़िर में उनको एक निहायत हसीन, सुडौल, जवान और होशियार लड़की मिली। उसके माँ-बाप से ख़ान ने पूछा कि क्या वे मुताह के लिए रज़ामन्द होंगे? नाचने वालियां और तवायफ़ें ऐसी शादियों से परहेज नहीं रखतीं और वे कुछ अरसे के लिए किसी की भी बीवी बन सकती हैं। माँ-बाप फ़ौरन राज़ी हो गये। इतने बड़े आदमी से रिश्ता करने में उनको ख़ुशी हुई। लड़की

के मौ-वार को अच्छी तरह समझा दिया गया कि शादी का खास मकसद है, यो होशियारी और सूझ-बूझ से, खान की मर्जी के मुताबिक उनकी बेगम का पर्दा करना और अलवर आ कर महाराजा और उनके मुसाहबों को हर तरह से खुश रखना। मुआहदे की शर्तें तय हो गईं। जो रकम तय हुई, उसकी आधी पेशगी जमा कर दी गई और बाकी काम पूरा होने पर देने का वायदा किया गया।

खान ने अपनी नई बेगम को एक किराये के मकान में नई दिल्ली में रखा। दस-दस दिन के अन्दर उन्होंने उसको अच्छी तरह पक्का कर दिया, उस नाटक के बारे में, जो अलवर जा कर उसे खेलना था। इसके बाद खान अपनी बेगम से मिलने लाहौर चले गये। उनकी गैर मौजूदगी में उनके दोस्तों ने बारी-बारी से नई बेगम को सोहबत के तमाम तरीके अमली तौर पर सिखाने की जरूरत महसूस की मगर हर एक को पता चल गया कि बेगम को पहले से ही, उनसे ज्यादा महारत हासिल है।

खान ने लाहौर से महाराजा को तार द्वारा खबर दी कि शनिवार को शाम की गाड़ी से वे बेगम के साथ अलवर पहुँच रहे हैं। तार को देख कर महाराजा ने दरबारियों से कहा—"मैं पहले ही आप लोगों से कहता था कि मेरा वफादार मिनिस्टर जरूर वापस आयेगा। वह मेरा हुक्म कभी नहीं टाल सकता।" महाराजा ने जवाब में तार भेज कर खान को इत्तिला दी कि अलवर आने पर उनका और उनकी बेगम का रियासत की तरफ से स्वागत-सत्कार किया जायगा।

दिल्ली आ कर खान ने दो फर्स्ट क्लास और एक सेकेण्ड क्लास का डिब्बा रिज़र्व कराया और अपनी नई बेगम व उनके नौकर-चाकरों के साथ चल दिये। महाराजा अपने तमाम मन्त्रियों, अफसरों, दरबारियों और महलकारों के साथ स्टेशन पहुँचे और खान व उनकी बेगम से मुलाकात की। उनको फौजी सलामी भी दी गई। बेगम बैंगनी रंग के रेशमी बुरके में सिर से पाँव तक पर्दे में थी।

महाराजा ने खान को सीने से लगा लिया और उनके गाल चूमे। बेगम और उनकी सहेलियाँ व बाँदियाँ एक बन्द मोटर में सवार हुईं जो प्लेटफार्म पर उनके फर्स्ट क्लास डिब्बे के बराबर ला कर खड़ी कर दी गई थी। बेगम को खान की कोठी पर पहुँचा दिया गया। कोठी पर पहुँच कर खान ने फिर बेगम को अच्छी तरह सिखाया-पढ़ाया। उन्होंने समझाया कि बहुत सावधानी से व्यवहार करना होगा। महाराजा, उनके हिन्दू मिनिस्टर और अफसर लोग यह सोच-सोच कर खुश हो रहे थे कि अब बेगम भी जश्न में शरीक होंगी। महाराजा को छोड़ कर बाकी सब लोग मना रहे थे कि जश्न का मौका जल्द आये और खान ने जैसा बर्ताव उनके घर की औरतों के साथ किया है, वैसा ही बर्ताव उनकी बेगम के साथ करके वे लोग भरपूर बदला चुकायें।

दस्तूर यह [illegible] जश्न में शरीक होने वाली औरतें एक जनाने

से महल के अन्दर आती थीं। महारानी की सहेलियाँ बेगम खान को महल के अन्दर ले गईं। खान, दूसरे मन्त्रियों और अफ़सरों के साथ मुख्य फाटक से हो कर अन्दर गये। अंग्रेज़ लोग और कुछ अन्य अफ़सर, जिनसे महाराजा गम्भीर रहते थे, रात के इन जलसों में निमन्त्रित नहीं होते थे।

एक से एक बढ़ कर व्यंजन और शराब, सभी मर्द-औरतों को पेश की जाती थी। मर्द एक तरफ़ और औरतें दूसरी तरफ़ बैठती थीं। शराब पीकर जब सभी मस्ती में आ जाते, तब उनकी आपस में मुलाक़ात शुरू हो जाती। फिर रंगरलियाँ मनाई जातीं, क़हक़हे लगते, और कुछ देर बाद, जलसे की रौनक़ देखने क़ाबिल होती।

बेगम को खान ने सिखा-पढ़ा कर तैयार कर दिया था। ज़्यादा कुछ बतलाने की उसे ज़रूरत भी न पड़ी क्योंकि वह तो पेशेवर तवायफ़ थी ही। अपने शौहर की हिदायतें उसे याद थीं। जश्न के मौक़े पर उससे ज़्यादा खुश कोई नज़र ही न आता था। उसने वहाँ मौजूद एक-एक मर्द को अपनी सोहबत से ऐसा खुश किया था कि सुबह होने पर सभी उसकी तारीफ़ के पुल बाँध रहे थे।

दूसरी तरफ़ खान, रनिवास और दरबार की औरतों के साथ अलग मज़े लूट रहे थे। साथ ही, उनकी नज़र बेगम की तरफ़ भी थी और दिल ही दिल में वे अपने दोस्तों की तजवीज़ पर खुश हो रहे थे जिसकी वजह से उनकी जान बची थी। सुबह जब जश्न खत्म हुआ तब बेगम को साथ ले कर वे अपनी कोठी पर वापस गये।

अगले रोज़, महाराजा खान की तहज़ीब और वफ़ादारी पर इतना ज़्यादा खुश हुए कि उन्होंने पचास हज़ार रुपये तोहफ़े के तौर पर बेगम को भेजे कि उनसे अपने लिए बम्बई-कलकत्ते की बड़ी दूकानों से ज़ेवरात व कपड़े खरीद लें। खान के अर्ज़ करने पर बेगम को कलकत्ता और बम्बई जा कर ज़रूरी खरीददारी करने की इजाज़त भी मिल गई जिससे आगे होने वाले जलसों में पूरी शान-शौक़त से वे शरीक़ हो सकें। जल्दी ही यात्रा की तैयारी करके रियासत की हद से बाहर निकल कर खान ने चैन की साँस ली। वे कलकत्ते चल दिये। वहाँ पहुँच कर उन्होंने एक और दाँव चला जिसकी असलियत महाराजा की ज़िन्दगी में न खुल सकी। वह दाँव ऐसा था कि खान ने कलकत्ते से महाराजा को तार भेजा कि उनकी बेगम की आँतों में फोड़े की बीमारी लग गई है और अभी वे जल्द राजधानी वापस न हो सकेंगी। कुछ दिनों बाद, उन्होंने दूसरा तार भेज दिया कि आपरेशन कामयाब न होने से बेगम का इन्तक़ाल हो गया। महाराजा ने खान को मातमपुर्सी के तार भेजे और ख़त लिखे। बेगम के न रहने का महाराजा और उनके दरबारियों को सख्त अफ़सोस था। सारे दरबारियों को पछतावा इस बात का था कि उस हसीना ने अपना जिस्म उनमें से हर एक को सिपुर्द करके सिर्फ़ एक ही दफ़ा सोहबत का लुत्फ़ उठाने का मौक़ा दिया था।

५४. ठण्डे सोडे पर चल गई !

हिज हाईनेस महाराजा गोविन्द सिंह, मध्य प्रदेश की दतिया रियासत के ...क थे। उनको पन्द्रह तोपों की सलामी दी जाती थी। वे अच्छे शासक न ...। दूसरे राजे-रजवाड़ों की तरह उनका सारा वक्त शिकार, शराब और ...तों में गुजरता था।

दतिया रियासत के मुख्य मंत्री सर अजीज अहमद, जब कई साल तक ...री करने के बाद हटा दिये गये, तब भारत के वायसराय ने पटियाला ...सन के भूतपूर्व वित्त मंत्री, राय बहादुर कहानचन्द को उनकी जगह पर ...त कर दिया। कहानचन्द अपने जमाने के सबसे काबिल और समझदार ...त्री माने जाते थे क्योंकि उनको माल के महकमे और रियासत के इन्तजाम ... अच्छा तजुर्बा था। बदकिस्मती से, वे ज्यादा दिनों दतिया में न रह सके। ...ह यह थी कि उनको अंग्रेज पोलीटिकल अफसरों को खुश करने, उनके ...ए शिकार पार्टियों की व्यवस्था करने, और दावतें देने का तजुर्बा न था। ...ीज अहमद दतिया में कई साल जमे रहे क्योंकि पोलीटिकल अफसरान ...नी बीवियों के साथ जब कभी रियासत आते, तब उनकी खातिरदारी का ... इन्तजाम, अच्छे से अच्छा, वे करते थे। एक दफा राय बहादुर ने, जो ...टियाला रियासत के मन्त्रिमण्डल में मेरे साथ रह चुके थे, मुझे और मेरी पत्नी ...ीला को दतिया बुलाया और अपने साथ ठहरने को कहा।

जब हम लोग दतिया में थे, उन्हीं दिनों मध्य भारत के ब्रिटिश रेज़ीडेन्ट, ...र केनेथ फिट्ज इन्दौर से दतिया आये। महाराजा, मुख्य मन्त्री और रियासत ... अफसरों ने बड़ी धूमधाम से उनका स्वागत-सत्कार किया। रेज़ीडेन्ट रियासत ... खास गेस्ट-हाउस में ठहरे थे। उनके लिए, वहीं एक छोटे प्राइवेट डिनर का ...न्तिज़ाम किया गया जिसमें उनको निमन्त्रित किया गया। रेज़ीडेन्ट को व्हिस्की ...श की गई मगर साथ में जो सोडा दिया गया, वह ज्यादा ठण्डा न था। बस, ...िर क्या था, रेज़ीडेन्ट आपे से बाहर हो गये और राय बहादुर कहानचन्द के ...ाथ बड़ी अशिष्टता से पेश आकर कहा कि उनको हुकूमत चलाने की तमीज़ ...हीं है और दतिया रियासत के मुख्य मंत्री पद के लिए एकदम नाकाबिल ...ाबित हुए हैं। उस घटना के बाद से सर केनेथ फिट्ज और राय बहादुर ...कहानचन्द के आपसी ताल्लुकात खराब हो गये। कुछ महीने बाद, मैंने सुना ...कि राय बहादुर कहानचन्द को एक नालायक हाकिम ... मुख्य मंत्री

के पद से हटा दिया गया। रेज़ीडेन्ट लोगों के हाथों में पूरी अधिकार सत्ता चली जाने से भ्रष्टाचार और सिफ़ारिश का ज़ोर बढ़ गया। रियासत की सारी आमदनी पोलीटिकल अफ़सरान और उनके चट्टे-बट्टे तथा महल के खुशामदी अहलकारों के दरमियान बँटने लगी।

बाद में, पंजाब सिविल सर्विस के एक अफ़सर सैयद अमीनुद्दीन जो पोलिटिकल अफ़सरों के खास पिट्ठू थे, दतिया के चीफ़ मिनिस्टर तैनात हुए। उन्होंने बड़े सख्त ज़ालिमाना ढंग से हुकूमत चलाई। उसकी क़ाबलियत बस यही थी कि पोलिटिकल एजेन्टों व उनकी बीवियों को शिकार खिलाना, दावतें देना और उनके मनोरंजन का पूरा इन्तज़ाम रखना। रियाया उनके अत्याचारों से तंग आ गई और उसने अमीनुद्दीन के हटाये जाने की माँग की। दतिया शहर में ज़बरदस्त हड़ताल रही। उस ज़माने में मिस्टर एजर्टन पोलिटिकल एजेन्ट थे और मिस्टर पैटर्सन रेज़ीडेन्ट थे जो इन्दौर में रहते थे। महाराजा एकदम कमज़ोर और अधिकारहीन थे कि मुख्य मंत्री अमीनुद्दीन को हटा सकते। हड़ताल ऐसी कामयाब रही कि महाराजा तक बाज़ार में खाने-पीने का सामान न पा सके।

सुप्रीम कोर्ट के सीनियर ऐडवोकेट, मिस्टर बी० बी० तवाकले महाराजा के क़ानूनी सलाहकार थे। उनको दिल्ली से बुला कर रियासत की संगीन हालत के बारे में राय ली गई। दतिया आने पर महाराजा से सलाह करके मिस्टर तवाकले ने अमीनुद्दीन से पूछा कि वे रियासत छोड़ कर चले जाने की क्या कीमत चाहते हैं। अमीनुद्दीन ने २५,०००) रुपये माँगे जो महाराजा ने चुपचाप दे दिये। इसके बाद, शिकार पर जाने के पहले, पुलिस के इन्सपेक्टर जेनरल को हिदायत कर गये कि सैयद अमीनुद्दीन के भाई-बन्द और रिश्तेदार जो रियासत में ऊँचे ओहदों पर हैं, रियासत से बाहर न जाने पायें। जब अमीनुद्दीन को खबर लगी तब उन्होंने जाने से इन्कार कर दिया और कहा कि अपने सब आदमियों को साथ लिये बिना वे क़तई न जायेंगे।

सैयद अमीनुद्दीन दिल्ली जाकर वायसराय के राजनीतिक सलाहकार सर कानरैड कारफ़ील्ड से मिले और उनको दतिया की सारी हालत बतलाई। कारफ़ील्ड को महाराजा की गुस्ताखी और बग़ावत पर बड़ा गुस्सा आया और वह फ़ौरन दतिया के लिए रवाना हो गया। दतिया पहुँच कर कारफ़ील्ड ने महाराजा को धमकाया कि उनको गद्दी से उतार दिया जायगा और उनको कोई हक नहीं है कि भारत के वायसराय द्वारा तैनात अपने मुख्य मन्त्री को बरखास्त कर सकें। जबकि महाराजा और कारफ़ील्ड तथा दूसरे राजनीतिक अफ़सरों के बीच सैयद अमीनुद्दीन को रियासत का मुख्य मंत्री बनाये रखने के मसले पर कहासुनी हो रही थी, तभी यह तय हुआ कि मिस्टर तवाकले दिल्ली जा कर भारत सरकार को सारी स्थिति समझायें। इसी बीच, महाराजा के सम्बन्धी महाराज जगन्नाथपुरी यह सँदेसा लाये कि मिस्टर कारफ़ील्ड को अगर तोड़ने के

पर तीन लाख रुपये दे दिये जायें तो वे महाराजा की इच्छानुसार अमीनुद्दीन को हटा देंगे। मिस्टर तवाकले ने महाराजा को मना कर दिया कि ऐसा समझौता हर्गिज न करें, फिर वे दिल्ली चले गये।

दिल्ली पहुँच कर मिस्टर तवाकले सरदार बलदेवसिंह से उनके प्राइवेट सेक्रेटरी मिस्टर मीनानी के जरिये मिले और दतिया रियासत की राजनीतिक स्थिति बतलाई। सरदार बलदेवसिंह ने भारत सरकार के होम मिनिस्टर सरदार वल्लभभाई पटेल से बातचीत की जिन्होंने मंत्रिमण्डल की बैठक बुला कर भारत के वायसराय लार्ड माउंटबेटन को तुरन्त एक पत्र भेजा। पत्र में लिखा था कि मिस्टर पैटर्सन फौरन दतिया रियासत के मामलों में दखल देना बन्द करें और महाराजा पर से सारी पाबन्दियाँ हटा कर उनको अपनी पसन्द का मुख्य मंत्री नियुक्त करने का अधिकार दिया जाय। भारत सरकार के होम मिनिस्टर का पत्र पा कर लार्ड माउंटबैटन ने हुक्म दिया कि मिस्टर एजर्टन को मुअत्तल करके उनकी जगह कर्नल डडस बैलर्ड को पोलीटिकल एजेन्ट तैनात किया जाता है और आयन्दा, महाराजा को अपना मुख्य मंत्री नियुक्त करने का अधिकार दिया जाता है। महाराजा ने मिस्टर विशनचन्दर को मुख्यमंत्री बनाया और पूरे अधिकार के साथ रियासत में सन् १९४८ तक, जब कि रियासत भारतीय संघ में मिला ली गई, एकछत्र राज्य करते रहे।

५५. फ्रेञ्च भारत में शरण

ब्रिटिश सत्ता स्थापित होने के पहले तथा बाद के, भारत की रियासतों के शासकों से सम्बन्धित अनेक दिलचस्प और रोमांचक प्रासंगिक कथायें प्रचलित हैं। उनमें से अधिकतर घटनायें उनकी प्राइवेट ज़िन्दगी, सनक और विलासिता से सम्बन्ध रखती हैं परन्तु कुछ घटनायें बड़ी सनसनी खेज़ हैं जो भारत सरकार के राजनीतिक विभाग और राजा-महाराजाओं के पारस्परिक टकराव तथा झगड़ों से ताल्लुक़ रखती हैं।

एक ऐसी ही घटना मध्य भारत की देवास रियासत के महाराजा हिज़ हाईनेस टिक्कोराव पवार के साथ हुई। महाराजा बड़े लोकप्रिय और चतुर शासक थे। उनकी बुद्धिमानी, समझदारी और खुशमिज़ाजी की सराहना सारी प्रजा करती थी। अपने साथी राजा-महाराजाओं तथा ब्रिटिश सरकार के उच्च अधिकारियों में भी वे सर्वप्रिय व्यक्ति थे। वे हमेशा खूब सफ़ेद कपड़े पहनते थे और पतलून या पायजामे के बजाय धोती पहनना पसन्द करते थे। वे बड़े विद्वान और गुणी थे। वे एक अच्छे इतिहास लेखक और मराठी भाषा के कवि थे। उनकी शादी कोल्हापुर के महाराजा की बेटी हर हाईनेस अक्का साहेबा से हुई थी जिनसे विक्रम नाम का एक पुत्र भी था। एक भूल हो जाने के कारण महाराजा की ज़िन्दगी ने नया मोड़ ले लिया।

महारानी की एक दासी थी जिसे महाराजा प्यार करने लग गये। वे उसको कोल्हापुर से अपने निजी रेलवे सैलून में बिठा कर ले आये और देवास के राजमहल में पहले रखैल की तरह, फिर उप-पत्नी की तरह वह रहने लगी। इस बात को लेकर महाराजा और महारानी में काफ़ी अनबन हो गई। महारानी अपने बेटे को देवास में छोड़ कर कोल्हापुर चली गईं। अक्का साहेबा बड़ी बुद्धिमती थीं और बन्दूक चलाने तथा घुड़सवारी का उनको अच्छा अभ्यास था। महाराजा से मनमुटाव की वजह से कोल्हापुर रहते हुए महारानी ने महाराजा को राजनीतिक कठिनाइयों में फँसाने की कोशिशें शुरू कर दीं। महाराजा बहुत परेशान हुए। नतीजा यह हुआ कि अपने को बचाने व रियासत की सुरक्षा में उनको काफ़ी लम्बी रक़में खर्च करनी पड़ीं।

हर हाईनेस अक्का साहेबा की राजनीतिक विभाग के अफ़सरों से काफ़ी जान-पहचान थी और वे लोग उनकी बड़ी इज़्ज़त करते थे। महारानी ने उन लोगों को महाराजा के ख़िलाफ़ ऐसा भड़काया कि सर बी० जे० ग्लैन्सी ने, जो

भारत सरकार के पोलीटिकल सेक्रेटरी थे, महाराजा को पत्र लिखा कि या तो वे राजगद्दी छोड़ दें या सरकारी जाँच कमीशन का सामना करें। उन पर यह आरोप लगाया गया कि वे रियासत का शासन-प्रबन्ध सुचारु रूप से नहीं देखते थे और अपनी दूसरी उप-पत्नी की, जिसे न तो भारत सरकार ने मान्यता दी थी और न उसे महाराजा की कानूनी पत्नी मानने को तैयार थी, लड़कियों को जागीरें दे कर रियासत को बाँट दे रहे थे।

सुप्रीम कोर्ट के एक मशहूर वकील बी० बी० तवाकले, महाराजा शिवाजीराव पवार के उन दिनों क़ानूनी सलाहकार थे। एक रोज तीसरे पहर दिल्ली में उनको तार मिला कि पहली ट्रेन से, या हवाई जहाज से फौरन देवास पहुँचें। वे फौरन ट्रेन से रवाना हो गये और अगले रोज शाम को देवास पहुँच कर आराम से महाराजा के प्रभा विलास पैलेस में ठहरे। उनको बड़ा ताज्जुब हुआ जब रात तक कोई उनसे मिलने न आया। उन्होंने खाना खाया और पलँग पर लेट रहे। रात को साढ़े ग्यारह बजे उनको हुक्म मिला कि वे शहर के महल में जायें जहाँ महाराजा ठहरे हुए थे। वहाँ पहुँचने पर उनको एक छोटे से कमरे में ले जाया गया जहाँ महाराजा फर्श पर बैठे हुए थे। मिस्टर तवाकले के आने पर महाराजा ने एक बक्स खोल कर पोलीटिकल विभाग से आया हुआ वह पत्र उनके हाथों में रख दिया जिसमें लिखा था कि महाराजा राजगद्दी त्याग दें या सरकारी जाँच कमीशन का सामना करें। महाराजा ने मिस्टर तवाकले से पूछा कि क्या करना चाहिये। महाराजा की माली हालत कमजोर समझते हुए मिस्टर तवाकले ने राय दी कि कमीशन के सामने पेश होने के बजाय अच्छा होगा कि महाराजा अपने बेटे के पक्ष में राजगद्दी छोड़ दें। महाराजा थोड़ी देर तक सिर पकड़ कर सोचते रहे, फिर उन्होंने कहा—"मेरे जीते जी विक्रम राजगद्दी पर नहीं बैठेगा मगर मेरे मरने पर देवास का महाराजा वही होगा।" महाराजा की बात सुन कर मिस्टर तवाकले चक्कर में आ गये मगर वक्त की बात थी जो सच हो कर रही। मिस्टर तवाकले ने समझाया कि ऐसी हालत में महाराजा अपने विश्वासी मन्त्रियों की एक कौन्सिल क़ायम कर दें जो उनकी तरफ़ से रियासत का शासन चलाती रहे और वे खुद पांडीचेरी या चन्दरनगर जा कर रहें। महाराजा ने प्रस्ताव मान लिया और उनसे कहा कि पता लगा कर बतायें कि पांडीचेरी या चन्दरनगर जाने में, जो फ्रेन्च शासित नगर थे, किसी पासपोर्ट की जरूरत तो नहीं होती। अतएव उसी रात को मिस्टर तवाकले देवास से रतलाम गये, रतलाम में फ्रन्टियर मेल पकड़ा और दिल्ली पहुँच गये। दिल्ली में अच्छी तरह पता लगा कर उन्होंने महाराजा को सूचना दी कि उन जगहों में जाने के लिए पासपोर्ट जरूरी नहीं होता और वे जब चाहें, आ सकते हैं।

अगले दिन महाराजा ने अपनी राजधानी में ऐलान करा दिया कि वे तीर्थ यात्रा करने दक्षिण जा रहे हैं। जो कुछ उनको मिल सका, उन्होंने इधर-उधर

किया। फ़िर क़रीब २०० व्यक्तियों की भीड़ अपने साथ लेकर, वे स्पेशल ट्रेन से देवास से चल दिये। भूपाल पहुँच कर उन्होंने ग्रैण्ड ट्रंक एक्सप्रेस पकड़ी और मद्रास के लिए रवाना हो गये। मद्रास में महाराजा ने कुछ मोटरें किराये पर लीं और त्रिवेन्द्रम की तरफ चल पड़े। रास्ते में महाराजा ने कहा कि उनके पेट में बड़ा दर्द उठ रहा है अतएव जो शहर नज़दीक पड़े, वहीं ठहर कर वे अपना इलाज करायेंगे। पांडिचेरी में वे ठहर गये। अपने कुछ विश्वासी अहलकार उन्होंने पहले ही पांडिचेरी भेज दिये थे जिन्होंने दो अच्छे मकान रहने के लिए तय कर रखे थे। सब लोग वहीं जा कर रुके। अगले दिन, महाराजा ने मिस्टर तवाकले को तार भेज कर पांडिचेरी बुलाया। जब वे आ गये तब महाराजा ने उन्हें फ़्रेञ्च इलाक़े के गवर्नर से मिलने भेजा, यह मालूम करने के लिए कि अगर भारत सरकार महाराजा को वापस बुलाने के लिए ज़ोर डाले तो उस हालत में गवर्नर की क्या प्रतिक्रिया होगी।

मिस्टर तवाकले ने पांडिचेरी के गवर्नर से भेंट करके उन्हें बतलाया कि देवास के महाराजा अपना देश छोड़ कर फ़्रेञ्च सरकार के झण्डे के नीचे शरण लेने आये हैं क्योंकि भारत सरकार से उनका कुछ राजनीतिक मतभेद हो गया है। ऐसी दशा में गवर्नर का महाराजा के प्रति क्या विचार है। गवर्नर ने उत्तर दिया कि अगर महाराजा ने फ़ौजदारी का कोई अपराध नहीं किया है और केवल राजनीतिक संकटों में पड़ कर शरण लेने आये हैं, तो दुनिया की कोई ऐसी ताक़त नहीं जो उनको फ़्रेञ्च सरकार के झण्डे के नीचे से वापस ले जा सके। उन्होंने यह भी कहा कि अगर महाराजा को रुपए-पैसे की सहायता चाहिए तो वे उसकी भी सिफारिश अपनी सरकार को भेजने को तैयार हैं। मिस्टर तवाकले ने गवर्नर को धन्यवाद देते हुए कहा कि महाराजा को धन की ज़रूरत नहीं है।

कुछ दिनों बाद, भारत के वायसराय ने महाराजा को लिखा कि या तो महाराजा देवास लौट आयें नहीं तो भारत सरकार उनकी रियासत पर क़ब्ज़ा कर लेगी। महाराजा ने जवाब में लिखा कि जब अपनी इच्छा होगी, तब वे देवास वापस आयेंगे क्योंकि अपनी ग़ैरमौजूदगी में रियासत का सारा इन्तज़ाम देखने के लिए वे अपने मन्त्रियों की एक कौन्सिल तैनात कर आये हैं, ऐसी हालत में किसी को अधिकार नहीं कि उस इन्तज़ाम में दख़ल दे।

इस तरीक़े से भारत सरकार और पोलीटिकल विभाग के अफ़सरों ने मात खाई। महाराजा तीन साल से ज़्यादा पांडिचेरी रहे। उनको नियमित रूप से बराबर प्रिवी पर्स का रुपया मिलता रहा और उनका यह प्रण कि उनके जीते जी उनका पुत्र विक्रम राजगद्दी पर न बैठ सकेगा, पूरा हुआ।

५६. गोद लेना और विरासत

ब्रिटिश सरकार ने गोद लेने और उत्तराधिकार तय करने का फैसला अपने अधिकार में रख कर भारत के राजा-महाराजाओं को अपने चंगुल में दबा रखा था। किसी भी नरेश की मृत्यु होने पर उसके वारिस या उत्तराधिकारी की मंजूरी इंग्लैंड के बादशाह से प्राप्त करना जरूरी होता था और अगर कोई राजा जिसके पुत्र न होता, मर जाता था, तो गोद लिये जाने वाले बच्चे के मसले में भी यही क़ायदा लागू होता था। उसकी मंजूरी भी ब्रिटिश सरकार से हासिल करना पड़ती थी। ऐसे ही मौकों पर भारत सरकार के राजनीतिक अफ़सरान भारतीय नरेशों की इच्छानुसार कार्य करने के एवज़ में क़ीमती उपहार, तोहफ़े और भेंट के तौर पर लम्बी रकमें वसूल किया करते थे।

आगे हम बिजावर रियासत के महाराजा का दिलचस्प मामला बयान करते हैं, जिनकी मृत्यु दीवाली की रात का हो गई और अपने पीछे वे एक सन्तान छोड़ गये। उस समय, उनका अमनसिंह नामक एक पुत्र जीवित था। रियासत के अफ़सरान, जागीरदार और ठाकुर लोग उसकी बड़ी इज्जत करते थे। महाराजा बिजावर यह वसीयत कर गये थे कि उनके बाद उनका पुत्र अमनसिंह उनका उत्तराधिकारी बने और राजगद्दी पर बैठे। महाराजा की मृत्यु के बाद, बिजावर की विधवा महारानी ने अमनसिंह के पक्ष में, एक खानदानी मनकान सिंह के खिलाफ़, जिसे भारत के वायसराय का संरक्षण प्राप्त था, अपना दावा पेश किया। महारानी, चैम्बर आफ प्रिन्सेज के चैन्सलर तथा दूसरे राजा-महाराजाओं के समर्थन और तमाम कोशिशों के बावजूद अमनसिंह को मामूली सी पेन्शन देकर, जिसमें उसका गुजर-बसर मुश्किल था, अलग कर दिया गया। उसको यह सज़ा इस वजह से भी दी गई कि वह पटियाला नरेश भूपेन्दरसिंह का दामाद था, जिनके ताल्लुकात ब्रिटिश सरकार के साथ बिगड़ चुके थे। ऐसी सैकड़ों मिसालें मौजूद हैं जिनमें असली हक़दारों को राजगद्दी से बरतरफ़ कर दिया गया था।

खिताब, सलामी, तमगे, उत्तराधिकार तथा गोद लेने की मंजूरी वगैरह के लिए भारत के महाराजाओं को किस हद तक ब्रिटिश सरकार की खुशामद करना पड़ती थी और अंग्रेज अफसरों के कदमों पर सिर झुकाना पड़ता था, इसका अन्दाज़ा नाज़िरीन लगा सकते हैं। दूसरी तरफ़, वही महाराजा लोग अपनी रियाया के साथ बेरहमी और ज़ालिमाना बर्ताव करते थे।

अभी हाल में, जो विदेशी लेखक भारत घूमने आये, उनको यह देख कर ताज्जुब हुआ कि लोग अपने पुराने शासकों पर अब भी श्रद्धा रखते और उनका बड़ा आदर करते हैं। उन्होंने देखा कि नौकर-चाकर महाराजाओं के पैर छूते और देवताओं की तरह उनको अब भी पूजते हैं। उनको बेशुमार ज़ेवरात, मशहूर हीरे-जवाहरात, मोतियों के हार, बड़े-बड़े शानदार महल, चमकदार भड़कीली पोशाकें, राजमुकुट, तमग़े, सोने-चाँदी की बग्घियाँ, जवाहरात से सजे हाथी वग़ैरह देख कर हैरत से दाँतों तले उँगली दबानी पड़ी। महाराजाओं की सराहना और संस्मरणों से प्रेरित होकर उन्होंने लिखा कि—अणु-शक्ति और ग्रहों की साहसिक यात्राओं के चमत्कारों की भाँति ही भारत के भूतपूर्व रियासती शासक भी चमत्कार हैं। अपनी पुस्तकों में उन लेखकों ने यहाँ तक लिख डाला है कि उनके महल, जवाहरात, सोने-चाँदी की गाड़ियाँ, ऐसे देव-मंदिर हैं, जो वीरान पड़े हैं क्योंकि देवमूर्त्तियाँ ग़ायब हो चुकी हैं। परन्तु वे देवमंदिर अब भी अपनी मूर्त्तियों को याद करते हैं। और फिर उनकी कल्पना करते हैं। ये विचार कवित्वमय होते हुए भी सत्य से सर्वथा परे हैं।

उन लेखकों को इस सत्य की जानकारी नहीं है कि वे हीरे-मोती और असंख्य धन-राशि रियासतों के शासकों ने उस समय इकट्ठी की थी जब भारत पर मुग़लों तथा अन्य विदेशियों के हमले हुए थे। तब उन शासकों ने भी लूट में हिस्सा बँटाया था तथा ऊँटों और हाथियों पर हीरे-जवाहरात व बेशुमार दौलत लाद-लाद कर अपनी-अपनी रियासतों में ले गये थे।

भूतपूर्व राजा-महाराजाओं के भविष्य के विषय में विदेशों के निवासी जो चाहे कहें, पर इतना तो निश्चित है कि जिनको वे देव-मन्दिर कहते हैं, उनमें वही देव-मूर्त्तियाँ फिर से स्थापित कदापि न होंगी।

५७. पाशा की बेटी

बहुत साल पहले की बात है, मेरे एक अमेरिकन दोस्त ने एक दफा डिनर पार्टी दी। जब मैं गया, तो वहां मेरी मुलाकात एक कमसिन तुर्की महिला से हुई जिसका नाम 'लेम्मा' था मगर उसके मित्र और परिचित उसे लैला कहते थे। वह तुर्की के सुल्तान अब्दुल हमीद दोयम के दरबार के वज़ीर, हिज़ एक्सीलेन्सी इज्जत पाशा अल् आबिद की बेटी थी। वह पेरिस के बोई द' बोलोन मे शेटो द' मैड्रिड नाम के एक फैशनेबुल होटल मे अपनी मां के साथ रहती थी। अपने अमेरिकन दोस्त के ज़रिये मैंने उससे जान-पहचान बढ़ाई। बहुत जल्द हम दोनो एक दूसरे को चाहने लग गये।

मैंने दमिश्क की सुन्दरता के बारे मे बहुत कुछ सुन रखा था। लैला की पैदायश दमिश्क मे हुई और वहीं सयानी होने तक उसका लालन-पालन भी हुआ। बाद में, तुर्की के इस्तम्बूल शहर में आकर वह दरबार के वातावरण और वहां की साजिशो के बीच रहने लगी। मैं उसके असाधारण रूप और हाथी दांत जैसे सफ़ेद रंग की ओर अत्यन्त आकर्षित था।

उन दिनो, मैं कपूरथला के महाराजा जगतजीत सिंह के यहां मिनिस्टर था। महाराजा की चतुरताभरी नजरो से मेरा और लैला का प्रेम न छिप सका और वे शक करने लगे। महाराजा को यह बात पसन्द न आई कि मैं सदा के लिए लैला से प्रेम-सम्बन्ध मे बँधा रहूँ क्योंकि उस हालत मे, महाराजा के साथ विश्व-भ्रमण की यात्रा मे जाने का मुझे समय न मिलता।

लैला के पिता इज्जत पाशा, तुर्की के हिज मैजेस्टी सुलतान अब्दुल हमीद के दाहिने हाथ थे। उनका सुलतान पर बड़ा असर था और वे जो चाहते सुलतान से वही करा लेते थे। विदेशी ताकतो से सुलह कराने में वे ही आगे रहे थे। एक ताकत के खिलाफ दूसरे की मदद करने का उनका रवैया जारी था और इन कामो मे बडी होशियारी और चतुरता से उन्होने कई लाख पौण्ड कमा लिये थे।

तुर्की मे उन दिनों नौजवान तुर्क लोगों का एक आन्दोलन चल रहा था जिसकी वजह से सुलतान की जान को बडा खतरा था। इसलिए महल के बजाय सुलतान किसी पोशीदा जगह रहते थे। इज्जत पाशा उनकी हिफाज़त करते थे जिसकी बदौलत वे सुलतान के विश्वासपात्र और एक तरह से तुर्की के शासक बन गये थे।

रात में, इज्ज़त पाशा तेज़ शराब पीने के आदी हो गये थे। उस वक़्त सुल्तान के अलावा, न तो वे किसी से मुलाक़ात करते थे और न सरकारी काम-काज करते थे, उन्होंने ख़ास तरह की ख़ुश्बूदार गोलियाँ बनवाई थीं जिनको वे सुलतान के सामने जाने से पहले अपने मुँह में रख लिया करते थे ताकि उनके मुँह से शराब की बदबू आती न जान पड़े।

संयमी होने के कारण सुलतान को शराब से नफ़रत थी। अपनी ज़िन्दगी में उन्होंने कभी किसी तरह की शराब नहीं पी। इज्ज़त पाशा मुँह में ख़ुशबूदार गोलियाँ रख कर सुलतान के सामने जाते थे इसलिए सुलतान नहीं जान पाते थे कि उन्होंने शराब पी है मगर उनकी पलकों के नीचे का हिस्सा कुछ फूल जाने से सुलतान को शक हो जाता था। सुलतान उनको बहुत चाहते थे हालाँकि दूसरे वज़ीर और अफ़सरान को राजनीतिक मामलों में इज्ज़त पाशा का दख़ल देना अच्छा न लगता था और वे हमेशा ख़िलाफ़ रहते थे। इज्ज़त पाशा ने उनमें से कुछ को तो सुलतान के हुक्म से बरख़ास्त करा दिया और कुछ को समुद्र की तरफ़ बने हुए छज्जे पर से बास्फ़ोरस में फिंकवा दिया।

सैकड़ों नामी-गरामी राजनीतिक नेता और ऊँचे फ़ौजी अफ़सरान, हर साल इसी तरह बास्फ़ोरस में फेंक दिये जाते थे। इसी ज़ुल्म की वजह से नौजवान तुर्कों ने सुलतान के ख़िलाफ़ बग़ावत कर दी थी और उनका आन्दोलन ज़ोर पकड़ता जा रहा था। देशभक्ति की वेदी पर बलिदान होने वाले उन्हीं व्यक्तियों के प्राणों का बदला चुकाने के लिए तुर्कों ने सुलतान अब्दुल हमीद और उनके ख़ास सलाहकार इज्ज़त पाशा के ख़िलाफ़ बग़ावत की और अन्त में उनको देश निकाले की सज़ा देकर सालोनिका भेज दिया।

सुल्तान अब्दुल हमीद की ३५० बीवियाँ थीं। वे ख़ूबसूरत विलासिनी सुन्दरियाँ हमेशा ऐशोआराम में रहती थीं और सुलतान की छोटी से छोटी आज्ञा का पालन करती थीं। हरम की सभी स्त्रियों का समय शृंगार करने, खाने-पीने, सोने, पर लड़ाने और साज़िश करने में बीतता रहता था।

एक बार जो लड़की हरम में दाख़िल हो जाती थी, वह ज़िन्दगी भर उसे छोड़ कर नहीं जाती थी। उनमें जो सुलतान की ख़ास [illegible] होती थी, उनको तमाम सहूलियतें मिलती थीं जिनमें सबसे बड़ा सौभाग्य होता था—सुलतान की सेज-संगिनी बनना। हरम दस्तूर बमूजिब उनको पलंग के पैताने तक फ़र्श पर पेट के बल चल कर जाना पड़ता था। किसी ऊँची अभिलाषा रखने वाली स्त्री का सामाजिक स्तर तब ऊँचा होता था जब वह एक बेटे की माँ बन कर सुलतान की चार स्थायी पत्नियों की टोली में शामिल हो जाती थी।

परन्तु, यहीं आख़िरी हद थी। इसके ऊपर सुलतान की माँ का दर्जा था जो हरम की वास्तविक मालिका थीं। सुलतान का महल हरम की ज़िन्दगी

रा एक सबसे भ्रष्ट रूप था।

विलासी, कामलोलुप सुलतानों का प्रेम-नीड़ होने के बजाय वह दगा, फ़रेब और बेरहमी का अड्डा था। लड़कियों के साथ गुलामों जैसा बर्ताव होता था जो युद्ध की लूट-मार में पकड़ लिये जाते थे। अगर वे सुलतान की इच्छाओं के अनुसार काम करती थीं तो उनकी चहेतियाँ बन जाती थीं। अगर किसी बात में वे सुलतान को खुश करने से चूक गईं, तो उनको बोरों में सिल कर करीब के समुद्र में फेंक दिया जाता था। कभी-कभी एक दफा में ३०० तक लड़कियाँ फेंक दी जाती थीं।

महल में काकेशियन औरतों की एक फौजी गारद भी थी जो शरीर से खूब तगड़ी और मजबूत होती थीं। हरम में उनका पहरा रहता था। अगर कोई स्त्री सुलतान की आज्ञा का पालन न करती थी तो उसे जबरदस्ती उठा कर बासफ़ोरस के समुद्र में फेंक दिया जाता था। इस बीसवीं शताब्दी में भी तुर्की के हरमों का रहस्य बाहरी दुनिया पर आज तक प्रकट नहीं हो सका। कभी इत्तिफ़ाक़ से मौज में आकर सुलतान विदेशी यात्रियों को किसी जलसे के मौके पर महल के कुछ बाहरी हिस्सों की सैर करा देते थे मगर अन्दर के वे कमरे, जिनमें हरम की स्त्रियाँ रहती थीं, उन पर किसी बाहर वाले की नज़र कभी न पड़ती थी।

हरम का परदा तब फ़ाश हुआ जब सन् १९०९ में नौजवान तुर्क लोगों ने बगावत की और सुलतान अब्दुल हमीद दोयम को तख्त से उतार दिया। तब पता चला कि उनके यहाँ ३७० औरतें और १२७ खोजे नौकर थे। रियाया ने बग़ावत करके सुलतान को जला-वतन कर दया और हरम की औरतों को उनके रिश्तेदारों के सिपुर्द कर दिया।

वह नजारा बड़ा दर्दनाक था जब पहाड़ों के रहने वाले गड़रिये अपनी लड़कियों को वापस लेने आये। सुलतान के नौकर-चाकर उनको जबरदस्ती उनके घरों से तलवार के जोर पर उठा लाये थे और वे हरम में डाल दी गई थीं। इससे भी ज्यादा दर्दनाक नज़ारा था उन बेचारों का रोना-कलपना जिनके घरों की लड़कियाँ हरम में आ जाने के बाद सुलतान के हुक्म से मार डाली गई थीं या समुद्र में फेंक दी गई थीं।

सुलतान के जमाने में अगर हरम की कोई स्त्री बीमार होती थी तो डॉक्टर बुलवाये जाते थे। उस वक्त खास सावधानी रखी जाती थी कि डॉक्टर मरीज़ा के बदन का ज़रूरत से ज्यादा हिस्सा न देख सके। अगर डॉक्टर मरीज की जुबान देखना चाहता था, तो हरम की बाँदियाँ मरीज की जुबान छोड़ कर चेहरे का बाक़ी हिस्सा अपनी हथेलियों से ढक लिया करती थीं। अगर पीठ देखनी होती थी तो चादर में एक छोटा गोल छेद करके डॉक्टर उस छेद के जरिये देख पाता था।

अपनी कहानी शुरू करने के पहले हम नाज़रीन को तुर्की के सुलतान

हरम की ज़िन्दगी की कुछ झलकियाँ पेश करना चाहते हैं जो यक़ीनन बड़ी दिलचस्प साबित होंगी।

लैला के पिता, इज्ज़त पाशा, सुलतान की हुकूमत में अपने ज़माने के सबसे ज्यादा पुरअसर आदमी थे और उन्होंने खूब दौलत इकट्ठी कर ली थी। सुलतान ने कई आदमी शक्ल-सूरत, जिस्म और लम्बाई में अपने ही जैसे नौकर रख छोड़े थे जो उनके हूबहू जानदार पुतले नज़र आते थे। कई दफ़ा, उनके बजाय उनका हमशक्ल पुतला घोड़ागाड़ी में बैठ कर जुमे की नमाज़ पढ़ने बड़ी मस्जिद गया। रास्ते में, बाग़ियों ने उसे गोली मार दी मगर असली सुलतान महल के अन्दर हमेशा महफ़ूज़ रहे। लोगों की समझ में यह राज़ न आता था कि गोली मार देने के बाद भी हर दफ़ा सुलतान क्यों कर ज़िन्दा बच जाते थे। राज़ यही था कि सार्वजनिक स्थानों पर सुलतान ख़ुद कभी नहीं जाते थे। जैसा मौक़ा होता था, उसी के मुताबिक़ शाही लिबास पहना कर अपने हमशक्ल एक ज़िन्दा पुतले को अपने बजाय भेज दिया करते थे।

सुलतान के कई महल थे और हर एक महल में तमाम तहख़ाने थे। ज्यादातर वे उन्हीं में से किसी तहख़ाने में छिपे रहते थे। लोग यह समझते कि वे अपने खास महल के अन्दर हैं। वह खास महल, बाग़ियों के हमलों का निशाना बना करता था। उनको बड़ी मायूसी होती जब वे देखते कि सुलतान उनके हमलों का शिकार नहीं बने। फिर भी, बग़ावत ज़ोर पकड़ती गई और सुलतान की हालत ख़राब होती गई।

लैला, इज्ज़तपाशा के महल से बड़े ऐशोआराम में पली थी। अंग्रेज, तुर्की और अरब शिक्षकों से उसने तालीम हासिल की थी। वह अंग्रेज़ी, फ़्रेन्च, स्पेनिश और इटैलियन ज़ुबानें खूब अच्छी तरह जानती और बोल सकती थीं। तुर्की और अरबी तो उसकी मादरी ज़ुबानें थीं। कभी वह अंग्रेज़ी लिबास पहनती और कभी तुर्की पोशाक पहन कर चेहरे पर झीनी नक़ाब डाल लेती जिससे चेहरा साफ़ दिखाई देता रहता। सच पूछा जाय तो अपनी बेमिस्ल ख़ूबसूरती, हुस्न, शबाब, सुडौल जिस्म और शाइस्तगी के लिहाज से वह औरतों में एक नायाब नमूना थी।

जब हमारी दोस्ती बढ़ी, तब लैला ने पेरिस के मशहूर फ़ैशनेबुल मुहल्ले द' बोई में, एक फ़्लैट ले लिया, जिसमें वह अपनी माँ के साथ रहने लगी। महाराजा के साथ अपनी ड्यूटी से जब कभी मुझे फ़ुरसत मिलती, तब मैं लैला से मुलाक़ात करने चला जाता था। महाराजा चाहते थे कि मैं दिनों-रात उनकी हाज़िरी बजाया करूँ और जब मैं उनको न मिलता, वे फ़ौरन यही समझते कि मैं लैला के यहाँ गया हूँ। एक रोज़ उन्होंने कह भी डाला कि लैला से ज्यादा मुलाक़ातों का मतलब यह है कि मैं अपना पूरा समय उनकी ख़िदमत में नहीं दे रहा हूँ।

महाराजा के साथ अपनी विश्व-भ्रमण की यात्राओं में, मैंने किसी तरह लैला

से यह समझौता कर लिया था कि जहाँ-जहाँ मैं महाराजा के साथ जाऊँ वहीं पर किसी तरह वह मुझ से भेंट किया करे—चाहे यू० एस० ए० हो, दक्षिण अमेरिका का कोई देश हो, चाहे यूरोप का कोई हिस्सा हो। कई साल तक महाराजा को पता न चल पाया कि मैं जुदा-जुदा जगहों पर पोशीदा तरीके से लैला से मुलाकात करता हूँ। लैला की तबियत ऐसी जिन्दगी से घबरा गई। उसने कई दफा मुझ से कहा कि हमें अपनी मोहब्बत पोशीदा रखने की जरूरत नहीं और हम शादीशुदा जिन्दगी बितायें।

मैंने इस बारे में महाराजा से बात चलाई पर उन्होंने मुझे चेतावनी दे दी कि या तो मैं उनकी नौकरी करता रहूँ या फिर लैला से शादी करके घर का रास्ता नापूँ। मैं परम्परागत महाराजा और उनकी राजगद्दी का वफादार था। मेरे परिवार के लोग और कई दोस्त उनके यहाँ ऊँचे पदों पर नौकर थे। मैंने सोचा कि मेरे नौकरी छोड़ देने पर उन सब को परेशान किया जायगा या बरखास्त कर दिया जायगा। ऐसी हालत में मैंने शादी का इरादा छोड़ देना ही बेहतर समझा।

जब अटलांटिक के तट पर फ़ान्स में ड्यू विला नामक स्थान पर लैला से मेरी भेंट हुई जहाँ हम लोग छुट्टियाँ मनाने गये हुए थे, तो उसने समझा-बुझा कर मुझे शादी के लिए राजी कर लिया। चूँकि हम लोगों को नागरिक कानून और नियमों के अनुसार विवाह करना मुमकिन न था, इसलिए हमने एक हिन्दू पुरोहित खोज निकाला। वह थे मेरे मित्र डाक्टर डी० सी० वर्मा। उन्होंने वैदिक रीति से हमारे विवाह की रस्म अदा कराई। एक बाग़ के कोने में हवन किया गया। उसमें मक्खन की आहुतियाँ दी गईं। हमने उस अग्नि कुण्ड के चारों तरफ़ सात भाँवरे साथ-साथ फिरी। इसके बाद हिन्दू धर्मानुसार हम दोनों पति-पत्नी घोषित कर दिये गये। फिर कानूनी रूप से विवाह-सम्बन्ध का प्रतिज्ञा-पत्र तैयार कराया गया जिस पर मैंने और लैला ने दस्तखत किये। उस पर दो व्यक्तियों की गवाही भी हुई जिनमें से एक मशहूर वकील मिस्टर आर्थर मिम्स, वैरिस्टर-ऐट-ला भी थे जो लन्दन में एक प्रतिष्ठित वकील की हैसियत से ऊँची अदालतों में प्रैक्टिस करते थे। इस शादी के बारे में, उन लोगों को छोड़ कर जो शरीक हुए, और किसी को कुछ पता न चला।

जब महाराजा ने दक्षिण अमेरिका जाने की योजना बनाई तब लैला ने मुझे मना किया कि मैं वहाँ न जाऊँ, और जाहिर कर दूँ कि मैंने लैला से शादी कर ली है। मैंने महाराजा को अपने गुप्त विवाह की सूचना दे दी और दरख्वास्त की कि वे मुझे दक्षिण अमेरिका न ले जायें। महाराजा बेहद गुस्सा हुए और फौरन मुझ से इस्तीफा दाखिल करने को कहा। मैंने सोचा कि नौकरी से इस्तीफा देते ही मेरे भाई और सम्बन्धियों की क्या हालत होगी जो रियासत में नौकर हैं।

हरम की ज़िन्दगी की कुछ झलकियाँ पेश करना चाहते हैं जो यक़ीनन बड़ी दिलचस्प साबित होंगी।

लैला के पिता, इज़्ज़त पाशा, सुलतान की हुकूमत में अपने ज़माने के सबसे ज़्यादा पुरअसर आदमी थे और उन्होंने ख़ूब दौलत इकट्ठी कर ली थी। सुलतान ने कई आदमी शक्ल-सूरत, जिस्म और लम्बाई में अपने ही जैसे नौकर रख छोड़े थे जो उनके हूबहू जानदार पुतले नज़र आते थे। कई दफ़ा, उनके बजाय उनका हमशक्ल पुतला घोड़ागाड़ी में बैठ कर जुमे की नमाज़ पढ़ने बड़ी मस्जिद गया। रास्ते में, बाग़ियों ने उसे गोली मार दी मगर असली सुलतान महल के अन्दर हमेशा महफ़ूज़ रहे। लोगों की समझ में यह राज़ न आता था कि गोली मार देने के बाद भी हर दफ़ा सुलतान क्यों कर ज़िन्दा बच जाते थे। राज़ यही था कि सार्वजनिक स्थानों पर सुलतान ख़ुद कभी नहीं जाते थे। जैसा मौक़ा होता था, उसी के मुताबिक़ शाही लिबास पहना कर अपने हमशक्ल एक ज़िन्दा पुतले को अपने बजाय भेज दिया करते थे।

सुलतान के कई महल थे और हर एक महल में तमाम तहख़ाने थे। ज़्यादातर वे उन्हीं में से किसी तहख़ाने में छिपे रहते थे। लोग यह समझते कि वे अपने ख़ास महल के अन्दर हैं। वह ख़ास महल, बाग़ियों के हमलों का निशाना बना करता था। उनको बड़ी मायूसी होती जब वे देखते कि सुलतान उनके हमलों का शिकार नहीं बने। फिर भी, बग़ावत ज़ोर पकड़ती गई और सुलतान की हालत ख़राब होती गई।

लैला, इज़्ज़तपाशा के महल से बड़े ऐशोआराम में पली थी। अंग्रेज, तुर्की और अरब शिक्षकों से उसने तालीम हासिल की थी। वह अंग्रेज़ी, फ़्रेन्च, स्पेनिश और इटैलियन ज़ुबानें ख़ूब अच्छी तरह जानती और बोल सकती थीं। तुर्की और अरबी तो उसकी मादरी ज़ुबानें थीं। कभी वह अंग्रेज़ी लिबास पहनती और कभी तुर्की पोशाक पहन कर चेहरे पर झीनी नक़ाब डाल लेती जिससे चेहरा साफ़ दिखाई देता रहता। सच पूछा जाय तो अपनी बेमिस्ल ख़ूबसूरती, हुस्न, शबाब, सुडौल जिस्म और शाइस्तगी के लिहाज़ से वह औरतों में एक नायाब नमूना थी।

जब हमारी दोस्ती बढ़ी, तब लैला ने पेरिस के मशहूर फ़ैशनेबुल मुहल्ले द' बोई में, एक फ़्लैट ले लिया, जिसमें वह अपनी माँ के साथ रहने लगी। महाराजा के साथ अपनी ड्यूटी से जब कभी मुझे फ़ुरसत मिलती, तब मैं लैला से मुलाक़ात करने चला जाता था। महाराजा चाहते थे कि मैं दिनों-रात उनकी हाज़िरी बजाया करूँ और जब मैं उनको न मिलता, वे फ़ौरन यही समझते कि मैं लैला के यहाँ गया हूँ। एक रोज़ उन्होंने कह भी डाला कि लैला से ज़्यादा मुलाक़ातों का मतलब यह है कि मैं अपना पूरा समय उनकी ख़िदमत में नहीं दे रहा हूँ।

महाराजा के साथ अपनी विश्व-भ्रमण की यात्राओं में, मैंने किसी तरह लैला

डिनर पर निमन्त्रित किया और हमारी शादी पर बड़ी खुशी जाहिर की। श्रीमती सरोजनी नायडू ने, जिन्होंने भारत की आजादी की लड़ाई में खास हिस्सा लिया था और जो अपने जमाने की सबसे काबिल महिला समझी जाती थीं, हमें आशीर्वाद दी और चाय-पार्टी में बुलाया जो ताजमहल होटल में अपने खास कमरे में उन्होंने दी थी।

बम्बई से हम लोग दो-चार दिन पूना की सैर करके मैसूर चले गये। हिज हाईनेस मैसूर के युवराज ने, जो मेरे अन्तरंग मित्र थे, बंगलौर में हमारा स्वागत किया और अपने शानदार जय महल पैलेस में मेहमान की हैसियत से हमें ठहराया।

मैसूर के प्राइम मिनिस्टर, सर मिर्ज़ा इस्माइल ने, हमारे स्वागत-सत्कार में एक बड़ी दावत दी जिसमें रियासत के मिनिस्टरों और ऊँचे अधिकारियों के अलावा बंगलौर के तमाम प्रतिष्ठित लोग शरीक हुए। मैसूर युवराज के साथ हम मोटर पर बंगलौर से मैसूर पहुँचे। यात्रा में बड़ा आराम रहा और चन्द घण्टों में ही हम लोग मैसूर आ गये। हम लोग सबसे बढ़िया गेस्ट-हाउस में ठहराये गये जो महाराजा के खास मेहमानों और वायसराय के लिए रिज़र्व रहता था। महाराजा ने महल में निमन्त्रित करके हमारा स्वागत किया और हमारे सम्मान में डिनर पार्टी दी हालांकि पार्टी में उन्होंने खुद कुछ भी न खाया। वे बड़े धर्म-परायण कट्टर हिन्दू थे और चौके में गंगाजल छिड़क कर, पीढ़े पर बैठ कर भोजन करते थे।

डिनर पार्टी के बाद संगीत का कार्यक्रम हुआ जिसमें मैसूर के मशहूर संगीतज्ञों ने भाग लिया। लगभग ७०-८० आदमी भारतीय बाजे, जैसे वीणा, सितार, जलतरंग आदि बजा रहे थे और विशुद्ध शास्त्रीय संगीत प्रस्तुत कर रहे थे। उस दिन महल में खूब रोशनी की गई थी और पूरे नगर में उत्सव मनाया गया था। हम चामुण्डी देवी का मन्दिर देखने गये जो मैसूर से ६-७ मील दूर एक पहाड़ी पर बना हुआ है। उस मन्दिर में बिजली की रोशनी थी और वहाँ जाने के रास्ते के दोनों तरफ बिजली के खम्भे लगे थे जिनसे रोशनी की व्यवस्था थी। मन्दिर से देखने पर महाराजा के महल और पूरे नगर का बड़ा मनोरम दृश्य दिखाई देता था।

मैसूर में हमने दो हाथियों की रोमांचक लड़ाई भी देखी। दोनों हाथी बड़े ताकतवर और भयंकर दिखाई देते थे। वे मस्त होकर एक दूसरे पर झपट रहे थे। कुछ घण्टे बाद, महाराजा के हाथी ने युवराज के हाथी को हरा दिया और वह ज़ोर से चिल्लाता हुआ मैदान से भाग खड़ा हुआ। लगभग लोगों की भीड़ हाथियों की लड़ाई देख रही थी। के ज़ोर से युवराज के हाथी को बड़ी मुश्किल से काबू पकड़ा जाता तो वह ज़रूर दर्शकों की भारी भीड़ में डालता।

मैं कई महीनों के लिए महाराजा के साथ दक्षिण अमेरिका चला गया। हम लोग पनामा नहर होते हुए न्यूयार्क पहुँचे जहाँ प्लाज़ा होटल में ठहरी हुई लैला मेरा इन्तज़ार कर रही थी। मैं उसी होटल में महाराजा के साथ कई हफ़्ते ठहरा लेकिन लैला के बारे में मैंने उनसे कुछ न कहा।

जब यूरोप वापस आने के लिए हम 'इलाद' 'फ़्रान्स' नाम के स्टीमर से रवाना हुए तब लैला ने भी उसी स्टीमर में एक बढ़िया डबल-बर्थ वाला केबिन अपने लिए रिज़र्व कराया। वह छिप कर जहाज़ पर आ गई और महाराजा की नज़र उस पर न पड़ी। वह दिन-रात अपने केबिन के अन्दर ही रहती थी। एक केबिन मेरा अपना था पर मैं अपना ज्यादा वक़्त लैला के साथ उसके केबिन में बिताता थी। जब हम पेरिस पहुँचे तो महाराजा मुझ से बहुत खुश थे क्योंकि मैंने उनकी मर्ज़ी के मुताबिक़ लैला को पेरिस में छोड़ कर उनके साथ यात्रा की थी।

लैला के मेरे साथ साहसिक कार्यों की ख़बर इज़्ज़त पाशा को लग गई जो देशनिकाले की हालत में क़ाहिरा में उन दिनों रहते थे। उन्होंने अपनी बीबी को तलाक़ दे दिया और लैला को अपने उत्तराधिकार से वंचित कर दिया। उनके भत्ते बन्द कर दिये गये और अब उनके गुज़र-बसर का कोई ज़रिया नहीं रहा। अपनी हैसियत बमूजिब मैं उनको रुपये देने लगा। जब कभी मैं पेरिस जाता या क़ाहिरा हो कर गुज़रता, तभी मैं उसका सारा कर्ज़ चुका कर कई महीनों का ख़र्च पेशगी दे देता था। जो कुछ रुपया मैं बचा पाता था वह लैला का क़र्ज़ अदा करने में चला जाता था जो हज़ारों पौण्ड तक पहुँचा करता था। कई साल इसी तरह हमारी ज़िन्दगी चलती रही और जो कुछ जमा-पूँजी मेरे पास थी वह सब की सब क़रीब क़रीब ख़त्म होने पर आ गई।

इज़्ज़त पाशा, जो ७६ साल के हो चुके थे, यकायक गठिया और कुछ दूसरी बीमारियों से घिर गये। उनकी हालत गम्भीर होती गई। पिता के पास रहने के लिए लैला अपनी माँ के साथ पेरिस से क़ाहिरा को रवाना हो गई। अपनी चतुरता और स्नेह से, वह पिता के सोने के कमरे में पहुँच गई और उनकी देख-भाल करने लगी। लैला के मक्का जाने के बाद से, इज़्ज़त पाशा का दिल लैला और उसकी माँ की तरफ़ से कुछ पसीज आया था। लैला की प्रार्थना पर हेजाज़ के सुलतान ने भी उसके माँ-बाप में समझौता कराने की कोशिश की थी। अपनी मौत के कुछ दिन पहले इज़्ज़त पाशा ने लैला और उसकी माँ को माफ़ कर दिया था। इस तरह लैला, अपने पिता की सम्पत्ति की, जो लाखों पौण्ड की थी, एक वारिस बन गई। इज़्ज़त पाशा की मौत के कुछ महीने बाद उसने भारत आ कर मुझसे मिलने का निश्चय किया।

मैं लैला से बम्बई में मिला जहाँ ताजमहल होटल में मैंने उसके ठहरने के लिए कुछ कमरे पहले से रिज़र्व करा रखे थे। बम्बई में, मिस्टर एम० ए० जिन्ना ने, जो भारत के बँटवारे के बाद पाकिस्तान के गवर्नर जेनरल बने, हमें

डिनर पर निमन्त्रित किया और हमारी शादी पर बड़ी खुशी जाहिर की। श्रीमती सरोजनी नायडू ने, जिन्होंने भारत की आजादी की लड़ाई में खास हिस्सा लिया था और जो अपने जमाने की सबसे काबिल महिला समझी जाती थीं, हमें आशीष दी और चाय-पार्टी में बुलाया जो ताजमहल होटल में अपने खास कमरे में उन्होंने दी थी।

बम्बई से हम लोग दो-चार दिन पूना की सैर करके मैसूर चले गये। हिज़ हाईनेस मैसूर के युवराज ने, जो मेरे अन्तरंग मित्र थे, बंगलौर में हमारा स्वागत किया और अपने शानदार जय महल पैलेस में मेहमान की हैसियत से हमें ठहराया।

मैसूर के प्राइम मिनिस्टर, सर मिर्जा इस्माइल ने, हमारे स्वागत-सत्कार में एक बड़ी दावत दी जिसमें रियासत के मिनिस्टरों और ऊँचे अधिकारियों के अलावा बंगलौर के तमाम प्रतिष्ठित लोग शरीक हुए। मैसूर युवराज के साथ हम मोटर पर बंगलौर से मैसूर पहुँचे। यात्रा में बड़ा आराम रहा और चन्द घण्टों में ही हम लोग मैसूर आ गये। हम लोग सबसे बढ़िया गेस्ट-हाउस में ठहराये गये जो महाराजा के खास मेहमानों और वायसराय के लिए रिज़र्व रखा था। महाराजा ने महल में निमन्त्रित करके हमारा स्वागत किया और हमारे सम्मान में डिनर पार्टी दी हालांकि पार्टी में उन्होंने खुद कुछ भी न खाया। वे बड़े धर्म-परायण कट्टर हिन्दू थे और चौके में गंगाजल छिड़क कर, पीढ़े पर बैठ कर भोजन करते थे।

डिनर पार्टी के बाद संगीत का कार्यक्रम हुआ जिसमें मैसूर के मशहूर संगीतज्ञों ने भाग लिया। लगभग ७०-८० आदमी भारतीय बाजे, जैसे वीणा, सितार, जलतरंग आदि बजा रहे थे और विशुद्ध शास्त्रीय संगीत प्रस्तुत कर रहे थे। उस दिन महल में खूब रोशनी की गई थी और पूरे नगर में उत्सव मनाया गया था। हम चामुण्डी देवी का मन्दिर देखने गये जो मैसूर से ६-७ मील दूर एक पहाड़ी पर बना हुआ है। उस मन्दिर में बिजली की रोशनी थी और वहाँ जाने के रास्ते के दोनों तरफ बिजली के खम्भे लगे थे जिनसे रोशनी की व्यवस्था थी। मन्दिर से देखने पर महाराजा के महल और पूरे नगर का बड़ा मनोरम दृश्य दिखाई देता था।

मैसूर में हमने दो हाथियों की रोमांचक लड़ाई भी देखी। दोनों हाथी बड़े ताक़तवर और भयंकर दिखाई देते थे। वे मस्त होकर एक दूसरे पर झपट रहे थे। कुछ घण्टे बाद, महाराजा के हाथी ने युवराज के हाथी को हरा दिया और वह ज़ोर से चिल्लाता हुआ मैदान से भाग खड़ा हुआ। लगभग सात हज़ार लोगों की भीड़ हाथियों की लड़ाई देख रही थी। घुड़सवारों ने अपने भालों के ज़ोर से युवराज के हाथी को बड़ी मुश्किल से काबू में किया। अगर उसे न पकड़ा जाता तो वह ज़रूर दर्शकों की भारी भीड़ में घुस कर लोगों को रौंद डालता।

लैला मेरे साथ हिन्दुओं का पवित्र तीर्थ बनारस देखने भी गई। वहाँ ज्योतिषियों और हस्त-सामुद्रिक के पंडितों ने यह भविष्यवाणी की कि लैला भारत में न रह सकेगी। श्मशान घाट देख कर वह बड़ी उदास हो गई। हम लोग महाराजा बनारस के मेहमान की हैसियत से नन्देश्वर पैलेस में ठहराये गये थे और हमारी खातिर तथा आवभगत की गई थी। महाराजा ने गंगा जी की सैर के लिए अपना खास बजरा हमें दिया था जिस पर रेशमी पर्दे पड़े थे और भड़कीली वर्दियाँ पहने कई मल्लाह तैनात थे। नन्देश्वर पैलेस के चारों तरफ़ १५-२० एकड़ ज़मीन घेरे हुए मुग़लिया बाग़ों की तरह बड़ा सुन्दर बाग़ था जिसकी सिंचाई का बहुत अच्छा इन्तज़ाम था। वह महल संगमरमर का बना हुआ था। बादशाह एडवर्ड सप्तम तथा अन्य अंग्रेज़ बादशाह जो रियासत घूमने आये थे, उसी महल में ठहराये गये थे। वह महल खास तौर से बादशाह एडवर्ड सप्तम के लिए बनवाया गया था जब अपने राजतिलक के अवसर पर वे बनारस पधारे थे।

बनारस से हम लोग कपूरथला गये जहाँ महाराजा ने हुक्म दे रखा था कि सड़कों की बत्तियाँ आधीरात के बाद भी जलती रहें क्योंकि हमारी ट्रेन पाँच बजे सवेरे कपूरथला पहुँचती थी। आम तौर पर बचत के ख्याल से आधीरात होने पर बत्तियाँ बुझा दी जाती थीं। जब हमने नगर में प्रवेश किया, उस वक्त सड़कों पर रोशनी थी। मेरी कोठी 'अमलतास' पर महल की तरफ़ से, भड़कीली पोशाक पहने हुए खास बैरे तैनात थे जो हम लोगों को नाश्ता और खाना देने के लिए भेजे गये थे। मेरी कोठी का बग़ीचा बड़ा मनोरम लग रहा था। उसमें रंगबिरंगे फूल खिले हुए थे। मेरे बड़े भाई, दीवान सुरेशर दास ने, जो रियासत के चीफ़ जस्टिस थे, उसी रोज़ तीसरे पहर एक भव्य समारोह लैला के स्वागत में किया। मेरी माँ और पारिवारिक पुरोहित ने, घर में वधू-प्रवेश की सारी धार्मिक रस्में पूरी कीं। इसके बाद, नागरिकों की तरफ़ से दी गई एक सुन्दर गार्डेन-पार्टी में हम लोग शरीक़ हुए जिसमें [illegible]ला का शानदार स्वागत किया गया। लैला दो लाख रुपये के हीरे-जवाहरात [illegible]ने हुई थी। उसकी पतली खूबसूरत उँगलियों में हीरों की अँगूठियाँ थीं। कुछ जेवरात तो लैला ने पिता से पाये थे और कुछ उनकी मृत्यु के बाद खरीदे थे।

महाराजा ने सोने के बर्तनों का एक सुन्दर डिनर-सेट खास तौर पर मँगाया था जो उन्होंने महल में आने पर लैला को उपहार में दे दिया। लैला को मेरे मित्रों की ओर से, सारे भारत से भेंट-उपहार मिले, जिनमें मैसूर के युवराज, राजपीपला के महाराजा, बड़ौदा नरेश महाराजा सयाजी राव गायक-वाड़, मिस्टर एम० ए० जिन्ना वग़ैरह प्रमुख थे। टाटा उद्योगों के स्वामी मिस्टर जे० आर० डी० टाटा के पिता मिस्टर आर० डी० टाटा मेरे अन्तरंग मित्र थे। हमारे बम्बई पहुँचने पर उन्होंने बड़ा भारी डिनर हमें दिया था

इनमें मिस्टर एम० ए० जिन्ना, मिस्टर एम० सी० छागला, जो बाद में भारत सरकार के शिक्षा मन्त्री बने, मिस्टर आर० डी० सेठना तथा बड़े-बड़े उद्योगपति और राजनीतिक नेता उपस्थित थे। मिस्टर आर० डी० टाटा ने लैला को एक कीमती अंगूठी भेंट की जिसमें बड़ा-सा लाल जड़ा हुआ था। लैला को भेंट उपहार में जो वस्तुएँ मिलीं, उनको देख कर दूसरी रियासतों के महाराजाओं ने इसे और भी उपहार भेजे।

हमारे कपूरथला पहुँचने के दूसरे ही दिन महाराजा ने अपने जगतजीत महल में—जो पेरिस के वार्सेलीज महल के नमूने पर बना है—शाम के पाँच बजे एक खास स्वागत समारोह किया था।

कपूरथला के प्राइम मिनिस्टर सर अब्दुल हमीद बड़े कट्टर मुसलमान थे। वे यह देख कर हैरान थे कि महाराजा अपने एक भूतपूर्व मिनिस्टर की बेटी के स्वागत में क्यों इतनी दिलचस्पी ले रहे हैं जिससे उनकी मित्रता कभी की टूट चुकी है। अब्दुल हमीद इस बात से और भी चिढ़े बैठे थे कि एक मुसलमान औरत ने हिन्दू मजहब में दाखिल हो कर एक हिन्दू से शादी की। सच तो यह था कि अब्दुल हमीद के प्रपितामह हिन्दू से मुसलमान बनाये गये थे जैसा कि मुगलों के जमाने में आम तौर पर होता था और तलवार के जोर पर हिन्दुओं को लाखों की तादाद में जबरन मुसलमान बनाया जाता था।

अन्तिम मुगल सम्राट् औरंगजेब के जमाने में भारत की आबादी का चौथाई हिस्सा तलवार के जोर पर हिन्दू से मुसलमान बनाया गया। मजहब बदल कर जो लोग मुसलमान बने, वे तुर्की, अरब, मिस्र, अफगानिस्तान तथा अन्य मुस्लिम देशों के निवासियों की बनिस्बत ज्यादा कट्टर और जालिम साबित हुए।

सर अब्दुल हमीद के प्रपितामह ऊँची जाति के हिन्दू—सहगल खत्री थे। उनके परिवार के लोग ज्यादातर पंजाब में, ऊँचे पदों पर नौकरी करते थे। भारत सरकार की प्रशासनिक सेवाओं में और भारतीय रियासतों में नियुक्त होने के अलावा वे लोग व्यापार, उद्योग-धन्धों और वकालत के पेशों में प्रसिद्ध थे।

मजहब बदलने के २-३ पीढ़ी बाद, सर अब्दुल हमीद में पुरानी पारिवारिक आस्था का नामोनिशान बाकी न रहा था। वे इज्जत पाशा की बेटी को मुसलमान धर्म छोड़ कर हिन्दू-धर्म में आना देख कर गुस्से में उबल रहे थे। लैला के और मेरे दुर्भाग्य से, हमारे भारत लौटने के कुछ ही दिन पहले, प्रसिद्ध आध्यात्मिक गुरु और समाज-सुधारक स्वामी श्रद्धानन्द को एक मुसलमान ने कत्ल कर दिया था। स्वामी जी हिन्दू-समाज और संस्कृति में मौलिक सुधार करके मुसलमानों को हिन्दू-धर्म में लाना चाहते थे, उसी तरह जैसे पुराने जमाने में लाखों हिन्दू मुसलमान बनाये गये थे।

चलाये सुधार आन्दोलन की प्रतिक्रिया के रूप में ...

ख़िलाफ़ मुसलमानों में उत्तेजना फैल गई जिसकी कई मिसाल हमको उन रेलवे स्टेशनों और शहरों में दिखाई दीं जहाँ-जहाँ हम लोग गये थे। जब महाराजा ने सर अब्दुल हमीद और लैला का आपस में परिचय कराया, उसी वक़्त महाराजा तथा सैंकड़ों आदमियों की मौजूदगी में, उन्होंने ज़हर उगलना शुरू किया कि लैला को भारत में नहीं रहना चाहिए क्योंकि यहाँ के हिन्दू या मुसलमान कभी उसको अपनायेंगे नहीं। कट्टर मुसलमानों को यह विचार कि एक हिन्दू, बहुत ऊँचे घराने की, शुद्ध मुस्लिम रक्त की स्त्री से शादी करे, क़तई पसन्द न था। उनको क्या पता कि किन विशेष परिस्थितियों में पड़ कर, सामयिक ज़रूरतों से मजबूर हो कर, हम लोगों ने हिन्दू रस्मों के अनुसार विवाह किया था। हमारे मन में कट्टरता या हिन्दू-धर्म की श्रेष्ठता का कोई विचार था ही नहीं।

दिल्ली में, मशहूर मुस्लिम धार्मिक नेता, हिज़ होलीनेस पीर हसन निज़ामी ने, जो दरगाह हज़रत निज़ामुद्दीन औलिया के सज्जादानशीन थे, हमारे विवाह से असहमत थे, हालाँकि वे मेरे दोस्त थे और मेरे उदार विचारों की उनको जानकारी थी। दिल्ली के मेडेन्स होटल में हम लोग ठहरे हुए थे। कुछ मुसलमानों ने लैला के पास नजूमियों को भेजा जिन्होंने उसे बतलाया कि यह शादी करके वह अपनी ज़िन्दगी को ख़तरे में डाल चुकी है और इसका भविष्य अच्छा नहीं है। कई दफ़ा मैंने लैला को रोते और अपने भाग्य पर पछताते हुए देखा।

लोगों का रुख अपने ख़िलाफ़ देख कर लैला को बड़ी परेशानी थी। मजबूर हो कर उसको भारत में रहने का अपना इरादा छोड़ देना पड़ा। कुछ अख़बारों ने भी, एक हिन्दू से शादी करने की वजह से लैला के ख़िलाफ़ ख़ूब ज़हर उगला। बहुत सी इस्लामी जमातों ने इस शादी की मुख़ालिफ़त में ज़ोरदार तक़रीरें कीं। अब्दुल हमीद की गुस्ताख़ी की जब मैंने महाराजा से शिकायत की, तो वे सुनी अनसुनी कर गये। उलटे मन ही मन उनको ख़ुशी हुई कि लोगों की यह मज़हबी मुख़ालिफ़त मेरे और लैला के रिश्ते में फ़र्क़ पैदा करके उसको भारत से वापस जाने को मजबूर कर देगी।

लैला को साथ ले कर मैं कपूरथला से चल दिया। कुछ रोज़ दिल्ली ठहरा, फिर वहाँ से हम लोग बम्बई पहुँचे। बम्बई में, लैला ने मेरे सामने यह तजवीज रखी कि मैं महाराजा की नौकरी छोड़ दूँ और उसके साथ रह कर उसके ख़र्चे पर दुनिया की सैर कर आऊँ। नौजवान तुर्कों के हाथों से बच कर लैला के पिता इज़्ज़त पाशा भाग निकले थे। वे क़ाहिरा में एक शानदार कोठी ले कर रहते थे। उस वक़्त तक उनका इन्तक़ाल हो चुका था और उनकी करोड़ों की दौलत लैला को विरासत में मिल चुकी थी। उसको अब धन की कमी न थी।

शुरू में, लैला से मेरी शादी की बात इज़्ज़त पाशा से पोशीदा रखी गई थी मगर मरने के दो साल पहले उनको सब कुछ मालूम हो गया था। नाराज़

होकर उन्होंने लैला को विरासत से बरतरफ कर दिया था। उनकी मौत से कुछ दिन पहले, बाप-बेटी में समझौता हो गया था। इस तरह बेशुमार दौलत हाथ में आने पर लैला ने पेरिस, लन्दन और यूरोप के बड़े-बड़े शहरों में कई आलीशान कोठियां खरीद ली थी और इज्जत पाशा की मौत के बाद ही वह बाकायदा मेरी शादी शुदा बीवी की हैसियत से भारत आ सकी थी।

जब लैला यूरोप जाने लगी, तब महाराजा ने मुझे कुछ दिनों तक की छुट्टी दी कि बम्बई जा कर उसे विदा कर आऊँ। रास्ते में हम लोग दिल्ली रुक गये। मेडेन्स होटल की तीसरी मंजिल पर कमरे ले कर हम लोग ठहरे थे। लैला ने एक रोज मुझे धमकी दी कि अगर मैं यूरोप घूमने उसके साथ जाने में इन्कार करूँगा तो वह होटल की तीसरी मंजिल से नीचे छलाँग लगा कर खुदकुशी कर लेगी।

मैंने लैला को समझाया कि बगैर महाराजा से इजाजत लिये मेरा बाहर जाना नामुमकिन है। इस पर लैला ने ५० लाख रुपये का एक चेक लिखा और मेरे कदमों में डाल दिया। उसने कहा कि मुलाजिमत बरसों तक करने के बाद मुझे जितनी तनख्वाह मिलेगी उससे यह ५० लाख की रकम कहीं ज्यादा है।

हालांकि मैं लैला की खूबसूरती और हुस्न के अलावा उसके इश्क और मुहब्बत का कायल था मगर मैंने वह चेक उसी के सामने फाड़ डाला। मैंने कहा कि मुझे चाहे जितनी दौलत मिल जाये मगर मैं महाराजा की जानिब अपनी फर्जअदायगी से पीछे न हटूँगा। फिर भी, मैंने लैला को यकीन दिलाया कि महाराजा से अपनी छुट्टी बढ़वा कर पेरिस तक उसके साथ जाऊँगा। मैंने अपनी छुट्टी बढ़ाने की दरख्वास्त करते हुए महाराजा को तार भेजा। जैसा कि मुझे अन्देशा था, महाराजा ने छुट्टी बढ़ाने से इन्कार कर दिया। महाराजा का तार मुझे मथुरा स्टेशन पर मिला, मैंने तार का लिफाफा खोला। लैला ने तार का मजमून पढ़ा। पढ़ने के बाद न जाने उसे क्या सूझी, वह ट्रेन के डिब्बे से नीचे कूद पड़ी। इत्तिफाक से ट्रेन उसी वक्त छूटी थी और रफ्तार नहीं पकड़ पाई थी, इसलिए लैला प्लेटफार्म पर ही जा गिरी। खतरे की जंजीर खींच कर मैंने ट्रेन रुकवाई। लैला के चेहरे और जिस्म पर मामूली चोटें आई थीं। उसकी हालत और अपने साथ मुझे यूरोप ले जाने का उसका पक्का इरादा देख कर मैंने महाराजा को दुबारा तार भेजा जिसका जवाब मैंने बम्बई के पते पर मँगवाया। महाराजा ने मेरी छुट्टी फिर नामंजूर कर दी होती मगर मेरे निजी दोस्तों के इसरार पर, जिनका वे बड़ा यकीन करते थे, उन्होंने मजबूरी से डेढ़ महीने छुट्टी बढ़ा दी। साथ ही, मुझको हिदायत कर दी कि अपनी रानी जब वे यूरोप पहुँचें, तो मार्सेलीज में उनसे जरूर मुलाकात करूँ।

महाराजा ने तो मुझ को फ्रान्स जाने की इजाजत दे दी थी, मगर मेरी माँ, भाइयों और रिश्तेदारों ने घबड़ाहट में मुझे कई तार भेजे कि मैं वतन से

आगे न जाऊँ। लैला ने ये तार पढ़े। इनके अलावा कुछ तार और आये थे जिनमें अब्दुल हमीद के मुसलमान दोस्तों ने मुझे खूब गालियाँ दी थीं। उनके मज़मून भी लैला ने पढ़े। उसने आख़िरी फ़ैसला कर डाला कि भारत देश हमेशा के लिए छोड़ देगी। यूरोप की यात्रा पर वह रंजीदा रही और हमेशा उस दुश्मनी के बर्ताव का ज़िक्र किया करती थी जो भारत के हिन्दुओं और मुसलमानों ने उसके साथ किया था। अपनी छुट्टी खत्म होने पर मुझे मार्सेलीज जा कर महाराजा से मुलाक़ात करनी पड़ी जब वे जहाज़ से बन्दरगाह पर उतरे।

मुझे देखते ही, महाराजा ने पहला सवाल यह किया कि क्या लैला मेरे साथ ही है? मैंने जवाब दिया—"हाँ, यौर हाइनेस! वह मेरे साथ ही है।" यह सुन कर महाराजा बहुत बौखलाये। महाराजा यूरोप की सैर करने निकले थे और मुझको अपने साथ ले जाने तथा लैला से अलग कर देने का पक्का इरादा कर चुके थे। यह सब बातें समझने के बाद लैला का ग़ुस्सा और बढ़ गया। आखिरकार उसे यक़ीन हो गया कि भारत में नजूमियों ने उसका हाथ देख कर जो पेशीनगोई की थी। वह सही थी कुछ मुसलमानों ने रिश्वतें दे कर नजूमियों को क़स्दन लैला के पास भेजा था कि वे उल्टी-सीधी पेशीनगोई करें जिससे उसका और मेरा साथ हमेशा के लिए छूट जाय।

मैं मुहब्बत और फ़र्ज की लड़ाई में मुब्तिला था। मेरे सामने एक सवाल यह भी पेश था कि नौकरी से इस्तीफ़ा मैं अगर दे भी दूँ तो महाराजा नाराज़ हो जायेंगे। उस हालत में मेरे उन सैकड़ों दोस्तों, रिश्तेदारों और भाई बन्दों का क्या अंजाम होगा जो रियासत की नौकरी में अच्छे-ऊँचे ओहदों पर तैनात हैं। ऐसी हालत में, लैला के खर्च पर जिन्दगी गुज़ारने के बजाय मैं महाराजा के साथ रहना बेहतर समझता था। स्वभाव से ही, मैं ऐसा बन चुका था कि एक औरत की खैरात पर जीना मुझे क़ुबूल न था। जितने दिनों मैं लैला के साथ [illegible] करता रहा, मैंने यूरोप, अमेरिका और भारत में उसको अपनी जेब का [illegible] भी खर्च करने न दिया। इस मामले में मैं पूर्वी देशों की तहज़ीब की [illegible]न्दी कर रहा था।

[illegible]ारत लौटने की तैयारियाँ होने लगीं। नवम्बर के महीने में किसी दिन [illegible]हाराजा की वापसी तय की गई।

हर साल, २६ नवम्बर के पहले, महाराजा विदेश से लौट आया करते थे। उस तारीख़ को उनकी सालगिरह बड़ी धूमधाम से मनाई जाती थी। लैला ने फिर इसरार किया कि मैं उसके साथ रहूँ और महाराजा के साथ वापस न जाऊँ। मैंने उसको समझाया कि तीन-चार महीने बाद, वापसी होगी, तब हम लोग फिर मिलेंगे। मेरी बात से उसे सदमा पहुँचा और वह फ़ौरन बेहोश हो गई। उसे देखने को डॉक्टर बुलाये गये। जब मैंने देखा कि उसकी हालत सँभल गई है, तब मैं महाराजा के साथ मार्सेलीज़ चला आया। वहाँ जहाज़ से हम

भारत के लिए रवाना हो गये। सैला की माँ ने सैला को समझाया कि वह भारत जाने और मेरे साथ रहने का अपना इरादा हमेशा के लिए छोड़ दे।

टूटे दिल से और अपनी मर्जी के खिलाफ, सैला ने एक करोड़पति विदेशी मिस्टर कार्ल होम्स से शादी कर ली। जैसा अन्देशा था, वह शादी मुश्किल से एक महीने निभ सकी। रीनो पहुँच कर सैला ने उनसे तलाक ले लिया। बाद में, कार्ल होम्स ने सैला के खिलाफ़ एक साथ दो शौहर रखने के इलज़ाम में फ़ौजदारी का मुक़दमा दायर कर दिया। यू० एस० ए० से मुकदमे का एक जाँच कमीशन मेरा भी बयान लेने भारत आया था।

आगे न जाऊँ। लैला ने ये तार पढ़े। इनके अलावा कुछ तार और आये थे जिनमें अब्दुल हमीद के मुसलमान दोस्तों ने मुझे खूब गालियाँ दी थीं। उनके मज़मून भी लैला ने पढ़े। उसने आखिरी फ़ैसला कर डाला कि भारत देश हमेशा के लिए छोड़ देगी। यूरोप की यात्रा पर वह रंजीदा रही और हमेशा उस दुश्मनी के बर्त्ताव का ज़िक्र किया करती थी जो भारत के हिन्दुओं और मुसलमानों ने उसके साथ किया था। अपनी छुट्टी ख़त्म होने पर मुझे मार्सेलीज जा कर महाराजा से मुलाक़ात करनी पड़ी जब वे जहाज़ से बन्दरगाह पर उतरे।

मुझे देखते ही, महाराजा ने पहला सवाल यह किया कि क्या लैला मेरे साथ ही है? मैंने जवाब दिया—"हाँ, यौर हाइनेस! वह मेरे साथ ही है।" यह सुन कर महाराजा बहुत बौखलाये। महाराजा यूरोप की सैर करने निकले थे और मुझको अपने साथ ले जाने तथा लैला से अलग कर देने का पक्का इरादा कर चुके थे। यह सब बातें समझने के बाद लैला का गुस्सा और बढ़ गया। आखिरकार उसे यक़ीन हो गया कि भारत में नजूमियों ने उसका हाथ देख कर जो पेशीनगोई की थी। वह सही थी कुछ मुसलमानों ने रिश्वतें दे कर नजूमियों को क़स्दन लैला के पास भेजा था कि वे उल्टी-सीधी पेशीनगोई करें जिससे उसका और मेरा साथ हमेशा के लिए छूट जाय।

मैं मुहब्बत और फ़र्ज की लड़ाई में मुब्तिला था। मेरे सामने एक सवाल यह भी पेश था कि नौकरी से इस्तीफ़ा मैं अगर दे भी दूँ तो महाराजा नाराज़ हो जायेंगे। उस हालत में मेरे उन सैकड़ों दोस्तों, रिश्तेदारों और भाई बन्दों का क्या अंजाम होगा जो रियासत की नौकरी में अच्छे-ऊँचे ओहदों पर तैनात हैं। ऐसी हालत में, लैला के खर्च पर ज़िन्दगी गुजारने के बजाय मैं महाराजा के साथ रहना बेहतर समझता था। स्वभाव से ही, मैं ऐसा बन चुका था कि एक औरत की खैरात पर जीना मुझे क़ुबूल न था। जितने दिनों मैं लैला के साथ सैर करता रहा, मैंने यूरोप, अमेरिका और भारत में उसको अपनी जेब का एक पैसा भी खर्च करने न दिया। इस मामले में मैं पूर्वी देशों की तहज़ीब की पूरी पाबन्दी कर रहा था।

भारत लौटने की तैयारियाँ होने लगीं। नवम्बर के महीने में किसी दिन महाराजा की वापसी तय की गई।

हर साल, २६ नवम्बर के पहले, महाराजा विदेश से लौट आया करते थे। उस तारीख़ को उनकी सालगिरह बड़ी धूमधाम से मनाई जाती थी। लैला ने फिर इसरार किया कि मैं उसके साथ रहूँ और महाराजा के साथ वापस न जाऊँ। मैंने उसको समझाया कि तीन-चार महीने बाद, वापसी होगी, तब हम लोग फिर मिलेंगे। मेरी बात से उसे सदमा पहुँचा और वह फ़ौरन बेहोश हो गई। उसे देखने को डॉक्टर बुलाये गये। जब मैंने देखा कि उसकी हालत सँभल गई है, तब मैं महाराजा के साथ मार्सेलीज चला आया। वहाँ जहाज़ से हम

भारत के लिए रवाना हो गये। लैला की मां ने लैला को समझाया कि वह भारत जाने और मेरे साथ रहने का अपना इरादा हमेशा के लिए छोड़ दे।

टूटे दिल से और अपनी मर्जी के खिलाफ, लैला ने एक करोडपति विदेशी मिस्टर कार्ल होम्स से शादी कर ली। जैसा अन्देशा था, वह शादी मुश्किल से एक महीने निभ सकी। रीनो पहुंच कर लैला ने उससे तलाक ले लिया। बाद में, कार्ल होम्स ने लैला के खिलाफ़ एक साथ दो शौहर रखने के इलज़ाम में फौजदारी का मुकदमा दायर कर दिया। यू० एस० ए० से मुकदमे का एक जांच कमीशन मेरा भी बयान लेने भारत आया था।

के पगड़ी बाँधने तथा चूड़ीदार पैजामे के इज़ारबन्द बाँधने के लिए ऊँचे उन पर खान अफ़सरों को तैनात करने लगे। दरबारी मंत्री लोग चतुर नौकर रखने लगे जो महाराजा को प्रेम और विषय-भोग की कलायें सिखाती थीं। कुछ पंडित-पुरोहित भी महाराजा की निजी नौकरी में रखे गये जो देवी-देवताओं से महाराजा को अपनी रानियों और रखैलों को तुष्ट करने की पूरी सम्भोग-शक्ति का वरदान प्राप्त करा सकें। कपूरथला नरेश महाराजा जगतजीत सिंह को बचपन से आदत पड़ गई थी कि उत्सव-समारोह या जलसे के मौके पर, जब वे अपनी राजसी पोशाक—कीमख़ाब या ज़र की अचकन, रेशमी पायजामा, हीरे-जवाहरात तथा अन्य अलंकरण-धारण करते, तब पायजामे का इज़ारबन्द बाँधने और खोलने के लिए उनको किसी की मदद की ज़रूरत पड़ती थी। आमतौर पर एक राजपत्रित पद का अफ़सर ऐसे अवसरों पर उनके साथ चलता था कि न जाने कब महाराजा को उसकी सेवाओं की ज़रूरत पड़ जाये। महाराजा की यह अजीब आदत राजपरिवार और महल के सभी लोगों को मालूम थी, इसलिए उनको कोई अड़चन नहीं होती थी और कोई न कोई अंगरक्षक उनकी मदद के लिए मौजूद रहता था, परन्तु कई दफ़ा महाराजा परेशानी में भी पड़े।

एक दफ़ा, महाराजा जब हर साल की तरह लन्दन सैर करने गये हुए थे, इंग्लैंड के राजा जार्ज पंचम और रानी मेरी ने उनको बकिंघम पैलेस के एक नृत्य-समारोह में आमंत्रित किया। महाराजा अपनी राजसी पोशाक—चूड़ीदार पायजामा, कीमख़ाब की अचकन, मोतियों के हार, पगड़ी और हीरे जवाहरात के अलंकरण—धारण करके वहाँ पहुँचे। वह ऐतिहासिक कमरबन्द और तलवार, जो नादिरशाह ने उनके पूर्वजों को भेंट दी थी, महाराजा बाँधे हुए थे। महल के लार्ड चैम्बरलेन ने उनका बड़े आदर से स्वागत किया और राज-दम्पति के सामने प्रस्तुत किया। महाराजा के हर्ष की सीमा न रही, जब उस शानदार नृत्य समारोह में उन्होंने देखा कि ब्रिटिश-समाज के गण्यमान्य व्यक्ति, इंग्लैंड का राजपरिवार, ब्रिटिश सरकार के मन्त्रिगण और वहाँ के नामी-गरामी रईस, लार्ड, वग़ैरह उपस्थित हैं। जब नृत्य शुरू हुआ, तो महाराजा ने हर हाइनेस बेगम आग़ा ख़ाँ को अपने साथ नाचने को कहा। बेगम आग़ा ख़ाँ रूपसी महिला थीं और बेहद ख़ूबसूरत थीं। महाराजा के अन्तरंग मित्र की पत्नी होने के नाते उन्होंने नाच का निमन्त्रण स्वीकार कर लिया। हिज़ हाइनेस आग़ा ख़ाँ, मानवजाति के हित के कामों में अपनी दानशीलता के लिए मशहूर थे। वे बड़े परोपकारी और उदार थे। भारत, अफ़्रीका तथा अन्य देशों में बसे हुए खोजा समुदाय के वे शक्तिशाली आध्यात्मिक अध्यक्ष थे। वे बहुत धनवान थे। अभी थोड़े दिनों की बात है, उसी परम्परा के अनुसार, मौजूदा आग़ा ख़ाँ ने, जो सुप्रसिद्ध आग़ा ख़ाँ के पौत्र हैं, अपना आग़ा ख़ाँ महल जहाँ ब्रिटिश सरकार ने महात्मा गांधी को क़ैद कर

गांधी जी ने उपवास किया था, भारत सरकार को भेंट कर दिया। महाराजा और बेगम ने अभी नाच शुरू ही किया था कि लार्ड चैम्बरलेन उनकी तरफ भागते हुए आये और कानों में कहा—"राजा और रानी नाच रहे हैं।" इसका मतलब था कि महाराजा और बेगम नाचना बन्द कर दें। इंग्लैंड के दरबार का यह दस्तूर है कि जब राजा और रानी नाचते हैं, तब नृत्यशाला में कोई भी नाचनेवाला जोड़ा नहीं होना चाहिए। हालाँकि महाराजा को यह बात बुरी लगी, पर उन्होंने दस्तूर निभा दिया।

रात बीतती गई। महाराजा ने कई बार सुन्दर महिलाओं के साथ नृत्य किया, शैम्पेन पी और प्रसन्न रहे। हमेशा की तरह उन्होंने शराब पीने में सावधानी रखी, क्योंकि ज़्यादा पीने की उनको आदत न थी। रात का खाना कई बड़ी-बड़ी मेज़ों पर सजाया गया था। सोने-चांदी की क़ीमती प्राचीन ऐतिहासिक तश्तरियाँ, गिलास, पेय-पात्र, छुरी-कांटे आदि मेज़ों पर मौजूद थे। चमचमाते हुए झाड़-फ़ानूस छत से लटक रहे थे। खाना-खाने के लिए बैठने से पहले महाराजा को कुछ लघुशंका की ज़रूरत महसूस हुई। चूँकि वे अकेले नाच में शरीक़ होने को बुलाये गये थे और उनके साथ कोई मिनिस्टर या अफ़सर वहाँ न आया था, उनको बड़ी परेशानी हुई कि किससे पायजामे का इज़ारबन्द खोलने को कहें। कुछ हिचकिचाहट के बाद, मजबूर होकर राजा के प्राइवेट सेक्रेटरी, सर क्लाइव विग्राम से महाराजा ने अपनी परेशानी बयान की और उनसे पूछा कि क्या उनका मुख्य अनुचर इन्दर सिंह, जो राजमहल के बाहर उनकी मोटर में शोफ़र के साथ बैठा है, उनकी मदद के लिए वहाँ बुलाया जा सकता है? पहले तो सर क्लाइव ने कहा—"यह कैसे मुमकिन है यौर हाइनेस!" परन्तु बाद में, लार्ड चैम्बरलेन से इजाजत ले कर, महाराजा की बात मान ली। इंग्लैंड के राजा जार्ज ने मना कर रखा था कि उतनी रात में मेहमानों के खिदमतगार महल के अन्दर न आने पायें। जब सरदार इन्दर सिंह को बुला कर मूत्रालय में भेजा गया तब महाराजा ने चैन की साँस ली। बाद में, सर क्लाइव और लार्ड चैम्बरलेन ने राजा जार्ज से चुपचाप इस घटना का ज़िक्र किया तो वे ज़ोर से बोल उठे—'कपूरथला के महाराजा कितने बेतकल्लुफ़ आदमी हैं।" वस्तुतः, महाराजा को एक सबक़ मिल गया। वे कोई ऐसा निमन्त्रण स्वीकार न करते थे जिसमें अफ़सरों या खिदमतगारों को साथ ले जाने की मनाही हो।

ऐसी ही मुसीबत उनको पगड़ियों के मामले में थी। एक खास मुलाज़िम हमेशा महल में तैनात रहता था जो महाराजा के सिर पर पगड़ी बाँधता था। सावधानी के ख्याल से वह कई पगड़ियाँ बँधी-बँधायी तैयार रखता था, क्योंकि उसका सिर महाराजा के सिर की बनावट का ही था।

ऐसा ही मामला पटियाला नरेश महाराजा भूपेन्दर सिंह और कई सिक्ख राजाओं का था जो लम्बे केश और दाढ़ी रखाते थे। महाराजा भूपेन्दर सिंह

मौसम और रस्म के मुताबिक अलग-अलग रंग की पगड़ियाँ पहन कर जलसों में शरीक हुआ करते थे। मिसाल के तौर पर—मौसमे बहार में पीले रंग की, शादी ब्याह में लाल रंग की और धार्मिक जलसों में काले रंग की पगड़ियाँ महाराजा पहना करते थे। मैसूर रियासत में बंधी-बंधाई पगड़ियाँ कारखानों के दरबार में तैयार की जाती थीं। महाराजा, राज-परिवार के लोग और ऊँचे घरानों के रईस उन पगड़ियों को टोपियों की तरह इस्तेमाल करते थे।

५६. हाथियों की नक़ल

कपूरथला के महाराजा जगतजीत सिंह, जब १९ साल के थे, उस स
उनका वज़न २६६ पौंड के लगभग था। भारतीय रियासतों में दस्तूर था कि यु
महाराजाओं को काम-कला के रहस्यों की गुप्त रीति से शिक्षा दी जाय,
लिए दरबार के मंत्री लोग पेशेवर ख़ूबसूरत जवान तवायफ़ों को हमेशा
काम के लिए नौकर रखते थे। उनके सिपुर्द यह काम होता था कि वे म
राजा लोगों को प्रेम और रति-क्रीड़ा के सभी तरीक़े व्यावहारिक रूप से इ
अच्छी तरह सिखा दें कि आगे चल कर अपनी महारानियों और चहेतिय
साथ वे पूरे तौर से सम्भोग सुख का आनन्द उठा सकें।

उन तजुर्बेकार तवायफ़ों ने महाराजा के पलंग पर खुद सोहबत क
महाराजा को अमली तौर पर मैथुन करने के तरीक़े सिखाने की तम
कोशिशें कर डालीं लेकिन अपने मोटापे और भारी बदन की वजह से म
राजा को कामयाबी हासिल करनी मुश्किल थी। तरह-तरह के आसनों
मैथुन की चेष्टायें की गईं पर कोई असर न हुआ, तब दरबारी और प्रा
मिनिस्टर, सभी को चिन्ता होने लगी। उन दिनों लाहौर से, जो मनोरं
और विलासिता का केन्द्र था, तथा लखनऊ से, जो मुस्लिम कला और संस्कृ
का केन्द्र था, एक से एक ख़ूबसूरत, तालीमयाफ़्ता और तजुर्बेकार तवाय
बुलाई गईं मगर किसी को कामयाबी न मिली।

आख़िरकार, एक अधेड़ उमर की तजुर्बेकार औरत, मुन्ना जान को ख्य
आया कि पेट की बहुत ज़्यादा मोटाई की वजह से मैथुन करना किसी आस
से मुमकिन नहीं होता, तो जिस आसन से हाथी जोड़ा खाते हैं, उसे क्यों
आज़माया जाय। हाथियों की देख-रेख पर तैनात अफ़सर सरदार दौलत
को महल में बुला कर हाथियों के जोड़ा खाने की आदतों के बारे में पूछ-ज
की गई। उसने बतलाया कि हाथी जब पालतू हालत में रखे जाते हैं, तब
जोड़ा नहीं खाते, इसलिए नहीं कि वे शरमाते हैं, बल्कि फ़ीलखानों में, ज
उनको रखा जाता है, वहाँ इतनी जगह नहीं होती जो उनके ठीक-ठीक आ
बनाने के लिए चाहिए। जब हाथियों को जोड़ा खिलाना होता है तो जंग
में पत्थरों और मिट्टी से बहुत ऊँचा और चौड़ा एक मज़बूत, सपाट मगर ढा
टीला बनाया जाता है जो हाथियों का बोझ संभाल सके। उस टीले
हथिनी अपनी पीठ के बल कुछ तिरछी होकर लेट जाती है और नर हाथी उ

पलंग के ऊपर पेट के बल लेट कर उसके साथ रति-क्रीड़ा करता है।

मुन्ना जान की नई तजवीज प्राइम मिनिस्टर को पसन्द आ गई। रियासत के चीफ इन्जीनियर, एक अंग्रेज मिनिस्टर एल्मोर, जिन्होंने बाद में कपूरथला का प्रसिद्ध जगतजीत पैलेस बनवाया, बुलवाये गये और उनको हिदायत की गई कि हफ़्ते के अन्दर एक सफरी और स्टील का स्प्रिंगदार गद्दोंवाला ढालू पलंग तैयार करायें। तैयार हो जाने पर यह पलंग फौरन मुन्ना जान के सुपुर्द किया गया जिसने अपनी जवान खूबसूरत शागिर्द छोकरियों को उस पलंग पर महाराजा के साथ हाथियों वाले आसन की आजमाइश करने भेज दिया।

आसन कामयाब रहा, यह जान कर महाराजा के परिवार के लोग और दरबारी, सभी बेहद खुश हुए। बाद में, धर्मशाला नामक स्थान पर महाराजा ने महारानी के साथ अपनी सुहागरात मनाई। नौ महीने बाद महारानी के पुत्र हुआ जिसका नाम परमजीत सिंह रखा गया। उस अवसर पर सारी रियासत में बड़ी धूमधाम से जलसे हुए और भारत के वायसराय तथा इंग्लैंड के बादशाह को यह खुशखबरी भेजी गई जिन्होंने महाराजा को बधाई दी।

मुन्ना जान को सोने के भारी-भारी कड़े और कीमती ज़ेवर इनाम में मिले और जिन्दगी भर के लिए एक हज़ार रुपये महीने का गुज़ारा व एक पक्का मकान भी दिया गया।

हियूनसांग के पश्चात् दूसरा विश्वासनीय विवरण ओऊकांग नामक चीनी यात्री का लिखा मिलता है जो सन् ७६० में कश्मीर आया था और बौद्ध भिक्षु के वस्त्र धारण कर चार वर्ष तक वहाँ रहा था। उसके कथनानुसार कश्मीर में ३०० से अधिक मठ थे और धार्मिक विचारों का सर्वत्र प्रचार था।

शताब्दियों तक, सुदूर देशों से बड़े-बड़े सन्त और विद्वान अनायास ही आकर्षित होकर कश्मीर आते रहे। इसका मुख्य कारण कश्मीर की भौगोलिक स्थिति थी। वहाँ पर विभिन्न स्थल मार्ग पूर्व में तिब्बत होकर, उत्तर में चीनी तुर्किस्तान और रूस होकर, पश्चिम में अफ़ग़ानिस्तान होकर, मिलते थे और यह प्रदेश अनेक जातियों और अनेक विचारों के समन्वय का केन्द्र था।

अनेक स्थल-मार्ग, जो पूर्व और पश्चिम को मिलाते थे तथा पूर्वी जगत के भूभागों से आते थे, उनका केन्द्रीकरण कश्मीर में होता था। धर्म-प्रचारक, विद्वान और पण्डित, व्यापारी और पर्यटक, तीर्थ-यात्री और राजदूत तथा परिव्राजक, सभी कश्मीर आये और यहाँ के निवासियों के जीवन पर प्रभाव डाला।

कश्मीर और उसकी ऐतिहासिक पृष्ठभूमि इतनी सुविस्तृत और विशाल है कि उस पर ग्रन्थ के ग्रन्थ लिखे जा सकते हैं परन्तु हमारा मुख्य उद्देश्य यहाँ गिलगिट की कहानी लिखना है। गिलगिट, कश्मीर का एक भाग है जो मध्य एशिया में सामरिक दृष्टि से अपना महत्त्व रखता है। कश्मीर की घाटी को एशिया का रत्न, पूर्व का एडेन, भारत का आध्यात्मिक स्वर्ग आदि अनेक नाम देकर लेखकों ने प्रशंसा की है। परन्तु यह प्रदेश सम्पूर्णतया संकीर्ण पर्वतीय दर्रों तथा काराकोरम और हिमालय की गगनचुम्बी पर्वतमालाओं से घिरा हुआ है। यहाँ की प्राकृतिक सुन्दरता के आकर्षण की अपेक्षा स्वार्थ-साधन के कौशल से प्रेरित होकर सारे संसार के लोग आजकल यहाँ भ्रमण करने आते रहते हैं।

[illegible]क दृष्टि से कश्मीर राज्य चार भागों में बँटा है : (१) जम्मू, [illegible]श्मीर, (३) लद्दाख, और (४) सीमाप्रान्त गिलगिट जिसके अन्तर्गत [illegible]त ज़िले तथा पोलीटिकल एजेन्सी शासित हुंज़ा, नागर, पनियाल, [illegible]न और इश्कोमन की जागीरें हैं।

इन चारों खण्डों में कश्मीर सरकार द्वारा नियुक्त गवर्नर शासन करते थे परन्तु गिलगिट की शासन व्यवस्था ब्रिटिश सरकार के प्रतिनिधि पोलीटिकल एजेन्ट की उपस्थिति के कारण कुछ भिन्न प्रकार की थी।

पोलीटिकल एजेन्ट गिलगिट में रह कर आस-पास के जिलों पर नियंत्रण रखता था, जो कश्मीर सरकार के गवर्नरों के अधीन होते हुए भी ब्रिटिश सरकार की शासन-व्यवस्था मे थे। इस प्रकार की दुहरी हुकूमत तथा गिलगिट का सामरिक महत्व ही वे कारण थे जिनके फलस्वरूप गिलगिट के पूर्व का सिन्धु नदी की ओर का इलाक़ा भारत की ब्रिटिश सरकार ने कश्मीर सरकार

से ६० वर्ष के पट्टे पर लेकर सन् १६३५ में अपने अधिकार में कर लिया।

भारत के मानचित्र में कश्मीर की विशेष भौगोलिक स्थिति ने ही उसे संसार का एक महत्वपूर्ण सामरिक केन्द्र-बिन्दु बना रखा है। भारत के उत्तर-पश्चिम में जम्मू और कश्मीर राज्य अनेक शक्तियों की दृष्टि का लक्ष्य बना हुआ है। उसकी सीमायें पंजाब के हरे-भरे मैदानों की सुविस्तृत उत्तरी हद तक पहुँचती हैं जहां अनेक स्वतंत्र देशों की सीमाओं का मिलन भारतीय संघ की सीमाओं से होता है।

इसके उत्तर में काराकोरम पर्वतमाला है जिसमें चीनी तुर्किस्तान और रूसी तुर्किस्तान है, पूर्व की ओर तिब्बत का ऊँचा पठार है, पश्चिम में उत्तर-पश्चिम सीमाप्रान्त और अफ़ग़ानिस्तान है। दक्षिण में पंजाब है जो अब पूर्वी और पश्चिमी, दो भागों में बँटा हुआ है। इस प्रकार कश्मीर प्रदेश रूस, चीन, भारत, पाकिस्तान, तिब्बत और अफ़ग़ानिस्तान द्वारा चारों ओर से घिरा हुआ है।

कश्मीर भारत की सुदूर उत्तरी सीमा की रक्षा-भित्ति है और भारत के लिए इसी कारण से महत्वपूर्ण है। हिमालय की ऊँची पर्वतमालायें परकोटे की भाँति इसकी रक्षा करती हैं जिसमें उत्तर से गिलगिट होकर केवल एक प्रवेश-द्वार है।

इसीलिए कश्मीर को "भारत का जिब्राल्टर" नाम देना ठीक ही है। इसको भारत के ब्रिटिश साम्राज्य के राजमुकुट का सबसे चमकीला रत्न कहा जाता था।

कश्मीर के सामरिक महत्व को समझ कर ही ब्रिटिश सरकार इसे कश्मीर की डोगरा हुकूमत के हाथों से छीनने की तमाम राजनीतिक चालें वर्षों तक चलती रही। सीमान्त प्रदेश की सभी समस्याओं का एकमात्र हल ब्रिटिश सरकार की दृष्टि में यही था कि वह अपनी कूटनीति से, जिस तरह भी बने, कश्मीर पर अपना सीधा अधिकार रख सके।

६२. गोल मेज़ कान्फ़्रेन्स

सन् १६१६ में, भारत के वायसराय लार्ड हार्डिंज ने, यहाँ के राजे-रजवाड़ों की पहली कान्फ़्रेन्स बुलाई। इसके बाद, सन् १६२१ में, हिज इम्पीरियल मैजेस्टी, भारत के सम्राट् की ओर से हिज रायल हाईनेस ड्यूक ऑफ कनॉट ने, औपचारिक रूप से 'चैम्बर ऑफ़ प्रिन्सेज़' का उद्घाटन किया। बीकानेर नरेश हिज हाईनेस महाराजा गंगासिंह, चैम्बर ऑफ़ प्रिन्सेज़ के प्रथम चैन्सलर चुने गये और हर साल, सन् १६२६ तक बराबर वे ही चुने जाते रहे।

चैम्बर ऑफ़ प्रिन्सेज़ की वैधानिक नियमावली में रियासतों की सदस्यता के लिए नीचे लिखी योग्यतायें निश्चित थी :—

(अ) चैम्बर में सदस्य और प्रतिनिधि सदस्य होंगे। नीचे लिखे व्यक्ति चैम्बर के सदस्य बन सकेंगे :—

(१) रियासतों के शासक जो १ जनवरी सन् १६२० को वंश-परम्परानुसार स्थायी रूप से ११ तोपों या अधिक की सलामी पाते रहे हैं।

(२) रियासतों के वे शासक, जिनको ऐसे सम्पूर्ण अथवा व्यावहारिक रूप से सम्पूर्ण आन्तरिक अधिकार प्राप्त हो, जो वायसराय की राय में उनको चैम्बर में प्रवेश की योग्यता प्रदान करते हों।

(ब) चैम्बर के प्रतिनिधि सदस्य, रियासतों के वे शासक होंगे, जो उपरोक्त उप-धारा (१) और (२) के अन्तर्गत प्रवेश-योग्यता न होते हुए भी विनियम द्वारा नियुक्त किये जायें।

३१ अक्तूबर सन् १६२५ को, भारत के वायसराय, मारक्विस ऑफ रीडिंग ने, भारतीय गोल मेज़ कान्फ़्रेन्स के बारे में ऐतिहासिक घोषणा की। इसके बाद, भारतीय रियासतों के शासकों और मुस्लिम लीग के प्रतिनिधियों द्वारा ब्रिटिश भारतीयों से मिल कर केन्द्रीय उत्तरदायित्व सहित एक संघीय संविधान बनाने में असहयोग, तथा सम्राट्, ब्रिटिश भारत और रियासतों में सम्मानजनक समझौते की विफलता, इतिहास के ऐसे जाने-माने तथ्य हैं, जिनका दोहराना यहाँ अनावश्यक होगा।

हाउस ऑफ लार्ड्स की रॉयल गैलरी में शाही शान के साथ बुधवार १२ नवम्बर सन् १६३० को, गोल मेज़ कान्फ़्रेन्स का उद्घाटन समारोह हुआ।

नरेशों, ब्रिटिश प्रतिनिधियों तथा ब्रिटिश भारतीय प्रतिनिधियों ने अपने राजनीतिक विचार प्रकट किये ।

संघीय निर्माण कमेटी की पहली मीटिंग में महाराजा बीकानेर ने संकेत किया कि :—

(१) जरूरी यह था कि एक न्यायपूर्ण समझौता ऐसा हो, जो दोनों भारतों के सम्बन्धों को नियमित रखे । साथ ही, उसके द्वारा भावी संविधान में रियासतों को यथोचित स्थान मिले और उनको ब्रिटिश भारत के साथ बराबर का साझीदार समझा जाये । उनको सन्धियों और स्वामित्व को मान्यता दे कर उनके तथा उनकी प्रजा के हितों को सुरक्षित किया जाये—ऐसी न्यायोचित सम्मानपूर्ण शर्तें और नियमों पर जो रियासतों और ब्रिटिश भारत, दोनो के अनुकूल हो;

(२) ऐसा संघ कुछ विशेष सुरक्षा नियमों के प्रतिबन्ध में रहे,

(३) संघ में सम्मिलित होने की इच्छा प्रकट करने में नरेशों के आगे तीन आवश्यक तथ्य थे—

(अ) अपने प्रिय सम्राट् के प्रति उनकी स्वाभाविक स्वामिभक्ति और साम्राज्य के प्रति "मित्र और सुहृद" की हैसियत से निष्ठा-भाव तथा यह विचार कि कुछ त्याग की आशंका होते हुए भी, भारत की वर्तमान गम्भीर परिस्थिति मे कुछ सहायता दे सकें, यदि रियासतों की मर्यादा, अधिकार और सन्धियो पर किसी प्रकार का सकट आने की सम्भावना न हो;

(आ) उनकी स्वाभाविक इच्छा, सम्मान और सुरक्षा के अनुकूल, अपने देश को ब्रिटिश राष्ट्र संघ का बराबरी का और सम्मानित सदस्य बनने मे, और सम्राट् के आधिपत्य में ब्रिटिश भारत के निवासी अपने भाइयों की सर्वतोमुखी उन्नति करने मे, सहायता देना;

(इ) क्योंकि ऐसा प्रकट होता था कि कालान्तार मे इस प्रकार का संघ सम्भवतः कुछ मामलो मे भारतीय नरेशो, उनकी रियासतो और उनकी प्रजा के लिए हितकारक होगा,

(ई) वे लोग ब्रिटिश भारत से किंचित भी अधीनस्थ या निम्न स्थिति स्वीकार करने को तैयार न थे परन्तु चाहते थे कि किसी प्रकार का प्रभुत्व या प्रादेशिक शासन स्वतंत्रता, जो ब्रिटिश भारत को प्राप्त हो, उसमे बराबरी से, सम्मानपूर्वक, ब्रिटिश भारत के साथ वे भी भागीदार बनें;

सर्वप्रथम बार इंग्लैंड के बादशाह ने ऐसी कान्फ्रेन्स की अध्यक्षता की और वहाँ उपस्थित प्रतिनिधियों से भारत के भावी संविधान की महान् समस्या सुलझाने का अनुरोध किया। वहाँ कुल मिला कर ८६ प्रतिनिधि थे—१६ भारतीय रियासतों के, ५७ ब्रिटिश भारत के और १३ राजनीतिक दलों के। इंग्लैंड के प्रधान मंत्री राइट आनरेबुल जे० रैम्ज़े मैक्डोनाल्ड, भारतीय नरेश और उनके मंत्री राजसिंहासन के दाहिनी ओर, सेक्रेटरी आफ़ स्टेट आनरेबुल जे वेजवुड बेन तथा अन्य ब्रिटिश प्रतिनिधि बाईं ओर, और ब्रिटिश भारतीय प्रतिनिधि सामने, बैठे हुए थे। कान्फ्रेन्स का उद्घाटन करते हुए हिज़ मैजेस्टी सम्राट् ने कहा—"अपने साम्राज्य की राजधानी में, महाराजाओं, राजाओं और भारतीय जनता के प्रतिनिधियों का, इस कान्फ्रेन्स के उद्घाटन के लिए, अपने मंत्रियों तथा अन्य पार्टियों के प्रतिनिधियों सहित, पार्लमिण्ट के इस भवन में, जिसके वे सदस्य हैं, स्वागत करते हुए मुझको असीम सन्तोष है।" अन्त में, उन्होंने फिर कहा—"मेरी कामना है कि आपका पारस्परिक तर्क-वितर्क, लक्ष्य की प्राप्ति का मार्ग-प्रदर्शन करे और आपके नाम इतिहास में यूँ लिखे जायँ कि इन-इन लोगों ने भारत की सेवा की तथा इनके प्रयत्नों ने मेरी समस्त प्रिय-प्रजा के हर्ष और समृद्धि को बढ़ाया। मैं प्रार्थना करता हूँ कि ईश्वर आप सब को मुक्तहस्त हो कर, बुद्धिमत्ता, धैर्य और शुभाकांक्षा प्रदान करे।" हाउस ऑफ़ लार्ड्स की सजी हुई भव्य गैलरी में, सम्राट्, उनके मंत्रिगण और भारत के प्रतिनिधियों के एकत्र होने का वह दृश्य बड़ा ही प्रभावशाली और अद्भुत था।

सम्राट् के भाषण के बाद इंग्लैंड के प्रधान मंत्री, महाराजा सयाजी राव गायकवाड़ बड़ौदा-नरेश, महाराजा हरीसिंह कश्मीर-नरेश और मिस्टर एम० ए० जिन्ना तथा अन्य लोगों के भाषण हुए। महाराजा बड़ौदा ने रानी विक्टोरिया की प्रसिद्ध घोषणा पर भाषण किया—"भारत की सम्पन्नता हमारी शक्ति, भारतीयों की सन्तुष्टि, हमारी सुरक्षा और उनकी कृतज्ञता, हमारा बहुमूल्य पुरस्कार होगी।" उद्घाटन के दिन सबसे अच्छा भाषण मिस्टर एम० ए० जिन्ना का था जिन्होंने साफ़ और ऊँची आवाज में कहा था—"मैं समस्त प्रधान मंत्रियों और स्वतंत्र अधिराज्यों के प्रतिनिधियों को सम्बोधन करता हूँ जो यहाँ एक नये अधिराज्य, ब्रिटिश राष्ट्र-मंडल का जन्म देखने के लिए एकत्र हुए हैं।"

कांग्रेस-दल ने इस कान्फ़्रेन्स में भाग लेने से इन्कार कर दिया था। जब सम्राट् रॉयल गैलरी से चले गये, तब चैम्बर ऑफ़ प्रिन्सेज के चैन्सलर ने एक छोटी-सी वक्तृता में प्रस्ताव किया कि ग्रेट ब्रिटेन के प्रधान मंत्री मिस्टर मैकडोनाल्ड कान्फ़्रेंस की अध्यक्षता करें। बाद में, बहुत-सी कमेटियाँ बनाई गईं। उनमें सबसे महत्वपूर्ण थी संघीय निर्माण कमेटी जिसके सभापति लार्ड सांके, राजकोष के चैन्सलर, निर्वाचित हुए। इसी कमेटी के अन्तर्गत भारतीय

रेशों, ब्रिटिश प्रतिनिधियों तथा ब्रिटिश भारतीय प्रतिनिधियों ने अपने राजनैतिक विचार प्रकट किये।

फेडरल निर्माण कमेटी की पहली मीटिंग में महाराजा बीकानेर ने संकेत किया कि :—

(१) उनकी यह था कि एक न्यायपूर्ण समझौता ऐसा हो, जो दोनों भारतों के सम्बन्धों को नियमित करे। साथ ही, उसके द्वारा भावी संविधान में रियासतों को यथोचित स्थान मिले और उनको ब्रिटिश भारत के साथ बराबर का साझीदार समझा जाये। उनकी सन्धियों और स्वामित्व को मान्यता दे कर उनके तथा उनकी प्रजा के हितों को सुरक्षित किया जाए—ऐसी न्यायोचित सम्मानपूर्ण शर्तों और नियमों पर जो रियासतों और ब्रिटिश भारत, दोनों के अनुकूल हों;

(२) ऐसा संघ कुछ विशेष सुरक्षा नियमों के प्रतिबन्ध में रहे,

(३) संघ में सम्मिलित होने की इच्छा प्रकट करने में नरेशों के आगे तीन आवश्यक तथ्य थे—

(अ) अपने प्रिय सम्राट् के प्रति उनकी स्वाभाविक स्वामिभक्ति और साम्राज्य के प्रति "मित्र और सुहृद" की हैसियत से निष्ठा-भाव तथा यह विचार कि कुछ त्याग की आशंका होते हुए भी, भारत की वर्तमान गम्भीर परिस्थिति में कुछ सहायता दे सकें, यदि रियासतों की मर्यादा, अधिकार और शक्तियों पर किसी प्रकार का संकट आने की सम्भावना न हो;

(आ) उनकी स्वाभाविक इच्छा, सम्मान और सुरक्षा के अनुकूल, अपने देश को ब्रिटिश राष्ट्र संघ का बराबरी का और सम्मानित सदस्य बनने में, और सम्राट् के आधिपत्य में ब्रिटिश भारत के निवासी अपने भाइयों की सर्वतोमुखी उन्नति करने में, सहायता देना;

(इ) क्योंकि ऐसा प्रकट होता था कि कालान्तर में इस प्रकार का संघ सम्भवतः कुछ मामलों में भारतीय नरेशों, उनकी रियासतों और उनकी प्रजा के लिए हितकारक होगा;

(ई) वे लोग ब्रिटिश भारत में किंचित भी अधीनस्थ या निम्न स्थिति स्वीकार करने को तैयार न थे परन्तु चाहते थे कि किसी प्रकार का प्रभुत्व या प्रादेशिक शासन स्वतंत्रता, जो ब्रिटिश भारत को प्राप्त हो, उसमें बराबरी से, सम्मानपूर्वक, ब्रिटिश भारत के साथ वे भी भागीदार बनें;

(उ) "अनवरत मैत्री, एकनिष्ठता, और हितों की एकता" की सन्धियों, सनदों तथा अन्य समझौतों के द्वारा रियासतों और सम्राट् के राजनीतिक सम्बन्ध जो स्थापित हुए थे, उनका विचार।

(ऊ) रियासतों की प्रजा ब्रिटिश प्रजा न थी, न रियासतों के इलाक़े, ब्रिटिश इलाक़े थे और ब्रिटिश अथवा ब्रिटिश भारतीय विधान रियासतों पर लागू न था।

(ए) सिवाय इसके कि जो कुछ स्वतः, बिना किसी दबाव के सबके हितार्थ संघीय प्रयोजन से सौंप दिया जाय, भारतीय नरेश जानते थे कि अधिकांश रियासतें उनके पूर्वजों ने अपनी 'शक्ति और तलवार के ज़ोर से क़ायम की हैं, वे किसी की दी हुई जागीरें नहीं हैं', और इसीलिए नरेशों को ध्यान रखना पड़ता था कि अपने पूर्वजों के, जिन्होंने रियासतों की नीवें डाली थीं, कितने ऋणी थे, अपने समुदाय, वंश और प्रजा के प्रति उनके कुछ कर्त्तव्य थे, ऐसी दशा में वे— किसी भी ऐसे समझौते को तैयार न थे जिससे आगे चल कर उनकी रियासतों को खतरा हो, अथवा उनके प्रभुत्व, आन्तरिक स्वतंत्रता और उनकी प्रजा के न्यायोचित अधिकारों पर आँच आये।

(ऐ) संघ में सम्मिलित होने अथवा उसी प्रयोजन से कुछ त्याग के लिए तैयार होने से, यह तात्पर्य कदापि न था कि भारतीय नरेश या उनकी प्रजा कभी भी ब्रिटिश प्रजा बनने को सहमत हैं, अथवा इस विषय में संघ की कोई नीति स्वीकार करेंगे।

(ओ) उनके व्यक्तिगत या वंशगत मामलों—कुछ सुरक्षा नियमों के अनुकूल—तथा प्रभुत्व के बारे में, वाद-विवादों के निर्णय का अधिकार सम्राट् को होगा जो सम्राट् की ओर से वायसराय द्वारा तय किये जायेंगे और कौन्सिल-स्थित गवर्नर जेनरल से उनका कोई सम्बन्ध न होगा।

६३. लँगोटी पर तूफ़ान

दूसरी गोल मेज़ कान्फ़ेन्स सन् १६३१ में बुलाई गई, जिसमें महात्मा गांधी श्रीमती सरोजिनी नायडू, पंडित मदनमोहन मालवीय, तथा अन्य प्रसिद्ध नेता जैसे, सर तेजबहादुर सप्रू, राइट आनरेबुल एम० आर० जयकर, बड़ौदा, बीकानेर, पटियाला के महाराजा आदि ने भाग लिया। बकिंघम पैलेस के स्वागत समारोह में इंग्लैंड के बादशाह से महात्मा गांधी की कुछ तीखी और खरी बातचीत के अनन्तर महात्मा जी का भाषण लोगों ने बड़े ध्यान से सुना। एक अंग्रेज सज्जन से महात्मा गांधी की कुछ बातें हुई थीं जिनका हवाला देते हुए उन्होंने अपने भाषण में कहा—"भारत में मेरे बच्चे, अंग्रेज़ों के बमों और बन्दूक की गोलियों को सिर्फ आतिशबाज़ी समझते हैं!"

यहाँ पर यह उल्लेख करना अप्रासंगिक न होगा कि संघीय निर्माण कमेटी में महात्मा जी ने बमों और आतिशबाज़ी का ज़िक्र क्यों किया। एक रोज़, जब गोल मेज़ कान्फ़ेन्स के सारे प्रतिनिधि और सलाहकार, जो भारत से आये थे, इंग्लैण्ड के बादशाह द्वारा तीसरे पहर होने वाले स्वागत समारोह में, बकिंघम पैलेस में आमन्त्रित थे। तब, बड़ी बहस चली कि उस अवसर पर महात्मा जी को कैसे वस्त्र पहनने चाहिये। निमन्त्रण के कार्ड में एक कोने में छपा था—"सवेरे की पोशाक।" इसका मतलब था कि भारतीय मेहमान अपनी राष्ट्रीय पोशाक पहनें तथा अंग्रेज़ लोग फ्राक कोट व टॉप हैट पहनें। महात्मा गांधी स्वागत समारोह में जाने के लिए भारत के गरीब लोगों जैसे वस्त्रों के अलावा दूसरे किसी प्रकार के वस्त्र पहनने को तैयार न थे। इससे एक बड़ी गम्भीर स्थिति पैदा हो गई जब महात्मा जीने सेक्रेटरी ऑफ़ स्टेट को सूचना दी कि वे हमेशा की तरह लँगोटी पहने हुए स्वागत समारोह में शरीक होंगे।

दूसरी ओर, इंग्लैण्ड के बादशाह और रानी बहुत बुरा मान गये और एतराज़ करने लगे कि महात्मा गांधी लँगोटी पहने अधनंगी हालत में समारोह में आयें। भारत के सेक्रेटरी ऑफ़ स्टेट ने, भारत के वायसराय लार्ड विलिंगडन को तार दिया कि इस संगीन मामले में वे अपनी राय दें। वायसराय ने उत्तर दिया कि अगर उचित पोशाक न पहने होने के कारण महात्मा गांधी को बकिंघम पैलेस के स्वागत समारोह में शामिल होने से रोका गया, तो भारत में बड़ा भारी तूफ़ान उठ खड़ा होगा। लाचार हो कर इंग्लैण्ड के बादशाह और

रानी को, अपनी मर्ज़ी के ख़िलाफ़, उस समारोह में महात्मा गाँधी को लँगोटी पहने आने की स्वीकृति देनी पड़ी। मैं भी उस समारोह में एक भारतीय प्रतिनिधि की हैसियत से निमन्त्रित था। बरामदे में खड़ा हुआ मैं महात्मा गाँधी से, जो लँगोटी पहने और कन्धों पर दुशाला डाले हुए थे, बातें करता रहा। उस समय वे साक्षात् एक पैग़म्बर जैसे लग रहे थे। उनके साथ में श्रीमती सरोजिनी नायडू थीं।

उस समारोह में, भारत से आये तमाम प्रतिनिधि और सलाहकार, भारतीय राजे-महाराजे, ड्यूक लोग, इंग्लैंड के अमीर-उमरा अपनी-अपनी पत्नियों सहित, शानदार, भड़कीली पोशाकें पहने उपस्थित थे। उनके अलावा, ग्रेट ब्रिटेन की सरकार के प्रधान मंत्री, तथा अन्य मंत्री राजनीतिक विभाग के उच्च अधिकारी, स्थल, जल, और वायु सेना के बड़े-बड़े अफ़सर भी जलसे में शरीक़ थे। बरामदे में, जहाँ महात्मा गाँधी खड़े थे, वहाँ से कुछ गज़ के फ़ासले पर इंग्लैंड के राजा, और रानी बाकिंघम पैलेस के शानदार हॉल में मेहमानों का स्वागत कर रहे थे। लार्ड चैम्बरलेन मेहमानों के नाम बतलाते हुए राजा और रानी के सामने उनको पेश करते थे और वे लोग बारी-बारी हर एक से हाथ मिलाते थे। सबके बाद महात्मा गाँधी आये। मुझे अच्छी तरह याद है कि उनका नाम नहीं पुकारा गया। राजा ने उनसे हाथ मिलाया मगर रानी ने हाथ हटा लिया। वहाँ उपस्थित एक स्वागत-आफ़िसर ने महात्मा जी को दूसरे मेहमानों से अलग हॉल के बीच में पहुँचा दिया। वहीं पर इंग्लैण्ड के राजा उनसे मिले और बातचीत की जिसके बारे में, बाद में, श्रीमती सरोजिनी नायडू ने, जिनसे मेरी कई साल पुरानी मित्रता थी, मुझे बतलाया।

सभी मेहमानों की निगाहें उधर ही लगी थीं जहाँ हॉल के बीच में इंग्लैण्ड के राजा से महात्मा गाँधी बातें कर रहे थे। राजा कुछ उत्तेजित और गुस्से में थे। वह एक अजीबोग़रीब नज्ज़ारा था जब फ्रॉक कोट पहने इंग्लैण्ड के राजा, लँगोटीधारी महात्मा के साथ दिखाई दे रहे थे। राजा ने महात्मा गाँधी से कहा—"आप अफ्रीका में ब्रिटिश के मित्र रहे और मेरी समझ में नहीं आता कि अब आप मेरे और ब्रिटिश के ख़िलाफ़ कैसे हो गये? मैं आपको चेतावनी देता हूँ कि भारत में अगर आप गड़बड़ी फैलायेंगे और मेरी सरकार के साथ सहयोग न करेंगे, तो मेरी सेना वहाँ मौजूद है जो सारे आन्दोलनकारियों और साजिश करने वालों को उड़ा देगी।" महात्मा जी खामोश रहे और दूसरे मेहमानों की तरफ़ चल दिये। अगले दिन, महात्मा गाँधी ने संघीय निर्माण कमेटी के आगे जो ऐतिहासिक भाषण किया, उसका जिक्र शुरू में हम कर चुके हैं।

६४. राज्य-संघ का ढाँचा

तीसरी कान्फ्रेन्स १७ नवम्बर, सन् १६३२ को बुलाई गई और पिछली कान्फ्रेन्सों के मुकाबले उसका आकार छोटा रहा। उसमें केवल ४६ प्रतिनिधि सम्मिलित हुए और कुछ विशेष शासक ही उपस्थित हो सके। विरोधी मजदूर दल के सदस्यों ने भी उसमें भाग लेने से इन्कार कर दिया। सबसे गम्भीर बात तो यह थी कि कांग्रेस भी उसमें शरीक न हुई थी। कारण यह था कि इसी अवधि में कांग्रेस ने सविनय अवज्ञा आन्दोलन छेड़ दिया था। पहली और दूसरी गोलमेज कान्फ्रेन्स में सबसे आवश्यक निर्णय यह हुआ था कि संघीय विधान-मंडल क़ायम हो। तीसरी गोलमेज कान्फ्रेन्स न तो संघीय-मंडल का आकार तय कर सकी, न रियासतों की प्रतिनिधि संख्या और न रियासतों को मिलने वाली सीटों की संख्या ही निश्चित कर सकी। भारतीय नरेश सदा यह अनुभव करते थे कि सार्वभौम सत्ता में उनके सम्बन्ध पारिभाषित न थे और उनका भविष्य खतरे में था, क्योंकि ब्रिटिश सरकार, अनवरत रूप से राजनीतिक अधिकार भारतीयों को हस्तान्तरित कर रही थी। हिज हाईनेस महाराजा भूपेन्दर सिंह पटियाला-नरेश ने कहा—"सत्य तो यह है कि ब्रिटिश और भारतीय नेता यह अनुमान लगाते हैं कि रियासतों का ब्रिटिश भारत में विलयन होगा या कम से कम उसका उन पर पूरा आधिपत्य रहेगा। रियासतें, उनकी प्रजा और उनके शासक—हम लोग—ऐसे विचार का पूरी ताकत से विरोध करेंगे।"

भारतीय नरेशों और ब्रिटिश भारतीय राजनीतिज्ञों के उद्देश्य एक-दूसरे के विपरीत थे। भारतीय नरेश इस बात पर अड़े थे कि संघीय विधान-मण्डल में उनके द्वारा मनोनीत प्रतिनिधि रहेंगे जब कि कांग्रेस दल की माँग थी कि जनता द्वारा चुने गये प्रतिनिधियों को ही मान्यता दी जायगी। इस बात से ही आधुनिक भारत के इतिहास के एक प्रामाणिक परिच्छेद की समाप्ति हो गई। प्रतिनिधियों के चुने जाने या मनोनीत होने के विषय में भारतीय नरेशों तथा ब्रिटिश भारत के प्रतिनिधियों का पारस्परिक मत-भेद तो एक कारण था ही, परन्तु नरेशों द्वारा लगाई गई कई शर्तों ने दोनों दलों के बीच एक ऐसी खाई पैदा कर दी जिसका पाटना असम्भव हो गया। नरेशों की अनुचित शर्तों ने संघीय विधान मंडल पर विचार-कार्य समाप्त कर दिया।

भारतीय नरेश, गोल मेज़ कान्फ़ेन्स में ब्रिटिश नेताओं और सरकारी मिनिस्टरों से मिल कर सोच रहे थे कि ब्रिटिश भारतीय प्रतिनिधियों की आज़ादी हासिल करने की हर एक कोशिश को किस तरह नाकामयाव कर दिया जाय। संघीय निर्माण कमेटी की बैठकों के पहले, तमाम तजवीज़ों का जाल बिछाया गया और योजनायें बनाई गई कि कांग्रेसी नेताओं का विरोध करके या तो कान्फ़ेन्स असफल कर दी जाय, अथवा विधान-मंडल में अधिक से अधिक अनुपात में प्रतिनिधित्व अपने मनोनीत सदस्यों का हासिल किया जाय, जिससे देश का शासन एक प्रकार से अपने हाथों में रह सके। जब भारतीय नरेशों को अपने उद्देश्य की पूर्ति में असफलता मिली, तब वे संघ को सन्देह की दृष्टि से देखने लगे। गोल मेज़ कान्फ़ेन्स की समाप्ति पर उनका दृष्टिकोण निराशा का था और कुछ शासक सोचने लगे कि कान्फ़ेन्स की असफलता अवश्य होगी।

भारतीय रियासतों के प्रतिनिधि-मंडल ने बम्बई की एक बैठक में सर्व-सम्मति से निर्णय किया कि रियासतों के लिए ऊपरी सदन में कम से कम १२५ सीटों की माँग की जाय जिससे चैम्बर आफ़ प्रिन्सेज़ के सारे सदस्यों को व्यक्तिगत और समान प्रतिनिधित्व प्राप्त हो सके। निम्न सदन में ३५० में से ४० प्रतिशत के अनुपात से उन्होंने १४० सीटों की माँग करना निश्चित किया। कुछ बड़ी रियासतों ने मैसूर के दीवान, सर मिर्ज़ा इस्माइल के नेतृत्व में, इस प्रस्ताव का विरोध किया जो उनकी अनुपस्थिति में पास कर लिया गया था।

बीच की तथा छोटी रियासतों ने, उन बड़ी रियासतों के साथ, जिनको २१ तोपों की सलामी मिलती थी, अपनी मर्यादा बराबर रखे जाने की माँग की और कहा कि ऊपरी सदन में सभी स्वशासित रियासतों के प्रतिनिधि समान अनुपात में लिए जायें, जिससे बड़ी रियासतों को बहुमत का अधिकार न रहे। ऐसा न होने पर, तमाम समस्याओं और कठिनाइयों की सम्भावना थी। बीच की तथा छोटी रियासतों को विश्वास था, कि यदि बड़ी रियासतों को संख्या में अधिक वोट प्राप्त करने का अधिकार दिया गया तो सारी योजना अवश्य असफल रहेगी।

नीचे हम एक केबिलग्राम (अन्तर्राष्ट्रीय तार) का आशय दे रहे है जो बीकानेर के महाराजा ने २१ नवम्बर १९३१ को इंग्लैंड के प्राइम मिनिस्टर रैम्ज़े मैक्डानल्ड को गजनेर से भेजा था :—

"मैं आपका ध्यान आकर्षित करता हूँ, अपने उन वक्तव्यों की ओर और उस वार्त्तालाप की ओर, जो आपसे तथा सांके कमेटी की बैठकों में हुए। यही पन्द्रह नवम्बर को, अपने भाषण में भी कह चुका हूँ। मैं, स्वयं सच्चे मन से चाहता हूँ कि भारत में जैसी स्थिति है, उसमें शान्ति, सन्तोष और कानून के पालन की व्यवस्था फिर से लाने में भारतीय राजे-रजवाड़े भी अपनी मनुनिना

भूमिका निभायें। मैं पुनः इस बात की आवश्यकता और महत्व पर जोर दे रहा हूँ कि ऊपरी राष्ट्र-सदन में रियासतों को अधिक सीटें दी जायें। जैसा मैं पहले कह चुका हूँ, मेरा दृढ़ विश्वास है कि कम से कम १२५ सीटें यदि हम लोगों को देशी रियासतों के लिए सुरक्षित कर दी जायें, तो हमारी न्यायोचित माँगों की पूर्ति हो जायगी और हमें सन्तोष होगा। ऊपरी सदन मे ८० सीटें नितान्त अपर्याप्त है। संघ मे सम्मिलित होने वाली रियासतो को ८० सीटें केवल झगड़े की जड़ें साबित होंगी। जबसे मैं भारत लौटा हूँ, मैंने अपने कितने ही नरेश बन्धुओं और मन्त्रियों से बातचीत और लिखा-पढ़ी की है, जिससे मेरे विचार और भी पुष्ट हो चुके हैं। ऊपरी सदन मे रियासतो को पर्याप्त सीटें मिलने का प्रश्न, और रियासतों को—मुख्यतः छोटी रियासतों को उचित प्रतिनिधित्व प्राप्त होना, जरूरी है। अलावा इसके, छोटी रियासतों को पर्याप्त आश्वासन उनके वैधानिक, राज-कर विषयक तथा आर्थिक सुरक्षण के लिए दिया जाये। साथ ही, संघीय अदालत से सम्बन्धित रियासतो की अधिकार-सत्ता का स्थायित्व और संघीय कार्यकारिणी या विधान द्वारा उनके आन्तरिक मामलों में हस्तक्षेप से, सुरक्षण दिया जाये। अपने विचार बार-बार न दोहराते हुए, मैं कहता हूँ कि इतना होने पर राजे-रजवाड़ो पर विशेष प्रभाव पड़ेगा और नरेश संघ में शामिल होने, तथा जो भी विधान नया प्रस्तावित होगा, उसे स्वीकार करने को सहमत होंगे। संघ मे एक या दो दर्जन बड़ी रियासतो को शामिल करने मात्र से, बिना बहुसख्यक छोटी रियासतो को साथ लिये, संघ केवल एक स्वाँग बन कर रह जायगा। ऐसी परिस्थितियों में, सच्चे मन से प्रार्थना करूँगा कि इस समस्या पर आप, लार्ड साके, सर सैमुएल होर, आदि पुनर्विचार करेंगे। प्रेषित किया—प्राइम मिनिस्टर, लार्ड साँके और सर सैमुएल होर तथा हिज हाईनेस भूपाल के नवाब और सर मनुभाई मेहता—को।"

लार्ड लिनलिथगो के सभापतित्व मे सयुक्त चुनाव कमेटी ने भारत सरकार के बिल पर यह रिपोर्ट दी कि रियासतो के प्रतिनिधियो की संख्या राज्य-परिषद् या ऊपरी सदन मे अधिक से अधिक १०४ तथा ब्रिटिश भारत के प्रतिनिधियो की सख्या १५६ होगी। निम्न सदन या असेम्बली मे २५० प्रतिनिधि ब्रिटिश भारत के और अधिक से अधिक १२५ प्रतिनिधि रियासतो के रहेगे। इस निर्णय से भारत मे कांग्रेस तथा अन्य राजनीतिक दलो के नेता डर गये। विशेषतया, जब उन्होंने देखा कि संयुक्त चुनाव समिति ने यह राय दी है कि संघीय विधान सभा के ऊपरी तथा निम्न सदनो में रियासतो के प्रतिनिधि शासकों द्वारा मनोनीत होंगे और जनता द्वारा नही चुने जायेंगे, तब उनकी आशंका बढ़ गई। महाराजा धौलपुर, एक और भयानक योजना—राज्य मण्डल—स्थापित करने की, ले आये। उन्होने प्रस्ताव किया कि भारत की सारी रियासतें मिल कर अपना एक राज्य-मण्डल स्थापित करें। फिर वे अपने प्रतिनिधियों सहित, ब्रिटिश भारत मे मतदान द्वारा चुने गए प्रतिनिधियों से

मिली-जुली सरकार बनाने की शर्तें तय करें। बड़ी मुश्किल से, मेरे भारतीय रियासतों के मित्रों और ब्रिटिश भारत के कुछ नेताओं ने, जिनमें सर तेजबहादुर सप्रू और एम० आर० जयकर भी थे, उस योजना को स्थगित करा देने में सफलता पाई। नीचे एक पत्र की नक़ल दी जा रही है जो मिस्टर एम० आर० जयकर ने, मेरी माध्यमिक योजना के बारे में, जिसे भारतीय नेताओं ने बहुत पसन्द किया, मुझे लिखा था :

विन्टर रोड
मलाबार हिल
बम्बई, ३० मार्च १९३२

मेरे प्रिय सरदार,

मुझे आपका २६ ता० का पत्र प्राप्त हुआ।

मुझे यह जान कर बड़ी प्रसन्नता है कि नरेशों के बीच शान्ति स्थापित करने और उनके आपसी मतभेद दूर करने में आपके प्रयत्न सफल हुए। लंदन में, आपने जो माध्यमिक योजना प्रस्तावित की थी, जिसे मैंने तथा सप्रू ने पसन्द किया था, अब पहले की अपेक्षा अधिक समर्थन प्राप्त कर रही है।

शुभाकांक्षाओं सहित।

आपका सस्नेह
एम० आर० जयकर

हिज़ एक्सीलेन्सी
सरदार जरमनीदास
कपूरथला

भारतीय नरेश, गोलमेज़ कान्फ्रेन्स में, तथा सन् १९४७ तक, जब तक उनकी रियासतें भारतीय-संघ में नहीं मिला लीं गईं, हमारे देश के नेताओं के साथ लुका-छिपी का खेल खेलते रहे। हालांकि वे, पहली, दूसरी और तीसरी गोलमेज़ कान्फ्रेन्सों में गये तथा कान्फ्रेन्सों और कमेटियों में वाद-विवाद में भाग भी लिया, पर बड़ौदा नरेश महाराजा सयाजीराव गायकवाड़ और कुछ रियासती मंत्रियों के अलावा कोई रजवाड़ा गम्भीरता से राज्यों की समस्यायें हल करने में प्रयत्नशील न हुआ। राजे-रजवाड़े ब्रिटिश अफ़सरों की मदद से हर एक ऐसी तजवीज़ को, जिससे भारत को आज़ादी मिले, नाकामयाब करने पर कमर बांधे थे। उनकी निजी गोष्ठियों में यही चर्चा चला करती थी। कुछ शासक, महात्मा को "महा तुमा" (अत्यन्त लालची) कहा करते थे। [ग्वा]लियर नरेश महाराजा माधव राव सिंधिया को यह सनक थी कि ग्वालियर के स्टेशन पर जो भी कांग्रेसी यात्री दिखाई देते, उनके सिर से गांधी

टोपी उतरवा लेते थे। उनको बड़ी खुशी होती जिस दिन वे सौ टोपियाँ जमा कर लेते थे। उनकी यह हरकत मैंने अपनी आँखों देखी, जब मैं कपूरथला के महाराजा के साथ बम्बई जा रहा था और ग्वालियर के स्टेशन पर, महाराजा माधव राव हम लोगों से मुलाक़ात करने आये थे। उस वक्त महाराजा और उनके मुसाहबों के हाथों में ढेरों गांधी टोपियाँ थी।

ब्रिटिश राजनीतिज्ञ महात्मा गांधी के प्रति अधिक अनुरक्त न थे, विशेष रूप से इंडिया आफ़िस के लोग उनको पसन्द न करते थे। मैं एक दिन सवेरे सेंट जेम्स पैलेस में, जहाँ संघीय निर्माण कमेटी की मीटिंगें हुआ करती थी, गैलरी में एक सोफ़े पर बैठा हुआ भारत-सचिव के सेक्रेटरी मिस्टर पी० पैट्रिक से बातचीत कर रहा था। अचानक, महात्मा गांधी उधर से निकले, जो मीटिंग में भाग लेने जा रहे थे। मैं उठ खड़ा हुआ और झुक कर उनका अभिवादन किया पर मिस्टर पैट्रिक बैठे ही रहे। बाद में, उन्होंने मुझसे कहा कि महात्मा गांधी बड़े अभिमानी व्यक्ति हैं। मैं उनकी बात से सहमत न हुआ और उनको मैंने समझाया कि गांधी जी का व्यक्तित्व सबसे भिन्न और आदरयोग्य है। मैंने कहा कि गांधी जी ज्यादा बातें नहीं करते, इसीलिए लोग उनके बारे में गलत धारणायें बना लेते हैं। एक दफा का ज़िक्र है, मुझसे मिस्टर एम० ए० जिन्ना कुछ बातचीत कर रहे थे। वे कुछ मायूस नजर आते थे। न उनको राज्य-संघ की परवाह थी और न कांग्रेसी नेताओं को वे अपना दोस्त समझते थे। उन्होंने कहा कि उस समय कांग्रेस के जो नेता लोग थे, उनके होते हुए यह मुमकिन न था कि कोई तजवीज़ ऐसी सोची जाये जिससे कांग्रेस, मुस्लिम लीग तथा अन्य दल इत्तिफ़ाक़ कर सकें। मैंने न माना और जवाब दिया कि हमें कोई बीच का रास्ता खोज निकालना चाहिये। इस पर मिस्टर जिन्ना बोल उठे—"दरमनी, अगर तुम्हारे जैसे लोगों से वास्ता पड़े, तो देश के भविष्य के बारे में हम किसी समझौते पर पहुँच सकते हैं मगर जब मुझे सरदार वल्लभ भाई पटेल जैसे नेताओं से साबिका पड़ा है तो मुझे कम उम्मीद है कि कोई राजनीतिक तजवीज कारगर होगी।"

जिस समय यह निश्चित हो गया कि ब्रिटिश सरकार १५ अगस्त १९४७ को कांग्रेस दल के नेताओं को सारे शासनाधिकार सौंप देगी, तब, भारतीय नरेशों पर मानों वज्रपात हो गया और उन्होंने यथाशक्ति सारे अच्छे-बुरे उपाय कर डाले कि रियासतों का विलयन भारतीय संघ में न होने पाये। मेरी पक्की राय है कि भारतीय नरेशों ने भारत की स्वतन्त्रता के लिए कोई त्याग या बलिदान नहीं किया। जड़-मूल से विनाश की आशंका और रूस के ज़ार तथा फ्रान्स के लुई चौदहवें के इतिहास की याद, साथ ही रियासतों में सार्वजनिक आन्दोलन का सूत्रपात—यही कारण थे, जिनसे मजबूर होकर रियासतों के राजाओं-महाराजाओं को भारतीय संघ में सम्मिलित होना पड़ा। २१ तोपों की सलामी पाने वाली सभी रियासतों ने विलयन के विरोध में

विद्रोह कर दिया। महाराजा त्रावन्कोर ने मुख़ालिफ़त की और महाराजा बड़ौदा ने अपने हाथ से सरदार वल्लभ भाई पटेल, गृह-मंत्री, भारत सरकार को, २ नवम्बर १९४७ को लिखा कि जब तक उनको गुजरात का राजा नहीं बनाया जाता और भारत सरकार उनकी शर्त्तें स्वीकार नहीं कर लेती, तब तक वे कोई सहयोग न देंगे और न जूनागढ़ के नवाब की बग़ावत दबाने में मदद करेंगे। वही समय था, जब भारत सरकार ने महाराजा प्रताप सिंह की मान्यता समाप्त कर, उनके पुत्र फ़तेह सिंह को महाराजा बड़ौदा स्वीकार किया। भारत सरकार का ऐसा सख़्त रवैया देख कर राजे-महाराजे बड़े विनम्र देश-सेवकों जैसा व्यवहार करने लगे। जो राज्य-संघ, उन्होंने रियासतों का विलयन न होने देने के लिए बनाया था, वह भंग कर दिया गया। भारत सरकार का बड़ौदा नरेश के मामले में सख़्त क़दम उठाना भारतीय नरेशों के लिए एक चेतावनी बन गया और वे डरने लग गये। धीरे-धीरे उन्होंने समझ लिया कि अब भारत सरकार से मिल जाने और उसका संरक्षण प्राप्त करने के सिवाय उनके आगे कोई चारा नहीं। वे यह भी सोचने लगे कि शासक बने रह कर बाग़ी रियाया की इच्छा पर जीने की बनिस्बत भारत सरकार की छत्रछाया में रहना कहीं बेहतर होगा। आगे इस विषय में कुछ बताने के पहले, मैं यह कहना चाहता हूँ कि त्रावन्कोर के महाराजा ने ११ जून को अपनी रियासत के स्वतन्त्र होने का ऐलान कर दिया था और एक व्यापारी प्रतितिधि दल अपने यहाँ से पाकिस्तान भेजना मंजूर कर लिया था। केवल त्रावन्कोर और बड़ौदा ही ऐसी रियासतें न थीं जिन्होंने बग़ावत की, बल्कि हिज़ हाइनेस महाराजा जोधपुर और बहुत सी छोटी-छोटी रियासतों के शासक, बड़े ध्यान से यह देख रहे थे कि बड़ी रियासतों के विद्रोह का नतीजा क्या होता है, जिसके मुताबिक़ वे अपने आगे की कार्रवाई तय करें। कश्मीर के महाराजा हरीसिंह ने बड़ा लम्बा समय लिया, यह तय करने में कि वे भारत से मिलें या पाकिस्तान से, अथवा स्वतन्त्र रहें। लेकिन जब हमलावरों से उनकी जान ख़तरे में पड़ गई और वे लोग श्रीनगर तक चढ़ आये, तब उन्होंने भारत सरकार से सहायता की याचना की।

भारत सरकार ने फ़ौरन मदद भेजी, तब बड़ी कठिनाई से स्थिति क़ाबू में आ सकी। महाराजा मयूरभंज अपनी रियासत के विलयन का मसला यह कह कर टालते जाते थे, कि उनके यहाँ पूर्ण उत्तरदायित्व की शासन-व्यवस्था है, इसलिए अपने मन्त्रियों से सलाह करना अत्यन्त आवश्यक है। अन्त में, रियासत का ख़ात्मा नज़दीक देख कर, ९ नवम्बर १९४८ को उन्होंने विलयन-पत्र पर हस्ताक्षर किये। दक्षिण और गुजरात की रियासतों ने भी काफ़ी अड़चनें खड़ी कीं। महाराजा इन्दौर भी किसी से पीछे न रहे। भारतीय फ़ौज का हैदराबाद पर हमला सभी को मालूम है, अतएव उसे दोहराने की ज़रूरत नहीं। जूनागढ़ के शासक ने स्वेच्छा से भारतीय संघ में शामिल होना स्वीकार

नहीं किया। अब भूपाल के नवाब का हाल सुनिये। शुरू से ही, वे देश की धारा के सामने वे कोई अड़चनें डाले जा रहे थे खास तौर पर उस वक्त से, जब सन् १९४४ में वे चैम्बर आफ़ प्रिन्सेज़ के चैन्सलर चुने गये थे। वे हमेशा एक तीसरी ताकत तैयार करने की कोशिश में रहे। ब्रिटिश सरकार के राजनैतिक विभाग से बराबर वे मांग करते रहे कि भारत की भावी सर्वधानिक व्यवस्था चाहे जैसी हो, मगर रियासतों की स्थिति में किसी प्रकार का हेर-फेर न होने पायेगा, इस सुरक्षा की गारन्टी भारतीय नरेशों को दी जानी चाहिए। १८ सितम्बर, १९४४ को चैम्बर की स्थायी समिति की बैठक में चैन्सलर ने अपने इरादे की सूचना दी कि आगामी दिसम्बर में होने वाले अधिवेशन में वे नीचे लिखा प्रस्ताव रखेंगे।

"यह चैम्बर आफ़ प्रिन्सेज़ (राजाओं की समिति) जरूरी समझता है, कि बहुत ही साफ़ शब्दों में बता दिया जाये कि ब्रिटिश सत्ता के साथ जो रियासतों के सम्बन्ध रहे हैं तथा हैं, और ब्रिटिश सत्ता को रियासतों में जो अधिकार प्राप्त है, वे सम्बन्धित रियासतों के सलाह-मशविरे बिना किसी तीसरे दल को या सत्ता को किसी भी हालत में कदापि हस्तान्तरित नहीं किये जा सकते हैं। यह चैम्बर, ब्रिटिश सत्ता के प्रतिनिधि से प्रार्थना करता है कि वे सम्राट् की सरकार को सूचित करें कि शाही ऐलानों द्वारा तथा हाल में जब सम्राट की सरकार द्वारा दिये गये आश्वासनों में यह कहा जा चुका है कि रियासतों के साथ की हुई सन्धियाँ, सनदें, अधिकार-पत्र, तथा आन्तरिक स्वतन्त्रता सम्बन्धी समझौते कायम रखना और उनके स्थायी रहने की व्यवस्था करना, सम्राट् की सरकार की निश्चित नीति है, तब ऐसी दशा में, सम्राट् और रियासतों के सम्बन्धों में फेर-बदल करने तथा सम्राट् के अन्य दलों के साथ किये गये समझौतों को, बिना रियासतों की स्वीकृति लिये, रियासतों पर लागू करने की प्रवृत्ति ने रियासतों में गम्भीर आशंका और चिन्ता की स्थिति उत्पन्न कर दी है जिसका शीघ्र निराकरण आवश्यक है।"

भूपाल के नवाब ने अपना विश्वास प्रकट किया कि सम्राट् की सरकार की यह इच्छा कभी न रही होगी कि रियासतों को—"लावारिस जमीन की तरह छोड़ दे। हम लड़े हैं और अधिकार पाने के लिए हमने कुर्बानियाँ की हैं। हम उस अधिकार को कदापि न छोड़ेंगे, यह हमारा निश्चय है। अगर कांग्रेस हमें नीचा दिखाना और लूटना चाहती है, तो हम लड़ेंगे।" सच तो यह है कि लगभग सभी रियासतों ने विद्रोह करने और अपने को स्वतन्त्र घोषित करने की पूरी तैयारियाँ कर रखी थीं। अगर परिस्थिति को संभालने के लिए भारत के लौह पुरुष, सरदार वल्लभ भाई पटेल, जिनको लार्ड माउंटबैटन "अग्ररांट"—यानी बाहर से सख्त और दिल के नरम—न होते, तो न

जाने क्या होता। सरदार पटेल के सेक्रेटरी, खास तौर से श्री वी० पी० मेनन् और वी० शंकर ने, बड़े कौशल से भारतीय शासकों और रियासतों को भारतीय सत्ता के अधीन लाने की नीति को सफल बनाया। अगर ऐसा न होता तो हमारा देश खण्ड-खण्ड होकर ६०० स्वतन्त्र इकाइयों में बँट गया होता।

आज, हमारे अभिमान का विषय है कि हमारे इतिहास में सबसे पहली बार केवल एक केन्द्रीय सरकार का आदेशपत्र हिमालय से लेकर कन्याकुमारी तक चलता है।

६५. सलामियाँ और ख़िताब

ब्रिटिश सरकार ने भारतीय रियासतों के शासकों को अपनी मुट्ठी में रखने के लिए तमाम ललचानेवाली मगर चालबाज़ी की हिकमतें जारी कर रखी थीं। इसमें बड़ी ख़ास हिकमतें थीं, तोपों की सलामियाँ, ख़िताब व तमगे देना, रियासतों के इन्तज़ाम में दख़ल न देना और शासकों को रियासत के खज़ाने के बारे में खुली छूट देना। राजे-महाराजे बिना प्रजा की सम्मति के हुकूमत चलाने, अपनी सनक के मुताबिक फाँसी तथा ताज़िन्दगी कैद की सज़ायें देने और रियासत की दौलत मन चाहे ढंग से खर्च करते थे। बीसवीं सदी की शुरूआत से ही राजाओं-महाराजाओं को बेइन्तिहा अधिकार दे दिये गये थे कि अपनी मर्ज़ी के मुताबिक अपनी रियासत में हुकूमत चलायें। कुछ महाराजा लोग, फ़्रान्स के बादशाह लुई चौदहवें, की तरह ऐलान कर बैठे थे—'मैं ही रियासत हूँ।'

पैरिस में, फ़्रेन्च सरकार के मिनिस्टरों और अमीर-उमरा से बातचीत करते हुए मैंने कपूरथला के महाराजा जगतजीत सिंह को कहते सुना कि रियासत उनकी अपनी थी और कपूरथला राज्य के वे एकछत्र सम्राट् थे। राजाओं महाराजाओं को पूरा प्रभुत्व, अख्तियारात और सुविधायें हासिल थी जो पक्के सुलहनामों के ज़रिये इंग्लैंड के बादशाह ने दे रखी थीं। सुलहनामों की शर्तों पर बादशाह कायम थे और उनकी सुरक्षा के ज़िम्मेदार थे। चैम्बर ऑफ प्रिन्सेज़ के चैन्सलर ने एक बार सार्वजनिक भाषण में कहा भी था—"कोई ऐसी सत्ता नहीं जो कभी भी हमारे अधिकारों में दख़ल दे सके या उनके बारे में सवाल उठा सके।"

इंग्लैंड की रानी और भारत की सम्राज्ञी महारानी विक्टोरिया ने सन् १८६१ के अपने ऐलान में कहा था कि रियासतों के शासकों को व्यक्तिगत और राजनैतिक, तोपों की सलामियाँ दी जाया करेंगी। सलामियों की संख्या ९ से २१ तक थी। इंग्लैंड के राजा और रानी को, जब वे खुद मौजूद हों, १०१ सलामियाँ दी जाती थीं। जन्मदिन ताजपोशी वगैरह के मौक़ों पर शाही सलामी १०१ तोपों की दी जाती थी। रानी के और राजमाता के जन्मदिनों पर तथा घोषणा के दिन भी ३१ सलामियाँ दिये जाने का दस्तूर था। जो महाराजा २१ तोपों की सलामी पाते थे, वे हैदराबाद के निज़ाम, मैसूर, बड़ौदा, कश्मीर, ट्रावनकोर और ग्वालियर के महाराजा। इन्दौर के महाराजा को १९ तोपों की सलामी थी पर अपनी रियासत में वे २१ तोपों की सलामी ले सकते थे। उदयपुर और

जयपुर के महाराजाओं को भी ऐसा ही अधिकार था। इसके बाद १७ तोपों की सलामी पाने वाले जोधपुर, भरतपुर, कोटा, टोंक, बूँदी, करौली और पटियाला के महाराजा लोग थे। जिन महाराजाओं को १५ तोपों की सलामी दी जाती थी, वे थे—अलवर, दतिया, कपूरथला और नाभा। जावरा के नवाब को १३ तोपों की सलामी थी। इनके अलावा कई दर्जन शासक ऐसे थे जिनको १३, ११ और ६ तोपों की सलामी दी जाती थी। साथ ही, लगभग २०० शासक ऐसे थे जिनको तोपों की सलामी नहीं मिलती थी।

सलामियाँ उस वक़्त दागी जाती थीं जब कोई राजा-महाराजा वायसराय से मुलाक़ात करने आता था। रियासतों में, शासक या युवराज के जन्मदिन अथवा रियासती दरबार के मौक़ों पर सलामी का रिवाज़ था। हर दफ़ा जब भारत के वायसराय किसी महाराजा के मेहमान बन कर उसकी रियासत में जाते, तब महाराजा को उनसे भेंट करने जाना पड़ता था, भले ही वे उसी महल में ठहरे क्यों न हों। वायसराय को भी इसी तरह महाराजा से मुलाक़ात के लिए जाना पड़ता था। इन दोनों मौक़ों पर सलामियाँ दागी जाती थीं—३१ वायसराय के लिए और राजनीतिक वरीयता के अनुसार २१, १६, १५, ११ और ६, रियासत के शासक के लिए। ये सलामियाँ शासकों के सम्मान के लिए थीं और उनका क्रम वरीयता के अनुसार रखा जाता था हालाँकि वायसराय अपनी मर्ज़ी से कभी उसमें उलट-फेर भी कर देते थे। २१ तोपों की सलामी पाने वाले शासकों को विशेष अधिकार प्राप्त थे और तोपों की सलामी के अनुसार अधिकारों की मात्रा भी अन्य शासकों के विषय में क्रम से कम होती जाती थी। जब वायसराय रियासत में मुलाक़ात करने आते तो २१ तोपों की सलामी पाने वाला शासक महल की बैठक के दर्वाज़े पर आ कर उनका स्वागत करता, जब कि ११ तोपों की सलामी पाने वाले शासक को महल के बाहर बरामदे में मोटर या बग्घी से उतरते वक़्त वायसराय का स्वागत करना पड़ता था। यह अन्तर उन सभी समारोहों और जलसों में दिखाई पड़ता जिनमें वायसराय शरीक़ होते थे। ६ तोपों की सलामी पाने वाले राजे-महाराजाओं को कई मील आगे जा कर वायसराय या उनके प्रतिनिधि का स्वागत करना पड़ता था। छोटी रियासतों के शासकों को अपने राज्य की सरहद पर जा कर वायसराय से भेंट करके उन्हें पूरी सुरक्षा से अपने साथ महल तक लाना ज़रूरी होता था। फ़ौजी सलामी और रेलवे स्टेशनों पर राजा-महाराजाओं के आने-जाने पर सुर्ख़ कालीन बिछाने के सम्बन्ध में भी कुछ अन्तर रखा गया था। इन्हीं सलामियों के मुताबिक़ राजकीय दरबारों और ...ों तथा दावतों में, वायसराय के यहाँ और रियासतों में, भारतीय नरेशों ...ने का इन्तजाम किया जाता था।

...े याद है, कि १८ अप्रैल १९३६ को, भारतीय नरेशों ने जब लार्ड ...ी विलिंग्डन को नई दिल्ली के इम्पीरियल होटल में दावत दी थी, तब

बैठने की व्यवस्था पर झगड़े की नौबत आ गई थी। चैम्बर ऑफ प्रिन्सेज़ के चैन्सलर ने उस दावत का इन्तज़ाम मेरे सिपुर्द कर रखा था। इम्पीरियल होटल में दावत से कई हफ्ते पहले ठहर कर मैंने दावत मे बैठने की व्यवस्था का एक नक्शा तैयार किया। क्योंकि दस्तूर के मुताबिक उस नक्शे पर वायसराय की मंज़ूरी लेना जरूरी था। मैंने मर्यादा और प्रतिष्ठा के अनुसार, सब शासकों को वायसराय की कुर्सी के पास और दूर, एक क्रम मे बिठाने का इन्तज़ाम रखा था। मैंने पटियाला महाराजा को बीकानेर महाराजा के मुकाबले वरीयता दी थी हालांकि दोनो नरेशो को १६ तोपों की सलामी मिलती थी। महाराजा पटियाला उन दिनों चैम्बर ऑफ प्रिन्सेज़ के चैन्सलर थे। बीकानेर के महाराजा नक्शा देखते ही बौखला उठे और सीधे वायसराय के पास जा पहुँचे। मुझको और पटियाला नरेश भूपेन्दर सिंह को वायसराय ने बुला भेजा। काफी बहस-मुबाहसे के बाद वायसराय ने जब देखा कि दोनो महाराजा अपनी-अपनी बात पर अड़े हैं और आपस मे समझौता नहीं करेंगे, तब उन्होने तय कर दिया कि खास मेज पर इनको जगह न दे कर बगल की मेज़ों पर बिठाया जायगा। इस बात से दोनों महाराजाओं को बड़ी निराशा और असंतोष हुआ। इस घटना के बाद से महाराजा बीकानेर के साथ मेरे ताल्लुकात में फर्क आ गया पर महाराजा पटियाला ने मुझे शाबाशी दी। रियासतों के शासकों को तोपों की सलामियाँ बढ़वाने का खब्त रहता था और हरदम वे इसी कोशिश मे मुब्तिला रहते थे। वायसराय और पोलीटिकल विभाग के अफ़सरान इसी कम-ज़ोरी की वजह से उन पर हावी रहते थे। जब कभी, कोई शासक दावतें देकर, अपने मे बुला कर या रिश्वतें देकर, राजनीतिक विभाग के अफ़सरों को खुश कर लेता था, तभी उसकी सलामियों की तादाद बढ़ा दी जाती थी। कभी-कभी ऐसे मौके आते कि किसी शासक की सलामियाँ बढ़ाने से सारे शासकों की मर्यादा पर असर पड़ने लगता, तब राजनीतिक विभाग के अफसर उसकी 'व्यक्तिगत' या 'निजी' सलामियाँ बढ़ा देते, जिससे उसका शासकीय स्तर जहाँ का तहाँ रहता, पर उसे संतोष हो जाता।

यही सलामियाँ, जिनसे राजे-महाराजे अपनी शान समझते थे और जिन पर अभिमान करते थे, उनके लिए काँटे बन गई और इन्होंने गोलमेज़ कान्फ्रेन्स तथा संघीय विधान-मंडल के ढांचे को धराशायी कर दिया।

जब पाँच बड़ी रियासतों ने, जिनको २१ तोपों की सलामी थी, संघीय निर्माण विधान-मंडल मे, अपना प्रतिनिधित्व बढ़ाये जाने की माँग सामने रखी, तब मझोली और छोटी रियासतें उनको कोसने लगीं। कम सलामियाँ पाने वाले शासकों ने जोरदार शब्दों में विरोध किया कि विधान-मंडल में विशेष सुविधायें प्राप्त करने का उन बड़ी रियासतों को क्या अधिकार है। हर एक शासक जब अपनी रियासत मे समान रूप से प्रभुत्व रखता है, समान अधिकार से शासन करता है, तब यह तोपों की सलामी का आधार परम्परा मनमाना-

जनक और भेदभाव पैदा करनेवाला है और इसे अमान्य घोषित कर देना ही उचित होगा।

कार्यवाही के संक्षिप्त विवरण में, महाराजा बीकानेर ने, भारतीय रियासतों के अखिल भारतीय संघीय विधान-मंडल में प्रतिनिधित्व के प्रश्न पर कहा :

सलामियाँ

यह मानते हुए कि सलामियाँ, किसी हद तक, कुछ मामलों में, सांकेतिक मार्ग-प्रदर्शन करती हैं, फिर भी, उनमें स्पष्ट रूप में अप्रासंगिक विषमतायें हैं जो सरकारी तौर पर स्वीकार की गई हैं। २४ सितम्बर १९३१ को, सांके कमेटी में इसीलिए मैंने उक्त विचार का विशद रूप से स्पष्टीकरण किया था। (देखिये पृष्ठ १३०, संघीय निर्माण कमेटी की कार्यवाही, १९३१), और मैं सोचता हूँ कि इतना पर्याप्त होगा यदि मैं उस विषय में अपने वक्तव्य का कुछ अंश उद्धृत करूँ :

"अनेक रियासतों ने मुझ से कई बार कहा और अनुरोध किया है कि सभी अवसरों पर मैं साफ़ तौर से जाहिर कर दूँ कि केवल सलामियों को ही संघीय विधान-मंडल में व्यक्तिगत प्रवेश-योग्यता की एकमात्र आवश्यक कसौटी—जो वे वास्तव में नहीं हैं—न बनाया जाये। मैं यहाँ पर भूतपूर्व वायसराय लार्ड चेम्सफोर्ड के सरकारी भाषण से दो संक्षिप्त उद्धरण देना चाहता हूँ। ऐसा ही सवाल, प्रवेश-योग्यता का, चैम्बर ऑफ़ प्रिन्सेज की सदस्यता के बारे में उठा था। संस्था का उद्घाटन होनेवाला था और उसके संविधान का मसौदा विचाराधीन था। रजवाड़ों की कान्फ़ेन्स में, २० जनवरी १९१९ को भाषण देते हुए वायसराय ने कहा था कि उनकी तथा भारत सचिव मिस्टर माण्टेग्यू की राय में—मैं उन्हीं के शब्द लिख रहा हूँ—'सलामियों का पूरा सवाल बड़ी सावधानी से समझने और जाँचने की जरूरत है क्योंकि उसमें ज़रूर विषमतायें हैं। इसीलिए, हमने तय किया कि सलामियों की फ़ेहरिस्त, जैसी बनी हुई है, उसकी बुनियाद पर, ज्यादा प्रभावशाली रियासतों और बाक़ी रियासतों में कोई मौलिक अन्तर मानना बड़ी नासमझी होगी।'

फिर ३ नवम्बर १९१९ को रजवाड़ों की कान्फ़ेन्स में वायसराय ने उसी प्रश्न के सन्दर्भ में भाषण देते हुए कहा—'आप सभी राजा-महाराजाओं को मेरे पिछले वक्तव्य की याद होगी जिसमें मैंने कहा था कि मैं और मिस्टर माण्टेग्यू, दोनों अनुभव करते हैं कि कुछ विषमताओं के कारण सलामियों का प्रश्न विचारणीय और जांच करने योग्य है। अगर वह सिद्धान्त, जिसका मैं पक्ष करता हूँ, रियासतों के वर्गीकरण के लिए अपना लिया जाये, तो यह और भी वांछनीय हो जायगा कि शीघ्र से शीघ्र सलामियों के प्रश्न की जांच की

बनेगा तो वे भी ऐसे ही सम्मान के प्रार्थी होंगे। चारों तरफ से प्रार्थना-पत्र आने लगेंगे तब भारत सरकार को बड़ी परेशानी होगी। मैंने कहा कि मेरा मामला सब से अलग है और खास तौर पर विचार करने योग्य क्योंकि मैंने पूरे ४० वर्ष तक बड़ी योग्यता से अपनी रियासत का शासन चलाया है। इस बात की सत्यता उन्होंने स्वीकार की। फिर भी मामला जहाँ का तहाँ है और वायसराय मेरी सिफारिश, राजनीतिक विभाग की अड़चनें दृष्टि में रख कर, करेंगे या नहीं करेंगे, कुछ कहा नहीं जा सकेगा। मैं दो दिन दिल्ली ठहरा। वायसराय बड़ी शिष्टता और मिलनसारी से पेश आये और कहा कि मामले पर वे पुन: विचार करेंगे।

इस मसले का एक ही हल नजर आता है कि हिज मैजेस्टी की तरफ से यदि ऐसी इच्छा प्रकट की जाये तो मामला फौरन तय हो सकता है और भारत सरकार के राजनीतिक विभाग को भी कोई एतराज न होगा। परन्तु जैसा कि आप जानते हैं, नौकरशाही कभी किसी को विशेष मान्यता देने की इच्छा नहीं करती।

अगर आप ऐसा मुमकिन समझते हों, तो किसी तरह बड़ी सावधानी से विग्राम या सर गाडफ़े फावय से बातचीत करके हिज मैजेस्टी की इच्छा वायसराय को सूचित करा दें जिससे मामला तुरन्त तय हो जायगा। यह काम मुश्किल है पर मुमकिन हो सकता है।

आप चाहें तो यह पत्र एच० एच० आगा खाँ को दिखा दें और पूछें कि उनकी राय में, उस अड़चन के बावजूद, जो मैं पहले समझा चुका हूँ, हमें किस तरीक़े से कामयाबी हासिल हो सकती है। साथ ही, यह भी मालूम करें कि क्या वे इस मसले में दरबार के कुछ लोगों पर अपना ज़ोर डाल सकते हैं।

मुझे अभी आपके तार से पता चला कि आप कान्फ्रेन्स के उद्घाटन और वायसराय की दावत में शरीक हुए। इससे मुझे बड़ा सन्तोष हुआ।

मैं आशा करता हूँ कि आप कुशल से होंगे।

—जगतजीतसिंह एम०

कपूरथला नरेश हिज हाईनेस महाराजा जगतजीत सिंह के स्मृति-पत्र की नक़ल

मैं सन् १८७२ में कपूरथला के महाराजा की हैसियत से अपने पिता के बाद राजगद्दी पर बैठा। तभी से, पूरे शासनाधिकार ग्रहण करके मैं ब्रिटिश साम्राज्य की सेवा सच्चाई और निष्ठा के साथ करता रहा हूँ। जरूरत के वक़्त मैं अपनी रियासत के समस्त साधन ब्रिटिश सरकार की सेवा में प्रस्तुत करने में पीछे [illegible] हूँ। साम्राज्य की जो सेवायें मैंने की हैं, उनका उल्लेख [illegible] ओं और भारत सचिवों के भाषणों

काग़ज़ात में मौजूद है और उनके उपलक्ष्य में मुझे जी० सी० एस० आई०, जी० सी० आई० ई० और जी० बी० ई० के ख़िताबात से सम्मानित किया गया है।

मैं पंजाब के राजे-रजवाड़ों में अग्रणी हूँ और विगत ४० वर्षों में मैंने साम्राज्य की जो सेवायें की हैं, वे इंग्लैंड और भारत में, सब लोगों पर भली-भांति विदित हैं।

महायुद्ध में, लड़ाई के कई मोर्चों पर, कपूरथला की सेनाओं ने युद्ध किया है जिसका उल्लेख कई बार सरकारी ख़रीतों में किया जा चुका है। स्वर्गीय फ़ील्ड मार्शल लार्ड रालिन्सन और फ़ील्ड मार्शल सर विलियम वर्डउड, भारत के कमाण्डर-इन-चीफ़ ने मेरी सेनाओं की सेवाओं को, जो अफ़ग़ानिस्तान के मोर्चे पर, पिछले महायुद्ध में ईस्ट अफ्रीका तथा मेसोपोटामिया में की गई, सरकारी तौर पर स्वीकार किया है। मेरे एक पुत्र ने फ्रांस के युद्ध में सक्रिय रूप से भाग लिया है।

जेनेवा में, लीग ऑफ़ नेशन्स के तीन सत्रों में मैंने भारत का प्रतिनिधित्व किया है और ब्रिटिश सरकार ने मेरे तत्सम्बन्धी कार्य की विशद रूप से सराहना की है।

मुझे स्वर्गीया हर मैजेस्टी रानी विक्टोरिया के सम्मुख उपस्थित होने का सम्मान तथा तीन बार विण्डज़र कैसेल में हर मैजेस्टी का मेहमान बनने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है। हिज़ मैजेस्टी राजा एडवर्ड मेरी बड़ी प्रशंसा करते थे और मैं, वर्तमान सम्राट् को विश्वास दिलाता हूँ कि मैं उनके तथा उनके साम्राज्य के प्रति पूर्णरूप से वफ़ादार, निष्ठावान और आज्ञाकारी सदैव बना रहूँगा।

हिज़ रायल हाईनेस प्रिंस ऑफ़ वेल्स जब भारत आये थे, तब कपूरथला में उनके स्वागत-सत्कार का सौभाग्य मुझे प्राप्त हुआ था।

अब मेरी हार्दिक इच्छा यह है कि हिज़ मैजेस्टी सम्राट् उदारतापूर्वक मुझे जी० सी० वी० ओ० का अलंकरण प्रदान करने की कृपा करें क्योंकि यह उच्च सम्मान रानी विक्टोरिया के यशस्वी नाम से सम्बन्धित है तथा सम्राट् के निजी अनुग्रह का सूचक-चिह्न है, जिनके प्रति मैं, मेरी रियासत और मेरी प्रजा पूरे तौर से अनुरक्त और विनीत है। इस सम्मान के प्राप्त करने की मेरी इच्छा इस कारण से और भी बलवती है, कि [illegible] कई भारतीय नरेश, जो मुझ से आ[illegible] जिनकी साम्रा[illegible] मेरी सेवाओं के मुका[illegible] पहले इस [illegible] चुके हैं।

[illegible] के महाराजा

[illegible]

रखते थे। इस भाँति पोलीटिकल विभाग और वायसराय, दोनों ही उनकी सनक और मूर्खतापूर्ण हरकतों का लाभ उठाते थे।

मैंने एक पिछले परिच्छेद में हुंजा और नागर के मीर लोगों की आपसी प्रतिस्पर्धा का वर्णन किया है जिन्होंने भारत के वायसराय को आवेदनपत्र भेजे थे कि उनको काफी सम्मान नहीं दिया जाता। वे एक दूसरे पर आरोप लगाते थे कि शिकायतें करके उच्च सम्मान प्राप्त करने की कोशिशें की गई थीं। एक शासक को के० वी० ई० का खिताब और दूसरे को के० सी० आई० ई० दिया गया था जिस पर उनका झगड़ा हुआ, फिर गिलगिट के कुशल गवर्नर पंडित रामरतन ने बड़ी शान्तिपूर्वक वह झगड़ा तय कराया, इसका वर्णन उस पिछले परिच्छेद में हम कर चुके हैं।

खिताबों के साथ जो भूषा-चिह्न या अलंकरण मिलते थे, उनको कुछ राजे-महाराजे लाखों रुपये की लागत के हीरे-जवाहरात जड़वा कर बनवा लेते थे। जिनको नहीं मिलते थे, वे अपने आप विचित्र प्रकार के अलंकरण बनवा कर राजसी पोशाक पर धारण किया करते थे। मुझे याद है कि सुकेत के राजा साहब ने, जिनको कोई खिताब या भूषा-चिह्न नहीं प्राप्त हुआ था, हीरे जड़वा कर एक छोटी घड़ी तैयार करवाई, जिसे वे सोने की किनारीवाली पगड़ी में सामने की ओर कलगी के साथ पहने रहते थे। जो उनकी पगड़ी में घड़ी लगाये देखता, उसे ही हँसी आ जाती मगर राजा साहब अपने उस अलंकरण को पहन कर प्रसन्न रहते थे। जब कभी वे मेरे सामने पड़ जाते तो मुझे ठीक समय का पता उनकी पगड़ी में लगी चमकती-दमकती रत्नजटित घड़ी से चल जाता था और तब मुझे बड़ी खुशी होती थी।

ऐसा ही एक दिलचस्प मामला एक बहुत बड़े नरेश, ग्वालियर के महाराजा माधव राव का है जिनको अपने बेटे और बेटी के नाम इंग्लैंड के राजा और रानी के नामों पर रखने पड़े। महाराजा माधव राव बड़े पुरमज़ाक और हँसोड़ व्यक्ति थे और हर साल अप्रैल की पहली तारीख को अप्रैल-फूल (मूर्ख) दिवस मनाया करते थे। उन्होंने क़रीब १०० मीटर लम्बी चाँदी की नकली रेलवे लाइन बनवाई थी जो महल के डाईनिंग-हॉल में दावत की मेज पर बिछाई गई थी। वह मेज इतनी बड़ी थी कि उस पर २०० मेहमान एक साथ बैठ कर खाना खा सकते थे। उस लाइन के ऊपर एक छोटी-सी चाँदी की ट्रेन चला करती थी जो पास में बावर्चीखाने तक जाती थी। उस ट्रेन पर खाने-पीने की चीज़ें और शराब रख दी जाती थी। मेज के एक सिरे पर बैठ कर महाराजा उस ट्रेन को इच्छानुसार संचालित करते रहते थे। जब वे चाहते, मेहमानों के सामने खाने-पीने का सामान उतारने के लिए ट्रेन को रोक देते थे। जब वे चाहते, एक बटन दबा देते और ट्रेन का इंजन सीटी देने लगता। ज्यादातर ट्रेन बड़े कायदे से चलती रहती थी और महाराजा को उसके जरिये अपने मेहमानों का दिल बहल... लगता था। जब बादशाह जार्ज पंचम और

रानी मेरी सरकारी तौर पर ग्वालियर पहुँचे और महाराजा के मेहमान बने तो दावत के मौक़े पर मेहमानों को मेज़ पर खाने की वस्तुएँ और शराब पहुँचाने के लिए वही ट्रेन इस्तेमाल की गई। बदक़िस्मती से, दावत की उसी रात को, ऐन बादशाह के सामने, ट्रेन लाइन पर से उतर गई। उस पर लदा हुआ खाने का सामान और शराब बादशाह की गोद में जा गिरी जो पूरी शाही पोशाक पहने और तमग़े वग़ैरह लगाये बैठे हुए थे। इस दुर्घटना पर उनको बड़ा गुस्सा आया और उन्होंने इसको अपना व्यक्तिगत अपमान समझा। जब महाराजा ने अपने दो बच्चों के नाम बादशाह और रानी के नामों पर रखे, तब उनको माफ़ी दी गई। सच तो यह था कि महाराजा का इरादा बादशाह और रानी के प्रति अशिष्ट व्यवहार का कदापि न था जिनकी खातिरदारी और आवभगत उन्होंने धूमधाम से की थी। वे तो ट्रेन के ज़रिये उनका मनोरंजन करना चाहते थे मगर इत्तिफ़ाक़ से दुर्घटना हो जाने पर महाराजा को बड़ी शर्मिन्दगी हासिल हुई।

फिर भी, उदयपुर के महाराजा फ़तेहसिंह जैसे, राजस्थान में कई शासक हुए जिनको अपने स्वाभिमान की रक्षा के लिए ब्रिटिश आधिपत्य से संघर्ष करना पड़ा। महाराजा बड़े धार्मिक और कर्मठ व्यक्ति थे और राजपूतों की मर्यादा के पोषक थे। इसी कारण ब्रिटेन की सरकार की आज्ञा के आगे वे कभी झुके नहीं। उनको अपने पक्ष में मिलाने के लिए इंग्लैंड के राजा ने, सबसे बड़ा सम्मान, जो किसी भारतीय नरेश को दिया जा सकता था—जी० सी० एस० आई० का खिताब प्रदान किया। जब ब्रिटिश रेज़ीडेन्ट ने महाराजा के पास जाकर खिताब से सम्बन्धित कामदार पटका और जवाहरात जड़ा सितारा उनको भेंट किया, तब महाराजा ने उससे कहा कि ऐसा पटका तो उनके यहाँ के चपड़ासी बाँधा करते हैं और इंग्लैंड के राजा उनको चपड़ासियों की श्रेणी में गिनें, यह बात उनकी खुशी की नहीं है। परन्तु, अपने बेटे भूपाल सिंह के समझाने पर महाराजा ने वे सम्मान-चिह्न स्वीकार कर लिये। बाद में, वह पटका और सितारा अपने प्रिय घोड़े की गर्दन में बँधवा दिया।

खिताबों और तमग़ों का यह परिच्छेद समाप्त करने से पहले, मैं यह बतलाना चाहता हूँ कि लन्दन में, ज़्यादातर मेरा वक़्त—जब कभी राजा-महाराजाओं द्वारा राजनीतिक कार्य-वश मैं भेजा जाता था—इंडिया आफ़िस में, या मार्लबरो हाउस, या क्लाइव विग्राम के आफ़िस में, जिनसे मुझे नरेशों की ओर से प्रार्थना करनी पड़ती थी कि ऐस्कॉट की घुड़दौड़ देखने शाही बॉक्स में बैठने, अथवा शाही घेरे में बैठ कर विम्बलडन की विश्व टेनिस प्रतियोगिता देखने के लिए, अमुक-अमुक महाराजाओं को बादशाह की ओर से निमंत्रण भिजवाने की चेष्टा करें। सभी जानते हैं कि ऐस्कॉट की घुड़दौड़ बहुत अच्छी होती है और उसे देखने जाना फ़ैशन बन गया है। जो कोई शाही बॉक्स में बैठने का निमंत्रण पाता था, वह राज-दम्पति के साथ दिन का भोजन भी करता था। राजे-रजवाड़े इसे बड़े

सम्मान की बात समझते थे और निमंत्रण पाने की कोशिशें किया करते थे। सर क्लाइव विग्राम, मेरी बात मान कर महाराजाओं को आमन्त्रित कर लेते थे।

अलावा इसके, बकिंघम पैलेस में, जलसे और उत्सव प्रायः हुआ करते थे और विशिष्ट अतिथियों के सम्मान मे दावतें भी दी जाती थी जिनमे सर क्लाइव विग्राम तथा लार्ड चैम्बरलेन को राजी करके उन अवसरों पर, कायदे के खिलाफ भी, महाराजाओ को निमन्त्रण भिजवाने के प्रयास मे मुझे काफी समय देना पड़ता था। बादशाह की रजत जुबिली तथा वैसे ही अन्य मौकों पर दावतों मे शरीक होने के निमन्त्रण राजा-महाराजाओं को सरकारी तौर पर भेजे जाते थे। इग्लैंड के प्राइम मिनिस्टर के साथ भोजन करना भी सम्मान की बात समझी जाती थी और रजवाड़े इसके लिए भी लालायित रहते थे। एक दफ़ा जब इंग्लैंड के प्रधान मन्त्री मिस्टर रैम्जे मैक्डानल्ड ने मुझे १०, डाउनिंग स्ट्रीट में निजी तौर पर खाने पर बुलाया, तब महाराजा लोगो को बड़ा आश्चर्य हुआ। इस सम्मान को प्राप्त करने पर कपूरथला नरेश महाराजा जगतजीत सिंह तथा अन्य नरेशों ने मुझे बधाइयों के तार भेजे।

तीन

एक युग का अन्त

६६. इतिहास और राजनीतिक पटल

इतिहास अनियम से प्रारम्भ होता है—

स्वतन्त्रता के पहले, भारत मे लगभग ६०० रियासतें थी, जहाँ महाराजाओं, नवाबों, राजाओं और सरदारों की सीधी हुकूमत थी। कुछ रियासतें तो इतनी बड़ी थी जितने फ्रान्स और इंग्लैण्ड जैसे देश हैं, कुछ इतनी छोटी थी कि उनको "नाखूनी राज्य" अथवा "बौनी रियासतें"—जिनका क्षेत्रफल एक वर्ग मील से भी कम था—कहा जा सकता है। ये सब छोटी-बड़ी रियासतें, प्रगतिशील और प्राचीनता का अनुसरण करने वाली, दोनों प्रकार की थी। कुछ तो बहुत पुराने जमाने मे थीं मगर ज्यादातर अंग्रेजो की बनाई हुई थीं—उनके लिए जिन्होंने हिन्दुस्तानियों के खिलाफ अंग्रेजो की मदद की थी। इन रियासतों मे, जो पूरे भारत के क्षेत्रफल का ⅖ भाग घेरे हुए थी, और जहाँ विभाजन के बाद देश की २८ प्रतिशत जनता रहती थी, भारतीय विधान-मंडल के कानून लागू न होते थे। राजा-महाराजाओं को पूरी आजादी मिली हुई थी कि जैसे चाहे वैसे, अपनी रियाया पर हुकूमत करें। नतीजा यह था कि उनमें से कुछ तो लोकतन्त्र के प्रयोग मे बहुत आगे बढ गये थे और कुछ यह भी नही जानते थे कि नगरपालिका किस चिड़िया का नाम है। कुछ रियासतों मे अपनी निजी रेल-व्यवस्था थी और कुछ में पांच मील लम्बी सामान्य पक्की सडकें भी न बनी थीं। कुछ राज्यों मे आधुनिक सुख-सुविधा का सामान बहुत सस्ता मिलता था मगर ज्यादातर रियासतो मे न कोई अस्पताल था और न दवाखाना। हालांकि ये रियासतें, जिनको संसार का सबसे विचित्र काल-गणना का भ्रम कहा जा सकता है, अब लुप्त हो चुकी हैं परन्तु उनके इतिहास और उनके हास्यास्पद जीवन की झलकियाँ बड़ी मनोरंजक हैं। केवल ४० रियासतें ऐसी थी जिनकी ब्रिटिश सरकार के साथ वास्तविक रूप मे सन्धियाँ थी। बाकी ५०० रियासतें सार्वभौम सत्ता की सनदों और जागीरो के फलस्वरूप उत्पन्न हुई थी।

इससे भी अधिक मनोरंजक था उनकी प्रतिष्ठा, उपाधियों, सुविधाओं और सलामियों के अधिकारों मे अन्तर। जब कि हैदराबाद के निजाम को अधिकार युक्त "हिज़ एक्ज़ाल्टेड हाईनेस" की पदवी प्राप्त थी, कुछ शासक केवल "राजा", "राव" और "सर्दार" कहलाते थे।

विशिष्टता की सीढ़ी मे कई पदाधार थे। मिसाल के तौर पर, आठ

भावनगर, कच्छ, जूनागढ़ और नवानगर थीं। उत्तर में कश्मीर तथा शिमला हिल एजेन्सी, पंजाबी राज्य—पटियाला, कपूरथला, नाभा, फरीदकोट और जींद थे। इनके अलावा मलेरकोटला, बहावलपुर और कलसिया रियासतें भी थीं। पूरब में खासी और असमी रियासतों के साथ उड़ीसा एजेन्सी थी। दक्खिन में हैदराबाद, मैसूर, बड़ौदा, ट्रावनकोर, कोचीन और कोल्हापुर के राज्य थे। इस तरह, दिल्ली से बम्बई की यात्रा में कम से कम तीन बार रियासतों के क्षेत्र में हो कर गुज़रना पड़ता था।

इन रियासतों के आकारों और ढांचों में जैसी विभिन्नता थी, वैसी ही विभिन्नता उनके जन्म की परिस्थितियों में भी थी। उनके भूगोल की बनिस्बत उनका इतिहास अधिक स्पष्ट है। राजपूत राजघरानों द्वारा सबसे अधिक प्राचीन और श्रेष्ठ होने के दावे और प्रतिवाद के दाव इतिहासकार को निरन्तर चक्कर में डालते रहते हैं। बहुत से राजे-महाराजे तथा उनके जागीरदार बदइन्तज़ामी के ऐसे अधिकार के अलावा अपनी दैवी वंश-परम्परा का भी दम भरते थे। उनमें से अनेक अपने को देवताओं के वंशज कहते थे और सब के सब अपनी वंश-प्राचीनता तथा कुल की श्रेष्ठता का बखान किया करते थे। पौराणिक कथाओं का सहारा लेकर युगों पुराने पृथ्वी में गड़े पत्थर के अस्थि पंजरों और देवों को अपनी और सजीव दिखाने की चेष्टा की जाती थी।

अब हम उनमें से सबसे बड़ी रियासत के बारे में शुरू करते हैं।

हैदराबाद—

इस रियासत की बुनियाद मीर कमरुद्दीन अली खां ने, जो मुगल बादशाह के दिये खिताब, आसफ़जाह के नाम से मशहूर थे, डाली थी। उनके वालिद ग़ाज़ीउद्दीन खां औरंगज़ेब की फ़ौज में सिपहसालार थे। वे अपने को पैगम्बर के ससुर, खलीफा अबू बकर के खानदान का कहते थे।

उनके बेटे को, १७१२ में, मुगल बादशाह ने दक्खिन की रियासतों का सूबेदार बनाया। बारह साल पूरे नहीं हुए थे कि उसने १७२४ में आज़ादी का ऐलान कर दिया। १७४८ में उसकी मौत होते ही तख्त और ताज की विरासत के झगड़े शुरू हो गये जो उस ज़माने का एक दस्तूर बन चुका था। फ्रान्स और इंग्लैंड, दोनों के उम्मीदवार मौजूद थे। फ्रान्स का उम्मीदवार जीत गया और इंग्लैंड की तजवीज़ों पर पानी फिर गया। मगर उस उम्मीदवार ने मैसूर के बादशाह टीपू सुलतान के खिलाफ, जिसने अंग्रेज़ों को हिन्दुस्तान से निकाल देने के लिए लड़ाई छेड़ी थी, अंग्रेज़ों का साथ देकर उनके आंसू पोंछ दिये। सन् १८०० में, दगाबाज़ी की आखिरी मिसाल पेश करते हुए अंग्रेज़ों का मातहत-दोस्त बनना कबूल करके अपने ढंग के अजीब सुलहनामे पर उसने दस्तखत कर दिये। उस सुलहनामे की शर्तों के मुताबिक अन्दरूनी रियासती मामलों में आज़ादी तो मिली मगर असली इन्तज़ाम व

ताक़त अंग्रेजों ने अपने हाथ में रखी। अलावा इसके, एक शर्त के मुताबिक़ कुछ अँग्रेज़ी फ़ौज भी रियासत में रखने की मंज़ूरी देनी पड़ी। फ़ौज का खर्च उठाने की ज़िम्मेदारी लेकर ज़मानत के तौर पर बरार का सूबा भी अँग्रेज़ों को सौंप देना पड़ा। बाक़ी क़िस्सा तो हस्बमामूल चलता है—वही अँग्रेज़ों की मातहती और फ़रमाबरदारी एक तरफ़, दूसरी तरफ़ अपनी बेज़ुबान, मासूम रियाया पर ज़ुल्म की इन्तिहा।

मैसूर—

दक्षिण भारत की एक प्रसिद्ध रियासत मैसूर थी जिसके राजवंश की पीढ़ी का आरम्भ सन् १३९९ ई० में हुआ था। विजयराज और कृष्णराज नाम के दो भाइयों ने आ कर कुछ थोड़े से गाँवों पर अपनी हुकूमत क़ायम की जो बढ़ते-बढ़ते मैसूर राज्य बन गये, मैसूर का क्षेत्रफल २९,४७५ वर्ग मील है। इस प्रकार आकार में मैसूर लगभग स्काटलैंड देश के बराबर और बेलजियम देश का दूना है।

सन् १७३४-६५ से, चिक्का कृष्णराज वादियार के शासनकाल में हैदरअली ने जबरदस्ती मैसूर राज्य पर क़ब्ज़ा कर लिया पर उसके उत्तराधिकारी पुत्र, टीपू सुलतान का पतन होने पर दूसरे कृष्णराज वादियार का अधिकार होते ही राजवंश पुनः स्थापित हो गया। ब्रिटिश सरकार ने रियाया की बग़ावत का बहाना ले कर सन् १८३१ में इस राज्य को सीधे अपने शासन में ले लिया। सन् १८८१ में, रियासत महाराजा चन्द्र राजेन्द्र वादियार को वापस दे दी गई। हस्तान्तरण का संलेख, जिसके द्वारा ब्रिटिश सरकार और रियासत के सम्बन्ध पहले नियमित होते थे, एक सन्धि-पत्र द्वारा बदल गया जिसको सन् १९१३ में वायसराय ने मान्यता प्रदान की परन्तु उसकी १८ वीं धारा बाद में निराकृत कर दी गई। भारत की अन्य रियासतों की अपेक्षा मैसूर में वर्षों पहले से प्रगतिशील शासन-व्यवस्था चल रही थी। हिज़ हाईनेस महाराजा कृष्णराजेन्द्र वादियार तथा हिज़ हाइनेस महाराजा जय चामराजा वादियार के शासनकाल में एक अलग 'प्रिवी पर्स' शासकों के लिए निश्चित की गई। मैसूर की शासन व्यवस्था संवैधानिक थी, जिसमें क़ानूनी, कार्यकारी तथा न्यायिक अधिकारों तथा ज़िम्मेदारियों की स्पष्ट व्याख्या मौजूद थी।

बड़ौदा—

बड़ौदा में गायकवाड़ परिवार शासन करता था। सबसे पहले सन् १७२०-२१ में इस परिवार ने प्रतिष्ठा पाई, जब सतारा के शासक ने दामाजी गायकवाड़ को अपना दूसरा मुख्य सेनाध्यक्ष नियुक्त करके 'शमशेर बहादुर' की उपाधि दी। उनके भतीजे, पीलाजी राव ने, उनके बाद गद्दी ग्रहण किया और राज्य की नींव डाली। आम तौर पर होने वाली

साज़िशों और कूटमंत्रणाओं के फलस्वरूप पड़ोसी राज्यों से झगड़े शुरू हो गये। इस प्रस्तावना के बाद अगला दृश्य सन् १७७२ में सामने आया जब ब्रिटिश सरकार से आक्रामक और रक्षात्मक सन्धि हुई। इस व्यवस्था के अन्तर्गत अन्य उप-सन्धियां सन् १८०२, १८०७ और १८१५ में हुईं। अन्य धाराओं के अलावा रियासत में ब्रिटिश सेना रखने की शर्तें भी मानी गईं। गायकवाड़ दरबार को १,१७,०००) रु० राजस्व का इलाका अंग्रेजों के हवाले करना पड़ा और मराठा राज्य के अधिपति पेशवा से गायकवाड़ का सम्बन्ध-विच्छेद हो गया।

त्रावङ्कोर—

भारतीय रियासतों में सुदूर दक्षिणी रियासत त्रावंकोर थी जहाँ की आबादी पचास हजार और क्षेत्रफल ८,००० वर्गमील था। रियासत के शासक क्षत्रिय थे जिनकी वंश-परम्परा दक्षिण भारत के चेरु राजाओं से सम्बन्धित मानी जाती थी। मैसूर के महाराजाओं से युद्ध में ब्रिटिश का साथ महाराजा त्रावंकोर ने दिया था। सन् १७९५ में ब्रिटिश सरकार ने एक सन्धि करके रियासत की सुरक्षा का उत्तरदायित्व ग्रहण किया।

त्रावंकोर के महाराजा लोग रियासत के राजस्व को प्रजा की अमानत समझते थे और अपने लिए एक बँधी रकम खर्च को लिया करते थे जो निश्चित कर दी जाती थी और जिसकी व्यवस्था रियासत के सालाना बजट में रहती थी। अन्य रियासतों के विपरीत, वहाँ पुरुषों की भाँति मतदान का अधिकार स्त्रियों को भी था और वे राज्य की विधान सभा तथा विधान-परिषद की, जो श्री चित्रा स्टेट कौन्सिल और श्री मुलम असेम्बली कहलाती थीं, सदस्यायें चुनी जा सकती थीं।

बीकानेर—

राजपूताने में, जिसे अब राजस्थान कहते हैं, बीकानेर एक प्रभावशाली राज्य था। इस राज्य की नींव जोधपुर के संस्थापक राव जोधाजी के पुत्र राठौर राजकुमार रावबीकाजी ने डाली थी। १६वीं सदी तक यहाँ के राठौर राजा अपने इलाके को [illegible] रहे। यहाँ के राजा रायसिंह, मुगल [illegible] ल में मुगल साम्राज्य के [illegible] सरकार से मैत्री-सन्धि [illegible] कुछ बदली गई।

हैदराबाद का था। यहाँ के नवाब-वंश की नींव दोस्त मुहम्मद नामक अफ़ग़ान ने डाली थी जो बहादुर शाह के शासन काल में सन् १७०८ में नौकरी की तलाश में भारत आया था। सन् १७०९ में उसने मालवा में बेरासिया परगना पट्टे पर लिया। बाद में, वह उस इलाक़े का सूबेदार तैनात हुआ और हुकूमत की गड़बड़ी से फ़ायदा उठा कर उसने भूपाल में अपना स्वतन्त्र शासन स्थापित कर लिया। सन् १८१७ में पिण्डारी युद्ध के शुरू होने पर ब्रिटिश सरकार ने उस समय के नवाब नज़र मुहम्मद से मैत्री-सन्धि करके सन् १८१८ में भूपाल राज्य को अपनी अधीनता में ले लिया।

जयपुर—

राजपूत रियासतों में जयपुर बहुत पुरानी मानी जाती है। कहते हैं कि इसकी स्थापना सूर्यवंशी भगवान् रामचन्द्र जी के पुत्र कुश ने की थी। यहाँ के शासक कछवाहा राजपूत वंश के थे। राजा जयसिंह से पहले, जो अकबर महान् के साले तथा सेनापति भी थे, इस राज्य का महत्व कुछ भी न था। बाद में, राजपूताने के इतिहास में, जयपुर ने प्रमुख भूमिका निभायी पर अंग्रेज़ों ने, सन् १८१८ में इसे अपने अधीन कर लिया।

उदयपुर—

कहते हैं कि उदयपुर का राज-वंश सबसे पुराना था और सन् ७३४ से लगातार शासन करता रहा। इसकी स्थापना गहलौत वंशीय राजपूत बप्पा रावल ने की थी। अन्य कारणों के अतिरिक्त इसकी विशेषता यह रही कि यहाँ के शासकों ने न तो अपनी बेटियाँ मुग़ल सम्राटों को ब्याहीं और न उनकी अधीनता ही स्वीकार की। सन् १८१८ के मनहूस साल में, जब अंग्रेज भारतीय रियासतों के प्रति आक्रामक नीति अपना रहे थे, उन्होंने इस राज्य को भी अपने अधीन कर लिया।

जोधपुर—

यह राजपूताने की एक प्रभावशाली रियासत थी जिसकी स्थापना राठौर राजपूतों ने सन् १४५९ में की थी। कुछ समय बाद, मजबूर होकर यहाँ के ...जा ने मुग़लों का आधिपत्य स्वीकार कर लिया और सन् १८१८ में अंग्रेज़ों ...सको अपने शासनाधिकार से दबा कर अधीन कर लिया।

...य रियासतें—

राजपूताने की इन रियासतों के साथ भरतपुर की जाट रियासत का नाम आता है जो सत्रहवीं और अठारहवीं सदी के बीच देश में व्यापक उपद्रवों, ... लड़ाइयों के अव्यवस्थित वातावरण में जन्म ले गयी। सन्

१८०३ में भरतपुर ने भी अंग्रेजों से मैत्री-सन्धि की। परन्तु, यहां के शासक को मराठा लोगों से गुप्त वार्ता चलाने का अपराधी ठहराया गया। इस तरह राज्य के जीवन का समय चलने लगा। अन्तिम परिणाम में रियासत अंग्रेजों की अधीनता में चली गई।

दक्षिण में, कोल्हापुर की मराठा रियासत थी, जिसकी स्थापना छत्रपति शिवाजी के छोटे बेटे राजाराम (प्रथम) की परम साहसी और बुद्धिमती पत्नी तारा बाई ने की थी।

पंजाब की हालत भी अन्य सूबों से कुछ अलग न थी। मुग़ल साम्राज्य के छिन्न-भिन्न होने पर अहमद शाह अब्दाली के पठानों ने आक्रमण किया। सतलज और यमुना के मध्यवर्ती इलाके में सिक्खों का एक ताकत के रूप में उदय हुआ। उनकी महत्ता को पठानों ने तथा कुछ परिस्थितियों में मुगलों ने भी, स्वीकार करके, प्रभावशाली सिक्ख सामन्तों को विभिन्न इलाकों का शासक बना दिया। उन लोगों ने मुख्य सत्ता की मुहर के नीचे अपनी तलवार और मर्जी से शासन व्यवस्था चलाई। अठारहवीं सदी के उत्तरार्ध में, सिक्खों ने अपनी शक्ति खूब बढ़ा कर अपने को एक व्यवस्थित राजनीतिक समुदाय घोषित किया। अपनी महत्वाकांक्षा लेकर उन्होंने पूरे पंजाब तथा उत्तर-पश्चिमी सीमान्त प्रदेश के कुछ भाग पर अपना अधिकार जमाया। उन्होंने लाहौर ले लिया, पठानों द्वारा नियुक्त सूबेदार काबुली मल को वहाँ से भगा दिया और सन् १७६४ में अपने को एक राजनीतिक ताकत होने का ऐलान कर दिया।

उनकी शासन व्यवस्था का ढंग ज्यादातर जागीरदारी धर्म राज्य मण्डल प्रथा के अनुकूल बतलाया गया है। वह बारह वंशों का, जिनको मिसल कहा जाता था, एक शासन मण्डल था।

सबसे प्रभावशाली मिसल फुलकियाँ मिसल था जिसका नाम फूल से पड़ा था और जिसके पूर्वज, बरयाम ने, सन् १३२६ में मुगल सम्राट् बाबर से दिल्ली के दक्षिण-पश्चिमी इलाकों का राजस्व वसूल करने का मौरूसी अधिकार प्राप्त किया था। बाबर द्वारा प्रदत्त पदाधिकार की मान्यता फूल ने सम्राट् शाहजहाँ से हासिल की। फूल के ज्येष्ठ पुत्र से नाभा और जिन्द के शासक परिवार तथा द्वितीय पुत्र से पटियाला का परिवार उत्पन्न हुआ।

पटियाला—

वामना के लिए लोकप्रसिद्ध पटियाला राज्य का जन्म सन् १७५१ में हुआ था। इस राज्य के पिता और संस्थापक अलासिंह थे जिनको अहमदशाह अब्दाली ने पटियाला के निकटवर्ती इलाके का सूबेदार नियुक्त किया था। इस प्रकार से वे स्वतन्त्र शासक थे। सन् १७६७ में अहमदशाह अब्दाली ने शिकार के इरादे से फिर हमला किया और अनुरंजन की इच्छा से अलासिंह

के पौत्र अमर सिंह को महाराजा की पदवी से भूषित किया। अमर सिंह बड़े कुशल कूटनीतिज्ञ, साहसी और वीर थे। उन्होंने कतोच राजपूतों से मित्रता कर ली और जालंधर दोआब तथा आसपास के पहाड़ी इलाक़े में लगभग पूरे तौर से अपनी सत्ता स्थापित कर ली। सन् १८०९ के बाद अंग्रेज़ों ने रंजीत सिंह से लुधियाना की सन्धि कर ली जिन्होंने सतलुज के आगे के इलाक़े में अंग्रेजों का प्रभुत्व स्वीकार करके उस क्षेत्र में हस्तक्षेप करना त्याग दिया। नतीजा यह हुआ कि अंग्रेज़ों का आधिपत्य सारे इलाक़े पर हो गया। उनकी प्रशंसनीय (स्वतन्त्रता के प्रति विश्वासघात) सेवाओं के उपलक्ष्य में जो ग़दर (भारतीय देश प्रेमी जिसे स्वतन्त्रता संग्राम कहते हैं) के ज़माने में अंग्रेज़ों को मिलीं दो लाख सालाना आमदनी का इलाक़ा सन् १८५८ में पटियाला परिवार ने हासिल किया।

कपूरथला—

अहलुवालिया वंश (मिसल) ने कपूरथला राज्य की नींव डाली थी। इनके पूर्वज एक साधा सिंह थे पर जस्सा सिंह के भाग्य में रियासत का निर्माण और उसकी व्यवस्था की प्रतिष्ठा प्राप्त करना लिखा था। वे नादिरशाह और अहमदशाह के समकालीन थे और सिक्खों के संगठनकर्त्ता होने के अलावा उनको सिक्ख सेना का संस्थापक भी माना जाता है। अन्य सिक्ख राज्यों की तरह कपूरथला की रियासत भी सन् १८०९ में अंग्रेज़ों के संरक्षण में आ गई और द्वितीय सिक्ख युद्ध में इसने अंग्रेज़ों को अपनी 'समुचित' सेवायें प्रदान कीं, उस ज़माने में रियासत के शासक निहाल सिंह थे जिनको विदेशी अंग्रेज़ मालिकों के प्रति वफ़ादार रहने के बदले में राजा की उपाधि मिली।

सन् १८५७ के सिपाही विद्रोह में राजा रनधीर सिंह ने अंग्रेज़ों की सहायता की जिसके एवज में उनको बूँदी और अवध में ज़ब्त की हुई बिठौली की जागीरें मिलीं।

इस बयान के साथ ही हम अपनी कहानी के प्रथम भाग के अन्त पर पहुँच रहे हैं। इससे कई दिलचस्प सच्ची बातें प्रकाश में आईं।

पहली तो यह, कि भारतीय नरेशों की बढ़ोत्तरी उस समय हुई जब उपद्रव और अव्यवस्था का ज़माना था और उनके अस्तित्व का मुख्य कारण उस समय की प्रभु-सत्ता की कूटनीति थी।

दूसरी यह, कि उनका सूर्य और चन्द्र के वंश में उत्पन्न होने का दावा विवादास्पद हो सकता है पर एक बात में सन्देह नहीं किया जा सकता कि वे उदय होते हुए सूर्य की पूजा करते थे। हमने देखा है कि उनमें, अपने वंश की प्राचीनता की डींग हाँकनेवालों ने, अपने से अधिक बलशाली के पैरों की धूल तक चूमी है। इस तरह उन्होंने पठानों की आज्ञा का पालन किया, अपने घरों की लड़कियाँ मुग़लों को ब्याहीं, मेवा की और अंग्रेज़ों के जूते चाटे फिर इस

स पाइदा हुआ तब राजगद्दियाँ छोड़ दीं। गुमनामी की कला में उनकी नई सिर पर क्या होगी, इसे तो उनकी राजसी आत्मायें जानती हैं अथवा ईश्वर ही जानता है।

तीसरी यह, कि जैसा भारतीय समस्याओं के एक समझदार और चतुर विद्यार्थी ने लिखा है, उनको 'राज्य' कहना सर्वथा भ्रामक है। क्योंकि यह एक ऐतिहासिक अपवाद होगा यदि हम उनको, उनके दावे के मुताबिक, नियमित और व्यवस्थित स्वतंत्र जीवन व्यतीत करने वाला मान लें। कुछ को छोड़ कर इन सब के दावे इसी बात पर आधारित हैं कि उस जमाने की प्रभु-सत्ता ने उनको अधिकार-शक्ति प्रदान की थी।

रियासतों और सार्वभौम सत्ता के बीच सन्धियाँ

जिन सन्धियों के जरिये, राजे-रजवाड़ों के सम्बन्ध ब्रिटिश सार्वभौम सत्ता के साथ नियमित होते थे, उनके विषय में जानना भी मनोरंजक होगा।

कुछ को छोड़ कर बाकी सभी सन्धियाँ 'गदर' के पहले हुईं और उन पर इस्ताक्षर उस जमाने में हुए जब कि साधारणतया ईस्ट इण्डिया कम्पनी की नीति, इन रियासतों के मामलों में, जो सीधे उसके द्वारा शासित नहीं थीं, हस्तक्षेप न करने की थी। सी वार्नर के कथनानुसार—"जब क्लाइव ने २३ जून को प्लासी का युद्ध जीता और कलकत्ते के आसपास के जिलों का जमींदारी अधिकार प्राप्त किया, उस वर्ष १७५७ के बाद से, देश के राजाओं के प्रति ईस्ट इण्डिया कम्पनी की विदेशी नीति, लार्ड मिण्टो के गवर्नर रहने के समय सन् १८१३ तक, सीमित जिम्मेदारी उठाने और रियासतों के मामलों में दखल न देने की रही।" इसका एक कारण आंशिक रूप में यह था कि इंग्लैंड से कम्पनी को स्पष्ट हिदायत थी कि अपने राज्य का विस्तार बढ़ने से रोकें। दूसरा कारण यह था कि उनको आशा थी कि ब्रिटिश शस्त्रों की अपेक्षा रियासतों का पारस्परिक ईर्ष्या-द्वेष और अदावतें कम साघातिक न सिद्ध होंगी। "कम्पनी के राज्य की सुरक्षित सीमा रेखा के आगे वे मेल-मिलाप राजाओं के साथ पसन्द न करते थे क्योंकि उनको आशा थी कि शक्तिशाली संस्थायें कमजोर संस्थाओं को निगल कर व्यवस्थित रूप में स्थायी रियासतें बन जायेंगी।"

उस समय, जब सन्धियां की गईं कम्पनी की नीति इस प्रकार की थी। अतएव, यह स्वाभाविक था कि रियासतों के अन्दरूनी मामलों और इन्तजाम में दखल न देने की धारा को सन्धियों की शर्तों में प्रमुखता दी गई। उस समय की विशेष आवश्यकताओं से प्रेरित हो कर कूटनीतिक चाल यह चली गई कि ईस्ट इंडिया कम्पनी ने राज्यों की आन्तरिक व्यवस्था में शासकों को पूरी छूट दे दी। कारण यह था, कि अंग्रेज बहुमुखी जिम्मेदारियाँ सम्हालना अपने लिए खतरे की बात समझते थे फिर भी, जब रियासतों में ज्यादा गड़बड़ी फैलती, तब वे हस्तक्षेप करने में जरा भी नहीं हिचकते थे। मिसाल के तौर पर,

के पौत्र अमर सिंह को महाराजा की पदवी से भूषित किया। अमर
कुशल कूटनीतिज्ञ, साहसी और वीर थे। उन्होंने कतोच राजपूतों से
कर ली और जालंधर दोआव तथा आसपास के पहाड़ी इलाक़े में लग
तौर से अपनी सत्ता स्थापित कर ली। सन् १८०६ के बाद अंग्रेजों ने
सिंह से लुधियाना की सन्धि कर ली जिन्होंने सतलुज के आगे के इ
अंग्रेजों का प्रभुत्व स्वीकार करके उस क्षेत्र में हस्तक्षेप करना त्याग
नतीजा यह हुआ कि अंग्रेजों का आधिपत्य सारे इलाक़े पर हो गया।
प्रशंसनीय (स्वतन्त्रता के प्रति विश्वासघात) सेवाओं के उपलक्ष्य में ज
(भारतीय देश प्रेमी जिसे स्वतन्त्रता संग्राम कहते हैं) के ज़माने में अंग्रे
मिलीं दो लाख सालाना आमदनी का इलाक़ा सन् १८५८ में पटियाला प
ने हासिल किया।

कपूरथला—

अहलुवालिया वंश (मिसल) ने कपूरथला राज्य की नींव डाली थी।
पूर्वज एक साधा सिंह थे पर जस्सा सिंह के भाग्य में रियासत का निर्माण
उसकी व्यवस्था की प्रतिष्ठा प्राप्त करना लिखा था। वे नादिरशाह
अहमदशाह के समकालीन थे और सिक्खों के संगठनकर्त्ता होने के अ
उनको सिक्ख सेना का संस्थापक भी माना जाता है। अन्य सिक्ख राज्यो
तरह कपूरथला की रियासत भी सन् १८०६ में अंग्रेजों के संरक्षण में आ
और द्वितीय सिक्ख युद्ध में इसने अंग्रेजों को अपनी 'समुचित' सेवायें प्र
कीं, उस ज़माने में रियासत के शासक निहाल सिंह थे जिनको विदेशी अ
मालिकों के प्रति वफ़ादार रहने के बदले में राजा की उपाधि मिली।

सन् १८५७ के सिपाही विद्रोह में राजा रनधीर सिंह ने अंग्रेजों
सहायता की जिसके एवज में उनको बूंदी और अवध में ज़ब्त की हुई वि
की जागीरें मिलीं।

इस बयान के साथ ही हम अपनी कहानी के प्रथम भाग के अन्त पर प
रहे हैं। इससे कई दिलचस्प सच्ची बातें प्रकाश में आईं।

पहली तो यह, कि भारती[illegible] नरेशों की बढ़ोत्तरी उस समय हुई जब अ
और अव्यवस्था का ज़माना [illegible] उनके अस्तित्व का मुख्य कारण उस स
की प्रभु-सत्ता की [illegible]

दूसरी [illegible] चन्द्र के वंश में उत्पन्न होने का द
[illegible] जा सकता कि
[illegible] उनमें, अपने वंश
[illegible] शाली के पैरों की
[illegible] किया, आगे
[illegible] के जूते चाटे फिर

वस्था के उन दिनों में, इतिहास एक बहता हुआ चश्मा था। वहाँ घटना-क्रम चला करता था। सालों की कौन कहे, चन्द महीनों में ही नामा बदल जाता था। तब जरूरत यह आ पड़ती थी कि मैत्री-और ताक़तों को नये ढंग से व्यवस्थित किया जाय। अक्सर, रियासतों अस्तित्व बदल जाता और स्वामी लोग अपनी राजभक्ति दूसरी सत्ता को अर्पित कर देते। तब, कोई आश्चर्य की बात नहीं समझी जाती थी अगर कोई सुलहनामा रद्द कर दिया जाय न किया जा सके।

का क्रमिक उत्थान देखा। अंग्रेजों धीरे-धीरे, पर निश्चित गति से, इस देश में बढ़ता रहा। कई दशकों ब्रिटिश, इस देश की कई ताक़तों में से एक गिने जाते रहे, भले ही वे अपने को बड़ा समझते रहे हों। केवल "गदर" के बाद वे भारत में सार्वभौम के अधिकारी बन सके। सन् १९२६ में लार्ड रीडिंग ने निज़ाम को लिखा —"ब्रिटिश ताज का प्रभुत्व भारत में सर्वोपरि है।" ताज की मर्यादा की में यह सीमा, तथा ब्रिटिश भारत एवं रियासतों में फैली हुई उस समय राजनीतिक प्रवृत्तियों को, सन्धियों का अर्थ समझते समय ध्यान में रखना है। सन्धियों के इतिहास में यह एक ऐसा तथ्य है, जिसे सभी सरकारी में स्वीकार किया गया है और इस पर ज़ोर भी दिया गया है। उन से इतिहास के छात्रों और विद्वानों को चेतावनी मिली है कि उस ऐतिहासिक पृष्ठभूमि से पृथक, जिसने उन सन्धियों को जन्म दिया, सन्धियों के और पढ़ना, व्यर्थ होगा।

पर रियासतों के प्रति ब्रिटिश नीति की जाँच करते समय हमें उन परिस्थितियों को ध्यान में रखना है जो १८ वीं सदी में भारत में मौजूद थीं। वह समय, ब्रिटिश सत्ता के लिए, जो अच्छी तरह स्थापित न हो पाई थी, बड़े संकट का था। इन्हीं कारणों से रियासतों के प्रति ब्रिटिश नीति के प्रथम चरण में अपने अधिकृत इलाकों और अपनी शक्ति को, व्यवस्थित और सुरक्षित करने की प्रवृत्ति खास तौर पर दिखाई दी। बक्सर के युद्ध में मीर कासिम और उसके सहायकों को हराने के बाद, सन् १७६५ में क्लाइव ने अवध के नवाब वज़ीर शुजाउद्दौला से पहली प्रभावशाली सन्धि की।

क्लाइव ने जानबूझ कर अवध को एक पृथक् इकाई बना रहने दिया और वह बंगाल के इलाके को मुग़लों के हाथों में जाने से बचाना चाहता मुग़ल शासकों की शक्ति उस समय नितान्त न्यून न थी और वे क्लाइव से क्लाइव ने देश के अन्य भागों में भी सावधानी उसके उत्तराधिकारियों ने दक्खिन में बहुत सी और उनसे अधीनता की मैत्री-सन्धि करके ... ने जन्म दिया, तथा

अठारहवीं सदी के अन्तिम दो दशकों के क़रीब फ्रान्सीसियों का खतरा बढ़ने और डूप्ले के आ जाने से हैदराबाद, मैसूर और कर्नाटक में अंग्रेज़ों ने हस्तक्षेप किया। फिर, १९ वीं सदी के प्रारम्भ में पिण्डारियों की लूट-मार को बन्द करने के लिए मराठा रियासतों में अंग्रेज़ों ने दखल दिया। इन पिण्डारियों ने, जिनको मनुष्य के रूप में भेड़िये कहा जा सकता है, सारे राजपूताने, मध्य भारत और दक्खिन के उपजाऊ प्रदेश को रौंद डाला था। उस समय, ब्रिटिश हस्तक्षेप आत्म-रक्षा के प्रयोजन से था अथवा ईस्ट इंडिया कम्पनी की सीधी हुकूमत में रहने वाले प्रदेश के बचाव के लिए था, यह निश्चित रूप से नहीं कहा जा सकता। ली वार्नर ने लिखा है—"पिण्डारियों के उपद्रवों को कारण न मान कर, हम वह अवसर कह सकते हैं जो एक ऐसी अनिवार्य क्रान्ति का पूर्वाभास था जिसने अंगेजों की रियासतों के मामलों में हस्तक्षेप न करने की नीति की धज्जियाँ उड़ा दो। फलतः, जिस प्रकार दक्षिण भारत में आत्मरक्षा के बहाने अंगेजों ने अपनी संगठित सत्ता स्थापित की थी, उसी प्रकार भारत के केन्द्र में भी स्थापित हुई।" अब, हालाँकि रियासतों की मर्यादा युक्त स्वतंत्रता का नियम मान्य था, पर कम्पनी के अफ़सरों को उनके भविष्य के बारे में कोई सन्देह न था। अपनी दूर-दर्शिता से उन्होंने समझ लिया था कि जब कभी भारत उन्नति करके एकता के सूत्र में बँधेगा, तब इन रियासतों की स्वतंत्रता बहुत कम कर दी जायगी।

इन सब बातों से स्पष्ट है कि किसी भी रियासत से मैत्री संधि करने में ईस्ट इंडिया कम्पनी हमेशा उस रियासत के अन्दरूनी मामलों से उदासीन रहना पसन्द करती थी और जब कोई सुलहनामा तैयार करके दस्तखत किया जाता था तो पहले यह देख लिया जाता था कि ऊपर लिखी शर्तें उसमें रखी गई है या नहीं। इसके बावजूद कम्पनी ने कुछ रियासतों के मामलों में हस्तक्षेप किया जो उसकी निश्चित नीति के विरुद्ध था।

हमने देख लिया है कि वायदे आसानी से किये जाते और आसानी से तोड़ दिये जाते थे। इस काम में कम्पनी को जरा भी हिचक न होती थी। इतिहास के इन तथ्यों पर दृष्टिपात करने से हमारा यह मक़सद नहीं कि हम यह साबित करें कि ईस्ट इंडिया कम्पनी जरूर ही अपने वायदों से फिर जाती थी अथवा सन्धि की शर्तों को न मान कर अनुचित हस्तक्षेप करती थी। प्रश्न के औचित्य या अनौचित्य से हमें कोई मतलब नहीं। सन्धियों के कानूनी पहलू में भी हमारी दिलचस्पी नहीं, क्योंकि उनके मसौदे इतने ढीले-ढाले और दोहरे अर्थ वाले शब्दों में लिखे थे कि उनसे मनचाहा काम लिया जा सकता था। अतएव, जहाँ एक तरफ़ सार्वभौम सत्ता जोर से ऐलान करती थी कि देशी रियासतों के साथ की हुई सन्धियाँ और क़रार उसकी तरफ़ से पूरे तौर से मान्य होंगे, दूसरी तरफ़ ए० पी० निकल्सन क़सम खा कर कहता है कि ये सभी सुलहनामे अंग्रेजों की नज़र में महज़ "रद्दी कागज़ के टुकड़े" थे।

[illegible] के उन दिनों में, इतिहास एक बहता हुआ चश्मा था। वही [illegible] में घटना-क्रम चला करता था। सालों की कौन कहे, चन्द महीनों में ही [illegible] नक्शा बदल जाता था। तब ज़रूरत यह था पड़ती थी कि मैत्री-[illegible] और ताकतों को नये ढंग से व्यवस्थित किया जाय। अक्सर, रियासतों [illegible] बदल जाता और स्वामी लोग अपनी राजभक्ति दूसरी सत्ता को [illegible] कर देते। तब, कोई आश्चर्य की बात नहीं समझी जाती थी अगर [illegible] होने के कुछ मास के अन्दर ही कोई सुलहनामा रद्द कर दिया जाय [illegible] बदली हुई हालतों में वह पूरे तौर से लागू न किया जा सके।

[illegible] १५० वर्षों में भारत में ब्रिटिश सत्ता का क्रमिक उत्थान देखा। अंग्रेज़ो [illegible] धीरे-धीरे, पर निश्चित गति से, इस देश में बढ़ता रहा। कई दशकों [illegible] ब्रिटिश, इस देश की कई ताक़तों में से एक गिने जाते रहे, भले ही वे अपने [illegible] को बड़ा समझते रहे हों। केवल "गदर" के बाद वे भारत में सार्वभौम [illegible] के अधिकारी बन सके। सन् १९२६ में लार्ड रीडिंग ने निज़ाम को लिखा —"ब्रिटिश ताज का प्रभुत्व भारत में सर्वोपरि है।" ताज की मर्यादा की [illegible] में यह सीमा, तथा ब्रिटिश भारत एवं रियासतों में फैली हुई उस समय [illegible] राजनीतिक प्रवृत्तियों को, सन्धियों का अर्थ समझते समय ध्यान में रखना [illegible] है। सन्धियों के इतिहास में यह एक ऐसा तथ्य है, जिसे सभी सरकारी [illegible] में स्वीकार किया गया है और इस पर ज़ोर भी दिया गया है। उन [illegible] से इतिहास के छात्रों और विद्वानों को चेतावनी मिली है कि उस [illegible] पृष्ठभूमि से पृथक्, जिसने उन सन्धियों को जन्म दिया, सन्धियों के [illegible] पढ़ना, व्यर्थ होगा।

[illegible] रियासतों के प्रति ब्रिटिश नीति की जाँच करते समय हमें उन परि-[illegible] को ध्यान में रखना है जो १८ वीं सदी में भारत में मौजूद थी। वह [illegible], ब्रिटिश सत्ता के लिए, जो अच्छी तरह स्थापित न हो पाई थी, बड़े संकट [illegible] था। इन्हीं कारणों से रियासतों के प्रति ब्रिटिश नीति के प्रथम चरण में [illegible] शामिल इलाकों और अपनी शक्ति को, व्यवस्थित और सुरक्षित करने [illegible] प्रवृत्ति खास तौर पर दिखाई दी। बक्सर के युद्ध में मीर कासिम और [illegible] सहायकों को हराने के बाद, सन् १७६५ में क्लाइव ने अवध के नवाब [illegible] शुजाउद्दौला से पहली प्रभावशाली सन्धि की।

[illegible] ने जानबूझ कर अवध को एक पृथक् इकाई बना रहने दिया [illegible] वह बंगाल के इलाके को मुगलों के हाथों में जाने से बचाना चाहता [illegible]। मुगल शासकों की शक्ति उस समय नितान्त न्यून न थी और वे क्लाइव [illegible] चिढ़े हुए थे। इसी विचार से क्लाइव ने देश के अन्य भागों में भी सावधानी [illegible]। इस प्रकार उसने और उसके उत्तराधिकारियों ने दक्खिन में बहुत सी [illegible] छोटी रियासतें कायम कर दीं और उनसे अधीनता की मैत्री-सन्धि करके [illegible] सुरक्षा का ध्यान रखा। इसी तरह बनारस-राज्य ने जन्म लिया तथा

बिहार और उड़ीसा की रियासतों से सम्बन्ध नियमित कर दिये गये। दक्षिण में कर्नाटक का राज्य बना रहने दिया गया। इस ज़माने की सन्धियों और सुलहनामों की विशेषता यह थी कि उनमें समानता और पारस्परिक सद्भावना की बाहरी चमक दिखाई देती थी पर वास्तविक रूप अधीनता का छिपा हुआ था। अवध की सन्धि की, जो उस समय की सन्धियों का नमूना बनाई गई, कुछ प्रभावशाली शर्तें निम्नलिखित थीं :—

१. नवाब ने अपने तथा बंगाल के इलाक़े की हिफ़ाज़त के लिए, एक फ़ौज रखना स्वीकार किया।
२. फ़ौज के हथियारों, प्रशिक्षण और अफ़सरी की ज़िम्मेदारी ब्रिटिश की थी पर खर्च नवाब को देना पड़ता।
३. नवाब को राज्य-प्रबन्ध की पूरी स्वतन्त्रता दे दी गई जिसकी सुरक्षा ब्रिटिश लोगों के हाथ में रही।

अंग्रेज़ों की सबसे ज़बरदस्त चालबाज़ी थी—राजे-रजवाड़ों को लम्बी रक़में उधार देना और उनको खर्च करा देना। इसके बाद उन पर दबाव डाल कर वे रक़में सूद-ब्याज समेत वसूल करना और वसूल न होने पर जबरन् उनको अपनी अधीनता स्वीकार कराना। एक अंग्रेज़ इतिहासकार ने इस चालबाज़ी की परिभाषा बड़ी सुन्दर लिखी है—बैलों को मोटा करना!

रजवाड़ों को दबाने का दूसरा तरीक़ा था—उनके दरबार में षड्यन्त्र और साज़िश कराना या गद्दी के दावेदारों को रियासत के असली हक़दार के मुक़ाबले बढ़ावा देना। हैदराबाद का मामला, जो हम पहले बयान कर चुके हैं, ऐसी ही एक मिसाल है।

दोस्ती रखने वाली ताक़तों का एक सिलसिला क़ायम करने की अंग्रेज़ों की नीति से हमें यह नतीजा नहीं निकालना चाहिये कि उस ज़माने में भी अंग्रेज रियसतों के स्वायत्त शासन को मान्यता देते थे। कार्नवालिस ने भी, जिसने अमेरिका में प्रमाद वश साम्राज्य बढ़ाने की चेष्टा का बुरा नतीजा भोगा था, और बहुत सावधान हो चुका था, बिना किसी हिचक के अवध को ब्रिटिश द्वारा सुरक्षित रियासत मानने के बावजूद, वहाँ के अन्दरूनी मामलों में दखल दिया। उसकी दस्तन्दाज़ी इतनी बढ़ गई थी कि लोग ताने देते थे, यह कह कर कि रेज़ीडेण्ट शाही अस्तबल के घोड़ों और शाही बावर्चीखाने में पकनेवाली चीज़ों का चुनाव करता है। सर जान शोर और कार्नवालिस [illegible] साथ अंग्रेज़ों की—"दूर बैठ तमाशा देख" वाली नीति का अन्त हो गया। क्लाइव [illegible] इतिहासकार ने बड़ी खूबसूरती से लिखा है—"मुग़लों से जागीर पाने की कहानी गढ़ कर क्लाइव ने प्रादेशिक शक्ति का अस्तित्व खोज लिया।"

नया नमूना

वेलेज़ली के आने पर, १७९८ में, पिछली नीति को [illegible]

भारी रूप में दखल दिया गया। पुरानी नीति अपने तर्कयुक्त परिणाम तक पहुँचाई गई। उसमें सहायक सन्धियों के सिद्धान्त की घोषणा की गई। पारस्परिक मेल-जोल, भाईचारे और कृतज्ञता के दिन हवा हो गये। उनके बजाय, अधीनता और दीनता राजे-महाराजाओं की तरफ से और उद्दण्डता अंग्रेज़ों की तरफ से आये दिन की नीति बन गई।

लार्ड हेस्टिंग्स ने रही सही मान और मर्यादा पर पानी फेर दिया। जिस पद्धति का उन्होंने प्रचार किया उसके दो उद्देश्य थे—एक तो यह कि राजे-रजवाड़ों में कभी एकता मुमकिन न हो सके। दूसरा यह कि प्रत्येक रियासत के लिए आत्मरक्षा करना असम्भव हो जाये। इस नीति का पालन बड़ी सख्ती से किया गया और चालबाजी की सीमा पहुँच गई। सबसे पहले निजाम इस चक्कर में फँसे, इसके बाद पेशवा का नम्बर आया। कुछ समय बाद गायकवाड़ को घेरा गया और मजबूर किया गया। इसी बीच में टीपू सुलतान ने मैसूर फतह कर लिया था। उसने जो इलाका जीता था उसकी एक रियासत कायम कर दी थी। अब जो स्वतन्त्र शक्तियाँ बचीं, वे थे होलकर, सिंधिया और भोंसले। दूसरे मराठा युद्ध की समाप्ति पर वेलेज़ली ने प्रयत्न किया कि इन शक्तियों को भी अपनी शर्तें मनवा कर वश में लाये मगर ईस्ट इंडिया कम्पनी के डाइरेक्टरों ने उसे वापस बुला लिया।

इसके बाद, कोई नया क्रियात्मक आक्रमण सन् १८१३ में हेस्टिंग्स के आने तक नहीं हुआ। रियासतों में दखल न देने की पुरानी नीति कायम रही क्योंकि आन्तरिक व्यवस्था ठीक रखने के लिए उसकी ज़रूरत महसूस की गई।

गायकवाड़ से मैत्री करके काठियावाड़ और गुजरात के मसलों को हल करना आसान हो गया। पेशवा को अपनी तरफ मिलाने से बुन्देलखण्ड में अंग्रेज़ों का प्रभाव बढ़ गया क्योंकि वह इलाका नाममात्र के लिए पेशवा के अधीन था। जान कम्पनी ने ट्रावनकोर जैसी रियासतों से नई सन्धियाँ कीं जहाँ समानाधिकार के बदले अधीनता का सुलहनामा लिखाया गया।

लार्ड मिन्टो ने सन्धियों का यह सिलसिला सतलुज के राज्यों को ब्रिटिश अधिकार में लाकर पूरा कर दिया। महाराजा रणजीतसिंह के बढ़ते हुए प्रभुत्व के कारण ऐसा कदम उठाना अंग्रेज़ों के लिए ज़रूरी हो गया था।

इन सभी सन्धियों में कुछ प्रभावशाली शर्तें रखी गई थीं। उनको सामान्यतया लिखने के बजाय हम नमूने के लिए सन् १८१८ में उदयपुर राज्य से अंग्रेज़ों ने जो सन्धि की थी, उसका पूरा विवरण इस पुस्तक के परिशिष्ट 'ब' में दे रहे हैं।

कम्पनी को, सन्धियों में रियासतों को लपेटने की पद्धति ग्रहण करने से बड़ा फायदा हुआ। पहले तो कम्पनी-शासित प्रदेश की सीमायें सुरक्षित हो गईं, दूसरे अन्य इलाकों का रक्षा-कार्य, जिसका खर्च रजवाड़ों को देना

था, सुगम हो गया। डॉ० कुँवर रघुवीर सिंह ने लिखा है—"ब्रिटिश अधिकार क्षेत्र बढ़ाने की नीति, बिना सीधी सुरक्षा-व्यवस्था को खतरे में डाले, एक सफल कौशल थी।"

इस नीति के परिणाम में प्रजा को सदा मुसीबतों और तकलीफ़ों का सामना करना पड़ा। सहायक सन्धि-प्रथा के दोषों को टॉमस मुनरो ने नीचे लिखे शब्दों में बहुत अच्छी तरह व्यक्त किया है:—

"इस प्रकार की सन्धि जहाँ-जहाँ लागू की गई, उसका स्वाभाविक उद्देश्य उन इलाक़ों की शासन-व्यवस्था को कमज़ोर और जन-उत्पीड़क बना देना, समाज में उच्च स्तर के लोगों में सच्चरित्रता की भावना नष्ट कर देना और समस्त प्रजा को ग़रीबी में डाल कर पतन की ओर ढकेलना था। भारत में बुरी हुकूमत का आम इलाज, महल में गुप्त क्रान्ति होना या खुले आम खूनी बग़ावत है। परन्तु, अंग्रेज़ी सेना की उपस्थिति इस इलाज को सफल नहीं होने देती क्योंकि वह विदेशी तथा घरेलू शत्रुओं से रजवाड़ों की रक्षा करती है। वह प्रत्येक राजा को, अपनी सुरक्षा के लिए अजनबियों पर विश्वास करना सिखा कर उसे निरुत्साही और आलसी बना देती है। साथ ही, यह दिखला कर कि उसे अपनी प्रजा की नफ़रत से डरने की ज़रूरत नहीं है, उसको बेरहम और लालची भी बनाती है। जहाँ कहीं यह सहायक-सन्धि-प्रथा लागू होगी, वहीं के इलाक़े में, इसके परिणामस्वरूप, नष्ट होते हुए गांव और घटती हुई आबादी दिखाई देगी।" सहायक मैत्री की नीति के साथ-साथ अधीनता से अलगाव (१८१३-१८५३) की नीति भी लागू की गई। हालाँकि पहले वेलेज़ली ने इसकी कल्पना की थी, पर सार्थक रूप में इसका ऐलान करना लार्ड हेस्टिंग्स के भाग्य में था। नेपाल से समझौता करने के बाद उसने अपनी नज़र मध्य भारत, राजपूताना, तथा अन्य पड़ोसी राज्यों की ओर घुमाई। इस भाँति, सिन्धु, पंजाब और बर्मा को छोड़ कर सारे भारत में ब्रिटिश सत्ता स्थापित हो गई। मराठा राज्य-मण्डल समाप्त हो गया। पेशवा क़ैद कर लिये गये। होलकर, सिन्धिया और भोंसले सन्धियों के सूत्रों में बांध लिये गये।

ब्रिटिश भारत की बुनियाद

तीन नई रियासतें—दो मुसलमानी टोंक और जावरा—और एक मराठा, [illegible]ा—बनाई गईं। सन् १८१७ में मराठा और राजपूत राजाओं से सम्बन्ध [illegible]श्चत किये गये और सिक्किम से भी सन्धि कर ली गई। अतएव, हम [illegible]श्चयपूर्वक कह सकते हैं कि लार्ड हेस्टिंग्स ने इस प्रकार जो समझौते किये, उनसे ब्रिटिश भारत की बुनियाद पड़ी।

लार्ड हेस्टिंग्स की नीति का मूल आधार था इस तथ्य को स्वीकार करा लेना कि भारत में ब्रिटिश शक्ति ही सर्वोपरि राजनीतिक सत्ता है। इसके पीछे

जो विचार थे उनका निरूपण मेटकाफ ने, जो "भारत मे ब्रिटिश साम्राज्य का एक मुख्य निर्माता" माना जाता है, सन् १८६१ मे लिखे एक पत्र में इस भांति किया है :—

"लोग कहते हैं कि भारत में एक न एक प्रभु-सत्ता सदा रही है जिसकी अधीनता शान्तिप्रिय राज्य मानते थे और बदले में, नये उठे दुराग्रही सामन्तों तथा डाकू-लुटेरों की सेनाओं से वह सत्ता उनकी रक्षा करती थी। अब वही स्थान ब्रिटिश सरकार ने ग्रहण किया है और रक्षा करने वाली सत्ता के अलावा वह कमज़ोर राज्यों की वास्तविक अभिभावक है।"

इसी लक्ष्य को ध्यान में रखकर बड़ी रियासतों के साथ तो व्यवहार किया ही जाता था पर हेस्टिंग्स ने 'छोटी रियासतों की ओर भी समान रूप से ध्यान दिया।' अव्यवस्था के कारण काठियावाड़ और मध्य भारत में बहुत सी छोटी छोटी जागीरें और जमींदारियाँ कायम हो गई थीं जिनको उसने सघनता का रूप दिया।

इस ज़माने में, अंग्रेज रेज़ीडेण्ट लोगों के अधिकार असाधारण रूप से बढ़ गये थे। इस विषय में सरदार के० एम० पाणिक्कर ने लिखा है :—"भारतीय दरबारों में नियुक्त कम्पनी के रेज़ीडेण्ट मंत्रीगण, धीरे-धीरे किन्तु प्रभावशाली ढंग से, एक विदेशी शक्ति का प्रतिनिधित्व करने वाले कूटनीतिज्ञ एजेन्टों के बजाय उच्च सरकार के अधिशासी तथा नियन्त्रण अधिकारी बन गये।" उनके अधिकारों में यह वृद्धि "राजनीतिक दस्तूर" की बाद मे संस्थापिका बनी। राज्यों में दुराचार और अव्यवस्था समाप्त नहीं हुई थी। अतएव उस समय आवश्यकता अनुभव की जाने लगी कि इन दोषों को दूर करने के लिए कुछ उपाय करना चाहिए। इसके अतिरिक्त, फ्रान्सीसियों का आतंक और मराठों का खतरा दूर हो चुका था तथा महान् मुग़ल अब एक पुतला मात्र रह गया था। सबसे अधिक प्रभावशाली बात थी अंग्रेजों के जन्म-देश इंग्लैंड निवासियों की चित्तवृत्ति मे परिवर्तन, जहाँ साम्राज्य की शान के गीतों की प्रशंसा होने लगी और उपनिवेशीय पैदावार का मुनाफा बटोरा जाने लगा। अतएव कम्पनी के बोर्ड ऑफ़ डायरेक्टर्स ने हिदायत भेजी जिसका मतलब था—"इलाक़ों के राजस्व में न्यायपूर्ण समुचित वृद्धि करना बन्द न किया जाय।" बेंटिंक के बाद जितने गवर्नर जेनरल हुए उन सबने 'नोच-खसोट' की नीति का समर्थन किया। सन् १८४१ मे पहला शिकार कुर्ग की रियासत बनी जिसको सार्वभौम सत्ता की इच्छा पर, बदइन्तज़ामी का आरोप लगा कर हड़प लिया गया। उसी भाँति सिन्ध भी मिला लिया गया, पंजाब को जीत लिया गया। इन सबको ब्रिटिश भारत में मिलाने का अर्थ यह हुआ कि नई रियासतें भी अंग्रेजों के घेरे में आ गईं। वे थीं—खैरपुर, कश्मीर तथा कुछ अन्य जागीरें। उत्तराधिकारी के अभाव में सम्पत्ति पर राज्याधिकार की नीति के अनुसार सतारा, जयपुर, झाँसी, सम्बलपुर और नागपुर की रियासतों पर अंग्रेजों ने अधिकार कर लिया।

जब बिल्ली हज को चली !

प्रोफ़ेसर कीथ ने लिखा है कि अवध—"जहाँ के बदनसीब राजे और नवाब, अंग्रेजों के इतने ज़्यादा फ़रमाबरदार थे कि कोई बहाना कभी सोचा भी नहीं जा सकता, जिसके ज़रिये उनसे, उनके हुकूक छीने जा सकें।" वही अवध का राज्य छीन लिया गया क्योंकि डलहौज़ी के शब्दों में—"ब्रिटिश हुकूमत, ईश्वर और और मनुष्य, दोनों की निगाहों में गुनहगार ठहराई जायगी अगर वह आयन्दा ऐसी रियासती बदइन्तजामी, जिसमें लाखों इन्सान मुसीबतें झेल रहे हों, बरदाश्त करती हुई ख़ामोश रहेगी।" अवध पर अंग्रेजों ने अधिकार कर लिया। पर इसी के साथ-साथ, जागीरदारों और जमींदारों में असंतोष और निराशा फैल गई। जो सताये गये थे, उनमें से बहुतों ने सन् १८५७ में बाग़ियों की मदद की। इसके बारे में, सर विलियम स्लीमैन जैसे समझदार अंग्रेज़ों ने गवर्नर जेनरल लार्ड डलहौज़ी को आगाह किया था कि—"अवध को अंग्रेज़ी राज्य में मिलाने की क़ीमत दस राज्यों के बराबर चुकानी पड़ेगी और अनिवार्य रूप से यह कार्य सिपाही विद्रोह खड़ा कर देगा।" साथ ही, सर स्लीमैन ने यह भी लिखा कि राजे-रजवाड़े बन्धियों और बाँधों की तरह हैं—"जहाँ ये बह गये, वहीं हमें देशी फ़ौजों के सहारे रहना होगा, जो मुमकिन है, कि हमेशा हमारी फ़रमाबरदार न रह सकें।" लेकिन, लार्ड डलहौज़ी ने किसी की एक न सुनी। उसकी ज़िद ने, कि वह ब्रिटिश राज्य का विस्तार करेगा, गुलामी में जकड़े जन-साधारण को जगा दिया। इस प्रकार भारतीय राष्ट्रवाद ने जन्म लिया। मध्यम वर्ग के लोगों में देशभक्ति की भावना प्रबल होने पर जागृति का नया दर्शन अपना प्रभाव दिखाने लगा। इसी कारण अंग्रेज़ों को आवश्यकता पड़ी कि राजे-रजवाड़ों से मैत्री और मेल-जोल बढ़ाने की नीति अपनाई जाये। भारतीय विद्रोह की समाप्ति पर इंग्लैंड की रानी ने अपने शाही ऐलान में कहा—"हम देशी नरेशों के अधिकारों, मर्यादाओं और प्रतिष्ठा को उसी प्रकार आदर देंगे जैसे हम अपनों को देते हैं।" लार्ड कैनिंग ने अपने ३० अप्रैल, १८६० के वक्तव्य में ऐसी नीति की आवश्यकता समझाते हुए कहा :—

"अरसा हुआ, जब सर जॉन मैल्कम ने कहा था कि अगर हमने सारे भारत को ज़िलों में बाँट दिया तो वैसी परिस्थिति में हमारा साम्राज्य ५० वर्ष भी नहीं टहर सकेगा। लेकिन हम अगर कुछ देशी रियासतों को क़ायम रखें, जिनको राजनीतिक अधिकार न देकर उनका प्रयोग हम शाही आयुधों की तरह करें, तो हम उस समय तक भारत में रहेंगे जब तक समुद्रों में हमारे जंगी जहाज़ों की ताक़त और श्रेष्ठता क़ायम रहेगी। मुझे अपनी उस राय की सच्चाई में ज़रा भी सन्देह नहीं है और हाल की घटनाओं ने, पहले की बनिस्बत, इस दिशा में अधिक ध्यान दिये जाने की ज़रूरत पैदा कर दी है।"

बीसवीं सदी की शुरूआत और चकाचौंध का खात्मा

हमारी कहानी का अगला अध्याय बीसवीं शताब्दी से प्रारम्भ होता है। लार्ड लिटन का रियासतों को प्रतिक्रियावादी बनाने का सपना अनेक उपायों द्वारा सच बनाने की चेष्टा की जा रही थी। ब्रिटिश भारत में खास कानून पास किये गये कि रियासतों के विरुद्ध लाछन लगाने या विद्रोह फैलाने की चेष्टाओं को सख्ती से रोका जाये। मेलजोल और आत्मीयता बढ़ाने की नीति को पुष्ट करने के लिए रजवाड़ों को सलाह-मशविरे के लिए बुलाने की पद्धति जारी की गई और उनको प्रलोभन देने के लिए खिताब और तमगों की नुमायश लगा दी गई।

लार्ड कर्जन ने एक नई बात पर जोर दिया। उन्होंने हठ करके एक सबसे बड़ी अधिकार-सत्ता का पूरी जिम्मेदारियों के साथ स्थापित किये जाने का पक्ष लिया। साथ ही साथ, उन्होंने रियासतों को स्थानीय शासन व्यवस्था सुचारु रूप से चलाने और अपनी हुकूमत में स्तर ऊँचा करने की आवश्यकता पर जोर दिया। रियासतों के नरेशों को सन्देह मुक्त करने के लिए, जिनके विचार प्रायः बड़े विचित्र हुआ करते थे, उन्होंने १२ नवम्बर १९०३ को अपने भाषण में कहा :—

"ब्रिटिश राजमुकुट की सत्ता का कोई विरोध नहीं कर सकता। उसने स्वयं ही अपने निजी शासनाधिकार की सीमाओं को प्रतिबन्धित कर रखा है।"

परन्तु, समस्या को सुलझाने में इस सख्ती का नियम शिथिल करना पड़ा क्योंकि भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन उठ पड़ा था और दूसरी तरफ प्रथम महायुद्ध छिड़ चुका था। लार्ड हार्डिन्ज ने सबसे पहले यह समझा कि पिछलग्गुओं का एक सुसंगठित दल उनके साथ रहे अतएव उन्होंने राजकीय महत्व के मामलों में भारतीय नरेशों से सलाह लेने की पद्धति चालू कर दी। इस तरह की पहली कान्फ्रेंस सन् १९१३ में प्रथम महायुद्ध की शुरूआत पर हुई।

भारतीय नरेशों की देशद्रोही प्रवृत्तियों का मूल्य समझ में आने पर सार्वभौम सत्ता की ओर से कई बयानों में उनका उल्लेख किया गया। लार्ड हार्डिन्ज ने उनको शाही हुकूमत के महान कार्य में "सहायक और सहयोगी" बतलाया। इसी कारण आवश्यकता पड़ी कि नरेशों का एक संघ बनाया जाय जिसके द्वारा उनका सहयोग और सहायता प्राप्त करने में आसानी हो। २८ मई १९०६ को लार्ड मिण्टो ने सेक्रेटरी ऑफ स्टेट लार्ड मार्ले को एक पत्र में स्पष्ट रूप से लिखा :—

"कांग्रेस के उद्देश्यों को चकनाचूर करने के लिए मैं हाल में बड़ी गम्भीरता से सोचता रहा हूँ। मेरे विचार में, राजाओं की एक कौन्सिल कायम कर देने

से हमारा मतलव पूरा हो सकता है।" ८ फरवरी सन् १९२१ को लिटन और मिण्टो का सपना पूरा हुआ। सम्राट् की ओर से कनाट के ड्यूक ने रजवाड़ों की कौन्सिल का उद्घाटन किया जिसके चैन्सलर महाराजा वीकानेर तथा चेयरमैन वायसराय बनाये गये। उसमें १०८ सदस्य थे जो स्वयं अधिकारी थे तथा ११ तोपों की और उससे अधिक भी सलामियाँ पाया करते थे। १२ अतिरिक्त सदस्य थे जो १२७ छोटे राज्यों के प्रतिनिधि थे।

एक संयुक्त कमेटी नियुक्त करके एकीकरण एजेन्सी की ज़रूरत पूरी की गई। मण्डल ने एक कुलपति तथा एक कार्यवाहक कुलपति का चुनाव कर लिया। दिल्ली के कौन्सिल हाउस में हर साल बैठकें होती थीं।

भारतीय वैधानिक कमीशन की रिपोर्ट में, जैसा संकेत किया गया था, उसके अनुसार वह मण्डल कार्यकारी निकाय न था वलिक विचार-विमर्श करने और सलाह देनेवाला निकाय था।

सन् १९१९ में जो संवैधानिक सुधार हुए, उनका क्षेत्र सीमित होते हुए भी, उनके द्वारा रियासतों की समस्याओं का भारतीय जनता के आगे अधिक प्रत्यक्षीकरण हो सका। रियासतों में आर्थिक विकास और औद्योगीकरण की समस्याओं के फलस्वरूप नितान्त आवश्यकता थी कि इस विषय में भारतीय विधान-मंडल को वोलने का ज़्यादा अधिकार मिले, जिसके लिए मण्डल ने दवाव भी डाला। स्वाभाविक था, कि रियासतों ने इस बात का विरोध किया। नतीजा यह हुआ कि ब्रिटिश-भारतीय नेताओं और राजाओं के बीच खुली दुश्मनी पैदा हो गई।

इन बातों के अलावा, भारत में प्रादेशिक शासन स्वतंत्रता, स्वराज्य और पूर्ण स्वराज्य की माँगें वढ़ती जा रही थीं। ब्रिटिश सरकार अपने दृष्टिकोण पर क़ायम थी कि राजे-रजवाड़ों की सम्मति के विना कुछ नहीं किया जा सकता और इस तरह समझौते की सारी सम्भावनायें टाल दी जाती थीं। रजवाड़े अपने निश्चय पर अटल थे और कुलपति महाराजा पटियाला ने, २३ जुलाई १९२६ को अपने भाषण में कहा—

"मैं केवल इतना कहूँगा कि जो लोग सन् १९१९ में ब्रिटिश भारत के लिए क़ानून वना रहे थे, उन्होंने यदि एक नजर भारत के मानचित्र पर डाली होती, तो उनको विश्वास हो जाता कि प्रान्तीय शासन से वाहर के इलाक़ों के लिए जो कुछ वे करेंगे, उसका प्रत्यक्ष तथा परोक्ष प्रभाव निश्चय ही उन क्षेत्रों [illegible] र पड़ेगा जिन पर राजे-रजवाड़ों का शासन है।"

एक भाषण में उन्होंने और भी साफ़ कहा—

भारत द्वारा शासित होने के लिए, जिसके अनेक भागों पर में हमारी हुकूमत रही है, हम और हमारी प्रजा कभी नहीं

फिर संकट का समय

घटनाओं का क्रम धीरे-धीरे संकट की ओर बढ़ता जाता था। पहली बार, सर्वभौम सत्ता से सीधा सम्बन्ध रखने की नीति का गम्भीरता से समर्थन किया गया जिसका भारतीय नेताओं ने जबरदस्त विरोध किया। उनका कहना था कि सम्राट् से सम्बन्ध रखने का सवाल ही नहीं उठता जबकि भारत सरकार की शासन व्यवस्था चल रही है। जो भी आगामी सरकार भारत का शासन चलायेगी उसी से राजे-रजवाड़ों को सम्बन्ध रखने होंगे।

ब्रिटिश सरकार ने बटलर कमेटी नियुक्त की जिसने रियासतों के मसले को जाँच-परख कर फरवरी १६२६ में अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत की। उसने स्वीकार किया था कि—"शाही इतिहास में भारतीय नरेशों की प्रभावशाली भूमिका रही है। गदर के जमाने में उनकी राजभक्ति, महायुद्ध में उनकी विशेष सेवायें, ब्रिटेन के राजमुकुट, राजा और राजपरिवार के प्रति उनकी अगाध श्रद्धा, हमारे लिए अभिमान की और साम्राज्य के लिए गौरव की बात है।"
उस कमेटी ने सिफारिश की—

"हम बाधित हैं कि इस बिना पर राजाओं की गम्भीर आशंकाओं की ओर ध्यान आकर्षित करें और दृढ़ता से अपनी राय दें कि सार्वभौम सत्ता और राजाओं के सम्बन्धों की ऐतिहासिक प्रकृति को दृष्टि में रखते हुए, उनको, बिना उनकी सम्मति के, किसी भारतीय हुकूमत से, जो भारतीय विधान-मंडल के प्रति उत्तरदायी हो, सम्बन्ध रखने के लिए, हस्तान्तरित न किया जाये।"

इस सन्दर्भ में सार्वभौम सत्ता की परिभाषा इस प्रकार दी गई—"सम्राट् का अधिकार, सेक्रेटरी ऑफ़ स्टेट तथा गवर्नर 'जेनरल-इन-कौन्सिल' के द्वारा जो ग्रेट ब्रिटेन की पार्लमिण्ट के प्रति उत्तरदायी हैं।"

इन बातों से रजवाड़ों को बहुत सन्तोष हुआ, फिर भी वे निराशा का अनुभव करते रहे। कारण यह था कि कमेटी ने साफ तौर पर उनकी इस माँग का निषेध कर दिया था कि सर्वश्रेष्ठता की परिभाषा की जाय तथा आधिपत्य के प्रयोग के अवसरों को सीमित कर दिया जाय।

निकम्मों का महत्व, आये दिन उन अंग्रेज़ों की बातचीत का विषय बन गया, जो ब्रिटिश जनता पर प्रभाव डाल कर यह बात उनके दिमाग़ में बिठाना चाहते थे कि भारतीय गुलामों को हाँकने वाले मालिक लोग वास्तव में "ब्रिटिश नीति के निकम्मे औजार हैं।"

सन् १६३५ के प्रस्तावित सघीय संविधान में 'निकम्मों का महत्व' भली भाँति समझ में आया। राजाओं को ऊपरी सदन में २/५ और नीचे के सदन में १/३ प्रतिनिधित्व प्राप्त हुआ। अलावा इसके, राज्य-संघ में प्रवेश, प्रान्तीय पद्धति के विपरीत, स्वतः न हो कर, प्रविष्टि संलेख द्वारा नियमित कर दिया गया जिस पर राजाओं के हस्ताक्षर होते थे और जिसके द्वारा अपने पक्ष में स्थान सुरक्षित रखने की उनको अनुमति मिलती थी। इस पर भी, विधान मण्डल का अधिकार

राजाओं और उनकी रियासतों के मामलों में सीमित और मर्यादित करना पड़ा। संविधान पर पार्लमिण्ट में बहस के दरमियान लार्ड रीडिंग ने आदेशों की सुविधाओं को समझाते हुए कहा—

"अगर अखिल भारतीय राज्य-संघ में राजे लोग आ गये तो सदैव एक स्थिरता लाने वाला प्रभाव बना रहेगा। हमें किस बात से सबसे ज्यादा डर लगता है? ये वही लोग हैं जो आज़ादी के लिए भड़काते हैं और साम्राज्य से नितान्त पृथक् होने का अधिकार प्राप्त करने के लिए उकसाते हैं। मेरा निज का विश्वास है कि ऐसे लोग महत्त्वहीन अल्प संख्या में हैं जिनकी पृष्ठपोषक कांग्रेस की संस्था है। अतएव, यह ज़रूरी है कि हम ऐसे विचारों के विपरीत, स्थिरता लाने वाले प्रभाव, जो भी मिलें, एकत्र करें। लगभग ३३ प्रतिशत रजवाड़े विधान मण्डल के सदस्य होंगे, साथ ही ४० प्रतिशत ऊपरी सदन में होंगे। यह अवश्य है कि भारतीयों की कुछ बड़ी संस्थायें हैं जो कांग्रेस की इस राय से सहमत नहीं हैं। उनका प्रभाव भी संघीय विधान मंडल में आ-जाने से, मुझे लेशमात्र भय नहीं है कि क्या होगा, भले ही सबसे ज़्यादा सीटें हासिल करने में कांग्रेस सफल हो जाये।"

कांग्रेस का आक्रमण प्रारम्भ

भारत में राष्ट्रीय आन्दोलन की प्रगति, जिसके विरोध में लार्ड रीडिंग सुरक्षा के क़दम उठाना चाहते थे, कांग्रेस की नीति में परिवर्तन के साथ-साथ प्रकट हो चली। पहले कांग्रेस की नीति रियासतों के मामलों में दखल न देने की थी, मगर अब हालत बदल चुकी थी। हरीपुरा कांग्रेस अधिवेशन में, रियासतों के बारे में नीति निश्चित की गई। रियासतों की प्रजा की इच्छाओं को जानते हुए कहा गया—"पूर्ण स्वराज्य का अर्थ है रियासतों सहित सारे भारत पर भारतीयों का राज्य। क्योंकि, भारत की पूर्णता और एकता स्वतन्त्र होने पर भी उसी तरह स्थायी रखनी है, जिस तरह वह पराधीनता में स्थायी रही है।"

परन्तु, इस बात पर जोर दिया गया कि रियासतों में जो संघर्ष का अभियान चलाय जाय, वह कांग्रेस की ओर से न हो बल्कि स्वतन्त्र लोकप्रिय समुदायों की ओर से हो। लुधियाना की रियासती प्रजा कान्फ्रेन्स में, जिसके सभापति स्व० पण्डित जवाहरलाल नेहरू थे, स्थिति और भी स्पष्ट हो गई। उसमें मुख्य प्रस्ताव यह था—

"समय आ गया है जब यह संघर्ष, भारतीय स्वतन्त्रता संघर्ष के साथ, जो व्यापक रूप से चलाया जा रहा है, मिल कर चलाया जाय और यह उसी का अभिन्न अंग बना दिया जाय। ऐसा सम्पूर्ण अखिल भारतीय संघर्ष कांग्रेस ¹डेशन में चलाया जाना अत्यन्त आवश्यक है।" उसी कान्फ्रेन्स में पण्डित ने छोटी रियासतों तथा उनकी एकता से सम्बन्धित राष्ट्रीय आन्दोलन की निश्चित कर दी।

आगे चल कर, कान्फ्रेन्स के उदयपुर अधिवेशन में, कान्फ्रेन्स के लक्ष्य की व्याख्या इस प्रकार की गई—"रियासतों को स्वतन्त्र भारतीय संघ का एक भिन्न अंग मानते हुए, वहाँ की जनता द्वारा, शान्तिपूर्ण न्यायोजित उपायों से में उत्तरदायी सरकार की प्राप्ति।"

नेहरू द्वारा निन्दा -

रियासतों में जनता की हालत, जिसके पक्ष में पण्डित नेहरू ने भाषण दिया, अत्यन्त दयनीय और गुलामी की बतलाई गई। अपनी आत्म-कथा में पण्डित जी ने लिखा है—

"उत्पीड़न की अनुभूति आती है, वह दम घोटनेवाली है, साँस लेना कठिन और स्थिर या धीमे बहते हुए पानी के नीचे, प्रवाहहीनता और दुर्गन्ध है। न पड़ता है, कँटीली झाड़ियों से घिरे हैं, चारों तरफ से घिरे हैं, शरीर और न, दोनों से बलात् झुका दिये गये हैं। और—हम देखते हैं लोगों का नितान्त पिछड़ापन, तकलीफ़ें, जिनके साफ मुकाबले में हैं, राजाओं के चमचमाते महलों का आडम्बर। रियासत की कितनी ज्यादा दौलत, एक राजा के ऐशोआराम और निजी जरूरियात पर खर्च की जाती है और कितनी कम दौलत किसी शक्ल में जनता को वापस की जाती है!

इन रियासतों के चारों तरफ रहस्य का एक पर्दा है। समाचार पत्रों को वहाँ प्रोत्साहन नहीं दिया जाता। ज्यादा से ज्यादा एक साहित्यिक या अर्ध-सरकारी साप्ताहिक चल सकता है। अक्सर, बाहर के अखबारों को सामने में नहीं आने दिया जाता। साक्षरता, ज्यादातर रियासतों में बहुत कम है। दक्षिण की ट्रावंकोर, कोचीन आदि रियासतों में ब्रिटिश भारत की अपेक्षा साक्षरता का स्तर बहुत ऊँचा है। किसी भी रियासत से जो समाचार आते हैं, उनका सम्बन्ध हमेशा, शानशौकत से वायसराय का आगमन, स्वागत-समारोह, एक दूसरे के प्रति औपचारिक सराहना के भाषण, अथवा पानी की तरह धन फूँक कर शादी-व्याह या सालगिरह के जलसे की धूमधाम, या गाँव वालों की बगावत आदि से रहता है। खास कानूनों द्वारा ब्रिटिश भारत में, राजाओं की आलोचना करने पर प्रतिबन्ध है और रियासतों में ऐसी कोशिश सख्ती से दबा दी जाती है। सार्वजनिक सभायें क्या होती हैं, वहाँ कोई जानता नहीं। सामाजिक उद्देश्यों की सभायें भी अक्सर नहीं होने पातीं।"

एक अन्य लेखक ने बड़े क्रोध में आकर कुछ मनोरंजक तथ्य प्रकट किये हैं। उसने लिखा है—

"इंग्लैंड के बादशाह को कुल राजस्व में से प्रत्येक १६,००० में एक मिलता है, बेलजियम के बादशाह को १,००० में से एक, इटली के बादशाह को ५०० में से एक, डेन्मार्क के राजा को ३०० में से एक और जापान के सम्राट् को ४०० में से एक। किसी राजा को १७ में से एक नहीं मिलता,

राजाओं और उनकी रियासतों के मामलो
संविधान पर पार्लमिण्ट में वहस के
सुविधाओं को समझाते हुए कहा—

"अगर अखिल भारतीय राज्य-संघ
स्थिरता लाने वाला प्रभाव बना रहेगा।
लगता है ? ये वही लोग हैं जो आजादी
नितान्त पृथक् होने का अधिकार प्राप्त
का विश्वास है कि ऐसे लोग महत्त्वहीन
कांग्रेस की संस्था है। अतएव, यह जरूरी
स्थिरता लाने वाले प्रभाव, जो भी मि
रजवाड़े विधान मण्डल के सदस्य होंगे,
होंगे। यह अवश्य है कि भारतीयों की
राय से सहमत नहीं हैं। उनका प्रभाव
मुझे लेशमात्र भय नहीं है कि क्या होगा,
में कांग्रेस सफल हो जाये।"

कांग्रेस का आक्रमण प्रारम्भ

राजाओं के विषय में महात्मा गांधी

महात्मा गांधी, जो प्रत्येक के लिए सत्य और न्याय के समर्थक थे, ऐसे महापुरुष थे कि वे खामोश रहे होते यदि परिस्थितियाँ वास्तव मे अधोगति को न पहुँच गई होतीं। द्वितीय महायुद्ध प्रारम्भ होते ही तत्काल ब्रिटिश सरकार ने प्रजातन्त्र और स्वतन्त्रता के नाम पर भारतीयों से अपील की कि वे साम्राज्य की रक्षा करें। मानवीय अधिकारों के लिए लडने वाले महान् सन्त से यह बात सहन न हुई और उसने ७ अक्तूबर १९३९ को 'हरिजन' मे लिखा—

"मगर भारत का हर एक राजा अपने राज्य मे हिटलर जैसा तानाशाह है। वह अपनी प्रजा को गोलियों से उड़ा दे, तो भी कानून उसी का साथ देगा। इससे ज्यादा अधिकार तो हिटलर को भी नही है। अगर मैं गलती नहीं करता, तो जर्मन संविधान ने फ्यूरह्‌र पर भी कुछ अंकुश लगा रखा है। स्वयं-नियुक्त प्रजातन्त्र के अभिभावक ग्रेट ब्रिटेन की स्थिति तब तक खतरे मे है जब तक ५०० निरंकुश शासक उसके मित्र और साथी बने हैं। राजा लोग ग्रेट ब्रिटेन की वास्तविक सेवा कर सकते हैं यदि वे अपने समस्त साधन, स्वेच्छाचारी शासको की तरह नही, बल्कि अपनी प्रजा के सच्चे प्रतिनिधियो की तरह, उसको अर्पण करें।" हमे आगे उद्धरण देने की आवश्यकता नही, इतना ही काफी है।

एकता की ओर

सन् १९३५ की तजवीज के मुताबिक संघ की स्थापना नही हो सकी। युद्ध के साथ-साथ परिस्थितियाँ जटिल होती गईं और उनको सुलझाने का प्रयास किया गया।

भारत से ब्रिटिश शासको की बिदाई की क्रिप्स योजना के अनुसार एक यूनियन (संगठन) बनाने का निश्चय किया गया जिसमे रियासतो के भाग लेने का प्रश्न वैकल्पिक रखा गया। भाग न लेने वालो की मर्यादा शेष यूनियन के बराबर रखी गई। जहाँ तक निरावलम्बन के सिद्धान्त का सम्बन्ध था, क्रिप्स योजना के अन्तर्गत रियासतो और प्रान्तों मे अन्तर रखा गया। रियासतों के प्रतिनिधि-मडल द्वारा सर स्टैफर्ड क्रिप्स को जो स्मृति-पत्र दिया गया, उसमें उनसे अनुरोध किया गया कि यदि वे चाहे तो रियासतों को अपना एक निजी संगठन बनाने का अधिकार प्रदान कर दें। साथ ही, यह भी कहा गया कि इसका मतलब अलग संगठन वास्तविक रूप मे बनाना नहीं बल्कि भारतीय संगठन मे रियासतो की मर्यादा बढाना है।

भारतीय नेताओं ने उस योजना को स्वीकार नहीं किया अतएव वह समाप्त कर दी गई। शिमला कान्फ्रेन्स होने तक परिस्थिति ज्यों की त्यों जटिल बनी रही। यह कान्फ्रेन्स भी असफल रही और भारत के भविष्य के

जिस प्रकार त्रावंकोर की महारानी को मिलता है। हैदराबाद के निज़ाम और महाराजा बड़ौदा १३ में से एक, कश्मीर और बीकानेर के महाराज ५ में से एक अंश ले लेते हैं। सारा संसार यह जान कर निन्दा करेगा कि बहुत से राजा लोग ऐसे हैं जो रियासत के राजस्व का एक तिहाई या आधा भाग अपने निजी खर्च में लगाते हैं।"

नागरिक अथवा प्रेस की आज़ादी कहाँ तक है? इस विषय में पंडित नेहरू द्वारा रियासतों की निन्दा को बल देने के लिए "आपत्तिजनक सामग्री" विषयक "आदर्श क़ानून" की पाँचवीं और छठी धारायें इस प्रकार हैं—

५. महकमा खास से, पहले इजाज़त हासिल किये बग़ैर, कोई अखबार किताब या काग़ज़ न छापा जायगा और न प्रकाशित किया जायगा।

६. कोई छपाई करने वाला प्रेस या प्रकाशक, मेवाड़ के अन्दर अपने प्रकाशन की, किसी विदेशी प्रकाशन से अदला-बदली नहीं करेगा।

[उदयपुर रियासत के प्रेस क़ानून में से उद्धृत।]

एक शताब्दी पहले इसी स्थिति के बारे में एक विद्वान् ने कहा था कि—"अगर राजे-महाराजे किसी काम के हैं, तो सिर्फ़ नुमायश के!" सर हेनरी काटन् ने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक "इण्डिया इन ट्रॉन्जिशन" में लिखा है—

"हमारे भारतीय जागीरदारों से बढ़ कर किसी अधिक संवेदनशील समुदाय की कल्पना करना असम्भव है। वे लोग आपस में, श्रेष्ठता के सवालों पर, सलामियों के बारे में, अपनी फ़ौजी ताक़त के सम्बन्ध पर, सामान्य ईर्ष्या-द्वेष में एक-दूसरे से जला करते हैं। एक राजा ने मिसाल पेश की तो फ़ौरन दूसरों पर छूत की बीमारी की तरह उसका असर हुआ। मिसाल की नक़ल होने लगी। कोई पीछे क्यों रहे? वायसराय के आने पर उसकी खातिरदारी, स्वागत-सत्कार, राजभक्ति के प्रदर्शन की पाशविक प्रवृत्तियाँ, जो विदेशी सरकार से मान्यता और कृपा प्राप्त करने के अचूक मंत्र थे—सभी बातों में राजा लोग एक दूसरे से मुक़ाबला करते रहते थे।"

पचास वर्ष पहले, यही होता था, राजाओं के पक्षपाती और रक्षक जिसकी सराहना करते थे। बाद में भी, स्थिति नहीं बदली। वे बराबर आडम्बर और मूर्खता के वफ़ादार साथी बने रहे, वे बराबर इन्सानियत के तरीक़े अख्तियार करने से कतराते रहे, जिससे मजबूर होकर कर्नल सर कैलाश हकसर जैसे व्यक्ति को लिखना पड़ा—

"पिछली शताब्दी के बीच या अन्त तक, संसार ने रियासतों के राजाओं के मानसिक पतन का दृश्य देखा है, जो ख़िताबात और तमग़े हासिल करने की दौड़ में पूरी कोशिश से एक-दूसरे को हराना चाहते थे।"

राजाओं के विषय में महात्मा गांधी

महात्मा गांधी, जो प्रत्येक के लिए सत्य और न्याय के समर्थक थे, ऐसे महापुरुष थे कि वे खामोश रहे होते यदि परिस्थितियां वास्तव में अधोगति को न पहुँच गई होतीं। द्वितीय महायुद्ध प्रारम्भ होते ही तत्काल ब्रिटिश सरकार ने प्रजातन्त्र और स्वतन्त्रता के नाम पर भारतीयों से अपील की कि वे साम्राज्य की रक्षा करें। मानवीय अधिकारों के लिए लड़ने वाले महान् सन्त से यह बात सहन न हुई और उनने ७ अक्तूबर १९३९ को 'हरिजन' में लिखा—

"अगर भारत का हर एक राजा अपने राज्य में हिटलर जैसा तानाशाह है। वह अपनी प्रजा को गोलियों से उड़ा दे, तो भी कानून उसी का साथ देता। इससे ज्यादा अधिकार तो हिटलर को भी नहीं है। अगर मैं ग़लती नहीं करता, तो जर्मन संविधान ने फ़्यूरह्.र पर भी कुछ अंकुश लगा रखा है। स्वयं नियुक्त प्रजातन्त्र के अभिभावक ग्रेट ब्रिटेन की स्थिति तब तक खतरे में है जब तक ५०० निरंकुश शासक उसके मित्र और साथी बने हैं। राजा लोग ग्रेट ब्रिटेन की वास्तविक सेवा कर सकते हैं यदि वे अपने समस्त साधन, स्वेच्छाचारी शासकों की तरह नहीं, बल्कि अपनी प्रजा के सच्चे प्रतिनिधियों की तरह, उसको अर्पण करें।" हमें आगे उद्धरण देने की आवश्यकता नहीं, इतना ही काफ़ी है।

एकता की ओर

सन् १९३५ की तजवीज़ के मुताबिक़ संघ की स्थापना नहीं हो सकी। युद्ध के साथ-साथ परिस्थितियां जटिल होती गईं और उनको सुलझाने का प्रयास किया गया।

भारत में ब्रिटिश शासकों की विदाई की क्रिप्स योजना के अनुसार एक यूनियन (संगठन) बनाने का निश्चय किया गया जिसमें रियासतों के भाग लेने का प्रश्न वैकल्पिक रखा गया। भाग न लेने वालों की मर्यादा शेष यूनियन के बराबर रखी गई। जहाँ तक निरावलम्बन के सिद्धान्त का सम्बन्ध था, क्रिप्स योजना के अन्तर्गत रियासतों और प्रान्तों में अन्तर रखा गया। रियासतों के प्रतिनिधि-मंडल द्वारा सर स्टैफर्ड क्रिप्स को जो स्मृति-पत्र दिया गया, उसमें उनसे अनुरोध किया गया कि यदि वे चाहें तो रियासतों को अपना एक निजी संगठन बनाने का अधिकार प्रदान कर दें। साथ ही, यह भी कहा गया कि इसका मतलब अलग संगठन वास्तविक रूप में बनाना नहीं बल्कि भारतीय संगठन में रियासतों की मर्यादा बढ़ाना है।

भारतीय नेताओं ने उस योजना को स्वीकार नहीं किया अतएव वह समाप्त कर दी गई। शिमला कान्फ़्रेन्स होने तक परिस्थिति ज्यों की त्यों जटिल बनी रही। यह कान्फ़्रेन्स भी असफल रही और भारत के भविष्य के

बारे में कोई फ़ैसला न हो सका।

पार्लमिण्ट का एक प्रतिनिधि-मण्डल भारत भेजा गया कि यहाँ की वास्तविक स्थिति देख कर रिपोर्ट भेजे। इसके बाद एक कैबिनेट मिशन २३ मार्च १९४६ को आया जिसमें सर स्टैफ़र्ड क्रिप्स, लार्ड पैंथिक लारेन्स और मिस्टर ए० वी० अलेक्जेंडर थे। विचार-विमर्श में राजाओं को आश्वासन दिया गया कि "भारतीय व्यवस्था में पारस्परिक समझौते के अलावा किसी भी बुनियाद पर रियासतों के प्रवेश का प्रस्ताव करने का कोई इरादा नहीं है।"

२२ मई सन् १९४६ को कैबिनेट मिशन ने अपना ज्ञापन देते हुए रियासतों की स्थिति स्पष्ट करके कहा कि रियासतों के जो अधिकार ब्रिटिश बादशाह के साथ उनके सम्बन्धों के कारण दिये हुए हैं वे अब समाप्त हो जायेंगे तथा जो अधिकार उन्होंने सर्वोपरि सत्ता को सौंप दिये थे, वे उनको वापस मिल जायेंगे। रियासतों के लिए वैकल्पिक होगा कि वे उत्तराधिकारी सरकार के साथ किसी प्रकार के सम्बन्ध रखने का समझौता करें अथवा आपस में मिल कर कोई अन्य व्यवस्था करें। ज्ञापन में यह सम्भावना भी अच्छी समझाई गई कि जहाँ सम्भव हो, वहाँ रियासतों की विभिन्न प्रशासनिक इकाइयाँ स्थापित की जायें।

कैबिनेट मिशन योजना में उसी परिस्थिति का अनुमोदन पुनः किया गया। उसमें कहा गया कि सर्वोपरि सत्ता की समाप्ति के बाद रियासतों को पूरा अधिकार है कि वे अपना भविष्य निश्चित करें। परन्तु, उनसे यह आशा की जाती है कि वे संघीय सरकार से कुछ समझौता अवश्य कर लेंगी।

आगे यह भी प्रस्ताव था कि संघ में रियासतों को रक्षा, विदेशी मामले और यातायात के अलावा अन्य सभी मामलों में स्वशासन का पूरा अधिकार होगा।

यह भी सोचा गया कि रियासतें एक व्यावहारिक कमेटी बनायें जो विधान सभा के प्रतिनिधियों से सभी मामलों पर बातचीत करे।

कांग्रेस ने कई एतराज़ उठाये और कई बातों की सफ़ाई चाही। उसकी माँग यह भी थी कि प्रतिनिधि चाहे प्रान्तों के हों अथवा रियासतों के, विधान सभा के लिए लगभग एक जैसी चुनाव-प्रणाली होनी चाहिये।

राजाओं के संघ ने, दूसरी ओर, योजना को स्वीकार कर लिया और उसको आगे के समझौते के लिए उचित बुनियाद डालने वाली समझा। उसने समस्या से निपटने के लिए एक समझौता-कमेटी भी नियुक्त की।

समझौते की बातचीत के दरमियान, राज्यों की कमेटी पर दबाव डाला गया कि २० फ़रवरी के ब्रिटिश सरकार के वक्तव्य ने समस्या में आग्रह की प्रवृत्ति रखी है। यदि राज्यों के प्रतिनिधि विधान सभा में भाग लेंगे, तो उससे समस्या के सुलझाने में आसानी होगी। हालांकि समझौता-कमेटी ने इस माँग के स्वीकार करने में मजबूरी ज़ाहिर की, मगर वैयक्तिक सदस्यता

के अधिकारी सभी राज्यों के प्रतिनिधियों ने, हैदराबाद को छोड़ कर, अपने मुखारन्दे भेजे जिन्होंने विधान सभा में आसन ग्रहण किये। रियासतों के विभिन्न समुदायों के प्रतिनिधि, कालान्तर में, निर्वाचित होकर विधान सभा में आये।

घटनाओं के पग तेजी से बढ़ रहे थे और ३ जून १९४७ को भारत सम्राट् का घोषणा-पत्र आया जिसमें समस्त शासनाधिकार १५ अगस्त को भारत और पाकिस्तान के विधान-मण्डलों को हस्तान्तरित कर देने का फैसला किया गया था। रियासतों के बारे में, उसमें लिखा था—

"सम्राट् की सरकार यह स्पष्ट करना चाहती है कि ऊपर जिस निर्णय की घोषणा की गई है, उसका सम्बन्ध ब्रिटिश भारत से है, और भारतीय रियासतों के बारे में उसकी नीति वही रहेगी जिसका विवरण २२ मई १९४६ के कैबिनेट मिशन के स्मृति-पत्र में दिया गया है।"

इस भाँति एक उत्तेजना की परिस्थिति उत्पन्न हो गई। अंग्रेजों ने भविष्य के लिए कलह के बीज बोने में सफलता पा ली थी। ५६२ स्वतंत्र जागीरों की स्थापना स्पष्ट दिखाई दे रही थी। परन्तु भारत की राष्ट्रीय सरकार ने समय पर स्थिति सँभाली जिससे अनिपात की सम्भावना टल गई। २७ जून १९४७ को घोषणा की गई कि भारत की अन्तरिम सरकार ने एक रियासती का विभाग स्थापित करने का निर्णय किया है जिसके मंत्री सरदार वल्लभ भाई पटेल होंगे। नेतृत्व में, मँजे हुए राजनीतिज्ञों, जैसे सरदार के० एम० पानिकर, सर वी० टी० कृष्णामाचारी, तथा अन्य भारतीय रियासतों के प्रतिष्ठित मंत्रियों और भारतीय सिविल सर्विस के वरिष्ठ अफसरों, जैसे, श्री सी० एस० वेंकटाचार, श्री एम० के० वेल्लोडी, श्री वी० पी० मेनन, श्री वी० शंकर, पंडित हरी शर्मा, आदि के तजुर्बे और मशविरे काम कर रहे थे।

नये स्थापित 'राज्य-विभाग' का सबसे पहला काम था—ऐसे रचनात्मक उपाय सोचना और ऐसी विधियाँ काम में लाना जिनसे भारत की एकता पर आँच न आये।

सरदार पटेल ने, अपने ५ जुलाई १९४७ के प्रसिद्ध वक्तव्य द्वारा रियासतों को भारतीय संघ में सम्मिलित होने का निमंत्रण दिया। जो कुछ उन्होंने कहा, वह एक सच्चे देशभक्त के हृदय की और एक महान् राजनीतिज्ञ के दिमाग की बात थी—

"यह देश और इसकी संस्थायें, इस देश में रहने वालों की गर्वित विरासत हैं। यह दुर्भाग्य ही है जो, कुछ लोग रियासतों में रहते हैं और कुछ ब्रिटिश भारत में, परन्तु सभी, समान रूप से, इस देश की संस्कृति तथा सभ्यता में भागीदार हैं। हम सब आपस में खून के नाते से बँधे हुए हैं। कोई हमें एक दूसरे से अलग नहीं रख सकता। हमारे दरमियान कोई ऐसे अवरोध खड़े नहीं किये जा सकते जिनको हम पार न कर सकें। मेरा प्रस्ताव है कि एक संयुक्त

प्रयास में, मैत्री और सहयोग की भावना से प्रेरित हो कर, अपनी मातृभूमि के प्रति भक्ति तथा सभी की समान कल्याण-कामना ले कर, रियासतों के शासक एवं विधान-मण्डल की सभाओं में उनके प्रतिनिधि, सब मिल कर एक साथ मित्रों की भाँति बैठें और क़ानून बनायें तो हमारे लिए अच्छा होगा।

"हम भारत के इतिहास में, एक महत्व की स्थिति पर आ गये हैं। सम्मिलित प्रयास से, हम अपने देश की महानता को और भी ऊँचा उठा सकते हैं। हम में यदि एकता न हुई तो हम नये संकटों से घिर जायेंगे। मैं उम्मीद करता हूँ कि भारतीय रियासतें यह बात याद रखेंगी कि सब के हित में सहयोग का विकल्प उपद्रव और अराजकता होगी, जो हम सब को बर्बाद कर देगी यदि हम आपस में मेल-जोल से रह कर सबके, समान हित के, छोटे-छोटे काम भी न कर सके। कहीं ऐसा न हो, कि हमारी आगामी पीढ़ी हमें कोसती रहे कि हमें अवसर मिला था पर हम समान रूप से उसका फ़ायदा न उठा सके। बजाय इसके, हमारा यह गर्वित सौभाग्य हो कि हम पारस्परिक लाभदायक सम्बन्धों की एक वसीयत छोड़ जायें जो इस पवित्र भूमि को विश्व के राष्ट्रों में समुचित सम्मान का स्थान दिला कर इसको शान्ति और समृद्धि के निवास-स्थल में बदल सके।"

सरदार पटेल की इस अपील को, कई रियासतों में उठ खड़े होने वाले आन्दोलनों से और भी दृढ़ता प्राप्त हुई। राजाओं ने अनुभव किया कि स्वतंत्रता और ज्ञान के नव-प्रभात की जन-चेतना के आगे उनको झुकना पड़ेगा, अतएव जो कुछ भी सम्भव हो सके, वे अपने, अपने वारिसों तथा उत्तराधिकारियों के लिए बचा लें। अन्त में, यही तय हुआ कि रियासतें सहमिलन के संलेख पर हस्ताक्षप करके भारत में मिल जायेंगी। इस संलेख का मसौदा आगे परिशिष्ट-स में दिया गया है।

इस संलेख को असाधारण सफलता मिली। १५ अगस्त १९४७ तक प्राय: सभी रियासतें—हैदराबाद, जूनागढ़ और कश्मीर को छोड़ कर भारत में मिल गई। सन् १९४८ के अन्त तक ये तीनों रियासतें भी शामिल हो गईं।

रियासतों के सहमिलन के बाद, संगठन का सवाल उठा। कांग्रेस सन् १९३० से ही छोटी इकाइयों की समाप्ति का निश्चय कर चुकी थी। परिस्थिति को सम्हालने में इस समस्या को सुलझाना ज़रूरी हो गया।

यह तय किया गया कि छोटी रियासतों को या तो बड़ी इकाइयों से, अथवा पड़ोस के प्रान्तों से मिला दिया जाय। यद्यपि, पहले यह निश्चय हुआ था कि जिन रियासतों का वैयक्तिक प्रतिनिधित्व विधान मण्डल में होगा, उनको पृथक् इकाई माना जायगा परन्तु बाद में, यह स्पष्ट हुआ कि उनमें से अनेक रियासतों को संघ में अथवा प्रान्तों में मिलाना ज़रूरी होगा। इस नतीजे पर पहुँचने के कई कारण थे।

१. बहुत सी रियासतों के क्षेत्र सिलसिले में न हो कर बिखरे हुए थे, अतएव उनकी शासन व्यवस्था में कठिनाई पड़ती थी।
२. बहुत सी रियासतों की संस्कृति और भाषा, पड़ोस के राज्यों व सूबों की संस्कृति और भाषा जैसी थी अतएव उनका अलग रहना अनियमित था।
३. प्रशासन की अनेक इकाइयाँ रखने पर उन पर होने वाला व्यय एक आडम्बर मात्र था।

इन्हीं सब बातों को ध्यान में रख कर तजवीज़ें तैयार की गईं जिनके ज़रिये विभिन्न रियासतें, कुछ स्थायी इकाइयों में सम्मिलित की जा सकें। हैदराबाद, कश्मीर, मैसूर, भूपाल आदि कुछ रियासतें ज्यों की त्यों छोड़ दी गईं। अन्य रियासतों के संघ बना दिये गये जैसे राजस्थान, जिसमें जयपुर, जोधपुर, उदयपुर, भरतपुर तथा कुछ छोटी रियासतें शामिल कर दी गईं। पंजाब की रियासतों को एक वर्ग में रखा गया, जिसका नाम पटियाला और पूर्वी पंजाब राज्य संघ पड़ा। शिमला की रियासतें हिमाचल प्रदेश में मिला दी गईं।

राजाओं के भविष्य के लिए विभिन्न व्यवस्थायें कर दी गईं। हर हालत में, राजाओं की प्रिवी-पर्स (निजी खर्च की धनराशि) नियत कर दी गई और उनकी निजी सम्पत्ति पर उनका पूरा अधिकार रहा। संघों के विषय में दूसरी व्यवस्थायें कर दी गईं। कुछ में कौन्सिल के सभापति का पद मौरूसी बना दिया गया, कुछ में बारी नियत कर दी गई और कुछ में, उस पद को चुनाव पर आधारित कर दिया गया।

राजाओं की कौन्सिल के सभापति और पृथक् इकाइयों के शासकों को राजप्रमुख कहा गया। कश्मीर को अलग रखा गया जहाँ राजा का पद एकदम समाप्त करके राज्य के शासक को सदरे-रियासत का नाम दिया गया। राजप्रमुखों के अधिकार वही रहे जो राज्यपालों (गवर्नर) के होते हैं। एक व्यवस्था यह भी की गई कि जिन राजाओं को सन १९४६ के पूर्व जो भी सुविधायें और प्रतिष्ठा प्राप्त थी, उसमें फेर-बदल न होगा अब से उन्हीं के अधिकारी रहेंगे। इसके पश्चात्, सरदार पटेल के नेतृत्व में रियासतों के एकीकरण और विलयन का कार्य प्रारम्भ हो गया।

एकीकरण के लिए तर्क-वितर्क—

भारतीय प्रजातंत्र के संघ में भारतीय राजे-महाराजे अपनी रियासतें सम्मिलित करने को क्यों सहमत हुए ?

उन्होंने देखा कि अपनी प्रजा से सीधा सम्बन्ध न रखने से लगभग डेढ़ सौ वर्ष तक उनकी रियासतों में अव्यवस्था का बोलबाला रहा जिसकी वजह से जनता में उनके लिए लेश-मात्र सहानुभूति नहीं रह गई थी। भारत की ब्रिटिश सरकार के प्रश्रय में रह कर वे स्वेच्छाचारी बन कर जो ...

वही करते रहे और अपनी प्रजा के कल्याण की कभी उन्होंने चिन्ता या परवाह नहीं की। राजे-महाराजे रियासतों के राजस्व से प्राप्त धन को अपनी व्यक्तिगत ज़रूरतों, सैर-सपाटों, दावतों और पार्टियों, विदेश यात्राओं, अफ़सरों की लम्बी तनख्वाहों, और शानोशौक़त में खर्च करते रहे थे। कुछ रियासतों में १० प्रतिशत से भी कम राजस्व, सार्वजनिक कार्यों, जैसे सड़कों, अस्पतालों, तालीम आदि तथा जन-कल्याण की संस्थाओं में, जो रियासतों की प्रजा के लिए ज़रूरी थीं, लगाया जाता था। रियासतों में न्यायिक और अधिशासी कार्य एक ही में सम्मिलित थे और राजा ही अदालती मामलों का फ़ैसला करता था, अतएव उसका अधिकार सर्वोपरि रहता था। वह अपनी इच्छा से किसी को भी फाँसी का दण्ड दे सकता था अथवा किसी भी व्यक्ति पर लम्बी रक़म का जुर्माना कर सकता था। इस प्रकार, राजाओं की हुकूमत रियासतों में आतंक बनी हुई थी और ब्रिटिश शासन उसमें बहुत कम दखल देता था अगर कभी दखल भी देता था, तो केवल इस कारण कि उसकी दृष्टि में राजा लोक प्रिय न होता था या जनता के राष्ट्रीय आन्दोलन के प्रति, उसमें भी राष्ट्रीयता और देशभक्ति का अनुराग होता था।

परन्तु, अब पुराने दस्तूर बदल चुके थे। राजाओं ने सोचा कि उनका ज़माना बीत चुका है। जनता की राय इस क़दर उनके विरुद्ध है कि सिवाय इसके कि वे अधीनता स्वीकार करके अपनी रियासतें भारतीय संघ में मिला दें और कोई चारा नहीं। नवानगर के महाराजा से, जो जाम साहब कहलाते थे, किसी दोस्त ने पूछा कि वे और उनके साथी राजा लोग, क्यों इतनी आसानी से, भारत सरकार की सलाह मान कर अपने अधिकार उसके अधीन कर बैठे? जाम साहब ने बतलाया कि जब सरदार पटेल उनकी रियासत में आये और उन्होंने एक सभा में भाषण किया जिसमें एक लाख मर्द, औरतें और बच्चे शरीक़ हुए, तभी उन्होंने अपनी रियासत भारत में मिला देने का फ़ैसला कर डाला। उस सभा में, जनता का उत्साह कांग्रेस के पक्ष में इतना बढ़ा-चढ़ा था कि महाराजा ने अपने मन में सोच लिया कि वक़्त आ गया है जब जनता की राष्ट्रीय भावनाओं का विरोध नहीं किया जा सकता।

राजप्रमुख

कुछ राजे-महाराजे जो महत्त्वाकांक्षी थे, जिनकी रियासतों का विस्तार बड़ा था और जो लम्बे अरसे से शासन कर रहे थे, उनको सरदार पटेल रास्ते पर ले आये। भारत सरकार ने कुछ ऐसे ही शासकों चुन कर उनको राज-प्रमुख बना दिया। राजाओं ने, वास्तव में सोचा कि राजप्रमुख बन कर उनका पद तो सम्राट् के बराबर हो जायगा क्योंकि अपनी एक रियासत के अलावा कई अन्य रियासतें उनके शासन में आ जायेंगी।

यहाँ पर एक रोचक बातचीत का सारांश हम देना चाहते हैं जो कपूरथला

के महाराजा जगतजीत सिंह और भारत-स्थित बेलजियम के राजदूत के बीच हुई थी। फ्रान्स के राजदूत, मोशिए डेनियल लेवी ने फ्रान्सीसी दूतावास में कपूरथला के महाराजा को एक डिनर-पार्टी दी थी जिसमें बेलजियम के राजदूत राजकुमार डेलिग्ने भी शरीक हुए थे। राजकुमार डेलिग्ने ने, मेरी मौजूदगी में महाराजा से कहा कि उप-राजप्रमुख बन कर अब तो वे पटियाला राज्य तथा पूर्वी पंजाब की रियासतों के लगभग बादशाह हो गये हैं। यह बात सुन कर महाराजा बेहद खुश हुए और राजदूत के कथन से सहमति प्रकट की। राजा लोग सचमुच इस पद के लालच में आ गये थे और इससे बड़ा काम बन गया। उन्होंने खुशी से अपनी रियासतें भारत सरकार को सौंप दीं और राजप्रमुख बनना स्वीकार कर लिया। संवैधानिक रूप से राजप्रमुख केवल नाम के अध्यक्ष होते थे। वास्तविक सत्ता तो जनता के हाथों में रखी गई थी।

अलावा इसके, कुछ राजाओं ने सोचा कि समय बदल रहा है और जल्द ही उनके पदों तथा उनकी रियासतों की समाप्ति हो जायगी। अतएव, भारत सरकार से जो कुछ भी मिल सके, उसे स्वीकार करके वे सुरक्षित रहेंगे, बजाय इसके कि वे अपना भविष्य भाग्य के सहारे छोड़ दें। उनके कुछ मुख्य मंत्री, जैसे सरदार के० एम० पानिकर (बीकानेर), सर वी० टी० कृष्णमाचारी (जयपुर), सरदार हरदित सिंह मलिक (पटियाला), श्री ए० श्रीनिवास (ग्वालियर), सर रामास्वामी मुदालियर (मैसूर), सर बी० एल० मित्तर (बड़ौदा) तथा अन्य लोग जो राष्ट्रीय भावना रखते थे और सच्चे दिल से कभी नहीं चाहते थे कि राजाओं की हुकूमत आगे भी रहे, उन्होंने अपने-अपने शासकों को यही सलाह दी कि राजनीतिक अधिकार भारत सरकार को सौंप कर, प्रिवी पर्स की लम्बी रकमें, अपने जेवर जवाहरात, निजी पदाधिकार और सुविधायें सुरक्षित रखना उनके हक में अच्छा होगा बजाय इसके कि वे सरकार के कामों में कठिनाइयाँ पैदा करें। राजाओं की टालमटूल की आदतें जानते हुए उन्होंने यह कह कर भी उनको डरा दिया कि अगर आसानी से अपनी राजसत्ता भारत सरकार के सिपुर्द न की, तो वही दशा होगी जो रूस के जार और फ्रान्स के राजा लुई १६वें की हुई थी, जो यदि समय पर, जनता की इच्छाओं के आगे झुक गये होते तो उनकी जानें और राजसिंहासन बच गये होते। महाराजाओं ने बिना चूँ-चपड़ किये अपने मुख्य मंत्रियों की सलाह मान कर अपनी रियासतों को भारत में मिलाना निश्चित कर लिया। उपरोक्त मुख्य मंत्री वास्तव में सच्चे राष्ट्र वीर थे जिन्होंने राजाओं की सत्ता उखाड़ फेंकी और उनके नाम इतिहास में अमर रहेंगे, इस उल्लेख के साथ कि इन महानुभावों ने भारत के मानचित्र से पीले रंग के क्षेत्रों को मिटाने में सहायता दी।

आखिरी कान्फ्रेन्स

भारत के लौह-पुरुष, सरदार पटेल ने देश के महाराजाओं की एक कान्फ्रेन्स

बुलाई। उसमें बड़ी-बड़ी रियासतों के शासकों के अलावा पटियाला के महाराजा यादवेन्द्र सिंह, ग्वालियर के महाराजा जीवाजी राव सिन्धिया, नवानगर के महाराजा जाम साहब रन्जीत सिंह, बड़ौदा के महाराजा प्रतापसिंह गायकवाड़ और बीकानेर के महाराजा सदलसिंह ने भाग लिया। इन लोगों ने कान्फ्रेन्स में भाषण किये कि रियासतों को भारतीय संघ में मिल जाना चाहिये। जो राजा लोग हिचक रहे थे, उनको भी समझा-बुझा कर राजी कर लिया गया। सरदार पटेल के ज़बरदस्त शक्तिशाली व्यक्तित्व से राजा लोग डर गये और सरदार का कहना मानने के अलावा उनके आगे कोई चारा न रहा। सरदार पटेल ने राजाओं को राजसी सुविधायें और प्रिवी पर्स की लम्बी रक़में, राज-प्रमुख और उप-राजप्रमुख के सुनने में अच्छे लगने वाले पदों का लालच दे कर अपनी राजनीति को सफल बनाया। इस तरह फँस कर रजवाड़ों ने अपनी शासन-सत्ता और अधिकार भारत सरकार के अधीन कर दिये। भेड़ों की तरह एक के बाद एक शासक ने सहमिलन के संलेख पर हस्ताक्षर किये और जिन्होंने विरोध प्रकट किया तथा भारतीय संघ में मिलने से निषेध किया, वे मुसीबत में पड़ गये। अन्त में, उनको मजबूर करके उनकी रियासतों को भारतीय संघ में मिला लिया गया। १८ सितम्बर १९४८ को हैदराबाद के निज़ाम के खिलाफ़, सरदार पटेल के शब्दों में 'पुलिस अभियान' किया गया जो वास्तव में भारतीय सेना द्वारा हैदराबाद पर हमला था। १०८ घंटे बाद, बिना किसी शर्त्त के, निज़ाम ने आत्मसमर्पण कर दिया, जब उनकी फ़ौज हार गई और उसके मुख्य सेनाध्यक्ष जेनरल एल्ड्रोस ने अपनी तलवार भारतीय सेनाध्यक्ष जेनरल चौधरी के चरणों पर रख दी। मैसूर के दीवान, डॉ० रामास्वामी मुदालियर की सलाह से महाराजा ने भारतीय संघ में मिलने का विरोध किया लेकिन एक छोटे-से संघर्ष और उपद्रव के बाद वे सहमत हो गये।

जो सुविधायें शासकों को दी गईं, उनमें से कुछ ये थीं—उनके महल उनके अधिकार में रहे, टैक्स से मुक्ति, पानी और बिजली मुफ़्त, मोटरों पर खारा लाल रंग की प्लेट लगाने की छूट, रियासती झंडा लगाने की इजाज़त, विदेशों से वापसी पर बहिःशुल्क के लिए सामान की जाँच से छूट और अदालतों की हाज़िरी से छूट। भारत सरकार की इजाजत बग़ैर किसी महा-राजा पर दीवानी या फ़ौजदारी का मुक़दमा नहीं दायर किया जा सकता। मर्यादा के अनुकूल, खास मौक़ों पर उनको तोपों की सलामियाँ, फ़ौजी सलामियाँ और लाल क़ालीन के दस्तूर वैसे ही क़ायम रहे जैसे अंग्रेज़ों के शासन में थे। अपने महलों पर फ़ौजी गारद रखने का उनको हक़ दिया गया। उनकी सुविधाओं की समाप्ति यहीं पर नहीं है। महाराजाओं को, अपने करोड़ों रुपये क़ीमत के हीरे-जवाहरात—सिवाय ताज के जवाहरातों के, जो रियासत की सम्पत्ति समझे जाते थे और असली निकाल कर नक़ली लगा दिये गये—रखने का अधिकार रहा। लाखों रुपयों के मूल्य के असली मोतियों के हार नक़ली मोतियों के

हारों से बदल दिये गये। सात लड़ियों का मोतियों का हार जिसकी कीमत दो करोड़ थी, हीरों का हार जिसमें तीन बेशकीमती हीरे थे, स्टार ग्राफ़ साउथ, यूजीन, शाहे अकबर नाम के मशहूर रत्न तथा दो मोती टँके कालीन, बड़ौदा के खजाने से गायब होने का मामला सभी जानते हैं। सरदार पटेल ने जान-बूझ कर राजाओं की इस लुटेरी प्रवृत्ति की ओर से आँखें मूँद ली जब मिनिस्ट्री के कुछ अफ़सरों ने, जो राजाओं से समझौता कराने पर नियुक्त थे, खूब अपनी जेबें गरम की। राजा-महाराजाओं ने रिश्वत के तौर पर उन अफ़सरों को नकदी, जवाहरात, जेवरात, सोने के सिगरेट-केस वगैरह दिये ताकि प्रिवी पर्स और अन्य सुविधाओं के मामलों में उनसे मदद मिल सके।

इस तरह रियासतों के शासकों ने विनिमय द्वारा राज-सत्ता हस्तान्तरित की। बदले में मोटी रकमों की प्रिवी-पर्स तथा सुविधायें उनको मिलीं। इन मामलों को तय करने में क़रीब एक साल लगा। शर्त्तनामे तैयार किये गये जिन पर राजाओं ने हस्ताक्षर किये और अपनी राज-सत्ता सौंप दी। भारत सरकार की ओर से विश्वास दिलाया गया कि उनके अधिकार, सुविधायें और ख़िताबात, जो उन्होंने भारत की ब्रिटिश सरकार से सन्धियों द्वारा प्राप्त किये थे, उनको' भारत सरकार द्वारा मान्यता दे कर सुरक्षित रखा जायेगा। जो शर्त्तनामे राजाओं ने हस्ताक्षर किये, उनमें दी हुई शर्तें, इस उपरोक्त समझौते पर प्रकाश डालती हैं, जिसे महत्त्वपूर्ण समझा गया था।

जैसी आशा की जाती थी, धीरे-धीरे, पर निश्चित रूप से, राजाओं ने अपने राजनीतिक अधिकार तो खो ही दिये। अलावा इसके उनकी माली-हालत इतनी कमज़ोर हो गई कि उनको अपने आलीशान महलों, बड़ी संख्या में अहलकारों और नौकरों-चाकरों और बड़े-बड़े बावर्चीख़ानों का—जिनमें विदेशी और देशी भोजन बनाने को यूरोपीय और भारतीय बावर्ची, बैरे खानसामे नौकर थे—खर्च चलाना कठिन हो गया। महाराजाओं ने अनुभव किया कि भारत सरकार की वर्तमान व्यवस्था में, न तो उनकी कोई प्रतिष्ठा थी, न उनका कोई स्थान ही था। अतएव, उनमें से कुछ, जिनको यूरोप और अमेरिका घूमने का शौक था, अब ज्यादा विदेशों में जाने लगे और उन्होंने अपनी नकदी व जेवर-जवाहरात भारत से ले जा कर विदेशों के बैंकों में जमा कर दिये। शर्त-नामे के मुताबिक उनको सुविधा थी कि विदेशों को जाते और वापस आते समय बहिःशुल्क सीमा चौकी पर उनके सामान की तलाशी नहीं होती थी, इसलिए वे बे रोकटोक मनचाही दौलत साथ ले जाते थे। इस प्रकार उनके कीमती रत्न, हीरे-जवाहरात विदेशों में पहुँच गये जो अब कभी भारत में वापस न आयेंगे।

राजा लोग अपने महलों का फ़र्निचर कीमती कलमी तस्वीरें और कलापूर्ण वस्तुएँ बहुत सस्ते दामों पर बेचने लगे। दावतों में इस्तेमाल होने वाले सोने-चाँदी के बर्त्तनों के सेट उन्होंने कम कीमत पर बेच डाले। हाथियों के सोने-चाँदी के हौदे, जिनमें राजा और राजपरिवार के लोग बैठ कर त्योहारों पर जलूस

निकलते थे, खुरच डाले गये और उनका चाँदी-सोना बाज़ार-भाव से चौथाई दामों पर बेच दिया गया। मकान, कोठियाँ तथा दूसरी अचल सम्पत्ति, आधे-तिहाई दामों में बिक गई। राजाओं का ख़ास इरादा था कि चल-अचल सम्पत्ति बेच कर रुपया नक़द कर लेना। एक दफ़ा भारत सरकार और राजाओं में इस बात पर काफ़ी झगड़ा चला कि कौन से जवाहरात वग़ैरह बेचने का राजाओं को अधिकार था तथा किन-किन वस्तुओं के बेचने का न था। कुछ अविवेकी राजाओं ने अपने मौरूसी अलंकरण आदि बेच डाले जिनको बेचने के लिए भारत सरकार ने मना किया था। भारत सरकार का और ख़ास तौर पर सरदार पटेल का उद्देश्य यह था कि किसी न किसी प्रकार भारत में रियासती-प्रथा समाप्त हो जाये। इसीलिए राजाओं को अच्छा-ख़ासा मुआवज़ा दिया गया जो उनको क़तई न मिलता, अगर उस ज़माने में, रियासतों में छेड़े गये जन-आन्दोलन के फलस्वरूप, वे गद्दियों से उतारे गये होते।

राजप्रमुख और लोकतन्त्रात्मक व्यवस्था

कुछ अरसे के बाद, ऐसा प्रतीत हुआ कि राजप्रमुख तथा उपराजप्रमुख के पद निरर्थक हैं, अतएव संसद के एक क़ानून द्वारा उनको समाप्त कर दिया गया। अपनी प्रिवी-पर्स की रक़म के अलावा जो लम्बी तनख़्वाह राजप्रमुख पाते थे, वह भी बन्द कर दी गई।

जुलाई १९६७ में, अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी ने अपनी बैठक में प्रस्ताव पास किया कि भूतपूर्व राजाओं-महाराजाओं की प्रिवी-पर्स और सुविधायें समाप्त कर दी जायें। भारत सरकार इस बारे में संशोधन करने की योजना बना रही है और इस काम में मुख्य विरोधी दल भी साथ दे रहे हैं।

ऐसा हो जाने पर एक निम्न कोटि का काल-व्यतिक्रम तथा आडम्बर और फ़ज़ूलख़र्ची की परम्परा का अन्त हो जावेगा।

राजा लोग हो-हल्ला मचा रहे हैं कि अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी का प्रस्ताव यदि भारत सरकार द्वारा अमल में लाया गया तो यह कार्य उस संवैधानिक प्रत्याभूति के सर्वथा विरुद्ध होगा जो अनुच्छेद २९१ द्वारा तथा अधिकारों और सुविधाओं के शर्तनामे से सम्बन्धित अनुच्छेद ३६२ द्वारा राजाओं को दी जा चुकी है।

शासन करने वाली कांग्रेस पार्टी ने पचास करोड़ भूखी जनता और छः सौ धनी राजा-महाराजाओं में से, किसको श्रेष्ठ माना है, यह स्पष्ट है।

६७. एकता के बाद

ज़माना बदल चुका है। आप पूछ सकते हैं कि राजे-महाराजे अब क्या कर रहे हैं? इस सवाल का जवाब बहुत कुछ आशाजनक है। जाहिरा तौर पर, बहुतेरे राजा लोगों का दृष्टिकोण जिन्दगी की तरफ पूरा बदलता जा रहा है। सच तो यह है कि पिछले बाईस वर्षों में लगातार उनमें परिवर्तन आ रहा है। जिस तरह दिमाग खराब हो जाने वाले मरीज़ों का इलाज किसी मानसिक चिकित्सालय में बिजली के धक्के मस्तिष्क तक पहुंचाने की क्रिया द्वारा होता है, ठीक उसी तरह, सदियों की गहरी नींद और आलस, लक्ष्यहीन और दुर्व्यसनों से भरी जिन्दगी, जिसे ब्रिटिश शक्ति की सुरक्षा प्राप्त थी, बिताने के बाद, भारत के महाराजाओं को उसी प्रकार के इलाज की जरूरत थी, जब अचानक उनसे कहा गया कि भारतीय गणतन्त्र के संघ में उनको अपनी रियासतों का विलयन करना होगा। सच तो यह है कि ऐसी तजवीज उन लोगों के लिए वरदान सिद्ध हुई। भारत सरकार ने उनके आलीशान महल उनके पास रहने दिये, निजी जायदादें जवाहरात उनके अधिकार में रहे और विदेश घूमने के लिए राजनयिक पासपोर्ट की व्यवस्था कर दी गई। अलावा इसके, भारत सरकार ने उनको विश्वास दिलाया कि राजाओं की हैसियत से उनके अधिकार और सुविधायें कायम रहेंगी, समारोह के अवसरों पर उनको तोपों की सलामियाँ मिलती रहेंगी, खास मौकों पर फौजी अभिवादन और सुर्ख कालीन की रस्म उनके लिए अदा की जायेगी। संक्षेप में, ब्रिटिश शासन में जो आदर उनको मिलता था, वह बराबर मिलता रहेगा। साथ ही, निजी खर्च के लिए प्रिवी-पर्स की लम्बी रकमें निश्चित कर दी गईं। राजप्रमुख अथवा उप-राजप्रमुख नियुक्त किये गये, उनको अलग से लम्बी तनख्वाहें मिलने लगीं। परन्तु, पिछले बाईस वर्षों में ये तनख्वाहें बहुत कम कर दी गई हैं।

रियासतों के विलयन का धक्का लगने पर महाराजाओं को होश आया और तभी उन्हें जीवन की वास्तविकता का अनुभव भी हुआ। अब वे भारतीय राष्ट्रीय जीवन के कार्यक्रमों के प्रायः सभी क्षेत्रों में शरीक हो रहे हैं। कुछ महाराजाओं ने भारत के विदेश मन्त्रालय में ऊँचे पदों पर नौकरियाँ कर ली हैं और मन्त्रालय के लिए उनकी सेवायें उपयोगी सिद्ध हो रही हैं। प्रारम्भ में ही, मंडी के राजा और कच्छ के महाराजा को विदेशों में राजदूत नियुक्त कर

दिया गया था। जब्बल के राजा दिग्विजय सिंह, कोटा संगानी के ठाकुर साहब, अली राजपुर के राजा तथा अन्य राजाओं ने विदेश-मन्त्रालय में सेवा-कार्य स्वीकार करके अपने नये जीवन का श्रीगणेश किया। राजाओं के कितने ही सम्बन्धियों और राजकुमारों ने भारतीय सेना में लेफ़्टीनेन्ट के पद से अपनी फ़ौजी ज़िन्दगी की शुरुआत की। कुछ महाराजा लोग राजनीति में भाग लेने लगे। बीकानेर के महाराजा कर्णीसिंह और डूँगरपुर के महाराजा लक्ष्मण सिंह भारतीय संसद के सदस्य चुने गये। एक कुशाग्र-बुद्धि महारानी टेहरी गढ़वाल की राजमाता कमलेन्दुमती, राज्य-सभा के लिए सदस्या निर्वाचित हुईं। इसी भाँति, पटियाला की महारानी मोहिन्दरकौर भी राज्य-सभा के चुनाव में सफल हुईं। बीकानेर के महाराजा कर्णीसिंह, लोक-सभा के बहस-मुबाहसों में बड़ी दिलचस्पी रखते हैं तथा अपने कुछ अन्य मित्र राजाओं के साथ, जिनमें पटना के महाराजा आर० एन० सिंह देव भी हैं, वे जनता के हितों के लिए लड़ते रहे हैं। महारजा आर० एन० सिंह देव उड़ीसा राज्य के मुख्य मन्त्री के पद पर इस समय कार्य कर रहे हैं। महाराजा कर्णीसिंह ने गंगा नगर में एक बहुत बड़ा कृषि-फ़ार्म खोला है और अपने कुछ बन्धु राजाओं के साथ मिल कर बीकानेर में एक विशाल उर्वरक फैक्ट्री और एक सीमेंट का कारख़ाना भी खोल दिया है। भूपाल की बेगम ने भूपाल के पास ही कृषि-फ़ार्म खोला है जहाँ यंत्रों से खेती का काम होता है। बहुत से राजाओं ने फलों के बाग़ लगाने और घोड़े पालने तथा मवेशी पालने के धन्धे शुरू कर दिये हैं जहाँ वैज्ञानिक तरीक़ों से काम होता है। प्रकृति और पशु-प्रेम के कारण ही उन्होंने ये धन्धे अपनाये हैं।

कुछ महाराजा लोगों की दिलचस्पी व्यावसायिक और औद्योगिक क्षेत्रों में है और उन्होंने देश की आर्थिक उन्नति में काफ़ी सहयोग दिया है। अपनी विद्वत्ता तथा देशभक्ति के लिए प्रसिद्ध, हिज हाईनेस महाराजा श्री जयचन्द राजा वादियार मैसूर-नरेश ने जो बाद में मैसूर राज्य के राजप्रमुख तथा मद्रास के गवर्नर भी नियुक्त हुए, कई औद्योगिक संस्थानों में बहुत बड़ी रक़में लगा रखी हैं, जैसे मैसूर राज्य में कोलार की स्वर्ण की खानें, भद्रावती इस्पात का कारखाना, मैसूर चन्दन के तेल की फ़ैक्ट्री, रेशम के कारख़ाने और इसी प्रकार के अन्य उद्योग उनके द्वारा चलाये जा रहे हैं। उपरोक्त व्यवसायों की उन्नति के लिए महाराजा बराबर धन लगाते रहते हैं जिससे उनका विस्तार बढ़ता जा रहा है और मैसूर राज्य के लाखों व्यक्तियों को नौकरियाँ तथा जीविका के साधन उपलब्ध हो सके हैं। जब कभी मैसूर राज्य में कोई नई कम्पनी खुलती है अथवा कोई दान से चलने वाली जन-कल्याण की संस्था काम शुरू करती है, महाराजा दिल खोल कर सहायता देते हैं। इस प्रकार वे केवल मैसूर राज्य के निवासियों के सामाजिक व आर्थिक कल्याण में [illegible] लेते वरन् सारे देश के कल्याण में रुचि रखते हैं।

ऐसा ही उदाहरण रामपुर के नवाब सैयद मुर्तजा अली खाँ का है जो अपनी मीठी बोली और सभ्यता के व्यवहार के लिए मशहूर हैं। उनके अलावा, देवास (जूनियर) के महाराजा, खेल-कूद के क्षेत्र में प्रसिद्ध नाभा के महाराजा सर प्रताप सिंह मालवेन्द्र, बिलासपुर के राजा, टेहरी गढ़वाल के महाराजा, उनके दोनों भाई तथा कुछ अन्य राजाओं ने अतीत के आडम्बर और शानोशौकत को भुला कर मातृभूमि के नागरिकों में अपना उचित स्थान ग्रहण किया है।

देश की राजनीतिक तथा सामाजिक-आर्थिक जीवन-प्रगति में अधिक से अधिक हिस्सा लेने की प्रवृत्ति बढ़ती रहने के फलस्वरूप राजाओं के आगे सुनहला अवसर उपस्थित है जब वे लोकप्रिय बन कर अपने देश की सेवा कर सकते हैं।

उत्तर भारत में बहुत से महाराजा बड़ी लगन के साथ कृषि-कार्य में जुटे हुए हैं। उन्होंने हजारों एकड़ भूमि खेती के लायक बना ली है और उसमें फसलें तैयार करते हैं। उन्होंने अपने नाते-रिश्तेदारों और भाई-बन्धुओं को भी बड़े पैमाने पर कृषि-कार्य के विकास में लगाया है। सौराष्ट्र और राजस्थान में भी राजा और जागीरदार फ़ार्म खोल कर खेती का धन्धा कर रहे हैं। उनमें से कुछ लोग समझते हैं कि खेती का काम करने से वे भूमि के स्वामी तो बनेंगे ही साथ ही अपने फार्मों में नौकरी करने वाले किसानों और मजदूरों के वोट हासिल करके, संसद और विधान-सभा के चुनाव जीतने में भी उनको सुगमता होगी।

अनेक राजे-महाराजे धीरे-धीरे अपने को नई परिस्थितियों के अनुकूल बना रहे हैं। कुछ ऐसे भी हैं जो अपने महत्व के बारे में गलत धारणायें रखते हुए महाराजस्थान बनाने का सपना देख रहे हैं। उनको याद रखना चाहिए कि कानूनन वे भारत के नागरिक हैं, जिसमें ऊपर उनकी कोई मर्यादा नहीं। अगर वे हिन्दुस्तान के टुकड़े करने का इरादा रखते हैं, तो यह उनका नितान्त भ्रम है और नासमझी है। उनको अपनी मातृभूमि के हितों के खिलाफ़ साजिशें या षड्यन्त्र नहीं करना चाहिए और न मन में ऐसे विचार लाने चाहिए कि अपनी राजसी मर्यादा या राज्य पुनः प्राप्त करने के लिए विश्व-अदालत में अपील दायर करें अथवा किसी विदेशी ताकत से मदद माँगें।

फिर भी, इस सत्य से आश्वस्त होना पड़ता है कि रजवाड़ों के कुछ निकट के रिश्तेदारों ने बड़ी व्यावसायिक संस्थाओं में नौकरियाँ मंजूर कर ली हैं। इससे जाहिर है कि ज्यादातर राजाओं के दिमाग स्थिर काम कर रहे हैं।

पंजाब के एक राजा ने एक बड़े व्यवसायी निगम में नौकरी कर ली है तथा और भी कई नरेश देशी और विदेशी उद्योगपतियों के यहाँ काम कर रहे हैं। एक सामाजिक सभा में एक राजकुमार ने कहा कि उसे सामान्य व्यक्ति

भाँति किसी व्यापारिक संस्थान में नौकरी करने की इच्छा है परन्तु उसकी माता, जो भूतपूर्व महारानी हैं, उनको इस बात से बड़ा दुःख होता है और वे अपना अपमान समझती हैं। महारानी ने अपने वेटे से कहा था कि यदि उसके पिता जीवित होते और कहीं सुन भी पाते कि वह मामूली आदमी की तरह नौकरी करने जा रहा है, तो वे क्या कहते ! युवक राजकुमार ने अपनी रूढ़िवादिनी माता की बात नहीं मानी। उसने अपनी इच्छानुसार जीवन की राह खोज ली। उसे संतोष और सुख था, क्योंकि वह एक अच्छे नागरिक की भाँति अपना कर्त्तव्य पालन करते हुए ईमानदारी की रोटी खाता था !

कुछ राजाओं और उनके सम्बन्धियों ने वायु, स्थल और जल सेना में नौकरियाँ कर ली हैं। जयपुर महाराजा के युवराज का ज्येष्ठ पुत्र राजकुमार भवानीसिंह, जो भारतीय सेना में अफ़सर है, पहले एक ऐडजुटैण्ट की हैसियत से प्रेसीडेण्ट के बॉडीगार्ड में नियुक्त था। जयपुर के महाराजा भारतीय राजदूत नियुक्त हो कर विदेशों में रहे और अपना कार्यकाल समाप्त होने पर भारत वापस आ गये। कपूरथला के युवक महाराजा सुखजीतसिंह भारतीय स्थल-सेना में कर्नल हैं। जब वे अपने पिता महाराजा परमजीतसिंह के बाद कपूरथला की राजगद्दी पर बैठे, तब इस पुस्तक के लेखक ने उनसे पूछा कि क्या वे सेना की नौकरी छोड़ कर अपनी ज़मीन-जायदाद की देखभाल करेंगे ? उन्होंने बायें हाथ से अपने महल की तरफ़ इशारा करते हुए कहा कि ये महल काँच के घर हैं, जब कि सेना का जीवन बहुत महान् और प्रतिष्ठा का है। अपने जीवन की सादगी के कारण वे अपने साथी अफ़सरों और रेजीमेंट के सिपाहियों को बहुत प्यारे हैं जिनसे उनका सम्पर्क रहता है। महल में, वे अपनी भूतपूर्व प्रजा से बड़े स्नेह और आदर से पेश आते हैं और जो भी उनसे मिलता है उससे अच्छा व्यवहार करते हैं। लेखक ने उनसे पूछा कि क्या वे किसी खास राजनीतिक दल में शामिल हो कर संसद या राज्य-सभा की सीट के लिए चुनाव लड़ना चाहेंगे ? उन्होने जवाब दिया कि फ़ौजी अफ़सर राजनीति नहीं जानता वह केवल मातृभूमि की सेवा करने के लिए होता है। इस प्रकार के दूरन्देश राजा निश्चय ही भारत के पुनर्निर्माण में रचनात्मक भूमिका निभायेंगे।

महाराजाओं, उनके बेटे-बेटियों तथा सम्बन्धियों में, अब सार्वजनिक जीवन में आने की व्यग्रता बढ़ रही है और वे सभी कामों में, अपने भारतीय देशभाइयों और बहनों के साथ, प्रतियोगिता में शामिल हो रहे हैं। विदेश मन्त्रालय भारत सरकार के अन्य मंत्रालयों तथा राज्य सरकार में नौकरियाँ पाने के लिए वे प्रतियोगिताओं में बैठने लगे हैं। बड़ौदा के युवक महाराजा फ़तेहसिंह राव गायकवाड़, सामाजिक व आर्थिक क्षेत्र में विशेष रुचि रखते हैं। उनको अपनी पुरानी प्रजा के प्रति बड़ी सहानुभूति है। बड़ौदा तथा बाहर के कई उद्योगों में उन्होंने अपना धन लगा रखा है। अनेक औद्योगिक और व्यावसायिक कम्पनियों में वे चेयरमैन और डायरेक्टर भी हैं। वे गुजरात की सरकार में

मंत्री भी रह चुके है।

और भी अनेक महाराजा और महारानियाँ है जो स्वतन्त्रता के बाद से देश के कल्याण और उन्नति के लिए किये जाने वाले कामो मे रुचि लेते हैं। जम्मू और कश्मीर के महाराज कर्णसिंह भारत सरकार मे सबसे कम आयु के कैबिनेट मिनिस्टर हैं जो पर्यटन तथा नागर उड्डयन विभाग के मन्त्री है। सिर्फ १८ साल की उम्र मे उनके पिता महाराजा हरीसिंह ने उनको जम्मू और काश्मीर राज्य का प्रबन्धक अधिकारी नियुक्त कर दिया था। तब से तक वे राज्य के अध्यक्ष बने हुए हैं। वे सन् १९४९ से १९५२ तक राज प्रतिनिधि रहे, १९५२ से १९६५ तक सदरे रियासत और १९६५ से १९६७ तक राज्यपाल रहे। लोक सभा के चुनाव मे खड़े होने के पहले उनको अपने पद से इस्तीफा देना पड़ा।

महाराजा कर्णसिंह की मिसाल अपने ढंग की अनोखी है क्योंकि पुरानी परम्परा के अन्तिम प्रतिनिधि होते हुए जनता की इच्छा से नई परम्परा के प्रथम प्रतिनिधि बने। लोकतन्त्रीय विचारों से प्रभावित हो कर वे अपने को मिस्टर कर्ण सिंह कहलाना ज्यादा पसन्द करते हैं और उनको अपनी अधिकारिक पदवियो जैसे, हिज हाईनेस महाराजा इन्द्र मोहिन्द्र बहादुर, सिपरे सल्तनत आदि, से नाम लिया जाना अच्छा नही लगता। साथ ही, हमको नरसिंहगढ़ के महाराजा भानुप्रकाश सिंह का भी नाम याद आता है जो औद्योगिक विभाग के वरिष्ठ उप-मंत्री हैं। नई दिल्ली मे अपने एक मित्र के यहाँ, दावत इस पुस्तक के लेखक ने अभी हाल मे इन सभी महाराजाओ से भेंट की। बदली हुई परिस्थितियों के साथ, उन सबने अपना सामंजस्य स्थापित कर लिया है, ऐसा जान पड़ता था, क्योंकि व्यवहार, बातचीत और पोशाक मे वे दूसरे मेहमानों से, जो रजवाड़े-वर्ग के न थे, किसी प्रकार से अलग नही मालूम होते थे।

निश्चय ही, अपनी उच्च शिक्षा, दौलत और प्रभाव की बदौलत, जो अब भी अपनी भूतपूर्व रियाया पर उनका है, रियासतो के विलयन के समय बिजली के मानसिक धक्के जैसी चिकित्सा, माली हालत का बिगड़ना, जनता मे नई चेतना आना जिसके अनुकूल वे बन चुके हैं, इन सब बातों के कारण राजाओं को स्वर्ण अवसर मिला है जब वे भारत की जनता की दृष्टि मे ऊँचे उठ सकते हैं। उचित यही होगा कि वे अपनी मातृभूमि के कल्याण मे सच्चे देश भक्तो की तरह रुचि लेते रहें और अपने को पूजनीय देवतुल्य समझना बन्द कर दें, जैसा कि वे पिछले युग मे समझा करते थे।

चार

परिशिष्ट

चार

परिशिष्ट

ब्रिटिश सरकार और हिज हाईनेस हैदराबाद के निजाम के बीच सन् १८०० की सन्धि की धारा १५

"आनरेबुल कम्पनी की सरकार अपनी ओर से यह यहाँ पर घोषित करती है कि उसको किसी प्रकार का कोई मतलब हिज हाईनेस की किसी सन्तान, सम्बन्धियों, प्रजाजनों या नौकरो से नहीं है जिनके विषय मे हिज हाईनेस का पूर्ण अधिकार है।"

इस स्पष्ट घोषणा के बावजूद कुछ वर्ष बाद, जो कुछ हुआ, वह जानने योग्य है। बटलर कमेटी की रिपोर्ट के शब्दों मे वह ज्यादा अच्छी तरह जाहिर है। रिपोर्ट में लिखा है—"फिर भी इतने शीघ्र अर्थात् १८०४ मे भारत सरकार ने दवाव डाल कर एक खास व्यक्ति को चीफ मिनिस्टर नियुक्त कराने मे सफलता पाई। सन् १८१५ मे उसी सरकार को हस्तक्षेप करना पडा जब निजाम के बेटो ने उनके हुक्म के खिलाफ़ हिंसात्मक विरोध किया। राज्य का शासन धीरे-धीरे अव्यवस्था मे डूब गया। खेती समाप्त हो गई, अकाल की कीमतें चलने लगी, न्याय, नहीं मिलता था, आबादी दूसरे इलाकों की तरफ भागने लगी। भारत सरकार फिर हस्तक्षेप करने को मजबूर हुई और सन् १८२० में ब्रिटिश अफसरो की नियुक्ति की गई कि वे खेती-बारी करने वाले वर्ग की सुरक्षा के विचार से जिलों के शासन-प्रबन्ध की उचित देख-भाल करें। हस्त-क्षेप के अवसरों की केवल ये कुछ मिसालें हैं। ये काफी हैं, यह जाहिर करने के लिए कि शुरू से ही, समस्त भारत की जिम्मेदार होने की हैसियत से अपने हित में, रियासतो के हित मे, और रियासतों की प्रजा के हित मे, सार्वभौम सत्ता को हस्तक्षेप करना पड़ता था।"

धारा—७ महाराणा ने निवेदन किया है कि उदयपुर राज्य के कुछ भाग अनुचित रूप से दूसरों के अधिकार में चले गये हैं और ये भाग उनको वापस दिलाये जायें। इस विषय में, सही जानकारी के अभाव में, ब्रिटिश सरकार कोई निश्चित कदम नहीं उठा सकती पर यह हमेशा ध्यान रखेगी कि उदयपुर राज्य के स्वामित्व के पुनर्नवीकरण और प्रत्येक मामले के प्रस्तुत किये जाने पर, वह प्रत्येक अवसर पर यथाशक्ति प्रयास करेगी कि ब्रिटिश सरकार की सहायता से वे भाग उदयपुर राज्य को वापस हो सकें, जिनकी वापसी पर उनके राजस्व का तीन-आठवाँ भाग निरन्तर ब्रिटिश सरकार को दिया जायेगा।

धारा—८ उदयपुर राज्य की सेना, राज्य की सामर्थ्य के अनुसार, माँगे जाने पर यथावसर ब्रिटिश सरकार को दी जायगी।

धारा—९ उदयपुर के महाराणा, अपने इलाके के पूर्णतया शासक सदैव रहेंगे और उनके अधिकृत इलाके में ब्रिटिश क़ानून नहीं लागू किये जायेंगे।

धारा—१० वर्तमान सन्धि दिल्ली में सम्पन्न की गई जिस पर मिस्टर थियोफ़िलस मेटकाफ और ठाकुर अजीत सिंह ने हस्ताक्षर करके मुहर लगाई, जिसका सत्यापन, परम प्रतिष्ठित हिज एक्सीलेन्सी गवर्नर जेनरल और महाराजा भीम सिंह जी द्वारा हो जाने पर आज की तारीख से एक मास के भीतर परस्पर प्राप्त हो जायगा।

(हस्ताक्षरित) सी० जे० मेटकाफ
(हस्ताक्षरित) ठा० अजीत सिंह
(हस्ताक्षरित) हेस्टिंग्स

सत्यापन किया २२ जनवरी १८१८

परिशिष्ट—स

सम्मिलन के संलेख का प्रपत्र

जैसी कि भारतीय स्वतन्त्रता अधिनियम १९४७ में व्यवस्था है, तदनुसार अगस्त १९४७ के पन्द्रहवें दिवस से, एक स्वतन्त्र अधिराज्य 'भारत' के नाम से विदित, स्थापित किया जायगा और भारत सरकार अधिनियम १९३५, ऐसी सभी अवक्रियाओं, परिवर्धनों, अनुकूलनों तथा संशोधनों सहित, जिनको गवर्नर जेनरल अपनी आज्ञा द्वारा निर्दिष्ट करें, भारत के अधिराज्य पर लागू होगा;

और जैसा कि भारत सरकार अधिनियम १९३५ इस भाँति गवर्नर जेनरल द्वारा अनुकूलित होकर व्यवस्था करता है, तदनुसार कोई भी रियासत, शासक द्वारा सम्मिलन के संलेख पर हस्ताक्षर किये जाने पर भारतीय अधिराज्य में सम्मिलित हो सकती है;

अब इसीलिए

मैं...

शासक राज्य...

उपरोक्त राज्य में तथा उस पर अपने प्रभुत्व के अधिकार प्रयोग द्वारा यहाँ पर यह सम्मिलन का संलेख निष्पादित करता हूँ, और;

१. मैं यहाँ पर घोषित करता हूँ कि मैं भारतीय अधिराज्य में सम्मिलित होता हूँ, इस इरादे से कि भारत के गवर्नर जेनरल, अधिराज्य का विधान मंडल, संघीय न्यायालय तथा कोई अन्य अधिराज्य प्राधिकारी सत्ता जो अधिराज्य प्रक्रियाओं के उद्देश्य से स्थापित की गई हो, मेरे इस सम्मिलन के संलेख के प्रभाव द्वारा परन्तु इसकी धाराओं से अनुशासित, और केवल अधिराज्य के प्रयोजन से, राज्य.................................(इसके अनन्तर अभ्युद्दिष्टित 'यह राज्य') के सम्बन्ध में, ऐसे कार्यों के हेतु जिनको करने का अधिकार भारत सरकार अधिनियम १९३५ के अन्तर्गत, जिस भाँति यह अधिनियम भारतीय अधिराज्य में अगस्त १९४७ के पन्द्रहवें दिन लागू हो, अपने अधिकारों का प्रयोग कर सकते हैं; और मैं यह भी घोषित करता हूँ कि भारतीय अधिराज्य ऐसे प्रतिनिधि या प्रतिनिधियों द्वारा, जैसा वह उचित समझे, इस रियासत के जानपद एवं आपराधिक न्याय की प्रशासनिक व्यवस्था के सम्बन्ध में उन समस्त

अधिकारों, शक्तियों और क्षेत्राधिकार का प्रयोग कर सकता है जो किसी समय सम्राट् के प्रतिनिधि द्वारा, सम्राट् की ओर से, भारतीय रियासतों के साथ उनके सम्बन्धों के विषय में प्रयोग किये जाते थे।

२. मैं यहाँ पर वैधानिक अनुबन्ध स्वीकार करता हूँ कि विश्वस्त रूप से इस राज्य में मेरे द्वारा अधिनियम के आदेशों को मेरे इस सम्मिलन के संलेख की स्वीकृति के फलस्वरूप उचित रूप से लागू करके प्रभावकारी बनाया जायगा।

३. अनुच्छेद १ की व्यवस्था के प्रतिकूल न होकर, मैं अनुसूची में निर्दिष्ट सभी बातों (मामलों) को स्वीकार करता हूँ जिनके विषय में अधिराज्य का विधान-मण्डल इस रियासत के लिए कानून बना सकता है।

४. मैं यहाँ पर घोषित करता हूँ कि मैं भारत के अधिराज्य में सम्मिलित होता हूँ, इस विश्वास पर कि यदि कोई इकरारनामा गवर्नर जेनरल और इस राज्य के शासक के बीच होता है कि अधिराज्य के विधान मण्डल के किसी क़ानून से सम्बन्धित, इस राज्य के प्रशासन के विषय में, कोई कार्य इस राज्य के शासक द्वारा सम्पन्न किया जायगा, तो ऐसा कोई भी इकरारनामा इस सलेख का एक भाग होगा और तदनुसार, व्याख्या द्वारा उसको प्रभावकारी समझा जाएगा।

५. मेरे इस सम्मिलन के सलेख की धारायें, अधिनियम अथवा भारतीय स्वतन्त्रता अधिनियम १९४७ में किसी प्रकार के संशोधन द्वारा परिवर्तित न होंगी जब तक वह संशोधन, मेरे द्वारा इस सलेख के अनुपूरक संलेख में स्वीकृत न होगा।

६. इस संलेख द्वारा अधिराज्य विधान मण्डल को अधिकार नहीं होगा कि वह इस रियासत हेतु कोई कानून बनाये जिसके द्वारा वह किसी कार्य के लिए अनिवार्यतः भूमि अधिग्रहण करे, परन्तु मैं उत्तरदायित्व लेता हूँ कि यदि अधिराज्य अपने किसी अधिनियम हेतु जो इस राज्य पर लागू है, भूमि प्राप्त करना जरूरी समझता है, तो मैं उसके खर्च पर भूमि प्राप्त कर दूँगा अथवा वह भूमि यदि मेरी होगी तो उन शर्तों पर, जो परस्पर तय हो जायेंगी, अधिराज्य को हस्तान्तरित कर दूँगा अथवा इकरारनामे की अवहेलना पर भारत के प्रधान न्यायाधीश द्वारा नियुक्त मध्यस्थ का निर्णय स्वीकार करूँगा।

७. इस सलेख में कोई बात मुझे अनुबन्धित नहीं करेगी कि मैं भारत के किसी भावी संविधान को स्वीकार करने अथवा उसके [illegible] सरकार से इकरारनामे करने को बाध्य रहूँगा।

८. इस सलेख में कोई बात इस राज्य में या राज्य पर मेरा प्रभुत्व

क़ायम रहने में बाधक न होगी, सिवाय संलेख की व्यवस्थानुसार। इस राज्य के शासक की हैसियत से जो अधिकार, शक्ति और प्रभुता मुझे प्राप्त है उसके प्रयोग में, अथवा जो क़ानून इस समय इस राज्य में लागू हैं, उनकी वैधता में, संलेख की व्यवस्था मान्य होगी।

९. मैं यहाँ पर घोषित करता हूँ कि मैं इस राज्य के पक्ष से यह संलेख निष्पादित करता हूँ और इस संलेख का कोई संदर्भ मुझ से या इस राज्य के शासक से जहाँ भी होगा वहाँ मेरे अतिरिक्त मेरे वारिसों और उत्तराधिकारियों से भी उसका सम्बन्ध माना जाएगा।

मेरे हस्ताक्षर द्वारा आज......................दिन अगस्त, उन्नीस सौ सैंतालीस।

....

मैं यह सम्मिलन का संलेख यहाँ पर स्वीकार करता हूँ...............

तारीख़ आज...............दिन अगस्त, उन्नीस सौ सैंतालीस।

....

भारत का गवर्नर जेनरल

परिशिष्ट—द

हैसियत, पूर्ववर्तिता और सुविधायें

चैम्बर ऑफ़ प्रिन्सेज के चैन्सलर द्वारा स्मृतिपत्र

१. ऐसा प्रतीत होता है कि हिज़ मैजेस्टी राजा-सम्राट् का अधिक हस्तक्षेप एवं सहानुभूतिपूर्ण रुचि, जो शासक राजाओं के मुकाबले ऊँचे ब्रिटिश अफसरों तथा दूसरों की पूर्ववर्तिता के प्रश्न में है, वह प्रश्न सन् १६२२ में पुनः विचारार्थ रखा गया। कुछ भी हो, सन् १६२२ तक सभी राजे, जिनमें ११ तोपों की सलामी वाले, और मैं सोचता हूँ कि ६ तोपों की सलामी वाले भी शामिल थे, उन सबको एक सी अनुकूल पूर्ववर्तिता मिली, उसी भाँति जैसे ऊँची हैसियत के राजाओं को मिली थी जिनको अधिक सलामियों का अधिकार है और मैं विश्वास करता हूँ कि सभी राजाओं को वैसी पूर्ववर्तिता मिली। परन्तु भारत का अधिकारी शासन स्पष्टतया संकीर्ण रहा और "वायसराय के भवन में सामाजिक मनोरंजन" के अवसर पर विभिन्न सलामियाँ पाने वाले राजाओं में कुछ अन्तर प्राप्त करने में सफल हुआ। वही पूर्ववर्तिता, निश्चय ही, अन्य उत्सवों और समारोहों में, जो अर्ध-सरकारी या सामाजिक स्तर के, कहीं पर भी, इंग्लैंड में भी हुआ करेंगे, व्यवहार में लाई जायेगी।

२. यह मसला सन् १६१५ में, लार्ड हार्डिञ्ज के समय में, महाराजा बीकानेर द्वारा २० अगस्त को एक संक्षिप्त लेख में प्रस्तुत किया गया। उस अवसर पर, १७ और उससे अधिक तोपों की सलामियों के अधिकारी सभी राजाओं को, वायसराय की एक्ज़ीक्यूटिव कौन्सिल के मेम्बरों के मुकाबले पूर्ववर्तिता मिली और कमाण्डर-इन-चीफ के ठीक बाद में उनको स्थान दिया गया। परन्तु १५ तोपों की सलामी पाने वाले राजाओं की पूर्ववर्तिता, उस व्यवस्था में, असन्तोषजनक रही।

३. स्पष्टतया उस समय, तथा बाद में संशोधित व्यवस्था के अन्तर्गत, अवसरों के बीच अन्तर रखा जाता है, जब कि वायसराय की एक्ज़ीक्यूटिव कौन्सिल के मेम्बर 'व्यक्तिगत रूप में' मौजूद होते हैं और जब वे भारत सरकार का प्रतिनिधित्व करते हुए (दरबार अथवा उपाधि-प्रदान के अवसरों पर) 'सम्मिलित दल' की तरह उपस्थित होते हैं परन्तु इंग्लैंड में हिज़ मैजेस्टी की सरकार में ऐसा कोई अन्तर नहीं माना जाता। यह भी साफ़-साफ़ नहीं कहा जाता कि अब, किन अवसरों पर, कौन्सिल के मेम्बरों को सम्मिलित रूप में पूर्ववर्तिता मिला करेगी कुछ भी हो, यह समझा जाता है कि अब पूर्ववर्तिता

नीचे लिखे अनुसार मिला करेगी :

१. गवर्नर जेनरल व भारत के वायसराय।

२. सूबों के गवर्नर

३. मद्रास, बम्बई और बंगाल के गवर्नर

४. कमाण्डर-इन-चीफ़। १३ तोपों व अधिक की सलामी पाने वाले राजा लोग कमाण्डर-इन-चीफ़ के ठीक बाद।

५. यू० पी०, पंजाब, बिहार और बर्मा के गवर्नर

६. मध्य प्रदेश और आसाम के गवर्नर

७. बंगाल के चीफ़ जस्टिस

८. कलकत्ते के बिशप, मेट्रोपालिटन ऑफ़ इंडिया

९. गवर्नर जेनरल की एक्ज़ीक्यूटिव काउन्सिल के मेम्बर। ११ तोपों की सलामी वाले राजाओं का स्थान मेम्बरों के बाद तथा पीयर्स, नाइट्स ऑफ़ दी गार्टर और नोट ९ में वर्णित व्यक्तियों से ऊपर है।
नीचे लिखे लोगों को औपचारिक शिष्टता के लिहाज से पूर्ववर्तिता दी जा सकती है यदि वे भारत में नियुक्त न हों—पीयर्स, इंग्लैंड में अपनी पूर्ववर्तिता के अनुसार; नाइट्स ऑफ़ दी आर्डर्स ऑफ़ दी गार्टर, द थिसिल ऐंड सेंट पैट्रिक;

प्रिवी कौंसिलर्स;

सेक्रेटरी ऑफ़ स्टेट फ़ार इंडिया की कौंसिल के मेम्बर।

: इन सबको गवर्नर जेनरल की एक्ज़ीक्यूटिव कौंसिल के मेम्बरों के बाद स्थान मिलता है। (धारा ९)

१०. ईस्ट इंडीज़ में सम्राट् की जल-सेना के कमाण्डर-इन-चीफ़

११. कौंसिल ऑफ़ स्टेट के प्रेसीडेण्ट

१२. लेजिस्लेटिव असेम्बली के प्रेसीडेण्ट

१३. बंगाल के अलावा अन्य हाई कोर्ट चीफ़ जस्टिस

१४. मद्रास और बम्बई के बिशप

१५. गवर्नर जेनरल के एजेण्ट लोग—राजपूताना, मध्य भारत और
उत्तर-पश्चिम सीमान्त प्रदेश के चीफ़ कमिश्नर;
कौंसिलों के मेम्बर और मिनिस्टर लोग; गवर्नर और
[illegible]; फ़ारस की खाड़ी के पोलीटिकल रेज़ीडेण्ट;
रेज़ीडेण्ट तथा सिन्ध के कमिश्नर।
जेनरल आफ़िसर्स कमाण्डिंग—उत्तरी
कमाण्ड, तथा जेनरल के ओहदे के

१७. एक्ज़ीक्यूटिव कौन्सिलों के मेम्बर और मिनिस्टर, मद्रास, बम्बई और बंगाल।

१८. एक्ज़ीक्यूटिव कौन्सिलों के मेम्बर और मिनिस्टर, यू० पी०, पंजाब, बर्मा और बिहार।

II. राजा और जागीरदार जिनको तोपों सलामी मिलती है, उनका स्थान यू० पी० पंजाब, बर्मा और बिहार की एक्ज़ीक्यूटिव कौन्सिलों के मेम्बरों तथा मिनिस्टरों के ठीक बाद में है।

१९. गवर्नर जेनरल के एजेन्ट, राजपूताना, मध्यभारत, और बलूचिस्तान एन० डब्ल्यू० एफ० सूबे के चीफ़ कमिश्नर, फारस की खाड़ी के पोलीटिकल रेज़ीडेण्ट; हैदराबाद और मैसूर के रेज़ीडेण्ट।

२०. एक्ज़ीक्यूटिव कौन्सिलों के मेम्बर और मिनिस्टर, मध्य प्रदेश और आसाम।

२१. लेजिस्लेटिव कौन्सिलों के प्रेसीडेण्ट, अपने सूबों में।

२२. चीफ़ कोर्टों के चीफ जज, हाई कोर्ट के छोटे जज।

२३. लेफ्टीनेण्ट जेनरल्स।

२४. कन्ट्रोलर और आडिटर जेनरल; पब्लिक सर्विस कमीशन के प्रेसीडेंट रेलवे बोर्ड के प्रेसीडेण्ट।

२५. लाहौर, रंगून, लखनऊ और नागपुर के बिशप।

२६. रेलवे बोर्ड के मेम्बर, भारत सरकार के सेक्रेटरी।

२७. अडीशनल व ज्वाइंट सेक्रेटरी, भारत सरकार, सिन्ध के कमिश्नर, फाइनैन्शियल ऐडवाइज़र, मिलिटरी फाइनैन्स और चीफ कोर्ट के जज।

२८. अण्डमन द्वीप और दिल्ली के चीफ कमिश्नर; मद्रास, बम्बई और बैंगलोर की सरकारों के चीफ सेक्रेटरी। पंजाबी राज्यों के, गवर्नर जेनरल के एजेंट। (पंजाब प्रान्त में)।

२९. बम्बई के रेवेन्यू और कस्टम्स कमिश्नर, बर्मा के डेवेलपमेंट कमिश्नर, बम्बई के डेवेलपमेंट डायरेक्टर, डाक-तार के डायरेक्टर जेनरल, फ़ाइनैन्शियल कमिश्नर, सिंचाई के इन्सपेक्टर जेनरल, जुडीशियल कमिश्नर, अवध, मध्य प्रदेश, सिन्ध और ऊपरी बर्मा, मेजर जेनरल्स, बोर्ड ऑफ रेवेन्यू के मेम्बर, सर्जन जेनरल्स।

III. तोपों की सलामी न पाने वाले राजाओं को न० २९ में वर्णित अफसरों के बाद स्थान मिलेगा।

IV. यह व्यवस्था, किसी हद तक ठीक होने पर भी सन्तोषजनक

नीचे लिखे अनुसार मिला करेगी :

१. गवर्नर जेनरल व भारत के वायसराय ।

२. सूबों के गवर्नर

३. मद्रास, वम्बई और बंगाल के गवर्नर

४. कमाण्डर-इन-चीफ़ । १३ तोपों व अधिक की सलामी लोग कमाण्डर-इन-चीफ़ के ठीक वाद ।

५. यू० पी०, पंजाब, विहार और बर्मा के गवर्नर

६. मध्य प्रदेश और आसाम के गवर्नर

७. बंगाल के चीफ़ जस्टिस

८. कलकत्ते के बिशप, मेट्रोपालिटन ऑफ़ इंडिया

९. गवर्नर जेनरल की एक्ज़ीक्यूटिव काउन्सिल के मेम्ब सलामी वाले राजाओं का स्थान मेम्बरों के बाद तः ऑफ़ दी गार्टर और नोट ९ में वर्णित व्यक्तियों से नीचे लिखे लोगों को औपचारिक शिष्टता के लिः दी जा सकती है यदि वे भारत में नियुक्त न हों— अपनी पूर्ववर्तिता के अनुसार; नाइट्स ऑफ़ दी गार्टर, द थिसिल ऐंड सेंट पैट्रिक;

प्रिवी कौन्सिलर्स;

सेक्रेटरी ऑफ़ स्टेट फ़ार इंडिया की कौन्सिल के मे

I. इन सबको गवर्नर जेनरल की एक्ज़ीक्यूटिव कौन्सि ठीक वाद स्थान मिलता है । (धारा ९)

१०. ईस्ट इंडीज़ में सम्राट् की जल-सेना के कमाण्डर-इ

११. कौन्सिल ऑफ़ स्टेट के प्रेसीडेण्ट

१२. लेजिस्लेटिव असेम्बली के प्रेसीडेण्ट

१३. बंगाल के अलावा अन्य हाई कोर्ट चीफ़ जस्टिस

१४. मद्रास और बम्बई के बिशप

१५. गवर्नर जेनरल के एजेण्ट लोग—राजपूताना, वलूचिस्तान; उत्तर-पश्चिम सीमान्त प्रदेश के एक्ज़ीक्यूटिव कौन्सिलों के मेम्बर और मिनिस्टर लेफ़्टीनेंट गवर्नर लोग; फ़ारस की खाड़ी के पोल हैदरावाद और मैसूर के रेज़ीडेण्ट ... सिन्ध के

१६. चीफ़ ऑफ़ द जेनरल स्टा[illegible] मर्स दक्षिणी, पूर्वी और पः[illegible] अफ़सर ।

१७. एक्जीक्यूटिव कौन्सिलों के मेम्बर और मिनिस्टर, मद्रास, बम्बई और बंगाल।

१८. एक्जीक्यूटिव कौन्सिलों के मेम्बर और मिनिस्टर, यू० पी०, पंजाब, बर्मा और बिहार।

II. राजा और जागीरदार जिनको तोपों सलामी मिलती है, उनका स्थान यू० पी० पंजाब, बर्मा और बिहार की एक्जीक्यूटिव कौन्सिलो के मेम्बरो तथा मिनिस्टरो के ठीक बाद में है।

१९. गवर्नर जेनरल के एजेन्ट, राजपूताना, मध्यभारत, और बलूचिस्तान एन० डब्ल्यू० एफ० सूबे के चीफ कमिश्नर; फारस की खाड़ी के पोलीटिकल रेज़ीडेण्ट; हैदराबाद और मैसूर के रेज़ीडेण्ट।

२०. एक्जीक्यूटिव कौन्सिलों के मेम्बर और मिनिस्टर, मध्य प्रदेश और आसाम।

२१. लेजिस्लेटिव कौन्सिलों के प्रेसीडेण्ट, अपने सूबों में।

२२. चीफ़ कोर्टों के चीफ जज, हाई कोर्ट के छोटे जज।

२३. लेफ्टीनेन्ट जेनरल्स।

२४. कन्ट्रोलर और आडिटर जेनरल, पब्लिक सर्विस कमीशन के प्रेसीडेंट रेलवे बोर्ड के प्रेसीडेण्ट।

२५. लाहौर, रंगून, लखनऊ और नागपुर के बिशप।

२६. रेलवे बोर्ड के मेम्बर; भारत सरकार के सेक्रेटरी।

२७. अडीशनल व ज्वाइंट सेक्रेटरी, भारत सरकार; सिन्ध के कमिश्नर, फाइनेन्शियल ऐडवाइजर, मिलिटरी फाइनेन्स और चीफ कोर्ट के जज।

२८. अण्डमन द्वीप और दिल्ली के चीफ कमिश्नर; मद्रास, बम्बई और बंगलोर की सरकारो के चीफ सेक्रेटरी। पंजाबी राज्यों के, गवर्नर जेनरल के एजेंट। (पंजाब प्रान्त में)।

२९. बम्बई के रेवेन्यू और कस्टम्स कमिश्नर, बर्मा के डेवेलपमेंट कमिश्नर, बम्बई के डेवेलपमेंट डायरेक्टर, डाक-तार के डायरेक्टर जेनरल, फाइनेन्शियल कमिश्नर, सिंचाई के इन्सपेक्टर जेनरल, जुडीशियल कमिश्नर, अवध, मध्य प्रदेश, सिन्ध और ऊपरी बर्मा, मेजर जेनरल्स, बोर्ड ऑफ रेवेन्यू के मेम्बर, सर्जन जेनरल्स।

III. तोपों की सलामी न पाने वाले राजाओं को नं० २९ में वर्णित अफसरों के बाद स्थान मिलेगा।

IV. यह व्यवस्था, [illegible] ठीक होने पर भी सन्तोषजनक नहीं

है। कालान्तर में, सबसे पहले राजाओं को इधर ध्यान देकर संगठित रूप में इसे सुधारने का कार्य करना होगा। बाद में, यदि ज़रूरी होगा तो पहले हिज़ एक्सीलेन्सी वायसराय को आवेदन-पत्र दिया जायगा और अन्त में हिज़ मैजेस्टी सम्राट् (जिनकी विशेष रुचि तथा सहानुभूति और कृपा के बारे में हम आश्वस्त हैं) से प्रार्थना की जायगी कि हमारी प्रतिष्ठा की रक्षा करें क्योंकि हमें विभिन्न तोपों की सलामी का अधिकार दिया गया है और हम, रियासतों के पूर्ण प्रभुता प्राप्त राजा लोग, उनके सहयोगी और मित्र होने के नाते, अपनी मर्यादा के अनुकूल, पूर्ववर्तिता पाने की इच्छा रखते हैं।

V. यह बात नितान्त ग़लत जान पड़ती है कि निम्नलिखित को राजाओं से ऊपर पूर्ववर्तिता दी जाती है—वायसराय की एक्ज़ीक्यूटिव कमेटी के मेम्बर और यहाँ तक कि अफ़सर लोग, जैसे कौन्सिल आफ़ स्टेट्स और लेजिस्लेटिव असेम्बली के प्रेसीडेण्ट, बिशप, गवर्नर जेनरल के एजेन्ट्स, चीफ़ आफ़ स्टाफ़ तथा जेनरल आफ़िसर कमांडिंग विभिन्न कमाण्ड्स, सूबों के एक्ज़ीक्यूटिव कौन्सिलर्स और मिनिस्टर लोग, सूबों के लेजिस्लेटिव कौन्सिलों के प्रेसीडेण्ट, चीफ़ जज लोग, लेफ्टीनेन्ट जेनरल्स, कन्ट्रोलर और आडिटर जेनरल, भारत सरकार के अडीशनल और ज्वाइंट सेक्रेटरी, अंडमन और दिल्ली के चीफ़ कमिश्नर, रेवेन्यू और कस्टम्स के कमिश्नर, वग़ैरह।

VI. उपरोक्त अभ्युक्ति कमोवेश राजाओं पर लागू होती है, अनेक अफ़सरों के सम्बन्ध में, जिनको अब राजाओं से आगे पूर्ववर्तिता दी जाती है।

VII. जब कि यह व्यवहार छोटे राजाओं और जागीरदारों के साथ होता है तो फिर राजाओं के बेटों और अन्य निकट के सम्बन्धियों को कहाँ पूर्ववर्तिता मिलेगी ?

VIII. जहाँ तक बम्बई, बंगाल और मद्रास के गवर्नरों का सवाल है, जब वे सूबे से बाहर हों तथा कमाण्डर-इन-चीफ़ की स्थिति का वहाँ सीनियर राजाओं के मुक़ाबले उस पर विचार किया जाना चाहिये। पंजाब के गवर्नर को १३ तोपों की सलामी पाने वाले राजाओं से निचला पद होते हुए भी सिमला में कमांडर-इन-चीफ़ के ऊपर पूर्ववर्तिता प्राप्त है।

> ऐसा समझा जाता है कि पिछली बार एक दफ़ा स्वर्गीय निज़ाम को गवर्नर से ऊपर पूर्ववर्तिता मिली थी जब वे लार्ड कर्ज़न के साथ गवर्नमेंट हाउस में ठहरे थे।

इंग्लैंड का पूर्ववर्तिता अधिकार पत्र भी इस बारे में ध्यान से पढ़ा

जाता चाहिये और उसमें भी देखना चाहिए कि ब्रिटिश पियर्स के बच्चों को ग्रेट ब्रिटेन में समुचित और मर्यादानुकूल पूर्ववर्तिता मिलती है।

XI. किन्तु बहुत कम राजा लोगों को, हालाँकि वे समझने और रुचि लेने की चेष्टा करते हैं, यह पूर्ववर्तिता का प्रश्न, कार्यरत नही करता और अफसोस है कि वे डरते हैं, भारत की ओर से इस प्रश्न के उठाने मे देर करना उचित होगा, कुछ मानों मे, जब तक परिस्थितियाँ अनुकूल न बन जायँ, राजा लोगों को अच्छी तरह समझा न दिया जाय, खास तौर से उनको, जिनसे यह प्रश्न सम्बन्धित है।

३० अक्तूबर, १९२४.

भारत में तोपों की सलामियों की सारिणी

व्यक्ति	तोपों की संख्या	जिन अवसरों पर सलामियां दागी जाती हैं
१	२	३
शाही सलामी	१०१	जब बादशाह खुद मौजूद हों।
राजसी सलामी	३१	जन्म, तख्तनशीनी, ताजपोशी के दिन हर साल, राजमाता की सालगिरह, घोषणा दिवस।
शाही परिवार के सदस्य	३१	
विदेशी बादशाह और उसके परिवार के व्यक्ति	२१	
नेपाल के महाराजाधिराज	२१	
मस्कट के सुलतान	२१	
ज़ैंज़िबार के सुलतान	२१	किसी मिलिटरी स्टेशन पर आते या जाने समय अथवा राज्य के समारोह में आने पर।
राजदूत	१९	
फ़्रेंच (भारतीय) उपनिवेशों के गवर्नर	१७	
पुर्तगाली भारत के गवर्नर	१७	
ब्रिटिश उपनिवेशों के लेफ़्टीनेंट गवर्नर	१५	
महादूत और विदेशी अधिकारी	१५	
डामन के गवर्नर	९	
डियू के गवर्नर	९	
वायसराय व गवर्नर जेनरल	३१	भारत के किसी मिलिटरी स्टेशन पर आने या जाने के समय अथवा राज्य के समारोह में आने पर।
सूबों के गवर्नर	१७	पद ग्रहण करते या छोड़ते समय (स्थायी या अस्थायी रूप से)। सार्वजनिक आगमन या विदाई किसी मिलिटरी स्टेशन पर, और स्वागत-समारोह के अवसरों पर, जैसे दरबार में आना या जाना, अथवा किसी राज्य के शासक के यहां जाना, और किसी मिलिटरी स्टेशन पर निजी तौर पर आना-जाना, यदि इच्छा करें तब।

१	२	३
रेजीडेण्ट्स (फ़र्स्ट क्लास)	१३	
गवर्नर जेनरल के एजेन्ट्स	१३	
सिन्ध में कमिश्नर	१३	गवर्नरों के समान
काठियावाड़ में गवर्नर के एजेन्ट	१३	
रेजीडेन्ट्स (सेकेण्ड क्लास)	११	
पोलीटीकल एजेन्ट्स	११	पद ग्रहण करते या छोड़ते समय और किसी मिलिटरी स्टेशन पर सार्वजनिक आगमन या विदाई पर।
भारत में, कमाण्डर-इन-चीफ (अगर फ़ील्ड मार्शल हो)	१९	पद ग्रहण करते या छोड़ते समय। किसी मिलिटरी स्टेशन पर सार्वजनिक आगमन या विदाई पर और औपचारिक समारोह के अवसरों पर। निजी तौर पर
भारत के कमाण्डर-इन-चीफ (अगर जेनरल हो)	१७	आगमन या प्रस्थान पर, यदि इच्छा हो।
जल-सेना के कमाण्डर-इन-चीफ (ईस्ट-इण्डीज स्क्वैड्रन)		उसी प्रकार जैसे समान पद के मिलिटरी अफसर को (बादशाह के नियम देखें)
जेनरल आफिसर्स कमाण्डिंग इन-चीफ्स कमाण्ड्स	१५	कमाण्ड पाने या छोड़ने पर तथा सार्वजनिक रूप से आगमन और
मेजर जेनरल्स कमाण्डिंग डिस्ट्रिक्ट्स	१३	प्रस्थान पर अपने कमाण्ड के भीतर किसी मिलिटरी स्टेशन पर, निजी तौर पर आगमन या
मेजर जेनरल्स तथा कर्नल कमाण्डैंट्स कमाण्डिंग ब्रिगेड्स	११	प्रस्थान पर, यदि इच्छा हो

विभिन्न श्रेणियों की प्रिवी पर्स पानेवाले राजाओं की संख्या का विवरण

राज्य	प्रिवी-पर्स धनराशि	राज्य	प्रिवी-पर्स धनराशि
१. ५,०००) रु० सालाना से अधिक न पानेवाले			
कटोदिया	१९२	हापा	३,४३०
मानगल	२,४००	पलाज	३,५००
धरकोटी	२,४००	लिक्खी	३,५४०
धादी	२,४००	साँगरी	३,६००
देलथ	२,४००	कुनिहार	३,६००
बेजा	२,४००	घुण्ड	४,२००
देध्रोता	२,७६०	खनेती	४,४००
रवीनगढ़	३,०००	वखटापुर	४,७००
रातेश	३,०००	नैगवां रेवाई	५,०००
बिजना	३,०००	राजगढ़	५,०००
बाँका पहाड़ी	३,०००	कमता रजौला	५,०००
ताजपुरी	३,३००	धुरवाई	५,०००
		कुल योग ...	८१,८२२
२. ५,०००) रु० से अधिक पर १०,०००) रु० से कम पाने वाले			
माधन	५,२००	मठवार	६,०००
पहाड़ा	५,३००	वादी जागीर	६,०००
वीहट	५,६००	टोड़ी फ़तेहपुर	७,०००
भैसाँधा	५,६००	मगोडी	७,३७०
तराँव	५,८५०	बेरी	७,७५०
जिगनी	५,९५०	पुनद्रा	८,१००
		जशो	८,६००

राज्य	प्रिवी-पर्स धनराशि	राज्य	प्रिवी-पर्स धनराशि
३. १०,०००) रु० से अधिक पर १५,०००) रु० से अधिक न पानेवाले			
पालेनी	१०,०५०	वरसोदा	१२,५००
लुवासी	१०,१००	साथा	१२,५००
पान्देव	१०,४००	वलासना	१४,२००
हिलिरिया	११,२००	सदाल	१४,५००
इलोल	११,७००	वरोंधा	१४,५००
मुहम्मदगढ़	१२,०००	निमराना	१५,०००
बगनिया	१२,०००	गौरिहार	१५,०००
कटोसन	१२,१००		
	कुल योग ... १,८७,७५०		
४. १५,०००) रु० से अधिक पर २०,०००) रु० से अधिक न पानेवाले			
बमना	१५,१००	थरोच	१८,१००
कोठी	१५,४००	पठारी	१८,२५०
डुमारसैन	१५,५००	सरीला	१८,६५०
मनियाधाना	१५,६००	बाघल	१८,७००
लोधिका	१५,६६०	सयम्बा	१६,१३०
धामी	१५,७६०	उमेटा	१६,२००
मज्जी	१६,०००	जफराबाद	१६,३१०
जलिया देवानी	१६,१३५	येमोग	२०,०००
महलोग	१६,५००	बलसान	२०,०००
रानासन	१७,१००	पटदी	२०,०००
बागमाकर	१७,३००	निमखेरा	२०,०००
	कुल योग ... ४,०७,३४५		
५. २०,०००) रु० से अधिक पर २५,०००) रु० से अधिक न पानेवाले			
घुईखदान	२०,३००	अम्बलियारा	२४,६००
मोहनपुर	२०,७००	रनपुर	२५,०००
बारम्बा	२२,७००	पाल-लहारा	२५,०००
विठलगढ़	२३,२००	मकराई	२५,०००
	कुल योग ... १,८६,५२०		

राज्य	प्रिवी-पर्स धनराशि	राज्य	प्रिवी-पर्स धनराशि

६. २५,०००) रु० से अधिक पर ३०,०००) रु० से अधिक न पानेवाले

राज्य	प्रिवी-पर्स धनराशि	राज्य	प्रिवी-पर्स धनराशि
सोहावल	२५,६००	सकती	२६,०००
कोटी	२७,२५०	रैराखोल	२६,७००
नरसिंहपुर	२८,१००	खिरासरा	३०,०००
अलीपुरा	२८,१५०	सुरगुना	३०,०००
सुदासना	२८,२००	पिपलोदा	३०,०००
घोड़ासर	२८,४२०		

कुल योग ... ३,१४,७२०

७. ३०,०००) रु० से अधिक पर ५०,०००) रु० से अधिक न पानेवाले

राज्य	प्रिवी-पर्स धनराशि	राज्य	प्रिवी-पर्स धनराशि
सवानूर	३०,३१६	मालपुर	४०,६००
काठियावाड़ा	३२,०००	मनसा	४१,२००
हिन्दोल	३२,०००	वीरपुर	४४,५००
जोवत	३२,५००	भदेरवा	४६,४६०
खरासवन	३३,०००	वाओनी	४६,८५०
दसपल्ला	३३,५००	मालिया	४७,५००
खाँडपारा	३३,६००	सातामऊ	४८,०००
जैनाबाद	३३,८००	पटौदी	४८,०००
दुजाना	३४,०००	वाओ	४८,२००
वसावड	३४,४००	अटमल्लिक	४८,५००
कुशलगढ़	३४,७७५	कुरुंडवाड (जूनियर २)	४९,७२०
अटगढ़	३६,१००	कुरुंडवाड (जूनियर १)	४९,७२०
वरवाला	३६,५१०	कुरुंदवाड (सीनियर)	४९,६२४
वानोद	३८,४३०	जथ	४९,६२४
रामदुर्ग	३८,८१८	विजयनगर	५०,०००
सनजेली	३८,९००	लोहारू	५०,०००
केओन्थल	३९,७००	उदयपुर (एम०पी०)	५०,०००
नीलगिरी	४०,०००		

कुल योग ... १४,४१,४४७

राज्य	प्रिवी-पर्स धनराशि	राज्य	प्रिवी पर्स धनराशि
८. ५०,०००) रु० से अधिक पर ७०,०००) रु० से अधिक न पानेपाने			
मिरज (जूनियर)	५०,४५४	कलसिया	६०,०००
चुडा	५१,२५०	सायना	६२,५००
समयर	५१,८००	तलचेर	६२,५००
बोनई	५२,८००	नाईगढ	६२,८००
मुली	५३,०००	सारनगढ	६३,६००
थराड	५३,४००	कावरधा	६३,८००
वंगनापल्ली	५३,९००	वाजाना	६५,५००
मुधोल	५५,३००	जशपुर	६६,३००
नागोद	५५,४००	कोटडा संगानी	६७,०००
मैहर	५६,५००	बालासिनोर	६८,०००
सुकेत	६०,०००	कनकेर	६८,७००
कुरवई	६०,०००	बिलासपुर	७०,०००
किलचीपुर	६०,०००	सैलाना	७०,०००
नालागढ	६०,०००	जम्बूगोडा	७०,०००
	कुल योग ... १६,६४,५०४		
९. ७०,०००) रु० से अधिक पर १ लाख रु० से अधिक न पानेवाले			
बिजावर	७०,७००	ढेंकानल	८६,७००
सचीन	७२,०००	शाहपुरा	९०,०००
अजयगढ़	७४,७००	सदूर	९०,०००
औंघ	७५,२१२	लखतर	९१,०००
सैनेपुर	७६,७००	जमखण्डी	९१,१६३
लाठी	७७,५००	दन्ता	९२,०००
वादिया	७८,२५०	अलीराजपुर	९५,०००
बहादुर	८०,०००	बमरा	९५,३००
वघात	८०,०००	चरखारी	९५,९००
मिरज (सीनियर)	८५,८००	बिलसा	१,००,०००
वाला	८८,७५०	अमरनगर	१,००,०००
सेरायकेल्ला	८८,९००	(थाना देवली)	
भोर	८६,०४२		
	कुल योग ... २०,६७,६१७		

राज्य	प्रिवी-पर्स धन-राशि	राज्य	प्रिवी-पर्स धनराशि

१०. १ लाख रु० से अधिक पर २ लाख रु० से अधिक न पाने वाले

राज्य	प्रिवी-पर्स धन-राशि	राज्य	प्रिवी-पर्स धनराशि
छतरपुर	१,००,३५०	राजगढ़	१,४०,०००
जव्वल	१,०१,०००	फाल्टन	१,४०,४४२
परतापगढ़	१,०२,०००	केओंझर	१,४१,५००
खैरागढ़	१,०२,३००	देवास (सीनियर)	१,४५,०००
करोली	१,०५,०००	बरवानी	१,४५,०००
सावन्तवाडी	१,०७,५००	सुरगुजा	१,४५,३००
ध्रोल	१,१०,०००	वधवान	१,४६,६१५
मलेरकोटला	१,१०,०००	पन्ना	१,४७,३००
सन्त	१,१२,०००	वस्तर	१,५०,०००
कालाहांडी	१,१४,०००	जसदन	१,५०,०००
नरसिंहगढ़	१,१५,०००	रतलाम	१,५०,०००
जेतपुर	१,२१,५३६	धरमपुर	१,५०,०००
जवाहर	१,२४,०००	दतिया	१,५४,३००
बाँसवारा	१,२६,०००	बाँसदा	१,६०,०००
झाबुआ	१,२७,०००	रायगढ़	१,७२,६००
राधनपुर	१,२६,०००	जावरा	१,७५,०००
लुनावाडा	१,३१,०००	पालिताना	१,८०,०००
गंगपुर	१,३५,१००	वांकानेर	१ ८०,०००
किशनगढ़	१,३६,०००	जैसलमेर	१,८०,०००
झालावाड़	१.३६,०००	देवास (जूनियर)	१,८०,०००
चम्बा	१,३८,०००	ओरछा	१,८५,३००
काम्बे	१,३८,०००	डूंगरपुर	१,९८,०००
जंजीरा	१,३९,५८०		

कुल योग ... ६२,७७,०२३

११. २ लाख रु० से अधिक पर ५ लाख रु० से अधिक न पानेवाले

राज्य	प्रिवी-पर्स धन-राशि	राज्य	प्रिवी-पर्स धनराशि
छोटा उदयपुर	२,१२,०००	लिम्बडी	२,३०,०००
सिरोही	२,१२,६००	सांगली	२,३२,०००
मण्डी	२,२०,०००	कोचिन	२,३५,०००
बारिया	२,२५,०००	पटना	२,४९,६००

राज्य	प्रिवी-पर्स धनराशि	राज्य	प्रिवी-पर्स धनराशि
मनीपुर	२,५४,०००	टेहरी-गढ़वाल	३,००,०००
धौलपुर	२,६४,०००	मयूरभज	३,२७,४००
पुद्दुकोट्टाई	२,६६,५००	ईडर	३,२८,०००
कपूरथला	२,७०,०००	जिंद	३,२८,१००
पालनपुर	२,७५,०००	त्रिपुरा	३,३०,०००
टोंक	२,७८,०००	ध्रांगध्रा	३,८०,०००
कोरिया	२,७८,७००	पोरबन्दर	३,८०,०००
बनारस	२,८०,०००	फरीदकोट	३,८१,४००
बूँदी	२,८१,०००	राजपीपला	३,९७,६४६
राजकोट	२,८५,०००	नाभा	४,१०,०००
धार	२,९०,०००	इन्दौर	५,००,०००

कुल योग ... ८६,०१,२४६

१२. ५ लाख रु० से अधिक पर १० लाख रु० से अधिक न पानेवाले

भरतपुर	५,०२,०००	उदयपुर	१०,००,०००
अलवर	५,२०,०००	रीवा	१०,००,०००
भूपाल	६,२०,०००	नवानगर	१०,००,०००
रामपुर	६,६०,०००	कोल्हापुर	१०,००,०००
कोटा	७,००,०००	ग्वालियर	१०,००,०००
कच्छ	८,००,०००	जोधपुर	१०,००,०००
गोंडल	८,००,०००	जम्मू व कश्मीर	१०,००,०००
मोरवी	८,००,०००	भावनगर	१०,००,०००
कूच-बिहार	८,५०,०००	बीकानेर	१०,००,०००

कुल योग ... १,५२,५२,०००

१३. १० लाख रु० से अधिक पानेवाले

बड़ौदा	१३,६४,०००	जयपुर	१८,००,०००
पटियाला	१७,००,०००	हैदराबाद	५०,००,०००
ट्रावनकोर	१८,००,०००	मैसूर	२६,००,०००

कुल योग ... १,४२,६४,०००

राजाओं की सूची जिनके सम्मिलन के एकरारनामे/संविद-पत्र व्यवस्था है कि उत्तराधिकारियों को प्रिवी-पर्स में घटाई हुई धनरा मिला करेगी

राज्य	मौलिक धनराशि (रु०)	उत्तराधिकारियों को नियत धनराशि (रु०)	
जयपुर	१८,००,०००	१०,००,०००*	
जोधपुर	१७,५०,०००	१०,००,०००	
बीकानेर	१७,००,०००	१०,००,०००	
भूपाल	११,००,०००	६,००,०००	(उत्तराधिकारी उसकी स्वीकृति से ६,७०,०००* दिये
कूच-बिहार	८,५०,०००	७,००,०००	
रामपुर	७,००,०००	६,६०,०००	
कलसिया	६५,०००	६०,०००	
नालागढ़	६०,०००	४५,०००*	
कुड़वई	६०,०००	४८,०००*	
सुकेत	६०,०००	५१,४००*	
कुनिहार	४,२००	३,६००	
साँगरी	४,२००	३,६००	
घुण्ड	४,२००	३,६००*	
मानगल	३,०००	२,४००	
दरकोटी	३,०००	२,४००	
वेजा	३,०००	२,४००	
देलथ	३,०००	२,४००	
रातेश	३,०००	२,४००*	
रवीनगढ़	३,०००	२,४००*	
धादी	३,०००	२,४००	

राजाओं की सूची जिनके सम्मिलन के एकरारनामे/संविद-पत्र में व्यवस्था
कि उत्तराधिकारियों की प्रिवी-पर्स बाद में नियत की जायगी।

राज्य	मौलिक धनराशि (रु०)	धनराशि जो बाद में उत्तराधिकारियों के लिए नियत की गई (रु०)	विशेष कथन
राबाद	४२,८५,७१४	२०,००,०००	
ौदा	२६,५०,०००	१०,००,०००* ४,५८,०००	*अस्थायी वृद्धि, माता-पिता, भाइयों और बहनों का भत्ता
ग्वालियर	२५,००,०००	१०,००,०००	
ौर	१५,००,०००	५,००,०००	उत्तराधिकारी राजा की स्वीकृति से नियत धनराशि
पुर	२६,००,०००	१०,००,०००	उत्तराधिकार नहीं उठा है
वंकोर	१८,००,०००	१०,००,०००	उत्तराधिकार नहीं उठा है
टियाला	१७,००,०००	१०,००,०००	उत्तराधिकार नहीं उठा है

राजाओं की सूची जिनकी प्रिव-पर्स उत्तराधिकार के बाद घटा दी गई है

वर्ष	राज्य	मौलिक धनराशि (रु०)	घटाई हुई धन-राशि (रु०)	बचत (रु०)
१९४९	देलथ	३,०००	२,४००	६००
१९५०	बीकानेर	१७,००,०००	१०,००,०००	७,००,०००
	बेजा	३,०००	२,४००	६००
१९५१	बड़ौदा	२६,५०,०००	१३,६४,०००	१२,८६,०००
१९५२	धादी	३,०००	२,४००	६००
	जोधपुर	१७,५०,०००	१०,००,०००	७,५०,०००
१९५३	दरकोटी	३,०००	२,४००	६००
१९५५	मनीपुर	३,००,०००	२,५४,०००	४६,०००
१९५६	मानगल	३,०००	२,४००	६००
१९६०	भूपाल	११,००,०००	६,२०,०००	४,८०,०००
१९६१	बस्तर	२,१०,०००	१,५०,०००	६०,०००
	कलसिया	६५,०००	६०,०००	५,०००
	ग्वालियर	२५,००,०००	१०,००,०००	१५,००,०००
	इन्दौर	१५,००,०००	५,००,०००	१०,००,०००
१९६४	कुनिहार	४,२००	३,६००	६००
१९६५	सांगली	२,६२,६३९	२,३२,०००	३०,६३९
	सांगरी	४,२००	३,६००	६००
१९६६	रामपुर	७,००,०००	६,६०,०००	४०,०००
१९६७	हैदराबाद	४२,८५,७१४	२०,००,०००	२२,८५,७१४